॥ श्रीहरिः ॥

संस्कारप्रकाश

[षोडश संस्कारोंका माहात्म्य और उनकी प्रयोग-विधि]

त्वमेव माता च पिता त्वमेव
त्वमेव बन्धुश्च सखा त्वमेव।
त्वमेव विद्या द्रविणं त्वमेव
त्वमेव सर्वं मम देवदेव॥

गीताप्रेस, गोरखपुर

॥ श्रीहरिः ॥

विषय-सूची

परिशिष्ट

चित्रसूची

॥ श्रीहरिः ॥

षोडश संस्कारोंकी आवश्यकता

'जातस्य हि ध्रुवो मृत्युर्ध्रुवं जन्म मृतस्य च।' जो जनमता है, उसे मरना भी पड़ता है और मरनेवालेका पुनर्जन्म होना भी प्रायः निश्चित है। अपने शास्त्र कहते हैं कि चौरासी लाख योनियोंमें भटकता हुआ प्राणी भगवत्कृपासे तथा अपने पुण्यपुंजोंसे मनुष्ययोनि प्राप्त करता है। मनुष्यशरीर प्राप्त करनेपर उसके द्वारा जीवनपर्यन्त किये गये अच्छे-बुरे कर्मोंके अनुसार उसे पुण्य-पाप अर्थात् सुख-दुःख आगेके जन्मोंमें भोगने पड़ते हैं—'अवश्यमेव भोक्तव्यं कृतं कर्म शुभाशुभम्।' शुभ-अशुभ कर्मोंके अनुसार ही विभिन्न योनियोंमें जन्म होता है, पापकर्म करनेवालोंका पशु-पक्षी, कीट-पतंग और तिर्यक् योनि तथा प्रेत-पिशाचादि योनियोंमें जन्म होता है, पुण्य-कर्म करनेवालेका मनुष्ययोनि, देवयोनि आदि उच्च योनियोंमें जन्म होता है। मानवयोनिके अतिरिक्त संसारकी जितनी भी योनियाँ हैं, वे सब भोगयोनियाँ हैं, जिनमें अपने शुभ एवं अशुभ कर्मोंके अनुसार पुण्य-पाप अर्थात् सुख-दुःख भोगना पड़ता है। केवल मनुष्ययोनि ही ऐसी है, जिसमें जीवको अपने विवेक-बुद्धिके अनुसार शुभ-अशुभ कर्म करनेका सामर्थ्य प्राप्त होता है।

अतः मनुष्य-जन्म लेकर प्राणीको अत्यन्त सावधान रहनेकी आवश्यकता है। कारण, इस भवाटवीमें अनेक जन्मोंतक भटकनेके बाद अन्तमें यह मानव-जीवन प्राप्त होता है, जहाँ प्राणी चाहे तो सदा-सर्वदाके लिये अपना कल्याण कर सकता है अथवा भगवत्प्राप्ति कर सकता है अर्थात् जन्म-मरणके बन्धनसे भी मुक्त हो सकता है, परंतु इसके लिये अपने सनातन शास्त्रोंद्वारा निर्दिष्ट जीवन-प्रक्रिया चलानी पड़ती है।

मनुष्यकी नैतिक, मानसिक, आध्यात्मिक उन्नतिके लिये, इसके साथ ही बल-वीर्य, प्रज्ञा और दैवीय गुणोंके प्रस्फुटनके लिये

शास्त्रोंद्वारा निर्दिष्ट संस्कारोंसे व्यक्तिको संस्कारित करनेकी आवश्यकता है।

संस्कार शब्दका अर्थ ही है, दोषोंका परिमार्जन करना। जीवके दोषों और कमियोंको दूरकर उसे धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष—इन चारों पुरुषार्थके योग्य बनाना ही संस्कार करनेका उद्देश्य है। शबरस्वामीने संस्कार शब्दका अर्थ बताया है 'संस्कारो नाम स भवति यस्मिन् जाते पदार्थो भवति योग्यः कश्चिदर्थस्य।' अर्थात् संस्कार वह है, जिसके होनेसे कोई पदार्थ या व्यक्ति किसी कार्यके लिये योग्य हो जाता है। तन्त्रवार्तिकके अनुसार 'योग्यतां चादधानाः क्रियाः संस्काराः इत्युच्यन्ते।' अर्थात् संस्कार वे क्रियाएँ तथा रीतियाँ हैं, जो योग्यता प्रदान करती हैं। यह योग्यता दो प्रकारकी होती है—पापमोचनसे उत्पन्न योग्यता तथा नवीन गुणोंसे उत्पन्न योग्यता। संस्कारोंसे नवीन गुणोंकी प्राप्ति तथा पापों या दोषोंका मार्जन होता है।

संस्कार किस प्रकार दोषोंका परिमार्जन करता है, कैसे-किस रूपमें उनकी प्रक्रिया होती है—इसका विश्लेषण करना कठिन है, परंतु प्रक्रियाका विश्लेषण न भी किया जा सके, तो भी उसके परिणामको अस्वीकार नहीं किया जा सकता। आमलकके चूर्णमें आमलकके रजकी भावना देनेसे वह कई गुना शक्तिशाली बन जाता है—यह प्रत्यक्ष अनुभवकी बात है, संस्कारोंके प्रभावके सम्बन्धमें यही समझना चाहिये। अदृष्ट बातोंके सम्बन्धमें त्रिकालज्ञ महर्षियोंके शब्द प्रमाण हैं, श्रद्धापूर्वक उनका पालन करनेसे विहित फल प्राप्त किया जा सकता है। भगवान् मनुका कथन है—

वैदिकैः कर्मभिः पुण्यैर्निषेकादिर्द्विजन्मनाम्।
कार्यः शरीरसंस्कारः पावनः प्रेत्य चेह च॥

'वेदोक्त गर्भाधानादि पुण्य कर्मोंद्वारा द्विजगणोंका शरीर-संस्कार करना चाहिये। यह इस लोक और परलोक दोनोंमें पवित्र करनेवाला है।'

भारतीय सनातन धर्मकी यह मान्यता है कि एक बार माताके

गर्भसे जन्म होता है और दूसरा जन्म होता है उपनयन-संस्कारसे। इसी आधारपर जिसके वैदिक संस्कार हुए हों, उसे द्विज अर्थात् दो बार जन्म लेनेवाला कहा जाता है। ये संस्कार हिन्दू जातिकी एक बड़ी विशेषताके रूपमें माने गये हैं।

संस्कारका प्रयोजन और उसके भेद—संस्कार सामान्यतः दो प्रकारके होते हैं—एक है दोषापनयन और दूसरा है गुणाधान। कुछ विद्वानोंने इसीके तीन भेद भी बताये हैं, पहला दोषमार्जन, दूसरा अतिशयाधान तथा तीसरा हीनांगपूर्ति। किसी दर्पण आदिपर पड़ी हुई धूल आदि सामान्य मलको वस्त्र आदिसे पोछना, हटाना या स्वच्छ करना मलापनयन कहलाता है फिर किसी रंग या तेजोमय पदार्थद्वारा उसी दर्पणको विशेष चमत्कृत या प्रकाशमय बनाना गुणाधान कहलाता है। संसारकी कोई भी जड़ या चेतन वस्तु ऐसी नहीं है, जो बिना संस्कार किये हुए मनुष्यके उपयोगमें आती हो। उदाहरणके लिये हम अन्न खाते हैं, किंतु खेतमें जैसा अन्न होता है, वैसा-का-वैसा नहीं खाते। पहले उसको रौंध करके दाना निकाला जाता है और भूसी अलग की जाती है, उसमें जो दोष हैं उनको दूर करके, छान-बीन करके मिट्टी-कंकड़ सभी निकाले जाते हैं, यह दोषापनयन संस्कार है। उसे चक्कीमें पीसकर आटा निकाला जाता है, जो गुण उनमें नहीं थे, उन्हें लाया जाता है फिर उसमें पानी मिलाकर उसका पिण्ड बनाकर रोटी बेलकर तवेपर सेंककर खानेयोग्य बनाया जाता है। ये सभी गुणाधान संस्कार हैं। कोई भी चीज संस्कारसे हीन होनेपर सभ्य समाजके प्रयोगलायक नहीं होती है। खेतमें जिस रूपमें अनाज खड़ा रहता है, उसी रूपमें गाय, भैंस, घोड़ा, बछड़ा आदि उसे खा जाते हैं, लेकिन कोई मनुष्य खड़े अनाजको खेतोंमें ही खानेको तैयार नहीं होता। खायेगा तो लोग कहेंगे कि पशुस्वरूप है, इसीलिये संस्कार, संस्कृति और धर्मके द्वारा मानवमें मानवता आती है। बिना संस्कृति और संस्कारोंके मानवमें मानवता नहीं आ सकती।

उत्तम-से-उत्तम कोटिका हीरा खानसे निकलता है, उस समय

वह मिट्टी आदि अनेक दोषोंसे दूषित रहता है। पहले उसे सारे दोषोंसे मुक्त किया जाता है, फिर तराशा जाता है, तराशनेके बाद उसे इच्छानुरूप आकार दिया जाता है—यह क्रिया गुणाधान संस्कार है। तब वह हारमें पहननेलायक होता है। जैसे-जैसे उसका गुणाधान बढ़ता चला जाता है, वैसे ही मूल्य भी बढ़ता चला जाता है। संस्कारोंद्वारा ही उसकी कीमत बढ़ी, संस्कारके बिना कीमत कुछ भी नहीं। इसी प्रकार संस्कारसे विभूषित होनेपर ही व्यक्तिका मूल्य और सम्मान बढ़ता है। इसलिये अपने यहाँ संस्कारका माहात्म्य है।

मनुष्यमें मानवी शक्तिका आधान होनेके लिये उसे सुसंस्कृत होना आवश्यक है, अतः उसका पूर्णतः विधिपूर्वक संस्कार सम्पन्न करना चाहिये। वास्तवमें विधिपूर्वक संस्कार-साधनसे दिव्यज्ञान उत्पन्नकर आत्माको परमात्माके रूपमें प्रतिष्ठित करना ही मुख्य संस्कार है और मानव-जीवन प्राप्त करनेकी सार्थकता भी इसीमें है। संस्कारोंसे आत्मा—अन्तःकरण शुद्ध होता है। संस्कार मनुष्यको पाप और अज्ञानसे दूर रखकर आचार-विचार और ज्ञान-विज्ञानसे संयुक्त करते हैं।

संस्कार-कार्यके अधिकारी—अधिकारानुसार कर्म करनेसे सम्यक् फलकी प्राप्ति होती है। संस्कार कर्ममें भी किसका अधिकार है, इसे समझना आवश्यक है। महर्षि याज्ञवल्क्यने कहा है—

ब्रह्मक्षत्रियविट्शूद्रा वर्णास्त्वाद्यास्त्रयो द्विजाः।
निषेकादिश्मशानान्तास्तेषां वै मन्त्रतः क्रियाः॥

(याज्ञवल्क्यस्मृति १०)

'ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र—इनमें प्रथम तीन वर्ण द्विज कहलाते हैं। गर्भाधानसे लेकर मृत्युपर्यन्त इनकी समस्त क्रियाएँ वैदिक-मन्त्रोंके द्वारा होती है।' उपनयन आदि संस्कारोंको छोड़कर शेष संस्कार शूद्र वर्ण बिना मन्त्रके करे। यमसंहितामें कहा गया है—

'शूद्रोऽप्येवंविधः कार्यो विना मन्त्रेण संस्कृतः।'

महर्षि व्यासद्वारा गर्भाधानसे कर्णवेधतक जो नौ संस्कार कहे

गये हैं, उनमेंसे वे स्त्रियोंके संस्कार अमन्त्रक करनेकी अनुमति देते हैं, परंतु विवाह-संस्कारके लिये समन्त्रकका विधान बतलाते हैं। शूद्रके ये दसों संस्कार बिना मन्त्रके ही सम्पादित होते हैं। जैसा कि उन्होंने कहा है—

नवैताः कर्णवेधान्ता मन्त्रवर्जं क्रियाः स्त्रियाः।
विवाहो मन्त्रतस्तस्याः शूद्रस्यामन्त्रतो दश॥

(व्यासस्मृति १। १५-१६)

आचार्य याज्ञवल्क्यका कथन है कि स्त्रियोंके नौ संस्कार अमन्त्रक ही सम्पन्न कराये जाते हैं, किंतु विवाह मन्त्रके साथ सम्पन्न कराना चाहिये—

'तूष्णीमेताः क्रियाः स्त्रीणां विवाहस्तु समन्त्रकः।'

अपनी-अपनी वेदशाखाके अनुसार संस्कार कराना चाहिये— 'स्वे स्वे गृह्ये यथा प्रोक्तास्तथा संस्कृतयोऽखिलाः।' **इसी बातको 'महानिर्वाणतन्त्र' में दूसरे शब्दोंमें भगवान् सदाशिव देवी पार्वतीको बतलाते हुए कहते हैं कि संस्कारके बिना शरीर शुद्ध नहीं होता और अशुद्ध व्यक्ति देवताओं एवं पितरों (हव्य एवं कव्य)-के कार्योंको करनेका अधिकारी नहीं होता है। अतः लोक-परलोकमें कल्याणकी इच्छा रखनेवाले विप्रादि वर्णोंको अपने-अपने वर्णके अनुसार अत्यन्त प्रयत्नपूर्वक संस्कारकर्मका सम्पादन करना चाहिये। यथा—**

संस्कारेण विना देवि देहशुद्धिर्न जायते।
नासंस्कृतोऽधिकारी स्याद्दैवे पैत्र्ये च कर्मणि॥
अतो विप्रादिभिर्वर्णैः स्वस्ववर्णोक्तसंस्क्रिया।
कर्तव्या सर्वथा यत्नैरिहामुत्र हितेप्सुभिः॥

अतः संस्कारोंको सम्पन्न करना नितान्त अपेक्षित है। इससे शारीरिक एवं मानसिक मलोंका अपाकरण होता है तथा आध्यात्मिक पूर्णताकी प्राप्ति सहज होती है, जो मानव-जीवनका चरम लक्ष्य है।

संस्कार शब्दका अर्थ—'संस्कार' शब्द 'सम्' उपसर्गपूर्वक 'कृञ्' **धातुमें** 'घञ्' **प्रत्यय लगानेपर** 'संपरिभ्यां करोतौ भूषणे' **इस**

पाणिनीय सूत्रसे भूषण अर्थमें 'सुट्' करनेपर सिद्ध होता है। इसका अर्थ है—संस्करण, परिष्करण, विमलीकरण तथा विशुद्धीकरण आदि। जिस प्रकार किसी मलिन वस्तुको धो-पोंछकर शुद्ध-पवित्र बना लिया जाता है अथवा जैसे सुवर्णको आगमें तपाकर उसके मलोंको दूर किया जाता है और मलके जल जानेपर सुवर्ण विशुद्धरूपमें चमकने लगता है, ठीक उसी प्रकारसे संस्कारोंके द्वारा जीवके जन्म-जन्मान्तरोंसे संचित मलरूप निकृष्ट कर्म-संस्कारोंका भी दूरीकरण किया जाता है। यही कारण है कि हमारे सनातनधर्ममें बालकके गर्भमें आनेसे लेकर जन्म लेनेतक और फिर बूढ़े होकर मरनेतक संस्कार किये जाते हैं।

काशिकावृत्तिके अनुसार उत्कर्षके आधानको संस्कार कहते हैं—'उत्कर्षाधानं संस्कारः।' संस्कारप्रकाशके अनुसार अतिशय गुणको संस्कार कहा जाता है—'अतिशयविशेषः संस्कारः।' मेदिनीकोशके अनुसार संस्कार शब्दका अर्थ है—प्रतियत्न, अनुभव अथवा मानसकर्म। न्यायशास्त्रके मतानुसार गुणविशेषका नाम संस्कार है, जो तीन प्रकारका होता है—वेगाख्य संस्कार, स्थितिस्थापक संस्कार और भावनाख्य संस्कार। सारांशरूपमें संस्कारकी तीन प्रक्रियाएँ हैं—दोषमार्जन, अतिशयाधान और हीनांगपूर्ति, जिनका व्याख्यान पूर्वमें किया गया है।

संस्कारदीपकमें संस्कारको परिभाषित करते हुए कहा गया है कि आत्मा या शरीरके विहित क्रियाके द्वारा अतिशय आधानको संस्कार कहते हैं। गर्भाधान आदिमें संस्कार पदका प्रयोग लाक्षणिक है—'तत्र संस्कारो नाम आत्मशरीरान्यतरनिष्ठो विहितक्रियाजन्योऽतिशयविशेषः गर्भाधानादौ संस्कारपदं लाक्षणिकम्।'

संस्कारोंकी संख्या—संस्कारकी संख्याके विषयमें स्मृतिशास्त्रमें मतभेद पाये जाते हैं। कहीं ४८ संस्कार तो कहीं २५ और कहीं १६ संस्कार बतलाये गये हैं। जातुकर्ण्य ऋषिने ब्राह्म संस्कारकी संख्या सोलह बतलायी है। वे हैं—१. गर्भाधान, २. पुंसवन, ३. सीमन्तोन्नयन,

४. जातकर्म, ५. नामकरण, ६. अन्नप्राशन, ७. चूडाकरण, ८. उपनयन, ९. वेदारम्भ, १०. ब्रह्मव्रत, ११. वेदव्रत, १२. गोदान, १३. समावर्तन, १४. विवाह, १५. ब्राह्मव्रत और १६. अन्त्यकर्म—

आधानपुंससीमन्तजातनामान्नचौलकाः ।
मौञ्जी व्रतानि गोदानसमावर्तविवाहकाः ॥
अन्त्यं चैतानि कर्माणि प्रोच्यन्ते षोडशैव तु ।

इसी प्रकार महर्षि अंगिराने पूर्वोक्त गर्भाधानादि षोडश संस्कारोंके साथ आग्रयण, अष्टका, श्रावणीकर्म, आश्वयुजीकर्म, प्रत्यवरोहण, दर्शश्राद्ध, वेदारम्भ, वेदोत्सर्जन, प्रतिदिन सम्पन्न किये जानेवाले पंच महायज्ञ—इनको मिलाकर पच्चीस संस्कार स्वीकार किये हैं। गौतमस्मृतिमें चालीस संस्कारोंका वर्णन है। अन्यत्र आठ गुणोंके साथ अड़तालीस संस्कारोंका उल्लेख हुआ है।

संस्कार-विमर्शक प्रधान ग्रन्थोंमें भिन्न-भिन्न प्रकार एवं नामोंसे संस्कारोंकी नामावली दी गयी है, जिसका संक्षिप्त विवरण यहाँ प्रस्तुत है—

आश्वलायनगृह्यसूत्र—**१. विवाह, २. गर्भाधान, ३. पुंसवन, ४. सीमन्तोन्नयन, ५. जातकर्म, ६. नामकरण, ७. चूडाकरण, ८. उपनयन, ९. समावर्तन और १०. अन्त्येष्टि।**

बौधायनगृह्यसूत्र—**१. विवाह, २. गर्भाधान, ३. पुंसवन, ४. सीमन्तोन्नयन, ५. जातकर्म, ६. नामकरण, ७. उपनिष्क्रमण, ८. अन्नप्राशन, ९. चूडाकरण, १०. कर्णवेध, ११. उपनयन, १२. समावर्तन और १३. पितृमेध।**

पारस्करगृह्यसूत्र—**१. विवाह, २. गर्भाधान, ३. पुंसवन, ४. सीमन्तोन्नयन, ५. जातकर्म, ६. नामकरण, ७. निष्क्रमण, ८. अन्नप्राशन, ९. चूडाकरण, १०. उपनयन, ११. केशान्त, १२. समावर्तन और १३. अन्त्येष्टि।**

वाराहगृह्यसूत्र—**१. जातकर्म, २. नामकरण, ३. दन्तोद्गमन, ४. अन्नप्राशन, ५. चूडाकरण, ६. उपनयन, ७. वेदव्रत, ८. गोदान,**

९. समावर्तन, १०. विवाह, ११. गर्भाधान, १२. पुंसवन और १३. सीमन्तोन्नयन।

***वैखानसगृह्यसूत्र*—१. ऋतुसंगमन, २. गर्भाधान, ३. सीमन्तोन्नयन, ४. विष्णुबलि, ५. जातकर्म, ६. उत्थान, ७. नामकरण, ८. अन्नप्राशन, ९. प्रवासागमन, १०. पिण्डवर्धन, ११. चौलक, १२. उपनयन, १३. पारायण, १४. व्रतबन्धविसर्ग, १५. उपाकर्म, १६. उत्सर्जन, १७. समावर्तन और १८. पाणिग्रहण।**

इस प्रकार षोडश संस्कारके विषयमें महर्षियोंके मतभेद होनेपर भी निम्नलिखित षोडश संस्कारोंमें सभीका अन्तर्निवेश हो जाता है, जो मीमांसादर्शनके अनुसार भी मान्य है। वे हैं—

१. गर्भाधान, २. पुंसवन, ३. सीमन्तोन्नयन, ४. जातकर्म, ५. नामकरण, ६. अन्नप्राशन, ७. चूडाकरण, ८. उपनयन, ९. ब्रह्मव्रत, १०. वेदव्रत, ११. समावर्तन, १२. विवाह, १३. अग्न्याधान, १४. दीक्षा, १५. महाव्रत और १६. संन्यास।

व्याससमृतिमें १६ संस्कारोंके नाम इस प्रकार प्राप्त होते हैं— १. गर्भाधान, २. पुंसवन, ३. सीमन्तोन्नयन, ४. जातकर्म, ५. नामकरण, ६. निष्क्रमण, ७. अन्नप्राशन, ८. वपनक्रिया (या चूडाकरण), ९. कर्णवेध, १०. उपनयन (व्रतादेश), ११. वेदारम्भ, १२. केशान्त, १३. समावर्तन, १४. विवाह, १५. विवाहाग्निपरिग्रह तथा १६. त्रेताग्नि-संग्रह। यथा—

गर्भाधानं पुंसवनं सीमन्तो जातकर्म च।
नामक्रियानिष्क्रमणेऽन्नाशनं वपनक्रिया॥
कर्णवेधो व्रतादेशो वेदारम्भक्रियाविधिः।
केशान्तः स्नानमुद्वाहो विवाहाग्निपरिग्रहः॥
त्रेताग्निसङ्ग्रहश्चेति संस्काराः षोडश स्मृताः।

(व्यासस्मृति १। १३—१५)

अन्य गृह्यसूत्रोंमें इन संस्कारोंके नाम कुछ भिन्न हैं, जैसे— गर्भाधान, पुंसवन, सीमन्तोन्नयन, जातकर्म, नामकरण, निष्क्रमण,

अन्नप्राशन, चूडाकरण, कर्णवेध, उपनयन, वेदारम्भ, समावर्तन, विवाह, वानप्रस्थ, संन्यास एवं अन्त्येष्टि।

इनमें प्रथम तीन गर्भाधान, पुंसवन तथा सीमन्तोन्नयन प्रसवके पूर्वके हैं, जो मुख्यतः माता-पिताद्वारा बीज एवं क्षेत्रकी शुद्धिके लिये किये जाते हैं। अग्रिम छः जातकर्मसे कर्णवेधतक बाल्यावस्थाके हैं, जो परिवार-परिजनके सहयोगसे सम्पन्न होते हैं। अग्रिम तीन उपनयन, वेदारम्भ, समावर्तन विद्याध्ययनसे सम्बद्ध हैं, जो मुख्यतः आचार्यके निर्देशानुसार सम्पन्न होते हैं। विवाह, वानप्रस्थ एवं संन्यास—ये तीन संस्कार तीन आश्रमोंके प्रवेशद्वार हैं तथा व्यक्ति स्वयं इनका निष्पादन करता है और अन्त्येष्टि जीवनयात्राका अन्तिम संस्कार है, जिसे पुत्र-पौत्र आदि पारिवारिक जन तथा इष्ट-मित्रोंके सहयोगसे किया जाता है।

इनमें प्रथम आठ संस्कार प्रवृत्तिमार्गीय और दूसरे आठ संस्कार निवृत्तिमार्गीय हैं; क्योंकि भगवान् मनुने 'ब्राह्मीयं क्रियते तनुः' इत्यादि शब्दोंके द्वारा संस्कारका लक्ष्य जीवशरीरको ब्रह्मत्व-प्राप्तिके लिये योग्यताका निर्माण कहा है। यह ब्रह्मत्वप्राप्ति निवृत्तिकी पराकाष्ठामें ही होना सम्भव है, इसलिये सोलह संस्कार जो कि प्रवृत्ति-निरोध और निवृत्तिके पोषक हैं, जीवात्माकी पूर्णताप्राप्तिके लिये समीचीन जान पड़ते हैं।

इसलिये द्विजमात्रका शरीरसंस्कार वेदोक्त पवित्र विधियोंद्वारा अवश्य करना चाहिये; क्योंकि ये संस्कार इस मानवलोकके साथ-साथ परलोकमें भी परम पावन हैं। गर्भावस्थाके आधान, पुंसवन एवं सीमन्तोन्नयन तथा जन्मके पश्चात् जातकर्म, चूडाकरण और उपनयनादि संस्कारोंके समय प्रयुक्त हवनादि विधियोंद्वारा जन्मदाता पिताके वीर्य एवं जन्मदात्री माताके गर्भजन्य समस्त दोषोंका शमन हो जाता है तथा वेद-मन्त्रोंके प्रभावसे नवजात शिशुके अन्तःकरणमें शुभ विचारों तथा प्रवृत्तियोंका उदय होता है। इसके साथ-साथ ही उपनयनके प्रयोजनीय वेदारम्भादि संस्कारोंद्वारा विविध हवनीय विधियोंसे, त्रयी विद्या

(ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद)-के स्वाध्यायसे, गृहस्थाश्रममें पुत्रोत्पादनद्वारा तीन ऋणों (पितृ, ऋषि एवं देव)-के अपाकरण तथा पञ्च महायज्ञ एवं अग्निष्टोमादि यज्ञोंके अनुष्ठानसे यह शरीर ब्रह्मप्राप्ति (सद्गति या मोक्ष)-का अधिकारी बनाया जाता है।

इसी प्रकार महर्षि याज्ञवल्क्यने भी संस्कारोंसे दोष दूर होना बतलाया है—

'एवमेनः शमं याति बीजगर्भसमुद्भवम्।'

(आचाराध्याय २। १३)

इस प्रकार संस्कारोंकी सम्पन्नतासे शारीरिक, मानसिक आदि सभी परिशुद्धियाँ होती हैं, जिनसे मनुष्य प्रेय एवं श्रेय दोनोंको प्राप्त करता है। इन संस्कारोंका प्रभाव चूँकि अन्तःकरणपर भी पड़ता है, अतः उत्तम संस्कारोंसे अन्तःकरणको उत्कृष्ट बनाना चाहिये। इसलिये जिसके सोलह या अड़तालीस संस्कार यथाविधि सम्पन्न होते हैं, वह ब्राह्मपदको प्राप्त करता है।* मानव-जीवनको शुद्ध करनेकी चरणबद्ध प्रक्रियाका नाम संस्कार है। लौकिक जीवनमें मनुष्य आनन्दका संचय करते हुए च्युतिरहित चरमलक्ष्यकी प्राप्ति संस्कारोंसे करता है।

विभिन्न संस्कारोंसे सम्बन्धित ज्ञातव्य बातें, उनका सामान्य परिचय तथा संस्कारोंकी प्रयोगात्मक विधि आगे लिखी जा रही है, जिससे संस्कारोंसे सम्बन्धित सभी जानकारी सर्वसामान्यको हो सके।

आशा है, सर्वसाधारणजन इस पुस्तकसे पूर्ण लाभान्वित होंगे।

इस घोर कलिकालमें संस्कारोंके लोप होनेसे यदि इस ग्रन्थके द्वारा भगवत्कृपासे किंचित् रक्षा हो सकी तथा सर्वसाधारणके कल्याणमें यह निमित्त बन सका तो प्रस्तुत प्रकाशन सार्थक होगा।

—राधेश्याम खेमका

---

* यस्यैते षोडश अष्टचत्वारिंशद्वा सम्यक् संस्कारा भवन्ति, स ब्रह्मणः सायुज्यं सलोकतां प्राप्नोति। (गौतम)

॥ श्रीहरिः ॥

संस्कारप्रकाश

गर्भाधानसंस्कार

गर्भाधानसंस्कारका सामान्य परिचय—

'गर्भाधान' शब्द दो शब्दोंके योगसे बना है—गर्भ+आधान। आधानका सामान्य अर्थ है स्थापित करना या रखना। इस प्रकार गर्भाधानका शाब्दिक अर्थ है पुरुषके द्वारा स्त्रीके गर्भाशयमें बीजरूप शुक्रका स्थापित करना। स्त्रीको क्षेत्र कहा गया है और पुरुषको बीज। जैसे बीजवपनके लिये भूमि (क्षेत्र—खेत)-की आवश्यकता होती है, वैसे ही पुरुषरूपी बीजके स्त्रीरूपी क्षेत्रमें स्थापित होनेकी यथोचित क्रिया गर्भाधान है, किंतु इस सृष्टि-प्रक्रियाको धार्मिक तथा यज्ञरूपमें बनाना अर्थात् उसे संस्कृत करना संस्कारका कार्य है। वैसे तो समस्त जीवधारियोंमें स्त्रीवर्ग तथा पुरुषवर्गमें सहजरूपसे सहवास होता है, जिसका परिणाम सन्तानोत्पत्ति है, किंतु यह मैथुनी-सृष्टिका पाशविक धरातल है। यद्यपि मानव पशुओंसे भिन्न विवेकसम्पन्न प्राणी है तथापि उसे इस पाशविक धरातलसे ऊपर उठानेके लिये और निरंकुश पाशविक प्रवृत्तियोंपर अंकुश लगानेके लिये दीर्घदर्शी ऋषि-महर्षियोंने गर्भाधानादि धार्मिक संस्कारोंका विधान बनाया, ताकि स्वेच्छाचार एवं कामाचारपर नियन्त्रण हो और सुसंस्कृत माता-पिताद्वारा उत्पन्न सन्तान आध्यात्मिक भावनासे सम्पन्न हो।

जैसे अन्तःकरणकी शुद्धिके लिये भगवद्भक्ति, शम-दमादि अनेक साधन हैं, वैसे ही शरीर तथा बाह्य करणोंकी शुद्धि संस्कारोंसे होती है। यद्यपि गर्भाधान-संस्कारका कृत्य बाह्य है, किंतु इसका पूर्ण प्रभाव सन्तानके मन, बुद्धि, चित्त तथा हृदयपर विलक्षणरूपसे होता है।

गर्भाधान–संस्कारके लिये माता–पिता का सदाचारसम्पन्न होना, ऋतुकालका उपस्थित होना, ऋतुकालमें भी निषिद्ध तिथियों, नक्षत्रों, पर्वों तथा योगोंका परिहार करना, सहवाससे पूर्व देवपूजन तथा वैदिक मन्त्रोंका पाठ करना, सुलक्षण तथा धार्मिक भावोंसे सम्पन्न सन्ततिकी कामना करना तथा प्रसन्नचित्त हो केवल सन्तानोत्पत्तिके लिये परस्पर सहवास करना इत्यादि जो धार्मिक, मानस एवं शारीरिक क्रियाएँ हैं, उनके फलके सम्बन्धमें बताया गया है कि इस प्रकारके गर्भाधानद्वारा पुरुषका जो बीजसम्बन्धी दोष–पाप है, वह नष्ट हो जाता है और स्त्रीके आर्तव एवं गर्भसम्बन्धी जो दोष होते हैं, वे नष्ट हो जाते हैं तथा क्षेत्र (गर्भाशय)–की शुद्धि हो जाती है। याज्ञवल्क्यस्मृति (आचारा० १३)–में कहा गया है—'**एवमेनः शमं याति बीजगर्भ–समुद्भवम्॥**' इस प्रकार इस संस्कारके द्वारा होनेवाली सन्तति भी स्वाभाविकरूपसे संस्कारसम्पन्न और सुसंस्कृत होती है। स्मृतिसंग्रहमें इन्हीं बातों को गर्भाधान–संस्कारका फल बताया गया है—'**निषेकाद् बैजिकं चैनो गार्भिकं चापमृज्यते। क्षेत्रसंस्कारसिद्धिश्च गर्भाधानफलं स्मृतम्॥**'

आचार्य पारस्करने अपने गृह्यसूत्रमें लिखा है—'**तामुदुह्य यथर्तु–प्रवेशनम्।**' अर्थात् वधूको उद्वाहकर ऋतुकालमें प्रवेशन अर्थात् गर्भाधान करना चाहिये। यह संस्कार ऋतुकालमें निषिद्ध तिथियोंको छोड़कर विहित तिथियोंमें करणीय है। पितृऋणसे मुक्तिकी इच्छा गर्भाधान–संस्कारका पवित्र एवं आध्यात्मिक उद्देश्य है। '**ऋणानि त्रीण्यपाकृत्य मनो मोक्षे निवेशयेत्।**' (मनुस्मृति)।

गर्भाधान–संस्कारका अनुष्ठान उस समय होता है, जब पति और पत्नी दोनों सन्तानोत्पत्तिके योग्य और स्वस्थ होते हैं, जब वे एक–दूसरेके हृदयको जानते हैं और जब उनमें सन्तान उत्पन्न करनेकी प्रबल इच्छा होती है। उस समय देवपूजन और मन्त्रोंके द्वारा उपयुक्त वातावरण उपस्थित होता है तो ऐसेमें वह स्त्रीप्रसंग ऐन्द्रिय सुख नहीं,

अपितु एक सूक्ष्म यज्ञका स्वरूप धारण करके पैतृक ऋणकी मुक्तिका साधन बनता है—'**प्रजया पितृभ्यः ।**' (तैत्तिरीय संहिता ६ । ३ । १० । ५)

गर्भाधान-संस्कार विषयानन्द नहीं, वैषयिक सुख नहीं, अपितु उत्तम सन्तानप्राप्तिका यज्ञ-कर्म है, गर्भाधान-संस्कारके लिये अच्छे विचार, पावन एवं निश्च्छल मानसिकता, तपःपूत चिन्तन एवं संयम-शक्ति अपरिहार्य तत्त्व है। गर्भाधान-संस्कार विवाह-संस्कारकी पूर्णताको व्यक्त करता है। गर्भाधान-संस्कार होनेपर मातृगर्भमें आत्मरूप जीवकी प्रतिष्ठा हो जानेपर ही आगेके संस्कार सम्भव हैं, क्योंकि गर्भमें जीवके आनेपर ही आगेके पुंसवन, सीमन्तोन्नयन तथा प्रसवके अनन्तरके जातकर्म आदि संस्कार होते हैं, इस दृष्टिसे गर्भाधान-संस्कारका सर्वोपरि महत्त्व है। यथाविधि संस्कारके सम्पन्न होनेपर पंचतत्त्वोंकी, पंचकोशोंकी तथा मातासे उत्पन्न होनेवाले त्वक्, मांस, शोणित एवं पितासे उत्पन्न होनेवाले अस्थि, स्नायु एवं मज्जा*—इन धातुओंकी शुद्धि हो जाती है।

बृहदारण्यकोपनिषद्में इस गर्भाधान-संस्कारके सम्बन्धमें विस्तारसे विवेचन हुआ है और इसे सन्तानोत्पत्तिविज्ञान अथवा पुत्रमन्थकर्म कहा गया है और बताया गया है कि चराचर सभी भूतोंका रस पृथिवी है, पृथ्वीका रस जल है, जलका रस औषधियाँ हैं, औषधियोंका रस पुष्प है, पुष्पोंका रस फल, फलोंका रस (आधार) पुरुष है और पुरुषका रस (सार) शुक्र है, इस रस (वीर्य)-की स्थापनाके लिये प्रजापतिने स्त्रीकी सृष्टि की और दोनोंके पवित्र सहवाससे उत्तम सन्तानकी प्राप्ति होती है, वहाँ यह भी बताया गया है कि जो पुरुष चाहे कि मेरा पुत्र शुक्ल वर्णका हो, वेदका अध्ययन करे, पूरी आयु अर्थात् सौ वर्षतक जीवित रहे तो दोनों पति-पत्नीको चाहिये कि खीर बनाकर उसमें घृत

* अस्थि स्नायुश्च मज्जा च जानीमः पितृतो गुणाः ॥ त्वङ्मांसं शोणितं चेति मातृजान्यपि शुश्रुम। (महा० शान्ति० ३०५ । ५-६)

डालकर सेवन करें, इससे वे वैसे पुत्रको जन्म देनेमें समर्थ होते हैं—**'स य इच्छेत् पुत्रो मे शुक्लो जायेत वेदमनुब्रवीत सर्वमायुरियादिति क्षीरौदनं पाचयित्वा सर्पिष्मन्तमश्नीयातामीश्वरौ जनयितवै।'** (बृहदारण्यक० ६।४।१४) विदुषी कन्याप्राप्तिके लिये भी ऐसा ही प्रयोग बताया गया है।

गर्भाधान-क्रियासे सम्बद्ध मन्त्रोंके भावमें बताया गया है—प्रिये! सर्वव्यापी भगवान् विष्णु तेरी जननेन्द्रियको पुत्रकी उत्पत्तिमें समर्थ बनायें। भगवान् सूर्य तेरे तथा उत्पन्न होनेवाले बालकके अंगोंको विभागपूर्वक पुष्ट एवं दर्शनीय बनायें, विराट् पुरुष भगवान् प्रजापति मुझसे अभिन्न रूपमें स्थित हो तुझमें वीर्यका आधान करें। भगवान् धाता तेरे गर्भका धारण और पोषण करें। हे देवि! जिसकी भूरि-भूरि स्तुति की जाती है, वह सिनीवाली (जिसमें चन्द्रमाकी एक कला शेष रहती है, वह अमावास्या) तुम हो, तुम यह गर्भ धारण करो, धारण करो। देव अश्विनीकुमार (सूर्य और चन्द्रमा) अपनी किरणरूपी कमलोंकी माला धारण करके मुझसे अभिन्न रूपमें तुझमें गर्भका आधान करें—

गर्भं धेहि सिनीवालि गर्भं धेहि पृथुष्टुके।
गर्भं ते अश्विनौ देवावाधत्तां पुष्करस्त्रजौ॥

(बृहदारण्यक० ६।४।२१)

गर्भाधानके पूर्व तथा पश्चात् मन्त्रोंका स्मरण यह भारतीय आर्यचिन्तनमें ही सम्भव है, विश्वमें इस प्रकारका प्रयोग कहीं नहीं है। इसी कारण ऋषियोंका देश भारत जगद्गुरु कहा गया है।

इतना ही नहीं, सुखपूर्वक प्रसव कैसे हो, इसका भी विधान वहाँ बताया गया है और प्रसव करनेवाली स्त्रीको सोष्यन्ती नामसे कहा गया तथा मन्त्रपूर्वक जलसिंचनकी क्रियाको सुखप्रसवका उपाय बताया गया है। (बृहदारण्यक० ६।४।२३)

सहवासके अनन्तरका कृत्य—

आचारादर्शमें महर्षि पराशरके वचनसे बताया गया है कि ऋतुकालमें गर्भ रहनेकी आशंका है, अतः गमनके अनन्तर पुरुषको अशिरस्क स्नान (मार्जन) करके आचमन-प्राणायाम करके भगवान्‌का स्मरण करना चाहिये, किंतु जो ऋतुकालरहित समयमें सहवास करता है, उसकी शुद्धि मूत्रपुरीषवत् होती है—

ऋतौ तु गर्भशङ्कित्वात्स्नानं मैथुनिनः स्मृतम्।
अनृतौ तु यदा गच्छेच्छौचं मूत्रपुरीषवत्॥

यहाँपर विशेष यह बताया गया है कि ऋतुकालमें मैथुन करनेवालेको अशिरस्कस्नान तथा बिना ऋतुकालमें गमन करनेपर पादप्रक्षालन, अंगप्रोक्षण आदि करना चाहिये। स्नानकी आवश्यकता नहीं है, किंतु दोनों अवस्थाओंमें इन्द्रियोंकी मूत्रपुरीषवत् शुद्धि करनी चाहिये। रात्रिमें स्नान निषिद्ध होनेसे मार्जन आदि करना चाहिये, ऐसा आचारादर्शमें बताया गया है।

स्त्रियोंके लिये स्नानादिकी आवश्यकता नहीं है; क्योंकि उनमें अशुचित्व नहीं रहता। वृद्धशातातपका कहना है कि स्त्री-पुरुष शयनकालमें दोनों अशुचि रहते हैं, किंतु सहवासके अनन्तर शयनसे उठ जानेपर पृथक् हो जानेपर स्त्री शुचि ही रहती है, किंतु पुरुष अशुचि हो जाता है, इसलिये उसे मार्जन-स्नानादिसे पवित्र होना चाहिये—

उभावप्यशुची स्यातां दम्पती शयनं गतौ।
शयनादुत्थिता नारी शुचिः स्यादशुचिः पुमान्॥

गर्भाधानके लिये शुभाशुभ समय—

गर्भाधानके उपयुक्तकालके विषयमें धर्मग्रन्थोंमें बहुत विचार हुआ है। उन सभी बातोंको मुहूर्तचिन्तामणिके निम्न दो श्लोकोंमें बता दिया गया है—

गण्डान्तं त्रिविधं त्यजेन्निधनजन्मर्क्षे च मूलान्तकं
दास्त्रं पौष्णमथोपरागदिवसं पातं तथा वैधृतिम्।
पित्रोः श्राद्धदिनं दिवा च परिघाद्यर्धं स्वपत्नीगमे
भान्युत्पातहतानि मृत्युभवनं जन्मर्क्षतः पापभम्॥
भद्राषष्ठीपर्वरिक्ताश्च सन्ध्या-
भौमार्कार्कीनाद्यरात्रीश्चतस्त्रः ।
गर्भाधानं त्र्युत्तरेन्द्वर्कमैत्र-
ब्राह्मस्वातीविष्णुवस्वम्बुभे सत्॥

'नक्षत्र, तिथि तथा लग्नके गण्डान्त, निधन-तारा, जन्म-तारा, मूल, भरणी, अश्विनी, रेवती, ग्रहण-दिन, व्यतीपात, वैधृति, माता-पिताका श्राद्ध-दिन, दिनके समय, परिघयोगके आदिका आधा भाग, उत्पातसे दूषित नक्षत्र, जन्मराशि या जन्मनक्षत्रसे आठवाँ लग्न, पापयुक्त नक्षत्र या लग्न, भद्रा, षष्ठी, चतुर्दशी, अष्टमी, अमावास्या, पूर्णिमा, संक्रान्ति, सन्ध्याके दोनों समय, मंगलवार, रविवार और शनिवार, रजोदर्शनसे आरम्भ करके चार दिन—ये सब पत्नीगमनमें वर्जित हैं। शेष तिथियाँ, सोमवार, बृहस्पति, शुक्र, बुधवार, तीनों उत्तरा, मृगशिरा, हस्त, अनुराधा, रोहिणी, स्वाती, श्रवण, धनिष्ठा और शततारका—ये गर्भाधानके लिये शुभ हैं।'

गर्भाधानके समयकी भावना—

सहवासके समय स्त्री और पुरुषकी भावनाएँ, चेष्टाएँ, आहार और आचार जैसे होते हैं, इनकी सन्तानमें भी ऐसी भावना और आहार-आचार रहता है—

आहाराचारचेष्टाभिर्यादृशीभिः समन्वितौ।
स्त्रीपुंसौ समुपेयातां तयोः पुत्रोऽपि तादृशः॥

(सुश्रुतसंहिता, शारीरस्थान २। ४६)

जो माता-पिता देवता, ब्राह्मणकी पूजा (सत्कार) करते हैं, शौच

(पवित्रता) तथा सदाचारका पालन करते हैं, वे महान् गुणशाली पुत्रोंको उत्पन्न करते हैं, इसके विपरीत आचरण करनेवाले माता-पिता निर्गुण सन्तान उत्पन्न करते हैं—

देवताब्राह्मणपराः शौचाचाररहिते रताः।
महागुणान् प्रसूयन्ते विपरीतास्तु निर्गुणान्॥

(सुश्रुतसंहिता, शारीरस्थान ३। ३५)

जिस भावसे स्त्री-पुरुषका मिलन होता है, उसी भावसे युक्त सन्तान होती है। इसीलिये गर्भाधानके समय मनमें सुयोग्य, उत्तम चरित्रसे सम्पन्न, गुणवान् तथा धर्मात्मा पुत्रोत्पत्तिका भाव रखना चाहिये—

यादृशेन हि भावेन योनौ शुक्रं समुत्सृजेत्॥
तादृशेन हि भावेन सन्तानं सम्भवेदिति।

(नारदपुराण २। २७। २९-३०)

गर्भिणी स्त्रीके आवश्यक पालनीय नियम—

जब गर्भमें सन्तान होती है, तब माता जैसी सात्त्विक, राजस, तामस भावनासे भावित रहती है, जैसा अच्छा-बुरा देखती, सुनती, पढ़ती, खाती-पीती है, उन सबका गर्भमें स्थित सन्तानपर प्रभाव पड़ता है। इसलिये गर्भवती स्त्रीको राजस-तामस भावोंसे बचकर सात्त्विक भावनाएँ करनी चाहिये। गन्दे एवं अश्लील दृश्योंको न देखकर सात्त्विक देवदर्शन, सन्तदर्शन आदि ही करना चाहिये। गन्दे गीत सुनना-गाना छोड़कर सात्त्विक भजन-कीर्तन ही सुनना-गाना चाहिये। गन्दे उपन्यास पढ़ना-सुनना-सुनाना छोड़कर रामायण, भागवत आदि सात्त्विक ग्रन्थ ही पढ़ना-सुनना-सुनाना चाहिये। राजस-तामस, मांस-मदिरा-अंडा-प्याज-लहसुन, अति तीक्ष्ण मिर्च-मसाला छोड़कर सात्त्विक दूध-घी-दाल-रोटी आदि ही खाना-पीना चाहिये। गर्भकालीन भावनाका सन्तानपर प्रत्यक्ष प्रभाव पड़ता है। इसलिये गर्भवती स्त्रीको चाहिये कि

वह सद्विचार, सत्संग, सद्ग्रन्थोंका अध्ययन तथा शुभ दृश्योंको देखे। गर्भकालमें प्रह्लादकी माता कयाधू देवर्षि नारदजीके आश्रममें रहकर नित्य हरिचर्चा सुनती थीं, इससे उनका पुत्र प्रह्लाद महान् भक्त हुआ। सुभद्राके गर्भमें ही अभिमन्युने अपने पिता अर्जुनके साथ माताकी बातचीतमें चक्रव्यूह-भेदनकी कला सीख ली थी।

शास्त्रोंमें गर्भावस्थामें स्त्रीकी चर्या कैसी होनी चाहिये, उसपर बहुत विचार हुआ है, यहाँपर पुराणों, धर्मशास्त्रों तथा आयुर्वेदशास्त्रके आधारपर कुछ विवेचन दिया जा रहा है—

मत्स्यपुराण—

मरीचिनन्दन महर्षि कश्यप सम्पूर्ण प्रजाओंके पिता हैं और सन्तानविज्ञानके महान् ज्ञाता हैं। समस्त देवता, दैत्यों आदिके पिता होनेका उन्हें गौरव प्राप्त है। एक बारकी बात है, जब देवासुरसंग्राममें देवताओंद्वारा दितिपुत्रोंका संहार हो गया तो दैत्यमाता दिति शोकसे विह्वल हो गयी। उन्होंने अपनी तपस्यासे प्रसन्न अपने पति महर्षि कश्यपसे ऐसा महान् बलशाली पुत्र प्राप्त करनेकी इच्छा की, जो देवराज इन्द्रको भी परास्त कर दे। तब कश्यपजीने उससे कहा—ऐसा ही होगा, किंतु गर्भावस्थामें तुम्हें उन आवश्यक नियमोंका पालन करना पड़ेगा, जिससे कि तुम्हारा गर्भ सुरक्षित रह सके। यदि तुम इन नियमोंका पालन नहीं करोगी तो गर्भ नष्ट हो जायगा। फिर महर्षिने दितिको गर्भिणीके नियम बताये, जो इस प्रकार हैं—

'वरवर्णिनि! गर्भिणी स्त्रीको सन्ध्याकालमें भोजन नहीं करना चाहिये। उसे न तो कभी वृक्षके मूलपर बैठना चाहिये, न उसके निकट ही जाना चाहिये। वह घरकी सामग्री मूसल, ओखली आदिपर न बैठे, जलमें घुसकर स्नान न करे, सुनसान घरमें न जाय, बिमवट (दीमककी बाँबी)-पर न बैठे, मनको उद्विग्न न करे, नखसे,

लुआठीसे अथवा राखसे पृथ्वीपर रेखा न खींचे, सदा नींदमें अलसायी हुई न रहे, कठिन परिश्रमका काम न करे, भूसी, लुआठी, भस्म, हड्डी और खोपड़ीपर न बैठे, लोगोंके साथ वाद-विवाद न करे और शरीरको तोड़े-मरोड़े नहीं। वह बाल खोलकर न बैठे, कभी अपवित्र न रहे, उत्तर दिशामें सिरहाना करके एवं कहीं भी नीचे सिर करके न सोये, न नग्न होकर, न उद्विग्नचित्त होकर एवं न भीगे चरणोंसे ही कभी शयन करे, अमंगलसूचक वाणी न बोले, अधिक जोरसे हँसे नहीं, नित्य मांगलिक कार्योंमें तत्पर रहकर गुरुजनोंकी सेवा करे और (आयुर्वेदद्वारा गर्भिणीके स्वास्थ्यके लिये उपयुक्त बतलायी गयी) सम्पूर्ण औषधियोंसे युक्त गुनगुने गरम जलसे स्नान करे। वह अपनी रक्षाका ध्यान रखे, स्वच्छ वेष-भूषासे युक्त रहे, वास्तु-पूजनमें तत्पर रहे, प्रसन्नमुखी होकर सदा पतिके हितमें संलग्न रहे, तृतीया तिथिको दान करे, पर्व-सम्बन्धी व्रत एवं नक्तव्रतका पालन करे। जो गर्भिणी स्त्री विशेषरूपसे इन नियमोंका पालन करती है, उसका उस गर्भसे जो पुत्र उत्पन्न होता है, वह शीलवान् एवं दीर्घायु होता है। इन नियमोंका पालन न करनेपर निस्सन्देह गर्भपातकी आशंका बनी रहती है। प्रिये! इसलिये तुम इन नियमोंका पालन करके इस गर्भकी रक्षाका प्रयत्न करो। तुम्हारा कल्याण हो, अब मैं जा रहा हूँ।' दितिके द्वारा पतिकी आज्ञा स्वीकार कर लेनेपर महर्षि कश्यप वहीं अन्तर्धान हो गये। तब दिति महर्षि कश्यपद्वारा बताये गये नियमोंका पालन करती हुई समय व्यतीत करने लगी।*

---

* सन्ध्यायां नैव भोक्तव्यं गर्भिण्या वरवर्णिनि॥
न स्थातव्यं न गन्तव्यं वृक्षमूलेषु सर्वदा। नोपस्करे षूपविशेन्मुसलोलूखलादिषु॥
जले च नावगाहेत शून्यागारं च वर्जयेत्। वल्मीकायां न तिष्ठेत न चोद्विग्नमना भवेत्॥
विलिखेन्न नखैर्भूमिं नाङ्गारेण न भस्मना। न शयालुः सदा तिष्ठेद् व्यायामं च विवर्जयेत्॥
न तुषाङ्गारभस्मास्थिकपालेषु समाविशेत्। वर्जयेत् कलहं लोकैर्गात्रभङ्गं तथैव च॥

इधर इन्द्रको यह बात मालूम चली तो वे भयभीत होकर देवलोक छोड़कर दितिके पास आकर बड़े प्रेमसे उसकी सेवा करने लगे, किंतु वे बड़ी सावधानीसे यह देखते रहते कि दितिके द्वारा कहीं नियमोंके पालनमें चूक तो नहीं हो रही है। बहुत समय बीत गया दितिके द्वारा नियमोंका पालन करते-करते, किंतु एक दिन दिति आलस्यसे आक्रान्त होकर पैरोंको बिना धोये बाल खोलकर सिरको नीचा किये दिनमें ही सो गयी। बस, यही चूक पाकर इन्द्र दितिके उदरमें प्रविष्ट हो गये और उन्होंने उस गर्भके उनचास टुकड़े कर दिये। बादमें ये ही उनचास मरुद्गण हुए। दितिकी तपस्या और उसके व्रतके प्रभावसे यद्यपि गर्भ विनष्ट नहीं हुआ, किंतु दितिने जिस उद्देश्यसे गर्भधारण किया था, वह विफल हो गया।

इस कथानकका तात्पर्य यही है कि गर्भिणी स्त्रीको बहुत सावधानीसे रहना चाहिये। आचार-विचारका पालन करना चाहिये। पवित्रतासे रहना चाहिये। भावना पवित्र रखनी चाहिये ताकि उसका यह सदाचरण गर्भकी रक्षा कर सके और सदाचारी एवं गुणवान् सन्तान उत्पन्न हो सके।

सुश्रुतसंहिता—

महान् चिकित्साशास्त्री आचार्य सुश्रुतने भी गर्भिणी स्त्रीके

न मुक्तकेशा तिष्ठेत नाशुचिः स्यात् कदाचन। न शयीतोत्तरशिरा न चापरेशिराः क्वचित्॥
न वस्त्रहीना नोद्विग्ना न चार्द्रचरणा सती। नामङ्गल्यां वदेद्वाचं न च हास्याधिका भवेत्॥
कुर्यात्तु गुरुशूश्रूषां नित्यं माङ्गल्यतत्परा। सर्वौषधीभिः कोष्णेन वारिणा स्नानमाचरेत्॥
कृतरक्षा सुभूषा च वास्तुपूजनतत्परा। तिष्ठेत् प्रसन्नवदना भर्तुः प्रियहिते रता॥
दानशीला तृतीयायां पार्वण्यं नक्तमाचरेत्। इतिवृत्ता भवेन्नारी विशेषेण तु गर्भिणी॥
यस्तु तस्या भवेत् पुत्रः शीलायुर्वृद्धिसंयुतः। अन्यथा गर्भपतनमवाप्नोति न संशयः॥
तस्मात्त्वमनया वृत्त्या गर्भेऽस्मिन् यत्नमाचर। स्वस्त्यस्तु ते गमिष्यामि तथेत्युक्तस्तया पुनः॥
पश्यतां सर्वभूतानां तत्रैवान्तरधीयत। ततः सा कश्यपोक्तेन विधिना समतिष्ठत॥
(मत्स्यपुराण अध्याय ७। ३७—४९)

आवश्यक पालनीय नियमोंका उल्लेख इस प्रकार किया है—

गर्भिणीको चाहिये कि वह जिस समयसे गर्भस्थितिके लक्षण स्पष्ट हो जायँ, उसी समयसे अर्थात् प्रथम माससे ही व्यायाम, व्यवाय (मैथुन), अपतर्पण (शरीरको घटानेवाला आहार-विहार), अतिकर्षण (कृश करना), दिनमें सोना, रात्रिमें जागना, शोक, सवारी (घोड़े आदि)-पर चढ़ना, भय, उत्कट आसन (उकड़ू बैठना)—इनको एकदमसे त्याग दे। उसे असमयमें स्नेहादि क्रिया, रक्तमोक्षण तथा मल-मूत्र आदि वेगोंको नहीं रोकना चाहिये—

तदा प्रभृति व्यवायं व्यायाममतितर्पणमतिकर्शनं दिवास्वप्नं रात्रिजागरणं शोकं यानारोहणं भयमुत्कुटुकासनं चैकान्ततः स्नेहादिक्रियां शोणितमोक्षणं चाकाले वेगविधारणं च न सेवेत।

(सुश्रुतसंहिता शारीरस्थान ३। १६)

दूसरे स्थलपर आचार्य सुश्रुत कहते हैं—गर्भवती स्त्री प्रथम दिनसे ही लेकर अलग दिनोंमें नित्य प्रसन्न मनवाली, पवित्र, अलंकारोंको धारण किये, श्वेत वस्त्र धारण करनेवाली, शान्तिपरायण, मंगलकारी (स्वस्तिवाचन पढ़नेवाली), देवता-ब्राह्मण-गुरुकी सेवा (पूजा) करनेवाली हो। मलिन, विकृत या हीन अंगोंका स्पर्श न करे। दुर्गन्ध एवं बुरे दृश्योंको न देखे। बेचैनी उत्पन्न करनेवाली कथाएँ न सुने। शुष्क, बासी, सड़े-गले अन्नको न खाये। घरसे बाहर निकलना, खाली घरमें जाना, चैत्य, श्मशान, वृक्षके नीचे रहना छोड़ दे। क्रोध एवं भय तथा निन्दित पदार्थोंको, ऊँचेसे बोलना आदि जिन कारणोंसे गर्भको नुकसान पहुँचता है, उनको छोड़ दे। बार-बार तैलका अभ्यंग और उत्सादन (उबटन) लगाना छोड़ दे। शरीरसे मेहनत न करे। और गर्भावक्रान्तिकर (गर्भको नष्ट करनेवाले) अपथ्योंको छोड़ दे। शय्या, आसन कोमल, बिछे हुए, बहुत ऊँचे नहीं होने चाहिये, इनमें सहारा आश्रय रहना

चाहिये, ये पीड़ाकारक न हों। मनके लिये प्रिय, द्रव, मधुर रसकी अधिकताका, स्निग्ध, अग्निवर्धक, दीपनीय द्रव्योंसे संस्कृत भोजनको खाये। प्रसूति होनेतकके लिये ये साधारण नियम हैं। (सुश्रुतसंहिता शारीर० १०।३)

चरकसंहिता—

आचार्य चरकने कहा है कि गर्भावस्थामें गर्भिणीके लिये जो नियम बताये हैं, उनका पालन न करनेपर वे गर्भोपघातक (गर्भको विकृत एवं नष्ट करनेवाले) हो जाते हैं। अतः गर्भिणीकी चर्याके सम्बन्धमें वे कहते हैं—

सभी प्रकारसे अति गुरु, अति उष्ण, अति तीक्ष्ण आहारोंका सेवन, दारुण (कठिन) चेष्टाएँ गर्भिणीके लिये निषिद्ध हैं। गर्भिणीको चाहिये कि वह रक्त वस्त्रोंको धारण न करे, मदकारक अन्न-पानका सेवन न करे, सवारीपर न चढ़े, मांस न खाये, सभी इन्द्रियोंके लिये जो वस्तु हानिकारक हों, उनसे दूर रहे और भी इसके अतिरिक्त जिस किसी वस्तुको त्यागनेके लिये वृद्ध एवं अनुभवी स्त्रियाँ कहें, उसका भी त्याग कर दे। (चरकसंहिता, शारीरस्थान ४।१८)

निर्णयसिन्धु—

निर्णयसिन्धु (तृतीय परिच्छेद पूर्वार्ध)-में वराहके वचनसे बताया गया है कि गर्भिणी स्त्री मांसयुक्त भोजनका प्रयत्नपूर्वक त्याग करे—'**सामिषमशनं यत्नात्प्रमदा परिवर्जयेदतः प्रभृति।**'

गर्भिणीपतिके पालनीय नियम—

जिस प्रकार गुर्विणी (गर्भिणी) स्त्रीके लिये गर्भरक्षा तथा सुलक्षण सन्तानप्राप्तिके लिये पालनीय नियम बताये गये हैं तथा उसकी नित्यचर्याके विधि-निषेध बताये गये हैं, वैसे ही गर्भिणी स्त्रीके पतिके लिये भी शास्त्रोंमें धर्मशास्त्र-सम्बन्धी नियम बताये गये हैं तथा उसके

लिये भी वर्ज्य कर्मोंका परिगणन हुआ है। इन नियमोंकी धर्मशास्त्रीय मर्यादा है और इन नियमोंके पालनसे गर्भिणी स्त्री तथा गर्भस्थ जीवकी संरक्षा, सुरक्षाके साथ ही उनके मनोभावोंपर भी प्रभाव पड़ता है। भारतीय ऋषियोंका ज्ञान अति सूक्ष्म रहा है। अतः उन्होंने परोक्षमें होनेवाली घटनाओंको भी प्रत्यक्षवत् समझते हुए उन विषयोंमें सावधान रहनेका परामर्श दिया है। श्रीकमलाकरभट्टद्वारा प्रणीत निर्णयसिन्धु धर्मशास्त्रीय विषयोंका संग्रह करनेवाला एक महत्त्वपूर्ण निबन्धग्रन्थ है, उसके तृतीय परिच्छेदमें अनेक आचार्योंके वचनोंका संग्रह करते हुए गर्भिणीपतिके विधि-निषेधपरक पालनीय नियमोंको बताया गया है, जिनका विवरण इस प्रकार है—

(१)

हेमाद्रिके चतुर्वर्गचिन्तामणिमें आचार्य कौण्डिन्यके वचनका उल्लेख करते हुए कहा गया है कि गर्भिणीके पतिको मुण्डन, पिण्डदान तथा प्रेतक्रिया नहीं करनी चाहिये। यही बात जिसका पिता जीवित है, उसे भी ये कर्म नहीं करने चाहिये—

मुण्डनं पिण्डदानं च प्रेतकर्म च सर्वशः।
न जीवत्पितृकः कुर्याद् गुर्विणीपतिरेव च॥

(२)

याज्ञवल्क्यस्मृतिकी आचार्य विज्ञानेश्वरप्रणीत मिताक्षराटीकामें भी कहा गया है—

समुद्रके जलमें स्नान करने और नख, केश आदिके काटनेसे गर्भिणीपतिकी सन्तान नष्ट हो जाती है—

उदन्वतोऽम्भसि स्नानं नखकेशादिकर्तनम्।
अन्तर्वत्न्याः पतिः कुर्वन्न प्रजा जायते ध्रुवम्॥

(३)

आश्वलायन ऋषिका कहना है—गर्भिणीपतिको चाहिये कि वह मुण्डन, मैथुन, तीर्थयात्रा आदि न करे और सात महीनेका गर्भ हो जानेके अनन्तर गर्भिणी स्त्रीका पति श्राद्ध न करे। प्रयोगपारिजातमें बताया गया है कि श्राद्धीय भोजन भी न करे। यहाँ यह भी व्यवस्था दी गयी है कि यदि उन दिनों प्रारब्धवश माता-पिताका देहान्त हो जाय और यदि वह ज्येष्ठ पुत्र हो तो श्राद्धादि करे—

वपनं मैथुनं तीर्थं वर्जयेद् गर्भिणीपतिः।
श्राद्धं च सप्तमासान्मासादूर्ध्वं चान्यत्र वेदवित्॥

(४)

कालविधान तथा मुहूर्तदीपिकामें बताया गया है कि बाल बनवाना, शवके साथ जाना, नाखूनोंका काटना, युद्धादि करना, गृहारम्भ आदि कर्म, बहुत दूरकी यात्रा, विवाह, उपनयन तथा समुद्रस्नान—ये सब गर्भिणीके पतिकी आयुको विनष्ट करनेवाले होते हैं—

क्षौरं शवानुगमनं नखकृन्तनं च युद्धादिवास्तुकरणं त्वतिदूरयानम्।
उद्वाहमौपनयनं जलधेश्च गाहमायुःक्षयार्थमिति गर्भिणिकापतीनाम्॥

(५)

रत्नसंग्रह नामक ग्रन्थमें गालव ऋषिने बताया है कि जिसकी स्त्री गर्भवती हो, उसका पति दाह, मुण्डन, चूडाकरण, पर्वतारोहण और नौकापर चढ़ना आदि कर्म न करे—

दहनं वपनं चैव चौलं च गिरिरोहणम्।
नावश्चारोहणं चैव वर्जयेद् गर्भिणीपतिः॥

दोहद (गर्भकालीन इच्छा)—

गर्भिणीकी अभिलाषाको ही दोहद कहते हैं। ऐसी गर्भिणी स्त्री

जो अन्नपानादि विशेष द्रव्योंकी अभिलाषा करती है, दोहदवती कहलाती है।

गर्भके चार मासके हो जानेपर गर्भ इन्द्रियके विषयोंमें चाह (इच्छा) करने लगता है। अतः स्त्रीको दो हृदयवाली होनेसे 'दौहृदिनी' कहते हैं। दौहृदकी इच्छाका प्रतिघात होनेसे सन्तान विकृत होती है, इसलिये गर्भिणी जिस-जिस वस्तुकी इच्छा करे, वह उसको देनी चाहिये। गर्भवतीकी इच्छा पूर्ण होनेसे सन्तान वीर्यशाली और चिरायु होती है—'**सा यद्यदिच्छेत्तत्तस्यै दापयेत्, लब्धदौहृदा हि वीर्यवन्तं चिरायुषं च पुत्रं जनयति**' (सुश्रुतसंहिता, शारीरस्थान ३।१८) गर्भवती स्त्रीकी इच्छाके पूर्ण होनेपर गुणशाली पुत्र होता है। गर्भवती स्त्री जिस-जिस प्रकारकी कामना करती है, वह उन्हीं पदार्थोंके समान शरीर, आचार और स्वभाववाली सन्तानको उत्पन्न करती है। पूर्वजन्मके कर्मोंके कारण ही बालकका अगला शरीर बनता है, इसी प्रकार दैवयोग (कर्मोंके कारण)-से ही हृदयमें दोहद (इच्छा) उत्पन्न होती है।

गर्भके शरीरमें जिस समय इन्द्रियाँ अभिव्यक्त होती हैं, उसी समय उस गर्भके मनमें वेदना (सुख-दुःखकी प्राप्ति) होती है, इसीलिये उसी समय गर्भमें स्पन्दनक्रिया होती है और अनेक जन्मोंमें अनुभव किये हुए इन्द्रिय-विषयोंकी वह इच्छा करता है और वह इच्छा माताके हृदयसे व्यक्त होती है, इसलिये उस कालमें उसकी संज्ञा द्वैहृदय्य (दो हृदयवाली) होती है। गर्भका हृदय माताके हृदयसे उत्पन्न होता है और गर्भपोषणके लिये रसवाही धमनियोंके द्वारा माताके हृदयसे बालकका हृदय सम्बद्ध रहता है। इसलिये उन रसवाहिनी धमनियोंके द्वारा बालक अपनी इच्छाको माताके हृदयद्वारा प्रकट करता है। इसीलिये दौहृदका अपमान नहीं किया जाता। ऐसा करनेसे गर्भका नाश या गर्भमें विकृति

उत्पन्न हो जाती है। अतः प्रिय और हितकारी वस्तुओंके द्वारा गर्भिणीकी परिचर्या की जाती है। अर्थात् जो गर्भिणीके लिये प्रिय होता है और जो उसके लिये हितकारी होता है, वह वस्तु उसके आहार–विहारमें दी जाती है। जिससे गर्भ नष्ट होनेका भय हो, उस आहार–विहारसे गर्भिणीको दूर रखे—‘**सा यद्यदिच्छेत्तत्तदस्यै दद्यादन्यत्र गर्भोपघातकरेभ्यो भावेभ्यः**’ (चरक० शारीर० ४। १७)।

याज्ञवल्क्यस्मृतिमें कहा गया है—

दौर्हृदस्याप्रदानेन गर्भो दोषमवाप्नुयात्।
वैरूप्यं मरणं वापि तस्मात् कार्यं प्रियं स्त्रियाः॥

(याज्ञ०स्मृ० प्रायश्चित्त० ७९)

अर्थात् गर्भिणीकी अभिलाषा पूरी न करनेसे गर्भ दोषयुक्त हो जाता है, विकारग्रस्त हो जाता है अथवा नष्ट भी हो जाता है, अतः उसकी इच्छाको पूर्ण करना चाहिये।

आगे इस संस्कारकी प्रयोग-विधि दी जा रही है।

[१] गर्भाधानसंस्कार-प्रयोग[1]

विवाहके अनन्तर रजोदर्शनके बाद चतुर्थ दिन ऋतुस्नान करके[2] स्त्री प्रातःकाल आभूषण आदिसे सुसज्जित होकर तथा नवीन वस्त्र धारणकर मौनव्रत धारणपूर्वक पतिके साथ सूर्यके सम्मुख हाथ जोड़कर निम्न मन्त्रसे सूर्यावलोकन तथा नमस्कार करे—

ॐ आदित्यं गर्भं पयसा समङ्ग्धि सहस्रस्य प्रतिमां विश्वरूपम्। परि वृङ्ग्धि हरसा माऽभि मꣳस्थाः शतायुषं कृणुहि चीयमानः ॥

(शु०यजु० १३।४१)

इसके बाद उसी दिन या षोडश रात्रिके पहले किसी दिन जब गर्भाधानानुकूल तिथि-नक्षत्रयुक्त शुभ दिन उपस्थित हो, उस दिन सूर्यावलोकन आदि करके गणेशाम्बिकापूजन, स्वस्तिपुण्याहवाचन, षोडश मातृकापूजन, वसोर्धारापूजन, आयुष्यमन्त्रजप तथा सांकल्पिक विधिसे नान्दीमुख श्राद्ध स्त्रीके साथ पति करे।

यहाँ गर्भाधानप्रयोगकी विधि दो प्रकारसे लिखी जा रही है। एक तो सर्वांगपूर्ण विधि लिखी जा रही है तथा दूसरी अपकर्षणकर सरल विधि लिखी जा रही है। गर्भाधानके समय जो लोग उन-उन क्रियाओंके साथ मन्त्रोंका उच्चारण न कर सकें, वे दूसरी सरल विधिके अनुसार अपकर्षण करनेका संकल्प करें। इस विधिके अन्तर्गत पूजनके अनन्तर आचार्यद्वारा मन्त्रोंका पाठ करा लेनेसे

---

१. गर्भाधानसंस्कारके ये कृत्य प्रथम गर्भाधानके पूर्व केवल एक बार करनेकी आवश्यकता है। अज्ञानतावश यदि प्रथम गर्भाधानके पूर्व ये कृत्य न किये जा सके हों तो बादमें द्वितीयादि गर्भाधानके पूर्व भी किये जा सकते हैं।

२. शास्त्रोंमें रजोदर्शनशान्ति करानेका भी विधान दिया गया है। विस्तारके कारण उसे यहाँ नहीं दिया जा रहा है। जो लोग उसे करना चाहें, वे संस्कारदीपक, कर्मकाण्डप्रदीप आदि ग्रन्थोंमें देख सकते हैं।

विधि पूर्ण हो जाती है। यदि सरल विधिसे करना हो तो निम्न संकल्पको न करके बादमें दिये गये संकल्पके अनुसार कार्य सम्पादित करना चाहिये।

सर्वांगपूर्णविधि

स्नानादिसे शुद्ध होकर पत्नी-सहित आसनपर बैठकर आचमन, प्राणायाम करके निम्न संकल्प करे—

प्रतिज्ञा-संकल्प—

ॐ विष्णुर्विष्णुर्विष्णुः श्रीमद्भगवतो महापुरुषस्य विष्णो-राज्ञया प्रवर्तमानस्य ब्रह्मणो द्वितीयपरार्धे श्रीश्वेतवाराहकल्पे वैवस्वतमन्वन्तरे अष्टाविंशतितमे कलियुगे कलिप्रथमचरणे जम्बूद्वीपे भारतवर्षे आर्यावर्तैकदेशे (यदि काशी हो तो **अविमुक्तवाराणसीक्षेत्रे आनन्दवने गौरीमुखे त्रिकण्टकविराजिते महाश्मशाने भगवत्या उत्तरवाहिन्या भागीरथ्या वामभागे) ....नगरे/ग्रामे/क्षेत्रे षष्टि-संवत्सराणां मध्ये ....संवत्सरे ....अयने ....ऋतौ ....मासे ....पक्षे ....तिथौ ....नक्षत्रे ....योगे ....करणे ....वासरे ....राशिस्थिते सूर्ये ....राशिस्थिते चन्द्रे शेषेषु ग्रहेषु यथायथाराशिस्थानस्थितेषु सत्सु एवं ग्रहगुणगणविशिष्टे शुभमुहूर्ते ....गोत्रः सपत्नीकः ....शर्मा/वर्मा/गुप्तोऽहं अस्याः वध्वाः संस्कारातिशयद्वारा अस्यां जनिष्यमाणसर्वगर्भाणां बीजगर्भसमुद्भवैनोनिबर्हणद्वारा श्रीपरमे-श्वरप्रीतये गर्भाधानसंस्कारं करिष्ये। तत्पूर्वाङ्गत्वेन गणेशाम्बिकापूजनं स्वस्तिपुण्याहवाचनं मातृकापूजनं वसोर्धारापूजनं आयुष्यमन्त्रजपं साङ्कल्पिकेन विधिना नान्दीमुखश्राद्धं च करिष्ये।**

[गणेश-पूजनादि कर्मोंके सम्पादनकी विधि परिशिष्टमें पृष्ठ संख्या ४१५ में दी गयी है, उससे कर लेना चाहिये।]

नाभिस्पर्शका मन्त्र—

इसके बाद उसी दिन या सोलह दिनसे पूर्व किसी शुभरात्रिके दूसरे पहरमें दाहिने हाथसे अपनी स्त्रीकी नाभिका स्पर्श करते हुए निम्न मन्त्र पढ़े—

ॐ विष्णुर्योनिं कल्पयतु त्वष्टा रूपाणि पिꣳशतु। आसिञ्चतु प्रजापतिर्धाता गर्भं दधातु ते।

स्त्रीको अभिमन्त्रित करनेकी विधि—

इसके उपरान्त पूर्व अथवा उत्तरको मुख किये हुए पति अपनी पत्नीको निम्न मन्त्रसे अभिमन्त्रित करे—

ॐ गर्भं धेहि सिनीवालि गर्भं धेहि पृथुष्टुके। गर्भं ते अश्विनौ देवावाधत्तां पुष्करस्त्रजौ॥

वीर्यदान-विधि—

अनन्तर स्वस्थ और प्रसन्न मन होते हुए पति प्रसन्न हृदयवाली, उद्वेगरहित, पतिकी इच्छा करनेवाली स्त्रीको उत्तम शय्यापर दो घड़ी रात बीत जानेके बाद वीर्यदान करे। वीर्यदानके लिये निम्नलिखित मन्त्र पढ़ने चाहिये—

ॐ गायत्रेण त्वा छन्दसा परिगृह्णामि त्रैष्टुभेन त्वा छन्दसा परिगृह्णामि जागतेन त्वा छन्दसा परिगृह्णामि। सूक्ष्मा चासि शिवा चासि स्योना चासि सुषदा चास्यूर्जस्वती चासि पयस्वती च॥ (शु०यजु० १।२७)

ॐ रेतो मूत्रं वि जहाति योनिं प्रविशदिन्द्रियम्। गर्भो जरायुणाऽऽवृत उल्बं जहाति जन्मना॥ ऋतेन सत्यमिन्द्रियं विपानꣳ शुक्रमन्धस इन्द्रस्येन्द्रियमिदं पयोऽमृतं मधु॥ (शु०यजु० १९।७६)

हृदयालम्भन विधि—

अभिगमन (वीर्यदान)-के अनन्तर पवित्र होकर आचमन करके स्त्रीको अपने वामभागमें बैठाकर उसके दाहिने कन्धेके ऊपरसे हाथ ले जाकर उसके हृदयदेशका स्पर्श करे। उस समय निम्नलिखित मन्त्रका उच्चारण करना चाहिये—

ॐ यत्ते सुसीमे हृदयं दिवि चन्द्रमसि श्रितम्। वेदाहं तन्मां तद्विद्यात्पश्येम शरदः शतं जीवेम शरदः शतꣳ शृणुयाम शरदः शतम्॥

तदनन्तर ताम्बूल आदिका सेवनकर रात्रिमें सुखपूर्वक शयन करे।

प्रातःकाल स्नानादिसे निवृत्त होकर ब्राह्मणभोजनका संकल्प करे तथा आचार्यादि ब्राह्मणोंको दक्षिणा प्रदानकर मातृकाओंका विसर्जन करे।

गर्भाधानसंस्कारकी सामान्य सरल विधि

वर्तमान समयमें गर्भाधानसंस्कारकी पूरी विधि सम्पन्न करनेमें जिन्हें कठिनाई प्रतीत हो तो उनके लिये संक्षिप्त एवं सरल सांकल्पिक विधि यहाँ दी जा रही है। समयाभावके कारण पंचांगपूजन नहीं करना हो तो उसके विकल्परूपमें पंचांगपूजनके निमित्त निम्नलिखित संकल्पके द्वारा आचार्यको दक्षिणा प्रदान कर दे—

सङ्कल्प—

ॐ विष्णुर्विष्णुर्विष्णुः श्रीमद्भगवतो महापुरुषस्य विष्णोराज्ञया प्रवर्तमानस्य ब्रह्मणो द्वितीयपरार्धे श्रीश्वेतवाराहकल्पे वैवस्वतमन्वन्तरे अष्टाविंशतितमे कलियुगे कलिप्रथमचरणे जम्बूद्वीपे भारतवर्षे आर्यावर्तैकदेशे (यदि काशी हो तो **अविमुक्तवाराणसीक्षेत्रे आनन्दवने गौरीमुखे त्रिकण्टकविराजिते महाश्मशाने भगवत्या उत्तरवाहिन्या भागीरथ्या वामभागे) ....नगरे/ग्रामे/क्षेत्रे षष्टि-संवत्सराणां मध्ये ....संवत्सरे ....अयने ....ऋतौ ....मासे ....पक्षे**

.....तिथौ .....नक्षत्रे .....योगे .....करणे .....वासरे .....राशिस्थिते सूर्ये .....राशिस्थिते चन्द्रे शेषेषु ग्रहेषु यथायथाराशिस्थानस्थितेषु सत्सु एवं ग्रहगुणगणविशिष्टे शुभमुहूर्ते .....गोत्रः शर्मा/वर्मा/गुप्तोऽहं अस्मिन् गर्भाधानसंस्कारकर्मणि स्वस्तिपुण्याहवाचनं षोडश-मातृकापूजनं वसोर्धारापूजनं आयुष्यमन्त्रजपं सांकल्पिकनान्दीश्राद्धं इत्येतेषां कर्मणां शास्त्रोक्तविधिपरिपालनोद्देश्येन स्वर्णं (निष्क्रयद्रव्यं) .....गोत्राय ब्राह्मणाय भवते सम्प्रददे। ऐसा कहकर दक्षिणा ब्राह्मणको दे दे। तदनन्तर गर्भाधानात्मक मन्त्रोंका निम्न रीतिसे अपकर्षण कर ले।

गर्भाधानके मन्त्रोंके अपकर्षण करनेकी सरल विधि—

मन्त्रोंका अपकर्षण करनेके लिये निम्न संकल्पके अनुसार सभी क्रियाएँ सम्पन्न करे तथा आचार्यके द्वारा इन मन्त्रोंका पाठ करा दे तथा उसी समय मातृका-विसर्जन आदि सभी कृत्य पूर्ण कर ले। यहाँ मन्त्र-पाठ करा लेनेपर गर्भाधान-संस्कारकी प्रक्रिया पूर्ण हो जाती है। सबके लिये मन्त्रका उच्चारण करना सम्भव न होनेके कारण आगे टिप्पणीमें दिये गये मन्त्रार्थकी भावना रखते हुए गर्भाधानकी क्रियाओंको सम्पन्न करना चाहिये।

अपकर्षणका संकल्प—

ॐ विष्णुर्विष्णुर्विष्णुः अद्य यथोक्तगुणविशिष्टतिथ्यादौ अस्याः मम भार्यायाः प्रथमगर्भातिशयद्वारा अस्यां जनिष्यमाण-सर्वगर्भाणां बीजगर्भसमुद्भवैनोनिबर्हणार्थं गर्भाधानसंस्कारसम्बन्धि-निशिविहितकर्मसम्बन्धिमन्त्राणां अज्ञानादिहेतुभिः पाठासम्भवात् सम्प्रति अपकृष्य गर्भाधानाख्यसंस्कारसम्बन्धिमन्त्राणां पाठं

ब्राह्मणद्वारा कारयित्वा गर्भाधानाख्यसंस्कारं करिष्ये।

तदनन्तर आचार्य निम्न मन्त्रोंका पाठ करे—

नाभिस्पर्शका मन्त्र—

ॐ विष्णुर्योनिं कल्पयतु त्वष्टा रूपाणि पिꣳशतु। आसिञ्चतु प्रजापतिर्धाता गर्भं दधातु ते।[1]

अभिमन्त्रणका मन्त्र—

ॐ गर्भं धेहि सिनीवालि गर्भं धेहि पृथुष्टुके। गर्भं ते अश्विनौ देवावाधत्तां पुष्करस्रजौ॥[2]

वीर्यदानका मन्त्र—

ॐ गायत्रेण त्वा छन्दसा परिगृह्णामि त्रैष्टुभेन त्वा छन्दसा परिगृह्णामि जागतेन त्वा छन्दसा परिगृह्णामि। सूक्ष्मा चासि शिवा चासि स्योना चासि सुषदा चास्यूर्जस्वती चासि पयस्वती च॥[3] (शु०यजु० १।२७)

ॐ रेतो मूत्रं वि जहाति योनिं प्रविशदिन्द्रियम्। गर्भो जरायुणाऽऽवृत उल्बं जहाति जन्मना॥ ऋतेन सत्यमिन्द्रियं विपानꣳ शुक्रमन्धस इन्द्रस्येन्द्रियमिदं पयोऽमृतं मधु॥[4] (शु०यजु० १९।७६)

---

१. भगवान् विष्णु तुम्हारी योनिको पुत्रोत्पत्तिमें समर्थ बनायें। सवितादेव हम दोनोंके पुत्रको दर्शनयोग्य बनायें। प्रजापति मेरे हृदयमें स्थित होकर तुझमें वीर्यका आधान करें। धाता तुम्हारे गर्भको पुष्ट करें।

२. हे सिनीवालि देवि! एवं हे विस्तृत जघनोंवाली पृथुष्टुका देवि! आप इस स्त्रीको गर्भधारण करनेकी सामर्थ्य दें और उसे पुष्ट करें। कमलोंकी मालासे सुशोभित दोनों अश्विनीकुमार तेरे गर्भको पुष्ट करें।

३. मैं तुम्हें गायत्री, त्रिष्टुभ् तथा जगती छन्दके द्वारा ग्रहण करता हूँ। हे वेदभूमे! तुम शोभना हो। तुम शान्त हो। तुम सुखस्वरूपा हो। तुम आनन्दसे बैठनेयोग्य हो। तुम अन्नवाली हो और तुम जलवाली हो।

४. मनुष्यकी जननेन्द्रिय योनिमें प्रविष्ट होकर उसमें वीर्यका आधान करती है, परंतु वही अन्यत्र मूत्रका परित्याग करती है। इसी प्रकार जरायुसे लिपटा गर्भ जन्म

हृदयालम्भनका मन्त्र—

ॐ यत्ते सुसीमे हृदयं दिवि चन्द्रमसि श्रितम्। वेदाहं तन्मां तद्विद्यात्पश्येम शरदः शतं जीवेम शरदः शतꣳ शृणुयाम शरदः शतम्॥[1]

गर्भाधानमें विशेष

यदि कदाचित् वह स्त्री गर्भ धारण न करे तो उसका पति पुष्य नक्षत्रके दिन उपवास रहकर श्वेत पुष्पवाली कण्टकारिका (भटकटैया) या कटेरी अथवा शिफाकी जड़को उखाड़ लाये और उसको जलके साथ पीसकर उसका रस स्त्रीकी दाहिनी नासिकासे सुँघाये तथा कुछ बिन्दु नासिका में छोड़े।[2] उस समय निम्न मन्त्रका पाठ करना चाहिये—

ॐ इयमोषधी त्रायमाणा सहमाना सरस्वती। अस्या अहं बृहत्याः पुत्रः पितुरिव नाम जग्रभम्॥[3]

होनेपर झिल्लीको छोड़ देता है। इस सत्यनियमसे यही सत्य निकलता है कि उचितका साथ उचितका त्याग या स्वीकार करता है। अतः शुद्ध करके पिया गया सोम इन्द्रियोंके बलको देनेवाला होता है। यह दूध भी इन्द्रके लिये मधुर अमृतस्वरूप हो।

१. हे सुन्दर सीमन्तवाली देवि! मैं द्युलोक, आकाश तथा चन्द्रमामें स्थित तुम्हारे हृदयको जानता हूँ, किंतु वह हृदय (चित्त) इस समय मुझे पतिभाववाला समझे। इस प्रकार सममनस्क होकर हम दोनों सौ वर्षोंतक देखें, सौ वर्षोंतक जीवित रहें और सौ वर्षोंतक सुनें।

२. सा यदि गर्भं न दधीत सिꣳह्याः श्वेतपुष्प्या उपोष्य पुष्येण मूलमुत्थाप्य चतुर्थेऽहनि स्नातायां निशायामुदपेषं पिष्ट्वा दक्षिणस्यां नासिकायामासिञ्चति। (पा०गृ० १।१३।१)

३. यह बृहती (कण्टकारी) नामक ओषधि व्याधियोंको दूर करनेवाली तथा रक्षा करनेवाली है। यह उत्पन्न दोषोंको दूर करनेवाली तथा वाणीका परिष्कार करनेवाली है, इसका पुत्र पिताके समान ही गुणधर्मवाला हो।

पुंसवनसंस्कार

पुंसवनका तात्पर्य—

गर्भाधान-संस्कारके अनन्तर जो पहला संस्कार होता है, उसका नाम है—पुंसवन। यह संस्कार जन्मके पूर्वका संस्कार है। गर्भाधानके अनन्तर स्त्रीको नियमोंका पालन करते हुए बड़ी सावधानीसे रहना चाहिये; क्योंकि तीसरे-चौथे मासमें तथा आठवें मासमें गर्भपातकी आशंका अधिक रहती है, इसीलिये इन मासोंमें विशेषरूपसे गर्भरक्षणके लिये पुंसवन तथा सीमन्तोन्नयन-संस्कारका विधान है। व्याससस्मृतिमें कहा गया है कि गर्भ जब तीन मासका हो तो उस समय पुंसवन-संस्कार करना चाहिये। चार मासतक गर्भमें स्त्री-पुरुषका भेद नहीं होता है, अतः स्त्री-पुरुषके चिह्नकी उत्पत्तिके पूर्व ही यह संस्कार किया जाता है। 'पुंसवन' शब्दकी व्याख्या दो प्रकारसे की जाती है अर्थात् जब गर्भमें जीव किंचित् सवन—स्पन्दन, गति, हिलना-डुलना आदि करने लगता है, तब इस संस्कार को करना चाहिये। कुछ आचार्य स्पन्दनसे पूर्व इसे करना चाहिये—ऐसा निर्णय देते हैं '**पुंसः सवनं स्पन्दनात्पुरा।**' (याज्ञ० आचारा० ११) इस संस्कारसे पुरुषका शरीर बनता है—'**पुमान् सूयते येन कर्मणा तदिदं पुंसवनम्।**' जिस कर्मसे पुरुषका प्रसव (पुत्रका जन्म) हो, उस गर्भ-संस्कारका नाम 'पुंसवन' है।

पुत्रकी सार्थकता इसमें है कि वह जीते-जी पिता-माताकी आज्ञाका पालन करे, मरनेपर क्षयाह तिथिको उनके निमित्त ब्राह्मणभोजन कराये और गयामें जाकर पिण्डदान करे—

जीवतो वाक्यकरणात् क्षयाहे भूरिभोजनात्।
गयायां पिण्डदानाच्च त्रिभिः पुत्रस्य पुत्रता॥

(देवीभागवत ६।४।१५)

पुंसवन—गर्भसंस्कार अथवा क्षेत्र-संस्कार—

पुंसवन-संस्कार बालकके गर्भावस्थाका है। अतः गर्भस्थ संस्कार होनेके कारण प्रत्येक गर्भावसरपर इसे करना चाहिये, यह धर्मसिन्धुका मत है। आचार्य विज्ञानेश्वर इसे मातृक्षेत्रका संस्कार मानते हैं, अतः वे पुंसवन तथा सीमन्तोन्नयनको केवल एक बार करनेके लिये बताते हैं। इन दो संस्कारोंको क्षेत्र-संस्कार माना गया है, अतः इन्हें प्रथम बार ही करना चाहिये, प्रत्येक गर्भमें नहीं। महर्षि देवलका कहना है—

सकृच्च संस्कृता नारी सर्वगर्भेषु संस्कृता।
यं यं गर्भं प्रसूयेत स सर्वः संस्कृतो भवेत्॥

अर्थात् गर्भिणी स्त्रीका प्रथम बार संस्कार (पुंसवन-संस्कार) हो जानेपर वह प्रत्येक गर्भके लिये संस्कृत हो जाती है, अतः दुबारा पुंसवन-संस्कार करनेकी आवश्यकता नहीं है। अपने देशाचारके अनुसार व्यवस्था समझनी चाहिये।

पुंसवनसंस्कारका समय—

गर्भधारणके दूसरे, तीसरे महीनेमें अथवा गर्भके प्रतीत होनेपर इस संस्कारको करना चाहिये। पुंसवन-संस्कार यदि समयपर न हो सके तो आगे होनेवाले सीमन्तोन्नयन-संस्कारके साथ भी किया जा सकता है। वीरमित्रोदयमें आचार्य शौनकका कहना है कि यदि तीसरे मासमें गर्भके चिह्न प्रकट हो जायँ तो तीसरे महीनेमें करना चाहिये और यदि तीसरे मासमें गर्भ व्यक्त न हो तो चौथे मासमें करना चाहिये—

व्यक्ते गर्भे तृतीये तु मासे पुंसवनं भवेत्।
गर्भेऽव्यक्ततृतीये चेच्चतुर्थे मासि वा भवेत्॥

पुंसवनसंस्कारका उपांगकर्म—अनवलोभन (गर्भरक्षण)-कर्म—

अनवलोभनकर्मको पुंसवन-संस्कारका उपांगकर्म भी कहते हैं।

पुंसवन-संस्कारके अनन्तर इसे भी कर लेना चाहिये। अनवलोभन कर्मका भी प्रायः वही उद्देश्य है, जो पुंसवन-संस्कारका है। मुख्यरूपसे गर्भरक्षण हो तथा गर्भच्युति न हो तथा गर्भ पुष्ट हो, इस दृष्टिसे यह कर्म किया जाता है, इसकी व्युत्पत्तिमें कहा गया है कि जिस कर्मके द्वारा गर्भ नष्ट न हो, उसे अनवलोभन कहा गया है—'**येन कर्मणा जातो गर्भो नावलुप्यते तदनवलोभनम्।**' इस कर्मको प्रायः पुंसवन-संस्कारका सहयोगी पूरक संस्कार कहा गया है और यह भी चतुर्थमासमें जब चन्द्रमा पुष्य आदि पुरुषवाची नक्षत्रमें हो, पुंसवन-संस्कारके साथ किया जाता है। इसमें विशेष विधिसे श्वेत दूर्वारसका सेचन गर्भिणीके दक्षिण नासाछिद्रमें अँगूठेके अग्रभागसे किया जाता है और पतिद्वारा उसके हृदयका स्पर्श होता है। चरक तथा सुश्रुत आदिने भी इसका विधान किया है।

[२] पुंसवनसंस्कार-प्रयोग

पुंसवनसंस्कार करनेवाला व्यक्ति ज्योतिषीके द्वारा निर्दिष्ट शुभ मुहूर्तमें नित्य-क्रिया सम्पन्न करके स्नानादिसे पवित्र होकर पूर्वमुख बैठकर अपने दाहिने भागमें पत्नीको बैठाकर दीप प्रज्वलितकर आचमन, प्राणायाम, आसनशुद्धि आदि करके पुंसवनसंस्कार सम्पन्न करनेके लिये निम्न संकल्प करे। उस दिन पति अपनी पत्नीको उपवास कराकर (भोजन आदि न कराकर) कार्य सम्पन्न करे।

प्रतिज्ञा-संकल्प—

दाहिने हाथमें जल, अक्षत, पुष्प, फल और द्रव्य लेकर निम्नलिखित संकल्प करे—

ॐ विष्णुर्विष्णुर्विष्णुः श्रीमद्भगवतो महापुरुषस्य विष्णो-राज्ञया प्रवर्तमानस्य ब्रह्मणो द्वितीयपरार्धे श्रीश्वेतवाराहकल्पे वैवस्वतमन्वन्तरे अष्टाविंशतितमे कलियुगे कलिप्रथमचरणे जम्बूद्वीपे भारतवर्षे आर्यावर्तैकदेशे (यदि काशी हो तो **अविमुक्तवाराणसीक्षेत्रे आनन्दवने गौरीमुखे त्रिकण्टकविराजिते महाश्मशाने भगवत्या उत्तरवाहिन्या भागीरथ्या वामभागे) ....नगरे/ग्रामे/क्षेत्रे षष्टिसंवत्सराणां मध्ये ....संवत्सरे ....अयने ....ऋतौ ....मासे ....पक्षे ....तिथौ ....नक्षत्रे ....योगे ....करणे ....वासरे ....राशिस्थिते सूर्ये ....राशिस्थिते चन्द्रे शेषेषु ग्रहेषु यथायथाराशिस्थानस्थितेषु सत्सु एवं ग्रहगुणगणविशिष्टे शुभमुहूर्ते ....गोत्रः सपत्नीकः ....शर्मा/वर्मा/गुप्तोऽहं ममास्यां भार्यायां विद्यमानगर्भपुंस्त्वप्रति-पादनबीजगर्भसमुद्भवैनोनिबर्हणद्वारा पुंरूपतोदयप्रतिरोधककर्म-परिहारद्वारा च श्रीपरमेश्वरप्रीतये पुंसवनाख्यसंस्कारकर्म करिष्ये। तत्र पूर्वाङ्गतया गणेशाम्बिकापूजनं स्वस्तिपुण्याहवाचनं मातृकापूजनं साङ्कल्पिकेन विधिना नान्दीमुखश्राद्धं च करिष्ये।**

[गणेशाम्बिकापूजन आदि पंचांगकर्म परिशिष्ट पृ०सं० ४१५ से देखकर सम्पन्न करें।]

पुंसवनसंस्कारमें प्रधान कर्म—

मातृपूजा आदि सम्पन्न करके वटवृक्षके निचले भागमें उत्पन्न अंकुरों तथा वटवृक्षकी शाखाओंके ऊपर अग्रभागमें उत्पन्न नूतन पल्लवोंके बीचमें उत्पन्न हुए अंकुरों एवं कुशकी जड़ तथा सोमलता (अभावमें पूतिका अथवा दूर्वा)-को* लाकर स्वच्छ जलके साथ पीस ले तथा उस रसको स्वच्छ वस्त्रसे छानकर किसी पात्रमें सुरक्षित रख ले। तदनन्तर स्त्रीकी नासिकाके दाहिने छिद्रमें पति रस डाले।

आसेचनके मन्त्र—

रस डालते समय निम्न दो मन्त्रोंका पाठ करे—

ॐ हिरण्यगर्भः समवर्तताग्रे भूतस्य जातः पतिरेक आसीत्। स दाधार पृथिवीं द्यामुतेमां कस्मै देवाय हविषा विधेम॥

अद्भ्यः सम्भृतः पृथिव्यै रसाच्च विश्वकर्मणः समवर्तताग्रे। तस्य त्वष्टा विदधद् रूपमेति तन्मर्त्यस्य देवत्वमाजानमग्रे॥

वीर्यवान् पुत्रप्राप्तिके लिये सकाम प्रयोग

यदि 'वीर्यवान् पुत्र हो' यह कामना हो तो पति जलसे पूर्ण एक पात्रको भार्याकी गोदमें रखकर अनामिका अँगुलीसे स्त्रीके गर्भका स्पर्श करते हुए निम्न मन्त्रका पाठ करते हुए गर्भका अभिमन्त्रण करे—

ॐ सुपर्णोऽसि गरुत्माँस्त्रिवृत्ते शिरो गायत्रं चक्षुर्बृहद्रथन्तरे पक्षौ। स्तोम आत्मा छन्दाꣳ स्यङ्गानि यजूꣳसि नाम। साम ते तनूर्वामदेव्यं यज्ञायज्ञियं पुच्छं धिष्ण्याः शफाः।

सुपर्णोऽसि गरुत्मान् दिवं गच्छ स्वः पत॥

* (क) सोमाभावे पूतिका पूतिकाभावे दूर्वा (कात्यायनश्रौतसूत्र)। (ख) सोमलताभावे गुडूचीलता ब्राह्मी वा ग्राह्या (संस्कारभास्कर-ईश्वरभट्टी)।

दक्षिणा संकल्प—

इसके बाद ब्राह्मणको दक्षिणा देनी चाहिये और दस अथवा यथाशक्ति ब्राह्मणोंको भोजन कराना चाहिये। उसके लिये निम्नलिखित संकल्प करना चाहिये—

ॐ अद्य यथोक्तगुणविशिष्टतिथ्यादौ ......गोत्रः ......शर्मा/ वर्मा/गुप्तोऽहं कृतस्यास्य पुंसवनाख्यकर्मणः साद्गुण्यार्थमिमां दक्षिणां ब्राह्मणेभ्यो विभज्य दास्ये। यथासंख्याकान् ब्राह्मणान् भोजयिष्ये।

अभिषेक विधि—

इसके बाद आचार्य कलशके जलसे निम्न मन्त्रोंका पाठ करते हुए अभिषेक करे—

ॐ पयः पृथिव्यां पय ओषधीषु पयो दिव्यन्तरिक्षे पयो धाः। पयस्वतीः प्रदिशः सन्तु मह्यम्॥

ॐ पञ्च नद्यः सरस्वतीमपि यन्ति सस्त्रोतसः। सरस्वती तु पञ्चधा सो देशेऽभवत्सरित्॥

ॐ वरुणस्योत्तम्भनमसि वरुणस्य स्कम्भसर्जनी स्थो वरुणस्य ऋतसदन्यसि वरुणस्य ऋतसदनमसि वरुणस्य ऋतसदनमा सीद॥

ॐ पुनन्तु मा देवजनाः पुनन्तु मनसा धियः। पुनन्तु विश्वा भूतानि जातवेदः पुनीहि मा॥

ॐ देवस्य त्वा सवितुः प्रसवेऽश्विनोर्बाहुभ्यां पूष्णो हस्ताभ्याम्। सरस्वत्यै वाचो यन्तुर्यन्त्रिये दधामि बृहस्पतेष्ट्वा साम्राज्येनाभि षिञ्चाम्यसौ। (शु० य० ९। ३०)

अभिषेकके अनन्तर ब्राह्मणोंका आशीर्वाद ग्रहणकर मातृगणोंका विसर्जन करे और **अनेन पुंसवनाख्येन कर्मणा भगवान् श्रीपरमेश्वरः प्रीयताम्**—कहकर कर्म भगवान्‌को निवेदित कर दे।

विशेष बात

यह पुंसवनसंस्कार समयपर न हो सके तो सीमन्तोन्नयनके साथ करना चाहिये। जैसा कि बृहस्पतिने कहा है कि यह पुंसवनसंस्कार गर्भ–चलनके पहले न किया गया हो तो गर्भके चलनेपर भी सीमन्तोन्नयनके पूर्व अवश्य करना चाहिये। पंचांगपूजन तथा हवन आदि कार्य सम्पन्न करके पहले पुंसवनकी विधि पूर्ण करनेके अनन्तर सीमन्तोन्नयनकी विधि सम्पन्न करे।

सीमन्तोन्नयनसंस्कार

‘सीमन्तोन्नयन’ शब्दका अर्थ तथा संस्कारकी महिमा—

सीमन्तोन्नयन शब्द दो पदोंके योगसे बना है। सीमन्त और उन्नयन। सीमन्तका अर्थ है, स्त्रीकी माँग अर्थात् सिरके बालोंकी विभाजक रेखा। विवाह-संस्कारमें इसी सीमन्तमें वरके द्वारा सिन्दूर-दान होता है और तभीसे वह विवाहिता सौभाग्यशालिनी वधू सीमन्तिनी और सुमंगली कहलाती है। स्त्रियोंका यह सीमन्तभाग अति संवेदनशील और मर्मस्थान कहा गया है। इसमें पवित्र सिन्दूरके सहयोगसे जो विशिष्ट भावनाएँ एवं संवेग प्रादुर्भूत होते हैं, वे उसके अखण्ड दाम्पत्य जीवनके लिये सहयोगी एवं अभ्युदयकारी होते हैं। सीमन्तोन्नयन-संस्कारमें भी पतिके द्वारा विशेष विधिसे गर्भिणी वधूके सीमन्तभागका ही संस्कार होता है, बालोंको दो भागोंमें बाँटा जाता है (उन्नयन), जिसका प्रभाव उस स्त्री तथा उसके भावी सन्तानपर पड़ता है। इस दृष्टिसे इस संस्कारका बहुत महत्त्व है।

गर्भसंस्कार या गर्भिणीका संस्कार—

सीमन्तोन्नयन-संस्कारके सम्बन्धमें आचार्योंके भिन्न-भिन्न मत हैं। कुछ आचार्योंके मतमें यह संस्कार प्रत्येक गर्भके समय करना चाहिये तथा कुछ आचार्योंके अनुसार केवल प्रथम गर्भमें ही होना चाहिये। एक बार संस्कार हो जानेसे वह प्रत्येक गर्भके लिये संस्कृत हो जाती है। इसलिये आचार्य पारस्करजीने अपने गृह्यसूत्रमें इसको प्रथम गर्भमें ही करना विधेय है, ऐसा कहा है—**‘प्रथमगर्भे मासे षष्ठेऽष्टमे वा’** (पा० गृह्यसूत्र १।१५।३)। अतः यही मत सर्वमान्य है। इस संस्कारको गर्भधारणसे छठे या आठवें मासमें करना चाहिये। इस संस्कारसे सन्तानके मस्तिष्कपर शुभ प्रभाव पड़ता है।

सुश्रुतसंहितामें बताया गया है कि सिरमें विभक्त हुई पाँच सन्धियाँ सीमन्त कहलाती हैं। इन सन्धियोंकी उन्नति अथवा प्रकाश होनेसे मस्तिष्कशक्ति उन्नत होती है और इनमें आघात होनेसे मृत्यु होती है, अतः इस संस्कारके द्वारा सीमन्तभागको पुष्ट बनाते हुए गर्भस्थ सन्तानके मस्तिष्क आदिको भी बलवान् बनाया जाता है।*

सीमन्तोन्नयनकी सामान्य प्रक्रिया—

इस समय गर्भ शिक्षणके योग्य होता है। अतः गर्भिणीको सत्साहित्यके अध्ययनमें रुचि रखनी चाहिये और सद्विचारोंसे सम्पन्न रहना चाहिये। इस संस्कारमें वीणावादकोंको बुलाकर उनसे किसी वीर राजा या किसी वीरपुरुषके चरित्रका गान कराया जाता है ताकि उसका प्रभाव गर्भस्थ शिशुपर हो और वह भी अत्यन्त वीर एवं पराक्रमी हो। इस संस्कारमें पति घृतयुक्त यज्ञावशिष्ट सुपाच्य पौष्टिक चरु (खीर) गर्भवतीको खिलाता है और शास्त्रवर्णित गूलर आदि वनस्पतिद्वारा गर्भिणीके सीमन्त (माँग)-का पृथक्करण करता है।

सुवासिनी वृद्धा ब्राह्मणियोंद्वारा गर्भिणीको आशीर्वाद दिलाया जाता है।

---

* 'पञ्च सन्धयः शिरसि विभक्ताः सीमन्ता नाम, तत्रोन्मादभयचित्तनाशैर्मरणम्।'
(सुश्रुतसंहिता, शारीर० ६। २७)

[३] सीमन्तोन्नयनसंस्कार-प्रयोग

गर्भधारणके छठे या आठवें महीनेमें पुरुषसंज्ञक नक्षत्र* आदि शुभ तिथिमें स्नानादि नित्य क्रिया सम्पन्न करके पत्नीके साथ पवित्र आसनपर बैठ जाय, दीप प्रज्वलित कर ले। आचमन, प्राणायाम करके पवित्री धारण करे और सीमन्तोन्नयनसंस्कारके लिये दाहिने हाथमें त्रिकुश, जल, अक्षत लेकर निम्नलिखित संकल्प करे—

प्रतिज्ञा-संकल्प—

ॐ विष्णुर्विष्णुर्विष्णुः श्रीमद्भगवतो महापुरुषस्य विष्णो-राज्ञया प्रवर्तमानस्य ब्रह्मणो द्वितीयपरार्धे श्रीश्वेतवाराहकल्पे वैवस्वतमन्वन्तरे अष्टाविंशतितमे कलियुगे कलिप्रथमचरणे जम्बूद्वीपे भारतवर्षे आर्यावर्तैकदेशे (यदि काशी हो तो **अविमुक्तवाराणसीक्षेत्रे आनन्दवने गौरीमुखे त्रिकण्टकविराजिते महाश्मशाने भगवत्या उत्तरवाहिन्या भागीरथ्या वामभागे**) **......नगरे/ग्रामे/क्षेत्रे षष्टिसंवत्सराणां मध्ये ......संवत्सरे ......अयने ......ऋतौ ......मासे ......पक्षे ......तिथौ ......नक्षत्रे ......योगे ......करणे ......वासरे ......राशिस्थिते सूर्ये ......राशिस्थिते चन्द्रे शेषेषु ग्रहेषु यथायथाराशिस्थानस्थितेषु सत्सु एवं ग्रहगुणगणविशिष्टे शुभमुहूर्ते ......गोत्रः सपत्नीकः ......शर्मा/वर्मा/गुप्तोऽहं अस्या मम भार्यायाः गर्भावयवेभ्य-स्तेजोवृद्ध्यर्थं क्षेत्रगर्भयोः संस्कारार्थं प्रतिगर्भसमुद्भवैनोनिबर्हणेन बीजकोत्प-त्त्यतिशयद्वारा श्रीपरमेश्वरप्रीत्यर्थं सीमन्तोन्नयनसंस्कार-कर्म करिष्ये। तत्पूर्वाङ्गत्वेन गणपतिसहितगौर्यादिषोडशमातृणां पूजनं स्वस्ति-**

---

* श्रवण, पुष्य, पुनर्वसु, हस्त, मूल, प्रौष्ठपद (पूर्वाभाद्रपद, उत्तराभाद्रपद), अनुराधा, मृगशिरा तथा अश्विनी—ये पुरुषसंज्ञकनक्षत्र कहे गये हैं—पुन्नाम श्रवणं तिष्यः स्वाती हस्तपुनर्वसू। मूलं प्रौष्ठपदं चानुराधा मृगशिरोऽश्विनी॥ (वीरमित्रोदय संस्कारप्रकाशमें गर्गका वचन)

पुण्याहवाचनं वसोर्धारापूजनं आयुष्यमन्त्रजपं साङ्कल्पिकेन विधिना नान्दीश्राद्धं च करिष्ये। ऐसा कहकर संकल्पजल छोड़ दे।

[गणेश-पूजन आदिकी विधि परिशिष्ट पृ०सं० ४१५ से देखकर सम्पन्न करे।]

पंचांगपूजनके अनन्तर बहिःशालामें हवनकार्य सम्पन्न करे। सर्वप्रथम एक हाथ लम्बी-चौड़ी एक वेदी बनाये तथा उसका निम्न विधिसे संस्कार करे—

पंच-भूसंस्कार

(१) परिसमूहन—

तीन कुशोंके द्वारा दक्षिणसे उत्तरकी ओर वेदीको साफ करे और उन कुशोंको ईशानकोणमें फेंक दे। **(त्रिभिर्दर्भैः परिसमुह्य तान् कुशानैशान्यां परित्यज्य)**

(२) उपलेपन—

गायके गोबर तथा जलसे वेदीको लीप दे। **(गोमयोदकेनोपलिप्य)**

(३) उल्लेखन या रेखाकरण—

स्रुवाके मूलसे वेदीके मध्य भागमें प्रादेशमात्र (अँगूठेसे तर्जनीके बीचकी दूरी) लम्बी तीन रेखाएँ पश्चिमसे पूर्वकी ओर खींचे। रेखा खींचनेका क्रम दक्षिणसे प्रारम्भकर उत्तरकी ओर होना चाहिये। **(स्फ्येन स्रुवमूलेन कुशमूलेन वा त्रिरुल्लिखय)**

(४) उद्धरण—

उन खींची गयी तीनों रेखाओंसे उल्लेखन-क्रमसे अनामिका तथा अंगुष्ठके द्वारा थोड़ी-थोड़ी मिट्टी निकालकर बायें हाथमें रखता जाय। बादमें सब मिट्टी दाहिने हाथपर रखकर ईशानकोणकी ओर फेंक दे। **(अनामिकाङ्गुष्ठाभ्यां मृदमुद्धृत्य)**

(५) अभ्युक्षण या सेचन—

तदनन्तर गंगा आदि पवित्र नदियोंके जलके छींटोंसे वेदीको पवित्र करे। **(जलेनाभ्युक्ष्य)**

अग्नि-स्थापन—

किसी कांस्य अथवा ताम्रपात्रमें या नये मिट्टीके पात्र (कसोरे)-में स्थित पवित्र अग्निको वेदीके अग्निकोणमें रखे और इस अग्निमेंसे क्रव्यादांश निकालकर नैर्ऋत्यकोणमें डाल दे। तदनन्तर अग्निपात्रको स्वाभिमुख करते हुए अग्निको वेदीमें स्थापित करे। उस समय निम्न मन्त्र पढ़े—

ॐ मङ्गलनामाग्नये सुप्रतिष्ठितो वरदो भव।

तदनन्तर **ॐ मङ्गलनामाग्नये नमः** इस मन्त्रसे गन्ध, पुष्पाक्षत आदिसे अग्निका पूजन करे।

ब्रह्मावरण-संकल्प—

चन्दन, पान, वस्त्र तथा द्रव्यदक्षिणा आदि वरणकी सामग्री हाथमें लेकर नीचे लिखा संकल्पवाक्य बोलकर ब्रह्माका वरण करे और वरणसामग्री उन्हें प्रदान कर दे।

ॐ अद्य कर्तव्यसीमन्तोन्नयनहोमकर्मणि कृताकृतावेक्षणरूप-ब्रह्मकर्मकर्तुम् ''''गोत्रम् ''''शर्माणं ब्राह्मणमेभिः पुष्पचन्दनताम्बूल-यज्ञोपवीतवासोभिर्ब्रह्मत्वेन भवन्तमहं वृणे।

ब्रह्मा उस सामग्रीको अपने हाथमें लेकर कहे—'**वृतोऽस्मि।**'

यजमान कहे—'**यथाविहितकर्म कुरु।**'

ब्रह्मा कहे—'**ॐ यथाज्ञानं करवाणि।**'

इसके बाद वेदीके दक्षिणकी ओर शुद्ध आसन बिछाये और उसके ऊपर पूर्वकी ओर अग्रभागवाले तीन कुशा रखकर यजमान निम्न वाक्य कहे—

'**अस्मिन् सीमन्तोन्नयनहोमकर्मणि भवान् मे ब्रह्मा भव।**'

ब्रह्मा कहे—'**ॐ भवानि।**'

इसके बाद अग्निकी परिक्रमा कराकर यजमान उस आसनपर ब्रह्माको बैठाये।

कुशकण्डिका

प्रणीतापात्रस्थापन—

इसके बाद यजमान प्रणीतापात्रको आगे रखकर जलसे भर दे और उसको कुशाओंसे ढककर तथा ब्रह्माका मुख देखकर अग्निके उत्तरकी तरफ कुशाओंके ऊपर रखे।

अग्नि (वेदी)-के चारों ओर कुश-आच्छादन (कुश-परिस्तरण)—

इक्यासी कुशोंको ले।* उनके बीस-बीसके चार भाग करे। इन्हीं चार भागोंको अग्निके चारों ओर फैलाया जाता है। इसमें ध्यान देनेकी बात यह है कि कुशसे हाथ खाली नहीं रहना चाहिये। प्रत्येक भाग फैलानेपर हाथमें एक कुश बचा रहेगा। इसलिये प्रथम बारमें इक्कीस कुश लिये जाते हैं। वेदीके चारों ओर कुश बिछानेका क्रम इस प्रकार है—कुशोंका प्रथम भाग (२०+१) लेकर पहले वेदीके अग्निकोणसे प्रारम्भकर ईशानकोणतक उन्हें उत्तराग्र बिछाये। फिर दूसरे भागको ब्रह्मासनसे अग्निकोणतक पूर्वाग्र बिछाये। तदनन्तर तीसरे भागको नैर्ऋत्यकोणसे वायव्यकोणतक उत्तराग्र बिछाये और चौथे भागको वायव्यकोणसे ईशानकोणतक पूर्वाग्र बिछाये। पुनः दाहिने खाली हाथसे वेदीके ईशानकोणसे प्रारम्भकर वामावर्त ईशानपर्यन्त प्रदक्षिणा करे।

पात्रासादन—

हवनकार्यमें प्रयोक्तव्य सभी वस्तुओं तथा पात्रों यथा—समूल तीन

* इतने कुश न मिलें तो तेरह कुशोंको ग्रहण करना चाहिये। उनके तीन-तीनके चार भाग करे। कुशोंके सर्वथा अभावमें दूर्वासे भी क्रिया सम्पन्न की जा सकती है।

कुश उत्तराग्र (पवित्रक बनानेवाली पत्तियोंको काटनेके लिये), साग्र दो कुशपत्र (बीचवाली सींक निकालकर पवित्रक बनानेके लिये), प्रोक्षणीपात्र (अभावमें दोना या मिट्टीका कसोरा), आज्यस्थाली (घी रखनेका पात्र), पाँच सम्मार्जन कुश, सात उपयमन कुश, तीन समिधाएँ (प्रादेशमात्र लम्बी), स्रुवा, आज्य (घृत), यज्ञीय काष्ठ (पलाश आदिकी लकड़ी), २५६ मुट्ठी चावलोंसे भरा पूर्णपात्र, चरुपाकके लिये तिल और मूँगसे भरा पात्र आदिको पश्चिमसे पूर्वतक उत्तराग्र अथवा अग्निके उत्तरकी ओर पूर्वाग्र रख ले।

उनके आगे वीणाके बजानेवाले दो गायकोंको बैठा देना चाहिये।

वहाँ प्रादेशमात्र अग्रभागसहित पीपलकाष्ठकी कील तथा शल्लकीका काँटा, पीला सूत लपेटा हुआ एक तकुआ तथा कुशाओंकी तीन पिंजूलिका बनाकर स्थापित करना चाहिये (तेरह कुशाओंको लपेटनेपर एक पिंजूलिका होती है। ऐसी तीन पिंजूलिका स्थापित करे।) गूलरके नवीन पत्तेकी डाली, जिनके दोनों तरफ फल लगे हों, सुवर्णके तारयुक्त सूत्र, पुष्प, बिल्वफलसहित अन्यान्य मांगलिक पदार्थ स्थापित करे।

पवित्रकनिर्माण—

दो कुशोंके पत्रोंको बायें हाथमें पूर्वाग्र रखकर इनके ऊपर उत्तराग्र तीन कुशोंको दायें हाथसे प्रादेशमात्र दूरी छोड़कर मूलकी तरफ रख दे। तदनन्तर दो कुशोंके मूलको पकड़कर कुशत्रयको बीचमें लेते हुए दो कुशपत्रोंको प्रदक्षिणक्रमसे लपेट ले, फिर दायें हाथसे तीन कुशोंको मोड़कर बायें हाथसे पकड़ ले तथा दाहिने हाथसे कुशपत्रद्वय पकड़कर जोरसे खींच ले। जब दो पत्तोंवाला कुश कट जाय तब उसके अग्रभागवाला प्रादेशमात्र दाहिनी ओरसे घुमाकर गाँठ दे दे ताकि दो पत्र अलग-अलग न हों। इस तरह पवित्रक बन गया। शेष सबको

(दो पत्रोंके कटे भाग तथा काटनेवाले तीनों कुशोंको) उत्तर दिशामें फेंक दे।

पवित्रकके कार्य तथा प्रोक्षणीपात्रका संस्कार—

पूर्वस्थापित प्रोक्षणीको अपने सामने पूर्वाग्र रखे। प्रणीतामें रखे जलका आधा भाग आचमनी आदि किसी पात्रद्वारा प्रोक्षणीपात्रमें तीन बार डाले। अब पवित्रीके अग्रभागको बायें हाथकी अनामिका तथा अंगुष्ठसे और मूलभागको दाहिने हाथकी अनामिका तथा अंगुष्ठसे पकड़कर इसके मध्यभागके द्वारा प्रोक्षणीके जलको तीन बार उछाले (**उत्प्लवन**)। पवित्रकको प्रोक्षणीपात्रमें पूर्वाग्र रख दे। प्रोक्षणीपात्रको बायें हाथमें रख ले। पुनः पवित्रकके द्वारा प्रणीताके जलसे प्रोक्षणीको प्रोक्षित करे। तदनन्तर इसी प्रोक्षणीके जलसे आज्यस्थाली, स्रुवा आदि सभी सामग्रियों तथा पदार्थोंका प्रोक्षण करे अर्थात् उनपर जलके छींटे डाले (**अर्थवत्प्रोक्ष्य**)। इसके बाद उस प्रोक्षणीपात्रको प्रणीतापात्र तथा अग्निके मध्यस्थान (असंचरदेश)-में पूर्वाग्र रख दे।

घृतको पात्र (आज्यस्थाली)-में निकालना—

आज्यपात्रसे घीको कटोरेमें निकालकर उस पात्रको वेदीके दक्षिणभागमें अग्निपर रख दे।

चरुपाक विधि—

फिर आज्यस्थालीमें घृत डाले और चरु बनानेके लिये तिल, चावल तथा मूँग मिलाये और फिर उनको प्रणीतापात्रके जलसे तीन बार धोये, पीछे किसी एक पात्रमें जल भरकर उसमें वह तिल, चावल तथा मूँग डाल दे। उसके बाद यजमान उस चरुपात्रको हाथमें लेकर और ब्रह्मासे घृतको ग्रहण कराकर वेदीस्थित अग्निके उत्तरकी ओर चरुको रखे और ब्रह्माके हस्तस्थित घृतको दक्षिणकी ओर स्थापन करा

दे। फिर जिस समय चरु सिद्ध हो जाय अर्थात् पक जाय, तब एक जलती हुई लकड़ीको लेकर चरुपात्रके ईशानभागसे प्रारम्भकर ईशानभागतक दाहिनी ओर घुमाकर अग्निमें डाल दे। फिर खाली बायें हाथको बायीं ओरसे घुमाकर ईशानभागतक ले आये। यह क्रिया पर्यग्निकरण कहलाती है।

स्रुवाका सम्मार्जन—

जब घी आधा पिघल जाय तब दायें हाथमें स्रुवाको पूर्वाग्र तथा अधोमुख लेकर आगपर तपाये। पुनः स्रुवाको बायें हाथमें पूर्वाग्र ऊर्ध्वमुख रखकर दायें हाथसे सम्मार्जन कुशके अग्रभागसे स्रुवाके अग्रभागका, कुशके मध्यभागसे स्रुवाके मध्यभागका और कुशके मूलभागसे स्रुवाके मूलभागका स्पर्श करे अर्थात् स्रुवाका सम्मार्जन करे। प्रणीताके जलसे स्रुवाका प्रोक्षण करे। उसके बाद सम्मार्जन कुशोंको अग्निमें डाल दे।

स्रुवाका पुनः प्रतपन—

अधोमुख स्रुवाको पुनः अग्निमें तपाकर अपने दाहिनी ओर किसी पात्र, पत्ते या कुशोंपर पूर्वाग्र रख दे।

घृतपात्र तथा चरुपात्रका स्थापन—

घीके पात्रको अग्निसे उतारकर चरुके पश्चिम भागसे होते हुए पूर्वकी ओरसे परिक्रमा करके अग्नि (वेदी)-के पश्चिमभागमें उत्तरकी ओर रख दे। तदनन्तर चरुपात्रको भी अग्निसे उतारकर वेदीके उत्तर रखी हुई आज्यस्थालीके पश्चिमसे ले जाकर उत्तरभागमें रख दे।

घृतका उत्प्लवन—

घृतपात्रको सामने रख ले। प्रोक्षणीमें रखी हुई पवित्रीको लेकर उसके मूलभागको दाहिने हाथके अंगुष्ठ तथा अनामिकासे और बायें हाथके अंगुष्ठ तथा अनामिकासे पवित्रीके अग्रभागको पकड़कर

कटोरेके घृतको तीन बार ऊपर उछाले। घृतका अवलोकन करे और यदि घृतमें कोई विजातीय वस्तु हो तो निकालकर फेंक दे। तदनन्तर प्रोक्षणीके जलको तीन बार उछाले और पवित्रीको पुनः प्रोक्षणीपात्रमें रख दे। स्रुवासे थोड़ा घी चरुमें डाल दे।

तीन समिधाओंकी आहुति—

ब्रह्माका स्पर्श करते हुए बायें हाथमें उपयमन (सात)-कुशोंको लेकर हृदयमें बायाँ हाथ सटाकर तीन समिधाओंको घीमें डुबोकर मनसे प्रजापतिदेवताका ध्यान करते हुए खड़े होकर मौन हो अग्निमें डाल दे। तदनन्तर बैठ जाय।

पर्युक्षण (जलधारा देना)—

पवित्रकसहित प्रोक्षणीपात्रके जलको दक्षिण हाथकी अंजलिमें लेकर अग्निके ईशानकोणसे ईशानकोणतक प्रदक्षिणक्रमसे जलधारा गिरा दे। पवित्रकको बायें हाथमें लेकर फिर दाहिने खाली हाथको उलटे अर्थात् ईशानकोणसे उत्तर होते हुए ईशानकोणतक ले आये **(इतरथावृत्तिः)** और पवित्रकको दायें हाथमें लेकर प्रणीतामें पूर्वाग्र रख दे। तदनन्तर हवन करे।

हवन-विधि

सर्वप्रथम प्रजापतिदेवताके निमित्त आहुति दी जाती है। तदनन्तर इन्द्र, अग्नि तथा सोमदेवताको आहुति देनेका विधान है। इन चार आहुतियोंमें प्रथम दो आहुतियाँ '**आघार**' नामवाली हैं एवं तीसरी और चौथी आहुति '**आज्यभाग**' नामसे कही जाती है। ये चारों आहुतियाँ घीसे देनी चाहिये। इन आहुतियोंको प्रदान करते समय ब्रह्मा कुशके द्वारा हवनकर्ताके दाहिने हाथका स्पर्श किये रहे, इस क्रियाको '**ब्रह्मणान्वारब्ध**' कहते हैं।

दाहिना घुटना पृथ्वीपर लगाकर स्रुवामें घी लेकर, प्रजापतिदेवताका

ध्यानकर निम्न मन्त्रका मनसे उच्चारणकर प्रज्वलित अग्निमें आहुति दे—

(१) ॐ प्रजापतये स्वाहा, इदं प्रजापतये न मम। कहकर वेदी या कुण्डके मध्यभागमें आहुति दे। (स्रुवामें बचे घीको प्रोक्षणीपात्रमें छोड़े।)

आगेकी तीन आहुतियाँ इस प्रकार बोलकर दे—

(२) ॐ इन्द्राय स्वाहा, इदमिन्द्राय न मम। कहकर वेदी या कुण्डके मध्यभागमें आहुति दे। (स्रुवामें बचे घीको प्रोक्षणीपात्रमें छोड़े।)

(३) ॐ अग्नये स्वाहा, इदमग्नये न मम। कहकर वेदी या कुण्डके उत्तरपूर्वार्धभागमें आहुति दे। (स्रुवामें बचे घीको प्रोक्षणीपात्रमें छोड़े।)

(४) ॐ सोमाय स्वाहा, इदं सोमाय न मम। कहकर वेदी या कुण्डके दक्षिणपूर्वार्धभागमें आहुति दे। (स्रुवामें बचे घीको प्रोक्षणीपात्रमें छोड़े।)

इसके बाद घृत मिलाकर स्थालीपाकका अर्थात् पहले जो तिलमुद्गमिश्रित चरु बनाया गया है, उससे स्रुवाद्वारा हवन करे। इन आहुतियोंमें भी शेष बचा हुआ घृतादि पूर्ववत् प्रोक्षणीपात्रमें डालते जाना चाहिये।

नवाहुति—

१-ॐ भूः स्वाहा, इदमग्नये न मम।

२-ॐ भुवः स्वाहा, इदं वायवे न मम।

३-ॐ स्वः स्वाहा इदं सूर्याय न मम।

४-ॐ त्वं नो अग्ने वरुणस्य विद्वान् देवस्य हेडो अव यासिसीष्ठाः। यजिष्ठो वह्नितमः शोशुचानो विश्वा द्वेषाꣳसि प्र

मुमुग्ध्यस्मत्स्वाहा, इदमग्नीवरुणाभ्यां न मम।

५-ॐ स त्वं नो अग्नेऽवमो भवोती नेदिष्ठो अस्या उषसो व्युष्टौ। अव यक्ष्व नो वरुणꣳरराणो वीहि मृडीकꣳ सुहवो न एधि स्वाहा। इदमग्नीवरुणाभ्यां न मम।

६-ॐ अयाश्चाग्नेऽस्यनभिशस्तिपाश्च सत्यमित्त्वमया असि। अया नो यज्ञं वहास्यया नो धेहि भेषजꣳ स्वाहा। इदमग्नये अयसे न मम।

७-ॐ ये ते शतं वरुण ये सहस्त्रं यज्ञियाः पाशा वितता महान्तः। तेभिर्नो ऽअद्य सवितोत विष्णुर्विश्वे मुञ्चन्तु मरुतः स्वर्काः स्वाहा॥ इदं वरुणाय सवित्रे विष्णवे विश्वेभ्यो देवेभ्यो मरुद्भ्यः स्वर्केभ्यश्च न मम।

८-ॐ उदुत्तमं वरुण पाशमस्मदवाधमं वि मध्यमꣳश्रथाय। अथा वयमादित्य व्रते तवानागसो अदितये स्याम स्वाहा॥ इदं वरुणायादित्यायादितये न मम।

तदनन्तर प्रजापति देवताका ध्यानकर मनमें निम्न मन्त्रका उच्चारणकर आहुति दे—

९-ॐ प्रजापतये स्वाहा, इदं प्रजापतये न मम।

स्विष्टकृत् आहुति—

इसके बाद घृत और चरु—इन दोनोंसे ब्रह्माद्वारा कुशसे स्पर्श किये जानेकी स्थितिमें (ब्रह्मणान्वारब्ध) निम्न मन्त्रसे स्विष्टकृत् आहुति दे—

ॐ अग्नये स्विष्टकृते स्वाहा, इदमग्नये स्विष्टकृते न मम।

संस्त्रवप्राशन—

हवन पूर्ण होनेपर प्रोक्षणीपात्रसे घृत दाहिने हाथमें लेकर यत्किंचित् पान करे। हाथ धो ले। फिर आचमन करे।

मार्जनविधि—

इसके बाद निम्नलिखित मन्त्रद्वारा प्रणीतापात्रके जलसे कुशोंके द्वारा अपने सिरपर मार्जन करे—

ॐ सुमित्रिया न आप ओषधयः सन्तु।

इसके बाद निम्न मन्त्रसे जल नीचे छोड़े—

ॐ दुर्मित्रियास्तस्मै सन्तु योऽस्मान् द्वेष्टि यं च वयं द्विष्मः।

पवित्रप्रतिपत्ति—

पवित्रकको अग्निमें छोड़ दे।

पूर्णपात्रदान—

पूर्वमें स्थापित पूर्णपात्रमें द्रव्य-दक्षिणा रखकर निम्न संकल्पकर दक्षिणासहित पूर्णपात्र ब्रह्माको प्रदान करे—

ॐ अद्य सीमन्तोन्नयनहोमकर्मणि कृताकृतावेक्षणरूपब्रह्म-कर्मप्रतिष्ठार्थमिदं वृषनिष्क्रयद्रव्यसहितं पूर्णपात्रं प्रजापतिदैवतं .....गोत्राय .....शर्मणे ब्रह्मणे भवते सम्प्रददे।

ब्रह्मा '**स्वस्ति**' कहकर उस पूर्णपात्रको ग्रहण कर ले।

प्रणीताविमोक—

प्रणीतापात्रको ईशानकोणमें उलटकर रख दे।

मार्जन—

पुनः उपयमन कुशाद्वारा निम्न मन्त्रसे उलटकर रखे गये प्रणीताके जलसे मार्जन करे—

ॐ आपः शिवाः शिवतमाः शान्ताः शान्ततमास्तास्ते कृण्वन्तु भेषजम्। उपयमन कुशोंको अग्निमें छोड़ दे।

बर्हिहोम—

तदनन्तर पहले बिछाये हुए कुशाओंको जिस क्रमसे बिछाये गये थे, उसी क्रमसे उठाकर घृतमें भिगोये और निम्न मन्त्रसे स्वाहाका

उच्चारणकर अग्निमें डाल दे—

ॐ देवा गातुविदो गातुं वित्वा गातुमित मनसस्पत इमं देव यज्ञꣳ स्वाहा वाते धाः स्वाहा।

कुशमें लगी ब्रह्मग्रन्थिको खोल दे।

सीमन्तके उन्नयनकी प्रक्रिया

इसके बाद नवीन वस्त्र धारण की हुई गर्भवती स्त्रीको हवन-वेदीके पश्चिमकी तरफ कोमल आसनपर बैठाये। फिर शल्लकी (सेई या वनसूकर)-का काँटा, पीपलकी कील (पतली डाली), पीले डोरेसे लिपटा हुआ तकुआ तथा तीन कुशाकी पिंजूलिका और गूलरकी दो फलयुक्त डाली—इन पाँचों पदार्थोंसे पति अपनी स्त्रीके बालोंको ललाटसे ऊपर सिरके पिछले भागतक अलग करे अर्थात् सीमन्त (माँग)-में रेखा बनाये, बालोंको दो भागोंमें बाँटे। उस समय निम्न मन्त्र पढ़े—

ॐ भूर्विनयामि। ॐ भुवर्विनयामि। ॐ स्वर्विनयामि।

तदनन्तर आगे लिखे मन्त्रसे गूलरके फलादिसहित डोरेको वधूकी चोटीमें बाँध दे—

ॐ अयमूर्जावतो वृक्ष उर्जीव फलिनी भव।

अर्थात् तुम इस ऊर्जस्वल उदुम्बर (गूलर) वृक्षके समान ऊर्जस्वला बनो।

तदनन्तर सुवासिनी वृद्धा ब्राह्मणियोंद्वारा आशीर्वाद दिलाना चाहिये।

वीणागायकोंद्वारा गाया जानेवाला मन्त्र—

उस समय वीणागायकोंको कहे कि आप किसी राजा अथवा वीर पुरुषके यशको गायें। यथा—

सोम एव नो राजेमा मानुषीः प्रजाः अविमुक्तचक्रे आसीरंस्तीरे तुभ्यमसौ।

नदियोंके नामका उच्चारण—

इसके बाद जिस नगर या ग्राममें यजमानका घर हो, उसके समीप बहनेवाली नदीका नाम पत्नीसे उच्चारण कराये। यथा—

गङ्गायै नमः, यमुनायै नमः, सरस्वत्यै नमः, नर्मदायै नमः, गोदावर्य्यै नमः, कावेर्य्यै नमः आदि।

भस्मधारण-विधि—

इसके बाद बैठकर स्रुवासे कुण्ड (वेदी)-के ईशानकोणसे भस्म निकालकर दाहिने हाथकी अनामिका अंगुलीसे स्रुवेमें लगी हुई भस्म लेकर निम्न मन्त्रोंसे अपने अंगोंमें लगाये। यथा—

ॐ त्र्यायुषं जमदग्नेः—यह कहकर ललाट में।

ॐ कश्यपस्य त्र्यायुषम्—यह बोलकर गले में।

ॐ यद्देवेषु त्र्यायुषम्—यह बोलकर दक्षिण बाहुमूलमें।

ॐ तन्नो अस्तु त्र्यायुषम्—यह कहकर हृदयमें।

दक्षिणादानसंकल्प—

इसके बाद आचार्य एवं ब्रह्माको दक्षिणा दे और भोजन कराये। इसके लिये निम्नलिखित संकल्प बोले—

ॐ अद्य ....गोत्रः ....शर्मा/वर्मा/गुप्तोऽहं सीमन्तोन्नयन-कर्मनिमित्तकहोमकर्मणः साङ्गफलप्राप्तये साद्गुण्याय च अग्निदैवत्यं सुवर्णं सुवर्णनिष्क्रयभूतद्रव्यं* वा आचार्याय ब्रह्मणे अन्येभ्यः भूयसीं दक्षिणां च सम्प्रददे। यथासंख्याकान् ब्राह्मणांश्च भोजयिष्ये।

* अगर सुवर्ण-दक्षिणा देनी हो तो 'सुवर्णनिष्क्रयभूतद्रव्यम्' नहीं बोलना चाहिये। यदि सुवर्ण न देकर उसका निष्क्रय देना हो तो 'सुवर्णम्' न बोलकर 'सुवर्णनिष्क्रयभूतद्रव्यम्' बोलना चाहिये।

विसर्जन—

इसके बाद स्थापित अग्नि, देवताओं तथा मातृगणोंका निम्नलिखित मन्त्र बोलते हुए पुष्प-अक्षत छोड़कर विसर्जन करे—

गच्छ गच्छ सुरश्रेष्ठ स्वस्थाने परमेश्वर।
यत्र ब्रह्मादयो देवास्तत्र गच्छ हुताशन॥
यान्तु देवगणाः सर्वे पूजामादाय मामकीम्।
इष्टकामसमृद्ध्यर्थं पुनरागमनाय च॥

भगवत्स्मरण—

इसके बाद पुष्प लेकर हाथ जोड़कर भगवान्‌का स्मरण करते हुए निम्न मन्त्रोंका पाठ करे—

प्रमादात् कुर्वतां कर्म प्रच्यवेताध्वरेषु यत्।
स्मरणादेव तद् विष्णोः सम्पूर्णं स्यादिति श्रुतिः॥
यस्य स्मृत्या च नामोक्त्या तपोयज्ञक्रियादिषु।
न्यूनं सम्पूर्णतां याति सद्यो वन्दे तमच्युतम्॥
यत्पादपङ्कजस्मरणाद् यस्य नामजपादपि।
न्यूनं कर्म भवेत् पूर्णं तं वन्दे साम्बमीश्वरम्॥

ॐ विष्णवे नमः। ॐ विष्णवे नमः। ॐ विष्णवे नमः।
ॐ साम्बसदाशिवाय नमः। ॐ साम्बसदाशिवाय नमः।
ॐ साम्बसदाशिवाय नमः।

जातकर्मसंस्कार

जातकर्मसंस्कारका परिचय एवं महत्त्व—

बालकके जन्म होनेसे पूर्व तीन संस्कार होते हैं—गर्भाधान, पुंसवन तथा सीमन्तोन्नयन। सीमन्तोन्नयन प्रायः आठवें मासतक हो जाता है, उसके बाद लगभग एक-ड़ेढ मासके अनन्तर प्रसव होता है। जन्म होनेके बाद जो सबसे पहले संस्कार होता है, उसीका नाम जातकर्म है। इस संस्कारके प्रधान उद्देश्यमें बताया गया है कि गर्भस्थशिशु, जो माताके रससे अपना पोषण करता है, उस आहार आदिका दोष जो बालकमें आ जाता है, वह इस संस्कारके द्वारा दूर हो जाता है—

'गर्भाम्बुपानजो दोषो जातात् सर्वोऽपि नश्यति।'

(स्मृतिसंग्रह)

यह संस्कार केवल पुत्रके उत्पन्न होनेपर ही होता है, कन्याके नहीं। महर्षि पारस्करजीने अपने गृह्यसूत्रमें लिखा है—**'जातस्य कुमारस्याच्छिन्नायां नाड्यां मेधाजननायुष्ये करोति।'** (पा०गृह्य० १।१६।३) अर्थात् उत्पन्न हुए कुमार (बालक)-के नालच्छेदनसे पूर्व ही मेधाजनन तथा आयुष्यकर्म पिता करता है। मनुस्मृतिमें भी यही बात बतायी गयी है कि नालच्छेदनके पूर्व ही यह संस्कार करना चाहिये—**'प्राक् नाभिवर्द्धनात् पुंसो जातकर्म विधीयते।'** ऐसा इसलिये कि नालच्छेदनके अनन्तर सूतक (जननाशौच) लग जाता है और सूतकमें जातकर्म करना निषिद्ध है। महर्षि जैमिनिका वचन है—

यावन्न छिद्यते नालं तावन्नाप्नोति सूतकम्।
छिन्ने नाले ततः पश्चात्सूतकं तु विधीयते॥

(वीरमित्रोदय-संस्कारप्रकाश)

पुत्रोत्पत्तिके अनन्तर नालच्छेदन कितनी देरके बाद होना चाहिये,

इस सम्बन्धमें निर्णयात्मक व्यवस्थामें यह बताया गया है कि बारह घड़ी (चार घण्टे) अथवा सोलह घड़ी (लगभग साढ़े ६ घण्टे)–के बाद नाल काटनी चाहिये। इतने समयमें जातकर्म–सम्बन्धी समस्त कर्म पूर्ण किये जा सकते हैं।*

जातकर्म–संस्कारमें आशौच–प्रवृत्ति और प्रतिग्रहजन्य दोष नहीं होता—

चूँकि जातकर्मसम्बन्धी सभी कर्म जननाशौचकी प्रवृत्तिसे पहले होते हैं। अतः देवपूजन, दान, दानग्रहण आदि सभी कर्मोंमें कोई दोष नहीं होता, इन्हें करनेकी विधि प्राप्त है। वीरमित्रोदय–संस्कारप्रकाशमें ब्रह्मपुराणके वचनसे बताया गया है कि पुत्रका जन्म होनेपर पितृगण तथा देवता उस घरमें प्रसन्नतापूर्वक आते हैं, अतः वह दिन पुण्यशाली तथा पूज्य होता है, अतः उस दिन उनका पूजन करना चाहिये और ब्राह्मणोंको सुवर्ण, भूमि, गौ आदिका दान करना चाहिये। प्रतिग्रह लेनेके लिये वृद्धयाज्ञवल्क्यजीके वचनसे वहाँ बताया गया है कि '**कुमारजन्मदिवसे विप्रैः कार्यः प्रतिग्रहः।**' अर्थात् पुत्रजन्मके दिन (जातकर्म–संस्कारमें) ब्राह्मणोंको दान लेना चाहिये।

जातकर्म–संस्कारमें करणीय कृत्य—

गर्भस्थ बालकके नाभिमें एक नाल (नली) लगी रहती है, जिसका सम्बन्ध माताके हृदयसे होता है, इसी रसवाहिनी नालसे माताके द्वारा ग्रहण किये गये आहारके द्वारा शिशुका गर्भमें पोषण होता है। जन्मके अनन्तर बालक इस नालके साथ ही बाहर निकलता है, इस जातकर्म–संस्कारमें बालकके इसी नालका छेदन किया जाता है

* आजकल प्रायः प्रसव अस्पताल आदिमें कराये जाते हैं। अतः नालच्छेदनकी प्रक्रिया कुछ विलम्बसे करनेकी व्यवस्था पहलेसे कर लेनी चाहिये।

और तब मातासे बालकका सम्बन्ध-विच्छेद हो जाता है और बालकको मधु-दूध आदि बाहरका आहार देना प्रारम्भ किया जाता है। जातकर्म-सम्बन्धी सभी कर्म नालच्छेदनके पूर्व ही होते हैं।

शास्त्रोंमें बताया गया है कि बालकका पिता पुत्रोत्पत्तिका शुभ समाचार सुनते ही अपने कुलदेवता तथा अपने मान्य वृद्ध पुरुषोंको प्रणाम करे और पुत्रका मुखावलोकन करके गंगा आदि किसी भी पवित्र नदीमें उत्तराभिमुख हो सचैल (वस्त्रोंसहित) स्नान करे।[1] यदि पुत्र मूल, ज्येष्ठा अथवा व्यतीपात आदि अशुभ योगोंमें उत्पन्न हुआ हो तो उसका मुख देखे बिना ही स्नान करे। कदाचित् पुत्रोत्पत्ति रात्रिमें हो तो रात्रि-स्नान कैसे करे, इसकी व्यवस्थामें बताया गया है कि यद्यपि रात्रिमें स्नान निषिद्ध है, किंतु यह स्नान नैमित्तिक है। अतः रात्रिमें भी स्नान-दान किया जा सकता है।[2] स्नान करनेके अनन्तर पिताकी स्पर्श आदिके लिये शुद्धि हो जाती है, किंतु माता तो दस दिनमें ही शुद्ध होती है।[3]

जातकर्मसंस्कारार्थ बालकका पिता अपनी पत्नीकी गोदमें बालकको बिठाकर पूर्वाभिमुख होकर स्वस्तिवाचनादिके अनन्तर प्रधान संकल्प करे और गणेशपूजनादि पंचांगकर्म करके सर्वप्रथम मेधाजनन संस्कार करे—

मेधाजनन—

यह कर्म बालकको मेधावी (धारणायुक्त बुद्धिसे सम्पन्न)

---

१. शास्त्रोंमें सचैल-स्नानकी विधि लिखी है, परंतु यह सम्भव न हो तो कम-से-कम मार्जन-स्नान अवश्य कर लेना चाहिये तथा वस्त्रका त्याग कर देना चाहिये।

२. रात्रौ स्नानं न कुर्वीत दानं चैव विशेषतः। नैमित्तिकं तु कुर्वीत स्नानं दानं च रात्रिषु॥
पुत्रजन्मनि यात्रायां शर्वर्यां दत्तमक्षयम्।
(वीरमित्रोदय-संस्कारप्रकाशमें महर्षि व्यासका वचन)

३. जाते पुत्रे पितुः स्नानं सचैलं तु विधीयते। माता शुध्येद्दशाहेन स्नानात्तु स्पर्शनं पितुः॥ (वीरमित्रोदय-संस्कारप्रकाशमें महर्षि संवर्तका वचन)

बनानेके लिये किया जाता है। किसी सुवर्णादि तैजस पात्रमें मधु (शहद) और घृतको असमान मात्रामें मिलाकर अथवा केवल घृतको लेकर सुवर्णकी शलाकासे अथवा दाहिने हाथकी अनामिका अंगुलीके अग्रभागमें सुवर्ण रखकर सुवर्णसहित अंगुलीसे मधु और घृतको मिलाकर '**ॐ भूस्त्वयि दधामि**' (पार० गृ० सू० १।१६।४) इत्यादि चार मन्त्रोंसे बालकको एक बार अथवा चार बार मधु-घृत असमान मात्रामें अथवा केवल घृत थोड़ा-थोड़ा चटा दे। इसको मेधाजनन-संस्कार कहते हैं।

घृत, मधु और सुवर्ण—ये तीनों ही अमृतस्वरूप हैं। इनके योगमें अद्भुत शक्ति है और इनका प्रभाव भी अमोघ है। ये तीनों मिलकर बच्चेकी आयु और मेधा बढ़ानेवाली रासायनिक औषध बन जाते हैं।

जातकर्ममें की जाती हुई उक्त क्रिया और मन्त्रोंके अभिमन्त्रणका प्रभाव इस समय अद्भुत काम करता है, शिशुका उपकार करता है, उसे जीवन प्रदान करता है।

आयुष्यकरण—

इस प्रकार मेधाजनन कर्मके अनन्तर पिताद्वारा आयुष्यकरण कर्म किया जाता है, जिससे बालक दीर्घजीवी होता है। आयुष्यकरणके मन्त्रोंमें बताया गया है कि जिस प्रकार अग्नि, सोम, ब्रह्मा, देवता, ऋषिगण, पितर, यज्ञ तथा समुद्र—ये आयुष्मान् हैं, उसी प्रकार उनके अनुग्रहसे मैं तुम्हें दीर्घ आयुसे युक्त करता हूँ।

आयुष्यकरणका ही एक उपांग कर्म इसके अनन्तर और होता है, जिसका उद्देश्य यह रहता है कि बालक दीर्घ आयुतक स्वस्थतापूर्वक जीवित रहे और उसे कोई शारीरिक रोग अथवा मानसिक व्यथा न हो, इसके लिये '**दिवस्परि०**' इत्यादि वात्सप्र अनुवाक (यजु०

१२।१८—२८)-की बारह ऋचाओंमेंसे प्रारम्भकी ग्यारह ऋचाओंका उच्चारण करते हुए बालकके समस्त शरीरका स्पर्श किया जाता है। तदनन्तर प्राण, व्यान, अपान, उदान तथा समान—इन पाँचों वायुओंसे जो क्रमशः बालकके हृदय, सर्वांग, गुदादेश, कण्ठ तथा नाभिमें व्याप्त रहती हैं, इनसे बालकके दीर्घ आयुकी प्रार्थना की जाती है।

बालकके जन्मकी भूमिकी प्रार्थना—

जिस भूमि अथवा स्थानपर माताके गर्भसे सर्वप्रथम बालकका अभिमर्शन (स्पर्श) होता है, वह स्थान जन्मभूमि कहलाती है और यह समझा जाता है कि यह बालक इस भूमिद्वारा ही मुझे प्राप्त हुआ है, अतः इसका हमारे ऊपर महान् ऋण है, अपनी इस भावनाको व्यक्त करनेके लिये बालकका पिता मन्त्रका पाठ करते हुए उस भूमि (स्थान)-का स्पर्श करता है और भूमिकी प्रार्थना करता है।

बालकका अभिमर्शन—

इसके अनन्तर पिताद्वारा मन्त्रपूर्वक बालकका स्पर्श किया जाता है। मन्त्रमें बताया गया है कि हे कुमार! तुम वज्र एवं पाषाणकी भाँति दृढ़ होओ, कुठारके समान तीक्ष्ण और अपहतवीर्यवाले बनो, सुवर्णके समान निर्दोष एवं पवित्र बनो। चूँकि तुम पुत्र नामवाले आत्मस्वरूप ही हो, अतः निश्चित ही शतायु होओ।

माताके प्रति कल्याण-कामना—

तदनन्तर बालकका पिता मन्त्रका पाठ करते हुए पत्नीकी ओर देखता है। मन्त्रका भाव है कि हे वीरे! तुम इडा—मानवी (यज्ञपात्री) हो, तुम मित्रावरुणके अंशसे उत्पन्न हो, जिस प्रकार इडासे पुरूरवाकी उत्पत्ति हुई अथवा जैसे यज्ञपात्रीसे पुरोडाश उत्पन्न हुआ, जिस प्रकार मित्रावरुणसे अगस्त्य उत्पन्न हुए, वसिष्ठ उत्पन्न हुए, वैसे ही तुमसे

यह पुत्र उत्पन्न हुआ है। तुमने वीर पुत्रको उत्पन्न किया है, अतः तुम वीरवती होओ, पति-पुत्रवाली होओ इत्यादि।

माताके स्तनोंका प्रक्षालन तथा दुग्धपान—

तदनन्तर माताके दोनों स्तनोंका प्रक्षालनकर बालकको स्तनपान (दुग्धपान) कराया जाता है। सर्वप्रथम दाहिने स्तनको प्रक्षालित किया जाता है।

जलपूर्ण कुम्भका स्थापन—

तदनन्तर सूतिका स्त्रीके शयनस्थानपर पलंगके नीचे भूमिपर सिरकी ओर एक जलपूर्ण कुम्भ रख देना चाहिये। यह कलश सूतिका स्त्रीके उठनेपर्यन्त दस दिनोंतक वहींपर स्थापित रहता है। मन्त्रमें कलशकी प्रार्थना करते हुए कहा गया है कि हे जलकलश! जैसे आप देवताओंके हितके लिये सदैव जाग्रत् रहते हैं, सावधान रहते हैं, वैसे ही इस सूतिकाके हितके लिये भी सदा सावधान रहिये। इसकी रक्षा कीजिये।

सूतिका-गृहके द्वारपर अग्निस्थापन—

सूतिका-गृहके द्वारदेशमें एक वेदी बनाकर उसपर प्रगल्भ नामक अग्निकी स्थापना करनी चाहिये। वह अग्नि निरन्तर दस दिनतक जलती रहे, बुझे नहीं। उस अग्निमें प्रतिदिन सायं-प्रातः भूसी, चावलके कण और पीली सरसोंसे दो-दो आहुति दे। इन्हें बालकका पिता दे अथवा ब्राह्मण आचार्य दे। इस हवनकर्मसे सूतिका तथा सूतिकागृहके उपद्रवोंकी शान्ति तथा रक्षा होती है।

बालककी कुमारग्रह आदि बालग्रहोंसे रक्षाका उपाय—

जन्मके अनन्तर बालक यदि रोये न, हँसे न, हाथ-पैर न हिलाये, प्रसन्न न रहे, म्लान रहे, उसका मुखमण्डल भावशून्य रहे तो समझना

चाहिये कि किसी स्कन्द, नैगमेष, पूतना, कुमार आदि बालग्रहने बालकको ग्रस लिया है, अतः उसकी शान्तिके लिये पिताको चाहिये कि बालकको अपनी गोदमें लेकर उसे मत्स्यजाल अथवा किसी वस्त्रसे आवृत कर ले और मन्त्रोंका पाठ करते हुए बालकके सर्वांगमें हाथ फेरे।[1]

सम्पूर्ण कर्म करनेके अनन्तर ब्राह्मणोंको दक्षिणा प्रदान करे और उसी समय भोजन करानेका संकल्प कर लेनेके अनन्तर सूतकान्तमें उन्हें भोजन कराये।

नालच्छेदन[2]—

तदनन्तर आठ अंगुल छोड़कर नालच्छेदन करे और अभिषेक, मन्त्र-पाठ, तिलक आदि करके जातकर्म-कृत्य सम्पन्न करे।

---

१. सुश्रुतसंहिता शारीरस्थान अ० १०।५०-५१ तथा सुश्रुतसंहिता उत्तरतन्त्र अ० २७-३७ तक बालग्रहोंके उपद्रवसे युक्त बालकोंके लक्षण तथा उनसे रक्षाका उपाय विस्तारसे बताया गया है।

२. आयुर्वेदमें बताया गया है कि बालकके पैदा होनेपर प्रथम जरायुको हटाकर घी और सैन्धवसे मुखका शोधन करे, घीसे स्निग्ध पिचुको सिरपर रखे, फिर नाभि नाड़ीको नाभिसे आठ अंगुल मापकर धागेसे बाँधकर काट दे। धागेके एक भागको बच्चेके गलेमें बाँध दे। (सुश्रुतसंहिता शारीरस्थान १०।१२, चरक शारीर० अ० ८)

[४] (क) जातकर्मसंस्कार-प्रयोग *

जातकर्मसंस्कारका प्रयोग शास्त्रोंमें जिस प्रकार लिखा है, वह वर्तमान समयमें सम्पूर्ण रूपसे करना कठिन प्रतीत हो तो पुत्रोत्पत्तिकी जानकारी होनेपर यथासम्भव नालच्छेदनसे पूर्व मार्जन-स्नान आदि करके, देवता तथा वृद्धजनों आदिको प्रणामकर, सांकल्पिक विधिसे नान्दीमुखश्राद्ध एवं दानादि करते हुए यथासम्भव शास्त्रोक्त विधिका पालन करना चाहिये।

सांकल्पिक विधिसे नान्दीमुखश्राद्ध करनेका संकल्प यहाँ संक्षेपमें लिखा जा रहा है। इसके अनुसार स्वर्ण अथवा स्वर्णनिष्क्रयदान किसी ब्राह्मणको संकल्पपूर्वक करना चाहिये। हाथमें कुशाक्षत, जल तथा स्वर्णनिष्क्रयद्रव्य लेकर निम्न संकल्प बोले—

ॐ विष्णुर्विष्णुर्विष्णुः श्रीमद्भगवतो महापुरुषस्य विष्णोराज्ञया प्रवर्तमानस्य ब्रह्मणो द्वितीयपरार्धे श्रीश्वेतवाराहकल्पे वैवस्वतमन्वन्तरे अष्टाविंशतितमे कलियुगे कलिप्रथमचरणे जम्बूद्वीपे भारतवर्षे आर्यावर्तैकदेशे (यदि काशी हो तो **अविमुक्तवाराणसीक्षेत्रे आनन्दवने गौरीमुखे त्रिकण्टकविराजिते भगवत्या उत्तरवाहिन्या भागीरथ्या वामभागे) ....नगरे/ग्रामे/क्षेत्रे षष्टि-संवत्सराणां मध्ये ....संवत्सरे ....अयने ....ऋतौ ....मासे ....पक्षे ....तिथौ ....नक्षत्रे ....योगे ....करणे ....वासरे ....राशिस्थिते सूर्ये ....राशिस्थिते चन्द्रे शेषेषु ग्रहेषु यथायथाराशिस्थानस्थितेषु सत्सु एवं ग्रहगुणगणविशिष्टे शुभमुहूर्ते ....गोत्रः ....शर्मा/वर्मा/गुप्तोऽहं अस्मिन् जातकर्म-संस्कारकर्मणि विश्वेदेवपूर्वकाणां मातृपितामहीप्रपितामहीनां**

---

* यह संस्कार नालच्छेदनसे पूर्व किया जाता है; क्योंकि नालच्छेदनके अनन्तर जननाशौच प्रवृत्त हो जाता है—

यावन्न छिद्यते नालं तावन्नाप्नोति सूतकम्। छिन्ने नाले ततः पश्चात् सूतकं तु विधीयते॥ (वीरमित्रोदय-संस्कारप्रकाशमें महर्षि जैमिनिका वचन)

पितृपितामहप्रपितामहानां द्वितीयगोत्राणां सपत्नीकानां मातामह-प्रमातामहवृद्धप्रमातामहानां नान्दीमुखानां शास्त्रीयविधि-पालनो-द्देश्येन सम्प्राप्तनान्दीश्राद्धस्य स्वर्णदाननिष्क्रयभूतद्रव्यं ....गोत्राय ....ब्राह्मणाय दातुमुत्सृज्ये—कहकर संकल्पजल छोड़ दे तथा स्वर्णादि यथाकाल ब्राह्मणको दे दे।

जानकारीके लिये विस्तृत शास्त्रोक्त विधि नीचे दी जा रही है—

पुत्र-जन्मका समाचार प्राप्तकर पिताको पुत्रके मुखका दर्शन करनेके अनन्तर किसी नदी आदिके जलमें सचैल (वस्त्रोंसहित) स्नान करना चाहिये। स्नानके अनन्तर नवीन धुले* श्वेत वस्त्रों (धोती आदि)-को पहनकर तथा उत्तरीय (चादर, गमछा) धारणकर पवित्र आसनपर पूर्वाभिमुख बैठकर दीप प्रज्वलित करे। तिलक लगाकर, आचमन, प्राणायाम आदि करके सभी पूजन-सामग्रियोंको यथास्थान रखकर जातकर्म-संस्कारके निमित्त निम्न संकल्प करे—

प्रतिज्ञा-संकल्प—

हाथमें जल, अक्षत, फल, द्रव्य एवं कुशा लेकर निम्नलिखित संकल्पवाक्य बोले—

ॐ विष्णुर्विष्णुर्विष्णुः श्रीमद्भगवतो महापुरुषस्य विष्णो-राज्ञया प्रवर्तमानस्य ब्रह्मणो द्वितीयपरार्धे श्रीश्वेतवाराहकल्पे वैवस्वतमन्वन्तरे अष्टाविंशतितमे कलियुगे कलिप्रथमचरणे जम्बूद्वीपे भारतवर्षे आर्यावर्तैकदेशे (यदि काशी हो तो **अविमुक्तवाराणसीक्षेत्रे आनन्दवने गौरीमुखे त्रिकण्टकविराजिते भगवत्या उत्तरवाहिन्या भागीरथ्या वामभागे) ....नगरे/ग्रामे/क्षेत्रे षष्टिसंवत्सराणां मध्ये ....संवत्सरे ....अयने ....ऋतौ ....मासे ....पक्षे ....तिथौ ....नक्षत्रे**

* ईषद्धौतं नवं श्वेतं सदशं यन्न धारितम्। अहतं तद्विजानीयात्सर्वकर्मसु पावनम्॥
(स्मृतिरत्नावली तथा रेणुकारिकामें महर्षि कात्यायनका वचन)

....योगे ....करणे ....वासरे ....राशिस्थिते सूर्ये ....राशिस्थिते चन्द्रे शेषेषु ग्रहेषु यथायथाराशिस्थानस्थितेषु सत्सु एवं ग्रहगुणगणविशिष्टे शुभमुहूर्ते ....गोत्रः सपत्नीकः ....शर्मा/वर्मा/गुप्तोऽहं ममोपात्त-दुरितक्षयद्वारा श्रीपरमेश्वरप्रीत्यर्थं मम जातस्य पुत्रस्य जरायुजटितविविधोच्चावचमातृचर्वितान्नविषमार्त्तिकगर्भाम्बु-पानजनितसकलदोषनिबर्हणपूर्वकं श्रीपरमेश्वरप्रीतिद्वारा आयु-र्मेधाभिवृद्धिबीजगर्भसमुद्भवैनोनिबर्हणार्थं जातकर्माख्यसंस्कारं करिष्ये। तत्पूर्वाङ्गतया स्वस्तिपुण्याहवाचनं मातृका-पूजनं वसोर्धारापूजनं आयुष्यमन्त्रजपं सांकल्पिकेन विधिना नान्दीश्राद्धं च करिष्ये। कहकर संकल्पजल छोड़ दे।

[गणपत्यादि पूजन परिशिष्ट पृ०सं० ४१५ के अनुसार सम्पन्न करे]

जातकर्मसंस्कारके कई अंगभूत कर्म हैं, उनमेंसे सर्वप्रथम मेधाजननकर्म किया जाता है। यहाँ उसकी विधि दी जा रही है—

(१) मेधाजननकर्म—(मधुघृतप्राशनविधि)—

पिता नवजात शिशुको सुवर्णकी सलाईसे अथवा सुवर्णकी अँगूठीयुक्त अनामिका अंगुलिद्वारा शहद और घृतको किसी सुवर्ण आदि पात्रमें असमानमात्रामें मिलाकर अथवा मात्र घृतको निम्नलिखित मन्त्र पढ़ता हुआ एक बार शिशुको चटाये—

ॐ भूस्त्वयि दधामि। ॐ भुवस्त्वयि दधामि। ॐ स्वस्त्वयि दधामि। ॐ भूर्भुवः स्वः सर्वं त्वयि दधामि।

(२) आयुष्यकरणकर्म—

इसके बाद पिता या आचार्य नवजात शिशुके दाहिने कान अथवा उसकी नाभिके समीप अपना मुख लगाकर आगे लिखे हुए आठ मन्त्रोंको एक बार अथवा तीन बार जपे—

(१) ॐ अग्निरायुष्मान् स वनस्पतिभिरायुष्माँस्तेन त्वाऽऽयुषा-ऽऽयुष्मन्तं करोमि॥

(२) ॐ सोम आयुष्मान् स ओषधीभिरायुष्माँस्तेन त्वाऽऽयुषा-ऽऽयुष्मन्तं करोमि॥

(३) ॐ ब्रह्मायुष्मत्तद् ब्राह्मणैरायुष्मत्तेन त्वाऽऽयुषाऽऽयुष्मन्तं करोमि॥

(४) ॐ देवा आयुष्मन्तस्तेऽमृतेनायुष्मन्तस्तेन त्वाऽऽयुषा-ऽऽयुष्मन्तं करोमि॥

(५) ॐ ऋषय आयुष्मन्तस्ते व्रतैरायुष्मन्तस्तेन त्वाऽऽयुषा-ऽऽयुष्मन्तं करोमि॥

(६) ॐ पितर आयुष्मन्तस्ते स्वधाभिरायुष्मन्तस्तेन त्वाऽऽयुषा-ऽऽयुष्मन्तं करोमि॥

(७) ॐ यज्ञ आयुष्मान् स दक्षिणाभिरायुष्माँस्तेन त्वाऽऽयुषा-ऽऽयुष्मन्तं करोमि॥

(८) ॐ समुद्र आयुष्मान् स स्रवन्तीभिरायुष्माँस्तेन त्वाऽऽयुषा-ऽऽयुष्मन्तं करोमि॥

पुनः पिता निम्नलिखित मन्त्रका एक बार अथवा तीन बार पाठ करे—

ॐ त्र्यायुषं जमदग्नेः कश्यपस्य त्र्यायुषम्। यद्देवेषु त्र्यायुषं तन्नो अस्तु त्र्यायुषम्॥

(३) आयुष्यमन्त्रोंद्वारा बालकका अभिमर्षण—

तत्पश्चात् पिता या आचार्य सद्योजात शिशुकी दीर्घायुकी कामनासे उसके शरीरका अपने हाथसे स्पर्श करता हुआ निम्नलिखित ग्यारह मन्त्रोंका पाठ करे—

(१) ॐ दिवस्परि प्रथमं जज्ञे अग्निरस्मद् द्वितीयं परि। जातवेदाः। तृतीयमप्सु नृमणा अजस्रमिन्धान एनं जरते स्वाधीः॥

(२) ॐ विद्मा ते अग्ने त्रेधा त्रयाणि विद्मा ते धाम विभृता पुरुत्रा।

विद्मा ते नाम परमं गुहा यद्विद्मा तमुत्सं यत आजगन्थ॥

(३) ॐ समुद्रे त्वा नृमणा अप्स्वन्तर्नृचक्षा ईधे दिवो अग्न ऊधन्। तृतीये त्वा रजसि तस्थिवाꣳसमपामुपस्थे महिषा अवर्धन्॥

(४) ॐ अक्रन्ददग्नि स्तनयन्निव द्यौः क्षामा रेरिहद्वीरुधः समञ्जन्। सद्यो जज्ञानो वि हीमिद्धो अख्यदा रोदसी भानुना भात्यन्तः॥

(५) ॐ श्रीणामुदारो धरुणो रयीणां मनीषाणां प्रार्पणः सोमगोपाः। वसुः सूनुः सहसो अप्सु राजा वि भात्यग्र उषसामिधानः॥

(६) ॐ विश्वस्य केतुर्भुवनस्य गर्भ आ रोदसी अपृणा-ज्जायमानः। वीडुं चिदद्रिमभिनत् परायञ्जना यदग्निमयजन्त पञ्च॥

(७) ॐ उशिक् पावको अरतिः सुमेधा मर्तेष्वग्निरमृतो नि धायि। इयर्त्ति धूममरुषं भरिभ्रदुच्छुक्रेण शोचिषा द्यामिनक्षन्॥

(८) ॐ दृशानो रुक्म उर्व्या व्यद्यौद्दुर्मर्षमायुः श्रिये रुचानः। अग्निरमृतो अभवद्वयोभिर्यदेनं द्यौरजनयत्सुरेताः॥

(९) ॐ यस्ते अद्य कृणवद्भद्रशोचेऽपूपं देव घृतवन्तमग्ने। प्र तं नय प्रतरं वस्यो अच्छाभि सुम्नं देवभक्तं यविष्ठ॥

(१०) ॐ आ तं भज सौश्रवसेष्वग्न उक्थ उक्थ आ भज शस्यमाने। प्रियः सूर्ये प्रियो अग्ना भवात्युज्जातेन भिनददुज्जनित्वैः॥

(११) ॐ त्वामग्ने यजमाना अनु द्यून् विश्वा वसु दधिरे वार्याणि। त्वया सह द्रविणमिच्छमाना व्रजं गोमन्तमुशिजो वि वव्रुः॥

(शु०यजु० १२। १८—२८)

(४) अनुप्राणन-विधि—

तदनन्तर नवजात शिशुके पूर्व, पश्चिम, उत्तर तथा दक्षिण—चारों दिशाओंमें एक-एक ब्राह्मणको बैठा दे। पुनः उनके बीचमें अथवा नैर्ऋत्यकोणमें एक पाँचवें ब्राह्मणको ऊर्ध्वदृष्टि करके बैठा ले। अर्थात् वह ब्राह्मण ऊपरकी ओर देखता रहे। यदि उस समय पाँच ब्राह्मण

नहीं मिल सकें तो पिता ही उन पूर्वादि चारों दिशाओंमें स्वयं जाकर निम्न रीतिसे निम्न मन्त्रोंका उच्चारण करे।

पिता पूर्वकी तरफके ब्राह्मणकी ओर देखकर कहे—

ॐ इममनुप्राणित।

पूर्वकी ओर बैठा हुआ ब्राह्मण कहे—**प्राणेति।**

पिताके द्वारा पुनः '**ॐ इममनुप्राणित**' कहे जानेपर दक्षिण दिशामें बैठा हुआ ब्राह्मण कहे—**व्यानेति।**

पिताके द्वारा पुनः '**ॐ इममनुप्राणित**' कहे जानेपर पश्चिम दिशामें बैठा हुआ ब्राह्मण कहे—**अपानेति।**

पिताके द्वारा पुनः पूर्ववाक्य '**ॐ इममनुप्राणित**' उच्चारण करनेपर उत्तर दिशामें बैठा ब्राह्मण कहे—**उदानेति।**

अन्तमें पुनः '**ॐ इममनुप्राणित**' उच्चारण करनेपर बीचमें ऊर्ध्वदृष्टि खड़ा ब्राह्मण कहे—**समानेति।**

(५) जन्मभूमि-अभिमन्त्रण विधि—

इसके बाद निम्न मन्त्रसे नवजात शिशुकी जन्मभूमिको अनामिका अँगुलीसे स्पर्श करे—

ॐ वेद ते भूमिहृदयं दिवि चन्द्रमसि श्रितम्। वेदाहं तन्मां तद्विद्यात्पश्येम शरदः शतं जीवेम शरदः शतꣳशृणुयाम शरदः शतम्॥

(६) शिशुके स्पर्शका मन्त्र—

तत्पश्चात् निम्नलिखित मन्त्रसे नवजात शिशुका स्पर्श करे—

ॐ अश्मा भव परशुर्भव हिरण्यमास्त्रुतं भव।
आत्मा वै पुत्रनामासि त्वं जीव शरदः शतम्॥

(७) शिशुकी माताका अभिमन्त्रण—

इसके बाद पिता नवजात शिशुकी माताको निम्नलिखित मन्त्रसे अभिमन्त्रित (उसकी ओर देखकर निम्न मन्त्रका पाठ) करे—

इडासि मैत्रावरुणी वीरे वीरमजीजनथाः। सा त्वं वीरवती

भव याऽस्मान् वीरवतोऽकरत्॥

(८) दक्षिणस्तन्यपान—

इसके बाद प्रसूतिकाके दाहिने स्तनको धुलवाये और निम्नलिखित मन्त्रसे बालकको दुग्ध पान कराये—

ॐ इमꣳ स्तनमूर्जस्वन्तं धयापां प्रपीनमग्ने सरिरस्य मध्ये। उत्सं जुषस्व मधुमन्तमर्वन्त्समुद्रियꣳसदनमा विशस्व।

(९) वामस्तन्यपान—

इसके बाद प्रसूतिकाके बायें स्तनको धुलवाकर निम्नलिखित दो मन्त्रोंसे बालकको वाम स्तनका पान कराये—

ॐ यस्ते स्तनः शशयो यो मयोभूर्यो रत्नधा वसुविद्यः सुदत्रः। येन विश्वा पुष्यसि वार्याणि सरस्वति तमिह धातवेऽकः॥

ॐ इमꣳस्तनमूर्जस्वन्तं धयापां प्रपीनमग्ने सरिरस्य मध्ये। उत्सं जुषस्व मधुमन्तमर्वन्त्समुद्रियꣳसदनमा विशस्व॥

(१०) विविध वस्तुओंका दान—

इस अवसरपर यथाशक्ति सुवर्ण, भूमि, गौ, वस्त्र, शयनासन, गृह, धान्य, गुड़, तिल, घृत तथा अन्य वस्तुएँ जो उपलब्ध हों, उनका दान करना चाहिये।

(११) कलशस्थापन मन्त्र—

इसके बाद रक्षाके लिये पुत्रवती स्त्रीके सिरहानेकी ओर भूमिपर निम्नलिखित मन्त्रसे जलसे भरा हुआ एक कलश स्थापित करे, जो दस दिन पर्यन्त अर्थात् जबतक सूतक निवृत्त न हो, वहीं स्थापित रहे—

ॐ आपो देवेषु जाग्रथ यथा देवेषु जाग्रथ एवमस्याꣳ सूतिकायाꣳ सपुत्रिकायां जाग्रथ।

(१२) सूतिकाग्निहोम—

इसके बाद सूतिकागृहके दरवाजेपर अग्निकी स्थापना करनी चाहिये। इस अग्निकी भी सूतकान्ततक रक्षा करनी चाहिये। सर्वप्रथम

वेदीके निम्नलिखित पाँच संस्कार करने चाहिये—

१. तीन कुशोंसे वेदीका दक्षिणसे उत्तरकी ओर परिमार्जनकर उन कुशाओंको ईशानकोणमें त्याग दे—'**दर्भैः परिसमुह्य।**'

२. गोबर और जलसे लीप दें—'**गोमयोदकेनोपलिप्य।**'

३. स्रुवा अथवा कुशमूलसे पश्चिमसे पूर्वकी ओर प्रादेशमात्र (दस अंगुल लम्बी) तीन रेखाएँ दक्षिणसे प्रारम्भ कर उत्तरकी ओर खींचे—'**वज्रेण त्रिरुल्लिख्य।**'

४. उल्लेखन क्रमसे दक्षिण अनामिका और अँगूठेसे तीनों रेखाओं परसे कुछ मिट्टी निकालकर बायें हाथमें तीन बार रखकर पुनः सब मिट्टी दाहिने हाथमें रख ले और उसे उत्तरकी ओर फेंक दे—'**अनामिकाङ्गुष्ठाभ्यां मृदमुद्धृत्य।**'

५. पुनः जलसे वेदीको सींच दे—'**उदकेनाभ्युक्ष्य।**'

अग्निस्थापन-संकल्प—

निम्न रीतिसे अग्निस्थापनका संकल्प करे—

ॐ अद्य ....गोत्रः ....शर्मा/वर्मा/गुप्तोऽहं जातकर्मानुष्ठान-सिद्धिद्वारा सूतिकागृहद्वारे प्रगल्भनामाग्निस्थापनं करिष्ये।

तदनन्तर अग्निको अपने दक्षिणकी ओर रखे और उस अग्निसे थोड़ा क्रव्याद-अंश निकालकर नैर्ऋत्यकोणमें रख दे। पुनः सामने रखी पवित्र अग्निको वेदीमें निम्नलिखित मन्त्रसे स्थापित करे—

ॐ अग्निं दूतं पुरो दधे हव्यवाहमुपब्रुवे। देवाँ२ आ सादयादिह॥

उक्त मन्त्रसे अग्नि-स्थापनके पश्चात् कुशोंसे परिस्तरण करे। वेदी या पात्रके पूर्व उत्तराग्र तीन कुश या दूर्वा रखे। दक्षिण भागमें पूर्वाग्र तीन कुश या दूर्वा रखे। पश्चिम भागमें उत्तराग्र तीन कुश या दूर्वा रखे। उत्तर भागमें पूर्वाग्र तीन कुश या दूर्वा रखे। अग्निको प्रज्वलित करे।

ॐ प्रगल्भाग्नये नमः—इस मन्त्रसे अग्निका पञ्चोपचार पूजन करे।

तदनन्तर धानोंकी पृथक् की हुई भूसी (चोकर), चावलोंकी कनी और पीली सरसों मिलाकर निम्नलिखित दो मन्त्रोंसे आहुति प्रदान करे—

ॐ शण्डामर्का उपवीरः शौण्डिकेय उलूखलः।
मलिम्लुचो द्रोणासश्च्यवनो नश्यतादितः स्वाहा॥

इदमग्नये न मम।

ॐ आलिखन्न निमिषः किं वदन्त उपश्रुतिर्हर्यक्षः कुम्भीशत्रुः पात्रपाणिर्नृमणिर्हन्त्रीमुखः सर्षपारुणश्च्यवनो नश्यतादितः स्वाहा।

इदमग्नये न मम।

उक्त दोनों मन्त्रोंसे तथा उक्त हवनीय द्रव्योंसे पिता अथवा अन्य कोई ब्राह्मण दस दिनतक सायं-प्रातः दोनों समय हाथसे आहुति दे। इस प्रकार दस दिनकी चालीस आहुतियाँ होती हैं।

दक्षिणा-संकल्प—

अद्य ''''गोत्रः ''''शर्मा/वर्मा/गुप्तोऽहं जातस्य पुत्रस्य कृतै-तज्जातकर्माख्यसंस्कारकर्मणः साङ्गतासिद्धये साद्गुण्यार्थं च इमां दक्षिणां नानानामगोत्रेभ्यो ब्राह्मणेभ्यो विभज्य दास्ये यथाशक्ति ब्राह्मणान् भोजयिष्ये।

यह संकल्पकर दक्षिणा प्रदान करे और निम्न मन्त्रसे मातृकाओंका विसर्जन करे—

यान्तु मातृगणाः सर्वे स्वशक्त्या पूजिता मया।
इष्टकामसमृद्ध्यर्थं पुनरागमनाय च॥

सूतकान्तमें ब्राह्मण-भोजन कराये।

नालच्छेदन—

तदनन्तर नाभिसे आठ अंगुल छोड़कर नाभिसे लगे नालका किसी छुरिका आदिसे छेदन करना चाहिये।

भगवत्स्मरण—

प्रमादात् कुर्वतां कर्म प्रच्यवेताध्वरेषु यत्।
स्मरणादेव तद् विष्णोः सम्पूर्णं स्यादिति श्रुतिः॥
यस्य स्मृत्या च नामोक्त्या तपोयज्ञक्रियादिषु।
न्यूनं सम्पूर्णतां याति सद्यो वन्दे तमच्युतम्॥
यत्पादपङ्कजस्मरणाद् यस्य नामजपादपि।
न्यूनं कर्म भवेत् पूर्णं तं वन्दे साम्बमीश्वरम्॥

ॐ विष्णवे नमः, ॐ विष्णवे नमः, ॐ विष्णवे नमः। ॐ साम्बसदाशिवाय नमः। ॐ साम्बसदाशिवाय नमः। ॐ साम्बसदाशिवाय नमः।

जातकर्म-संस्कारमें नैमित्तिक विधान (पूतनादि बालग्रहजनितव्याधिशमनार्थ कर्म)

यदि दस दिनके भीतर नवजात शिशुको किसी (पूतनादि) बालग्रहजनित पीड़ा (व्याधि) मालूम हो और उससे ग्रसित होनेपर बालक हाथ-पैर न हिलाये, न रोये, न हँसे और न प्रसन्न रहे तो इस प्रकारकी व्याधिके शमनार्थ उस शिशुको उसके ओढ़नेके वस्त्रसहित जाल या उत्तरीयसे ढककर पिता अपनी गोदमें रख ले और निम्न चार मन्त्रोंसे उसका अभिमर्शन करे (शरीरपर हाथ फेरे)—

(१) 'कूर्कुरः सुकूर्कुरः कूर्कुरो बालबन्धनः।'
चेच्चेच्छुनक सृज नमस्ते अस्तु सीसरो लपेतापह्वर तत्सत्यम्॥

(२) यत्ते देवा वरमददुः स त्वं कुमारमेव वा वृणीथाः। चेच्चेच्छुनक सृज नमस्ते अस्तु सीसरो लपेतापह्वर तत्सत्यम्॥

(३) यत्ते सरमा माता सीसरः पिता श्यामशबलौ भ्रातरौ चेच्चेच्छुनक सृज नमस्ते अस्तु सीसरो लपेतापह्वर॥

(४) न नामयति न रुदति न हृष्यति न ग्लायति यत्र वयं वदामो यत्र चाभिमृशामसि।

षष्ठीमहोत्सव एवं राहुवेध

षष्ठीमहोत्सव एवं राहुवेध-संस्कारका प्रयोजन—

जातकके उत्पन्न होनेके छठे दिन किया जानेवाला महोत्सव षष्ठी-संस्कार कहलाता है, इसीके साथ राहुवेधकर्म भी होता है। ये दोनों कर्म जातककी रक्षाके निमित्त किये जाते हैं। यद्यपि इस दिन सामान्यतया जननाशौच उपस्थित रहता है, किंतु गृह्यसूत्रों एवं धर्मशास्त्रोंमें बताया गया है कि प्रथम दिन, छठे दिन तथा दसवें दिन दान देने एवं लेनेमें कोई दोष नहीं होता*, किंतु भोजन करना उचित नहीं है।

षष्ठी देवीका परिचय तथा महिमा—

षष्ठी देवी कौन हैं, इनकी क्या महिमा है तथा इनकी पूजा क्यों की जाती है, इस सम्बन्धमें देवीभागवत तथा ब्रह्मवैवर्तपुराणमें बताया गया है कि देवी षष्ठी शिशुओंकी अधिष्ठात्री हैं। बालकोंको दीर्घायु बनाना, उनका भरण-पोषण करना तथा सभी प्रकारके अरिष्टोंका निवारण करना—षष्ठी देवीकी मुख्य विशेषता है। इसीलिये बालकके जन्मके छठे दिन प्रायः रात्रिमें प्रसूतिगृहमें छठी-पूजन संस्कारका विधान प्रचलित है। मूलप्रकृतिके छठे अंशसे उत्पन्न होनेके कारण इन देवीका नाम षष्ठी पड़ा है। ये ब्रह्माजीकी मानसपुत्री एवं शिव-पार्वतीके पुत्र स्कन्दकी प्राणप्रिया देवसेनाके नामसे भी विख्यात हैं। इन्हें विष्णुमाया तथा बालदा भी कहा जाता है। ये षोडश मातृकाओंमें परिगणित हैं।

---

* (क) जननाशौचमध्ये प्रथमषष्ठदशमदिनेषु दाने प्रतिग्रहे च न दोषः।
अन्नं तु निषिद्धम्। (पा०गृ०सू० पंचभाष्य १।१६)

(ख) सूतिकावासनिलया जन्मदा नाम देवताः।
तासां यागनिमित्तं तु शुद्धिर्जन्मनि कीर्तिता॥
प्रथमे दिवसे षष्ठे दशमे चैव सर्वदा। त्रिष्वेतेषु न कुर्वीत सूतकं पुत्रजन्मनि॥
(पा०गृ०सू० पंचभाष्यमें महर्षि व्यासजीका वचन)

भगवती षष्ठी देवी अपने योगके प्रभावसे शिशुओंके पास सदैव वृद्धा माताके रूपमें अदृश्य रूपसे विराजमान रहती हैं तथा उनकी रक्षा एवं उनका भरण-पोषण करती हैं। बालकोंको स्वप्नमें खिलाती, हँसाती, दुलारती हैं एवं उन्हें अभूतपूर्व वात्सल्य प्रदान करती हैं, इसी कारण सभी शिशु अधिकांश समय सोना पसन्द करते हैं। आँख खुलते ही बालककी दृष्टिसे भगवती ओझल हो जाती हैं, अतः शिशु रुदन करने लगता है।

इन्हीं षष्ठी देवीका प्रधान पूजन षष्ठीमहोत्सवके दिन रात्रिमें किया जाता है। षष्ठीदेवीके पूजनके अनन्तर उनकी प्रार्थना करनी चाहिये। एक प्रार्थना इस प्रकार है—

षष्ठिदेवि नमस्तुभ्यं सूतिकागृहशालिनि।
पूजिता परमा भक्त्या दीर्घमायुः प्रयच्छ मे॥
जननी सर्वसौख्यानां वर्धिनीधनसम्पदाम्।
साधनी सर्वभूतानां जन्मदे त्वां नता वयम्॥
गौरीपुत्रो यथा स्कन्दः शिशुत्वे रक्षितः पुरा।
तथा ममाप्यमुं बालं षष्ठिके रक्ष ते नमः॥
रक्षितौ पूतनादिभ्यो नन्दगोपसुतौ यथा।
तथा मे बालकं पाहि दुर्गे देवि नमोऽस्तु ते॥
सर्वविघ्नानपाकृत्य सर्वसौख्यप्रदायिनि।
जीवन्तिके जगन्मातः पाहि नः परमेश्वरि॥

प्रार्थनाका भाव इस प्रकार है—हे षष्ठिदेवि! आप सूतिकागृहमें निवास करनेवाली हैं, आपको नमस्कार है, मैंने उत्तम भक्तिसे आपका पूजन किया है, आप दीर्घ आयु प्रदान करें। हे जन्मदे देवि! आप सभी सुखोंको उत्पन्न करनेवाली हैं, सभी धन-सम्पदाओंकी वृद्धि करनेवाली है और सभी प्राणियोंका हितसाधन करनेवाली हैं, आपको विनयपूर्वक हम नमस्कार करते हैं। प्राचीनकालमें आपने जिस प्रकार गौरीके पुत्र

शिशु स्कन्दकी रक्षा की थी, वैसे ही मेरे इस बालककी भी रक्षा करें। हे षष्ठिके! आपको नमस्कार है। जिस प्रकार आपने नन्दगोपके पुत्रों—श्रीकृष्ण एवं बलरामकी पूतना आदि राक्षसियोंसे रक्षा की थी, वैसे ही मेरे इस बालककी रक्षा करें। हे दुर्गे देवि! आपको नमस्कार है। सभी प्रकारका सौख्य प्रदान करनेवाली हे जीवन्तिके! हे जगन्माता! हे परमेश्वरि! सभी विघ्नोंको दूर करके आप हमारी रक्षा करें।

इस प्रकार षष्ठी देवीका पूजनकर अर्धरात्रिके समय राहुवेधन कर्म करना चाहिये। यह कर्म कुलाचारके अनुसार कहीं होता है, कहीं नहीं।

विशेष बात

जन्मदिनकी रात्रि तथा छठे दिनकी रात्रि बालकके लिये विशेष अरिष्टकारिणी होती है। अतः भूतादि ग्रहोंसे विशेष रूपसे रक्षा करनेयोग्य होती है। इसीलिये प्रथम दिन जातकर्म तथा छठे दिन षष्ठीमहोत्सव संस्कार किया जाता है। षष्ठीमहोत्सवके सम्बन्धमें बताया गया है कि इस दिन रात्रिमें पुरुषलोग हाथमें शस्त्र धारणकर तथा स्त्रियाँ गीत-नृत्य आदिके द्वारा रात्रिमें जागरण करें। सूतिकागृहको अग्नि, दीपक, धूप तथा शस्त्र आदिसे सज्जित रखें। चारों ओर सरसों बिखेर दें। इस सम्बन्धमें याज्ञवल्क्यस्मृतिकी आचार्य विज्ञानेश्वरप्रणीत मिताक्षरा टीका (प्रायश्चित्ताध्याय १९)-में महर्षि मार्कण्डेयजीका वचन इस प्रकार दिया गया है—

रक्षणीया तथा षष्ठी निशा तत्र विशेषतः।
रात्रौ जागरणं कार्यं जन्मदानां तथा बलिः॥
पुरुषाः शस्त्रहस्ताश्च नृत्यगीतैश्च योषितः।
रात्रौ जागरणं कुर्युः दशम्यां चैव सूतके॥

(पारस्करगृह्यसूत्र प्रथमकाण्ड, कण्डिका १६)

[४] (ख) षष्ठीमहोत्सव*-प्रयोग

जातकके उत्पन्न होनेके बाद छठे दिन किया जानेवाला संस्कार षष्ठीमहोत्सव कहलाता है, इसमें बालक तथा सूतिकाकी रक्षाके निमित्त मुख्यरूपसे षष्ठीदेवी, स्कन्द तथा प्रद्युम्नकी प्रतिमा बनाकर उनका पूजन किया जाता है। यह पूजनकार्य प्रायः सायंकालको होता है।

अपराह्णकालमें ब्राह्मणद्वारा किसी काष्ठपीठ (चौकी)-पर गोमयके द्वारा शक्तिसहित स्कन्द (कार्तिकेय), सशक्तिक प्रद्युम्न तथा बीचमें षष्ठीदेवीकी प्रतिमा बनवाये। सफेद चावल या जौसे खाली स्थानको भर दे। षष्ठीदेवीके कानोंमें दूर्वापल्लवोंसे कुण्डल बनाये तथा शरीरमें यथास्थान एक-एक कपर्दिका (सीपी या कौड़ी)—इस प्रकार सोलह कपर्दिका लगाये। प्रतिमाके समक्ष आठ दीपक जलाकर रख दे तथा तीनों प्रतिमाओंको सब प्रकारसे अलंकृतकर यथास्थान रख ले।

प्रदोषकाल उपस्थित होनेपर बालकका पिता स्नान, सन्ध्या आदि कार्योंसे निवृत्त होकर पूजाकी सामग्री लेकर घरके प्रवेशद्वारपर आ जाय और पवित्र आसनपर बैठकर आचमन, प्राणायामादि कर ले तथा गणेशादि देवोंका स्मरणकर षष्ठीमहोत्सवके पूर्वांगके रूपमें सर्वप्रथम द्वारमातृकाओंका पूजन करे।

द्वारमातृकापूजन—

किसी पट्टिकापर अथवा अक्षत-पुंजोंपर सात द्वारमातृकाओंकी स्थापनाकर निम्न मन्त्रद्वारा अक्षत छिड़कते हुए उनकी प्रतिष्ठा करे—

एतं ते देव सवितर्यज्ञं प्राहुर्बृहस्पतये ब्रह्मणे। तेन यज्ञमव तेन यज्ञपतिं तेन मामव॥

---

* जननाशौच होनेपर भी विधिप्रयुक्त होनेके कारण प्रथम दिन जातकर्मसंस्कार, छठे दिन षष्ठीमहोत्सव एवं राहुवेधकर्म तथा दसवें दिन नामकरणसंस्कार-कर्म करनेमें अशौचका कोई दोष नहीं होता। इन कार्योंमें अन्न-दानका निषेध है। सुवर्ण आदि द्रव्यके द्वारा नान्दीमुखश्राद्धादि कर्म करना चाहिये।

ॐ भूर्भुवः स्वः द्वारमातरः इहागच्छन्तु इह तिष्ठन्तु सुप्रतिष्ठिता वरदा भवन्तु।

इस प्रकार प्रतिष्ठाकर निम्न मन्त्रसे मातृकाओंका ध्यान करे—

कुमारी धनदा नन्दा विपुला मङ्गलाचला।
पद्मा चैव तु नाम्नोक्ताः सप्तैता द्वारमातरः॥

तदनन्तर **ॐ कुमार्यै नमः, ॐ धनदायै नमः, ॐ नन्दायै नमः, ॐ विपुलायै नमः, ॐ मङ्गलायै नमः, ॐ अचलायै नमः, ॐ पद्मायै नमः**—इन नाममन्त्रोंसे गन्ध-पुष्पादि उपचारोंके द्वारा मातृकाओंका पूजन तथा अन्तमें नीराजन करे।

तदनन्तर स्वस्तिवाचन-पाठके साथ घरमें प्रवेश करे और सर्वप्रथम सूतिकाकक्षके समीप गोघृत, पीली सरसों, सेंधा नमक, निम्बपत्र तथा साँपकी केंचुल—आदि द्रव्योंका धूप जलाये,* ये सभी कृमिनाशक तथा भूत-प्रेतादिके अपवारक तथा पवित्र करनेवाले द्रव्य हैं।

तदनन्तर पूजन-स्थलके समीप आकर सभी पूजन-सामग्रियों तथा काष्ठपीठपर बनायी गयी षष्ठीदेवी, स्कन्द और प्रद्युम्नकी प्रतिमाओंवाली चौकीको यथास्थान रख ले। अपने आसनपर पूर्वाभिमुख बैठ जाय। दीपक प्रज्वलित कर ले। आचमन, प्राणायामादि करके पूजनका प्रधान संकल्प करे—

प्रतिज्ञा-संकल्प—

दाहिने हाथमें अक्षत, पुष्प तथा कुश लेकर निम्न संकल्प बोले—

ॐ विष्णुर्विष्णुर्विष्णुः श्रीमद्भगवतो महापुरुषस्य विष्णो-राज्ञया प्रवर्तमानस्य ब्रह्मणो द्वितीयपरार्धे श्रीश्वेतवाराहकल्पे

---

* मुराऽहिकृतिनिर्गुण्डीवचाः कुष्ठं च सर्षपाः। बिल्वपत्रमयो धूपः कुमारायुः प्रपोषकृत्॥ मुरा, साँपकी केंचुल, निर्गुण्डी, वचा, कुष्ठ, सरसों तथा बिल्व—इनका धूप बालककी आयुको पुष्ट करनेवाला होता है।

वैवस्वतमन्वन्तरे अष्टाविंशतितमे कलियुगे कलिप्रथमचरणे जम्बूद्वीपे भारतवर्षे आर्यावर्तैकदेशे (यदि काशी हो तो **अविमुक्तवाराणसीक्षेत्रे आनन्दवने गौरीमुखे त्रिकण्टकविराजिते महाश्मशाने भगवत्या उत्तरवाहिन्या भागीरथ्या वामभागे**) **.....नगरे/ग्रामे/क्षेत्रे षष्टिसंवत्सराणां मध्ये .....संवत्सरे .....अयने .....ऋतौ .....मासे .....पक्षे .....तिथौ .....नक्षत्रे .....योगे .....करणे .....वासरे .....राशिस्थिते सूर्ये .....राशिस्थिते चन्द्रे शेषेषु ग्रहेषु यथायथाराशिस्थानस्थितेषु सत्सु एवं ग्रहगुणगणविशिष्टे शुभमुहूर्ते .....गोत्रः सपत्नीकः .....शर्मा/ वर्मा/गुप्तोऽहं .....राशेः मम बालकस्य सर्वोपद्रवशान्तिपूर्वक-दीर्घायुरारोग्यावाप्तिद्वारा श्रीपरमेश्वरप्रीत्यर्थं षष्ठी-महोत्सवं करिष्ये। तत्पूर्वाङ्गत्वेन सर्वाभ्युदयप्राप्तये गणपतिसहित-गौर्यादिषोडशमातॄणां पूजनं, स्वस्तिपुण्याहवाचनं, वसोर्धारापूजनं, साङ्कल्पिकेन विधिना नान्दीश्राद्धं च करिष्ये।** इस प्रकार प्रधान संकल्पकर हाथका जलादि छोड़ दें।

[गणपत्यादि पूजन परिशिष्ट पृ०सं० ४१५ से सम्पन्न कर लें।]

इस प्रकार गणपति आदि पूजन सम्पन्नकर प्रारम्भमें काष्ठपीठपर बनायी गयी प्रतिमाओंमेंसे पहले स्कन्द तथा प्रद्युम्नका पूजन करे।

स्कन्द (कार्तिकेय) तथा प्रद्युम्नका एकतन्त्रसे पूजन

प्रतिष्ठा—

सर्वप्रथम काष्ठपीठपर गोमयनिर्मित स्कन्द (कार्तिकेय) तथा प्रद्युम्नकी प्रतिमाओंपर निम्न मन्त्रसे अक्षत छिड़कते हुए उनकी प्रतिष्ठा करे—

एतं ते देव सवितर्यज्ञं प्राहुर्बृहस्पतये ब्रह्मणे।
तेन यज्ञमव तेन यज्ञपतिं तेन मामव॥

ॐ भूर्भुवः स्वः गोमयप्रतिमयोः स्कन्ददेव तथा प्रद्युम्नदेव इहागच्छतम् इह तिष्ठतं सुप्रतिष्ठितौ वरदौ भवेतम्।

स्कन्दका ध्यान—

इस प्रकार प्रतिष्ठा करके हाथमें पुष्प लेकर पहले निम्न मन्त्रसे सशक्तिक स्कन्द (कार्तिकेय)-का ध्यान करे—

वराभयकरः साक्षाद् द्विभुजः शिखिवाहनः।
किरीटी कुण्डली देवो दिव्याभरणभूषितः॥[1]

प्रद्युम्नका ध्यान—

तदनन्तर सशक्तिक प्रद्युम्नका ध्यान करे और पुष्प चढ़ाये—

प्रद्युम्नस्तु चतुर्बाहुः शङ्खचक्रगदाधरः।
चक्रं दक्षिणहस्तेऽस्य वामहस्ते धनुस्तथा॥
शङ्खं च दक्षिणे दद्याद् गदां वामे प्रदापयेत्।
प्रद्युम्नं कारयेद्देवं सर्वलक्षणसंयुतम्॥[2]

'**ॐ सशक्तिकाभ्यां स्कन्दप्रद्युम्नाभ्यां नमः**' इस नाममन्त्रके द्वारा स्कन्द तथा प्रद्युम्नकी गन्धादि उपचारोंसे एकतन्त्रसे यथाविधि पूजा करे और हाथमें पुष्प लेकर निम्न प्रार्थना करे।

स्कन्दप्रार्थना—

पहले स्कन्दकी प्रार्थना करे—

ॐ नमः कुमाराय महाप्रभाय स्कन्दाय ते स्कन्दितदानवाय।
नवार्कबिम्बद्युतये नमोऽस्तु नमोऽस्त्वमोघोद्यतशक्तिपाणये॥

---

१. श्रीस्कन्ददेवके ध्यानमें बताया गया है कि वे श्रेष्ठ मयूरके ऊपर आसीन हैं, उनकी दो भुजाएँ हैं, वे वरद तथा अभयमुद्रा धारण किये हैं। उनके सिरपर मुकुट तथा कानोंमें कुण्डल हैं तथा वे दिव्य अलंकारोंसे विभूषित हैं।

२. श्रीप्रद्युम्न चार भुजाओंवाले हैं। शंख-चक्र, गदाको धारण किये हुए हैं। उनके दाहिने हाथमें चक्र तथा बायें हाथमें धनुष है। दूसरे दाहिने हाथमें शंख तथा बायें हाथमें गदा लिये हुए हैं। वे सभी प्रकारके शुभ लक्षणोंसे सम्पन्न हैं।

नमो विशालाय विचारिणेऽस्तु नमोऽस्तु ते षण्मुख कामरूपिणे।
गुहाय गूढाभरणाय धर्त्रे नमोऽस्तु ते दानवदारणाय॥
नमोऽस्तु तेऽर्कप्रतिमप्रभाय नमोऽस्तु गुह्याय गुहाय तुभ्यम्।
नमोऽस्तु ते लोकभयापहाय नमोऽस्तु ते बालपराक्रमाय॥
नमो विशालायतलोचनाय नमो विशालाय महाव्रताय।
नमो नमस्तेऽस्तु मनोरमाय नमो नमस्तेऽस्तु करोत्कटाय॥
नमो मयूरोज्ज्वलवाहनाय नमो धृतोदग्रपताकिनेऽस्तु।
नमोऽस्तु केयूरधराय तुभ्यं नमः प्रभावप्रणताय तुभ्यम्॥
सेनानये पावकिने नमोऽस्तु क्रियापरीतामलदिव्यमूर्तये।
कृपामयो यज्ञ इवामलस्त्वं नमोऽस्तु षष्ठीश नमो नमस्ते॥

दूर्वासमर्पण—

प्रार्थनाके अनन्तर निम्न मन्त्रसे स्कन्दप्रतिमापर दूर्वादल चढ़ाये—

ॐ काण्डात्काण्डात्प्ररोहन्ती परुषः परुषस्परि। एवा नो दूर्वे प्र तनु सहस्रेण शतेन च॥

प्रद्युम्नप्रार्थना—

हाथमें पुष्प लेकर निम्न मन्त्रसे प्रद्युम्नकी प्रार्थना करे—

भोः प्रद्युम्न महाबाहो लक्ष्मीहृदयनन्दन।
कुमारं रक्ष मे भीतेः प्रद्युम्नाय नमो नमः॥
त्रैलोक्यपूजितः श्रीमान्सदा विजयवर्धनः।
शान्तिं कुरु गदापाणे प्रद्युम्नाय नमो नमः॥

षट्कृत्तिकापूजन—

इस प्रकार स्कन्द तथा प्रद्युम्नकी पूजाकर कृत्तिकाओंका पूजन करे। कृत्तिकाएँ संख्यामें छः हैं, ये शिवपुत्र स्कन्द (कार्तिकेय)–की माताएँ हैं। षष्ठीमहोत्सवके दिन स्कन्द तथा प्रद्युम्नके अनन्तर इनकी पूजाका विधान है। किसी काष्ठपीठपर पवित्र श्वेतवस्त्र बिछाकर दही

तथा अक्षतको मिलाकर छः पुंजोंकी स्थापना करे तथा उनकी प्रतिष्ठा करके निम्न नाममन्त्रोंके द्वारा गन्धादि उपचारोंसे षट्कृत्तिकाओंका पूजन करे—

ॐ शिवायै नमः, ॐ सम्भूत्यै नमः, ॐ सन्नत्यै नमः, ॐ प्रीत्यै नमः, ॐ अनसूयायै नमः, ॐ क्षमायै नमः।

कृत्तिकाप्रार्थना—

हाथमें पुष्प लेकर देवी कृत्तिकाकी प्रार्थना करे—

जगन्मातर्जगद्धात्रि जगदानन्दकारिणि।
नमस्ते देवि कल्याणि प्रसीद मम कृत्तिके॥

कार्तिकेयप्रार्थना—

निम्न मन्त्रसे कार्तिकेयकी प्रार्थना करे—

कार्तिकेय महाबाहो गौरीहृदयनन्दन।
कुमारं रक्ष मे भीतेः कार्तिकेय नमोऽस्तु ते॥

प्रद्युम्नप्रार्थना—

निम्न मन्त्रसे प्रद्युम्नकी प्रार्थना करे—

त्रैलोक्यपूजितः श्रीमान् सदा विजयवर्धनः।
शान्तिं कुरु गदापाणे नारायण नमोऽस्तु ते॥

षष्ठीदेवीपूजन

काष्ठपीठपर निर्मित तथा मध्यमें स्थापित षष्ठीदेवीकी गोमय-प्रतिमाकी निम्न मन्त्रसे प्रतिष्ठा करे—

प्राणप्रतिष्ठा—

हाथमें अक्षत लेकर निम्न मन्त्र बोलते हुए प्रतिमापर छोड़े—

ॐ एतं ते देव सवितर्यज्ञं प्राहुर्बृहस्पतये ब्रह्मणे। तेन यज्ञमव

तेन यज्ञपतिं तेन मामव॥

ॐ भूर्भुवः स्वः गोमयप्रतिमायां षष्ठीदेवि इहागच्छ इह तिष्ठ सुप्रतिष्ठिता वरदा भव।

ॐ आँ ह्रीं क्रौं यँ रँ लँ वँ शँ षँ सँ हँ क्षँ हंसः सोऽहं षष्ठीदेव्याः प्राणा इहागत्य सुखं चिरं तिष्ठन्तु, जीव इह तिष्ठतु, सर्वेन्द्रियाणीह तिष्ठन्तु।

षडंगन्यास—

इस प्रकार प्रतिमाकी प्राणप्रतिष्ठा करनेके अनन्तर निम्न मन्त्रोंसे अपने अंगोंमें न्यास करके देवीके उन-उन अंगोंमें अक्षतद्वारा न्यास करे—

ॐ षाँ हृदयाय नमः, ॐ षीँ शिरसे स्वाहा, ॐ षूँ शिखायै वषट्, ॐ षैँ कवचाय हुम्, ॐ षौं नेत्रत्रयाय वौषट् ॐ षः अस्त्राय फट्।

ध्यान—

तदनन्तर निम्न मन्त्रोंसे हाथमें पुष्प लेकर देवी महाषष्ठीका ध्यान करे। यहाँ देवी षष्ठीके दो ध्यान-स्वरूप दिये जा रहे हैं—

(१) चतुर्भुजां महादेवीं तुङ्गपीनस्तनीं शिवाम्।
मयूरवरमारूढां रक्तवस्त्रधरां शुभाम्॥
शूलशक्तिवराभीतिहस्तां ध्यायेन्महेश्वरीम्।
प्रफुल्लपद्मवदनामर्धपद्मासनस्थिताम्॥*

(२) सर्वाङ्गभूषितां देवीं पीनोन्नतपयोधराम्।
स्त्रवत्पीयूषवदनां पीतकौशेयवाससाम्॥

---

* महादेवी षष्ठी चार भुजाओंवाली हैं, उनका वक्षःस्थल अत्यन्त उन्नत है, वे भगवान् शिवकी शक्तिस्वरूपा हैं, मयूरपर आरूढ़ हैं, लालवस्त्रोंको धारण किये हैं, कल्याणकारिणी हैं, अपने हाथोंमें शूल, शक्ति, वर तथा अभयमुद्रा धारण किये हुई हैं, महान् ऐश्वर्यसे सम्पन्न हैं, उनका मुखमण्डल प्रफुल्लित कमलके समान है और वे अर्धपद्मासनमें बैठी हुई हैं।

चतुर्भुजां दक्षिणेन धृतमन्थानवंशकाम्।
नीलोत्पलं तु वामेन स्कन्दं तु दधतीं तथा॥
अधःस्थितकराभ्यां तु महाषष्ठीं विचिन्तयेत्।*

ॐ षष्ठीदेव्यै नमः ध्यानार्थे पुष्पाणि समर्पयामि। कहकर पुष्प चढ़ाये।

आवाहन—

निम्न मन्त्रोंसे पुष्पद्वारा आवाहन करे—

आयाहि पूज्यसे देवि महाषष्ठीति विश्रुते।
शक्तिरूपेण मे बालं रक्ष जागरवासरे॥

ॐ अम्बेऽअम्बिके ऽअम्बालिके न मा नयति कश्चन। ससस्त्यश्वकः सुभद्रिकां काम्पीलवासिनीम्॥

ॐ षष्ठीदेव्यै नमः आवाहनार्थे पुष्पाणि समर्पयामि। कहकर पुष्प चढ़ाये।

आसन—

ॐ षष्ठीदेव्यै नमः आसनार्थे पुष्पाणि समर्पयामि। पुष्प चढ़ाये।

पाद्य—

ॐ षष्ठीदेव्यै नमः पाद्यं समर्पयामि। पाद्यजल चढ़ाये।

अर्घ्य—

पत्रपुष्पफलाम्भोभी रत्नैश्च बहुभिर्युतम्।
षष्ठि देवि मया दत्तमर्घ्यं गृह्ण नमोऽस्तु ते॥

ॐ षष्ठीदेव्यै नमः अर्घ्यं समर्पयामि। अर्घके लिये जल चढ़ाये।

---

* देवी महाषष्ठीके सभी अंगोंमें सुन्दर आभूषण हैं, उनका वक्षःस्थल अत्यन्त उन्नत है, उनके मुखमण्डलसे अमृतकी धारा प्रवहमान है, वे पीले रेशमी वस्त्रोंको धारण किये हैं, उनकी चार भुजाएँ हैं, वे अपने दाहिने हाथमें बाँसकी बनी मथानी तथा बायें हाथमें नीले कमलको लिये हुई हैं। नीचेके दोनों हाथोंसे बालक स्कन्दको गोदमें लिये हैं।

आचमन—

ॐ षष्ठीदेव्यै नमः आचमनीयं जलं समर्पयामि। आचमनके लिये जल चढ़ाये।

स्नान—

ॐ षष्ठीदेव्यै नमः स्नानीयं जलं समर्पयामि। स्नानके लिये जल चढ़ाये।

आचमन—

ॐ षष्ठीदेव्यै नमः आचमनीयं जलं समर्पयामि। आचमनके लिये जल चढ़ाये।

वस्त्र—

तन्तुसन्तानसंयुक्तं कलाकौशेयकल्पितम्।
सर्वाङ्गावरणं श्रेष्ठं वसनं परिधीयताम्॥

ॐ षष्ठीदेव्यै नमः वस्त्रोपवस्त्रं समर्पयामि। वस्त्रोपवस्त्र* चढ़ाये। आचमनके लिये जल दे।

गन्ध—

कुङ्कुमं चन्दनं चैव सुगन्धं सुमनोहरम्।
षष्ठि देवि मया दत्तं गन्धं गृह्ण नमोऽस्तु ते॥

ॐ षष्ठीदेव्यै नमः गन्धं समर्पयामि। सुगन्धित गन्ध चढ़ाये।

अक्षत—

सुगन्धा अतिशुभ्राश्च तण्डुलाः सुमनोहराः।
अक्षतार्थं मया दत्ताः षष्ठि देवि नमोऽस्तु ते॥

ॐ षष्ठीदेव्यै नमः अक्षतान् समर्पयामि। अक्षत चढ़ाये।

पुष्प—

चतुर्वर्णानि पुष्पाणि सुगन्धीनि विशेषतः।
मयाऽऽनीतानि पूजार्थं गृहाण परमेश्वरि॥

* यदि वस्त्रके स्थानपर रक्षासूत्र चढ़ाये तो 'वस्त्रार्थे माङ्गलिकसूत्रं समर्पयामि' कहना चाहिये ।

ॐ षष्ठीदेव्यै नमः पुष्पाणि समर्पयामि। पुष्प एवं पुष्पमाला चढ़ाये।

दूर्वा—

ॐ समख्ये देव्या धिया सन्दक्षिणयोरुचक्षसा। मा मऽआयुः प्रमोषीर्मोऽअहं तव वीरं विदेय तव देवि संदृशि॥

ॐ श्रीश्च ते लक्ष्मीश्च पत्न्यावहोरात्रे पार्श्वे नक्षत्राणि रूपमश्विनौ व्यात्तम्। इष्णन्निषाणामुं म इषाण सर्वलोकं म इषाण।

ॐ काण्डात्काण्डात्प्ररोहन्ती परुषः परुषस्परि। एवा नो दूर्वे प्र तनु सहस्रेण शतेन च॥

ॐ षष्ठीदेव्यै नमः दूर्वादलं समर्पयामि। दूर्वादल चढ़ाये।

धूप—

गुग्गुलुं घृतसंयुक्तं दशाङ्गेन समन्वितम्।
षष्ठि देवि नमस्तुभ्यं धूपोऽयं प्रतिगृह्यताम्॥

ॐ षष्ठीदेव्यै नमः धूपमाघ्रापयामि। धूप दिखाये।

दीप—

षष्ठीदेवीके सम्मुख रखे गये आठों दीपोंको प्रज्वलित करे और निम्न मन्त्र पढ़े—

गव्येनाज्येन संयुक्तान् वर्त्त्या कर्पूरगर्भया।
दीपान्देवि मया दत्तानिमान् गृह्ण नमोऽस्तु ते॥

ॐ षष्ठीदेव्यै नमः दीपान् दर्शयामि। दीपक निवेदित करे।

बकरीकी ध्वनि—

तदनन्तर द्वारदेशमें स्थित बकरीके बच्चेके गले में आठ वटकों (बड़ों)-की माला बनाकर पहनाये तथा उसके कानको पकड़ते हुए इधर-उधर खींचे, ताकि वह मुँहसे शब्द करे। यह क्रिया तीन-चार बार करे। यह शास्त्रीय मान्यता है कि बकरीके बच्चेकी ध्वनिसे भूतादि प्रेतगणोंका वहाँसे निवारण हो जाता है।

नैवेद्य—

मोदकानि विचित्राणि शुक्लतण्डुलकं दधि।
विचित्रपक्वान्नयुतं तथाऽपूपसमन्वितम्॥
फेणिकाघृतपूराढ्यं नैवेद्यं प्रतिगृह्यताम्।

ॐ षष्ठीदेव्यै नमः नैवेद्यं समर्पयामि—नैवेद्य निवेदित करे।

'**ॐ षष्ठीदेव्यै नमः**' इस मन्त्रका थोड़ी देर जप करनेके अनन्तर जप निवेदित करे और आचमनीय जल समर्पित करे।

करोद्वर्तन—

'**ॐ षष्ठीदेव्यै नमः**' कहकर करोद्वर्तनके लिये गन्ध निवेदित करे।

नीराजन—

अन्तस्तेजो बहिस्तेज एकीकृत्यामितप्रभम्।
आरार्त्तिकमिदं देवि गृहाण परमेश्वरि॥

ॐ षष्ठीदेव्यै नमः नीराजनं समर्पयामि। आरती करे।

प्रार्थना—

हाथमें फूल लेकर निम्न प्रार्थना करे—

जय देवि जगन्मातर्जगदानन्दकारिणि।
प्रसीद मम कल्याणि महाषष्ठि नमोऽस्तु ते॥
देवानां च ऋषीणां च मनुष्याणां च वत्सले।
अमुं मम सुतं रक्ष षष्ठि देवि नमोऽस्तु ते॥
पुरा देवैः पूजिताऽसि ब्रह्मविष्णुशिवादिभिः।
आवाभ्यामपि देवि त्वं पूज्यसे भक्तिपूर्वकम्॥
देह्यस्य बालकस्यायुर्दीर्घं तुभ्यं नमोऽस्तु ते।
तव प्रसादात्तनयस्य वक्त्रं दृष्टं मया देवि नमोऽस्तु तुभ्यम्।
सौभाग्यमारोग्यमभीष्टसिद्धिं देहि प्रजायाश्चिरजीवितञ्च॥

गौर्य्याः पुत्रो यथा स्कन्दः शिशुः संरक्षितस्त्वया।
तथा ममाप्ययं बालो रक्ष्यतां षष्ठिके नमः॥
षष्ठि देवि नमस्तुभ्यं सूतिकागृहवासिनि।
पूजितासि मया भक्त्या सबालां रक्ष सूतिकाम्॥
जननी सर्वसौख्यानां वर्धनी कुलसम्पदाम्।
साधनी सर्वसिद्धीनां जन्मदे त्वां नता वयम्॥
त्वमेव वैष्णवी देवी ब्रह्माणी च व्यवस्थिता।
रुद्रशक्तिस्समाख्याता महाषष्ठि नमोऽस्तु ते॥
धात्री त्वं कार्तिकेयस्य स्त्रीरूपं मदनस्य च।
त्वत्प्रसादादविघ्नेन चिरं जीवतु मे सुतः॥

रक्षामन्त्रोंका पाठ—

तदनन्तर पिता भार्याकी गोदसे बालकको लेकर कुछ क्षणोंके लिये भूमिपर बैठाये और हाथसे उसका स्पर्श करते हुए निम्न रक्षामन्त्रोंका पाठ करे—

यद्बलं वासुदेवस्य विष्णोरमिततेजसः।
भीमस्य ब्रह्मणश्चैव सर्वं भवतु मे सुते॥
चन्द्रार्कयोर्दिगीशानां यमस्य वरुणस्य च।
निक्षेपार्थं मया दत्तं ते मे रक्षन्तु बालकम्॥
अप्रमत्तं प्रमत्तं वा दिवा रात्रावथापि वा।
रक्षन्तु सर्वदा सर्वे देवाः शक्रपुरोगमाः॥
रक्ष त्वं वसुधे देवि सन्ध्ये च जगतः प्रिये।
आयुष्प्रमाणं सकलं देहि देवि नमोऽस्तु ते॥
अन्तरा ह्यायुषस्तस्य ये केचित्परिपन्थिनः।
विद्यारोग्यस्य वित्तानां निर्दहस्वाचिरेण तान्॥

इस प्रकार रक्षाविधान करके बालकको गोदमें ले ले और कंकण आदि वस्त्राभूषणोंसे उसे अलंकृत करे।

सपत्नीक आचार्यका पूजन—

तदनन्तर सपत्नीक आचार्यका पूजन करे। आचार्य तथा ब्राह्मणोंको दक्षिणा प्रदानकर भूयसी दक्षिणा प्रदान करे। ब्राह्मणोंका आशीर्वाद प्राप्त करे और आवाहित देवोंका विसर्जन करे।

राहुवेधन

इस प्रकार षष्ठीदेवी का पूजन करके लोकाचारके अनुसार अर्धरात्रिके समय राहुवेधन कर्म करनेकी विधि भी है। इसके करनेसे सभी प्रकारके उपद्रवोंसे बालक एवं सूतिकाकी रक्षा तथा आयुकी वृद्धि होती है। यह कर्म कुलाचारके अनुसार कुछ लोग करते हैं, कुछ नहीं करते। यहाँ संक्षेपमें दिया जा रहा है।

सर्वप्रथम पवित्र आसनपर बैठकर आचमन, प्राणायामादि करके राहुवेधन कर्मके लिये निम्न संकल्प करे—

ॐ विष्णुर्विष्णुर्विष्णुः अद्य पूर्वोच्चारितग्रहगणगुणविशेषण-विशिष्टायां शुभपुण्यतिथौ ......गोत्रः सपत्नीकः ......शर्मा/वर्मा/गुप्तोऽहं ......राशेः मम पुत्रस्य षष्ठीमहोत्सवकर्मणः उत्तराङ्गत्वेन एतस्य बालकस्य परिरक्षार्थं आयुर्वृद्ध्ये सर्वोपद्रवशान्त्यर्थं च राहोर्वेधनं करिष्ये। तदङ्गत्वेन धनुर्बाणयोः पूजनं करिष्ये। हाथका संकल्पजल छोड़ दे।

पोटलिकारूप राहुका निर्माण—

एक वस्त्रमें हल्दी, द्रव्य, सुपारी, पीली सरसों—इन मंगल तथा रक्षणकारक वस्तुओंको रखकर उसकी पोटली बनाकर उसकी प्रतिष्ठा कर ले और उस पोटलीको घरके काष्ठकी धरनमें लोहेकी काँटीमें मजबूतीसे बाँध दे। इस पोटलिकाको राहुका स्वरूप माना जाता है। एक मजबूत धनुष तथा बाणकी भी प्रतिष्ठा कर ले। निम्न मन्त्रसे धनुषका पूजन करे।

धनुषपूजन-मन्त्र—

धृतं कृष्णेन रक्षार्थं संहारार्थं हरेण च।
त्रयीमूर्तिगतं दिव्यं धनुः शस्त्रं नमाम्यहम्॥

'**ॐ धनुषे नमः**' इस मन्त्रसे गन्धादि उपचारोंसे धनुष-पूजन करे।

बाणपूजा-मन्त्र—

कामदेवस्य ये बाणाः सफलाश्चार्जुनस्य च।
रामस्य च यथा बाणास्तथास्माकं भवन्त्विह॥

'**ॐ बाणाय नमः**' इस मन्त्रसे गन्धादि उपचारोंसे बाण-पूजन करे।

तदनन्तर पिता बालकको अपनी गोदमें ले ले और धनुष-बाण हाथमें लेकर शंख-घण्टानादकी ध्वनिके साथ उस पोटलिकापर बाणसे निशाना साधे और उस पोटलिकाका वेध करे एवं मंगलध्वनियोंका उच्चारण करे।

सूतिकागृहमें धूपदान—

इस प्रकार राहुवेधनकर्म करके सूतिकागृहके द्वारपर पीली सरसों, गोघृत, सेंधा नमक तथा नीमपत्रका धूप जलाये।

तदनन्तर सुवासिनियोंका पूजन तथा बालकका महानीराजन करके बालकको माताको सौंप देना चाहिये और सूतिकागृहके बाहर मूसल आदि आयुधों और शस्त्र आदिको रख देना चाहिये।

इस प्रकार षष्ठीमहोत्सवकर्म सम्पन्न होता है।

नामकरणसंस्कार

नामकरणसंस्कारका माहात्म्य—

यह समस्त चराचर जगत् नामरूपात्मक है। संसारमें जितने भी प्राणी तथा वस्तुएँ हैं, सबका कोई-न-कोई रूप है और कोई-न-कोई नाम है। बिना नामके वस्तुकी पहचान ही नहीं हो सकती। लोक-व्यवहारकी सिद्धि बिना नामके सम्भव भी नहीं है। कोई भी अपरिचित व्यक्ति पहले मिलता है तो सर्वप्रथम नाम पूछनेपर ही उसे जाना जा सकता है कि कौन है, पिताका नाम, निवासस्थानका नाम—इस प्रकार नामसे ही व्यक्ति या वस्तुके बारेमें ज्ञान हो पाता है। कल्पना कीजिये कि जन्म लिये हुए बालक या बालिकाका नाम न रखा जाय तो कैसे उसे पुकारा जा सकता है, पशु-पक्षी भी अपना नाम सुनकर उल्लसित-उत्कण्ठित होते हैं। नामकी महिमासे अगुण-अगोचर भी सगुण-साकार हो जाता है। भगवान्‌के तो अनन्त नाम हैं, अनन्त रूप हैं। आचार्य बृहस्पति बताते हैं कि 'नाम अखिल व्यवहार एवं मंगलमय कार्योंका हेतु है। नामसे ही मनुष्य कीर्ति प्राप्त करता है, इसीसे नामकर्म अत्यन्त प्रशस्त है'—

नामाखिलस्य व्यवहारहेतुः शुभावहं कर्मसु भाग्यहेतुः।
नाम्नैव कीर्तिं लभते मनुष्यस्ततः प्रशस्तं खलु नामकर्म॥

(वीरमित्रोदय-संस्कारप्रकाश)

भगवान् तथा सन्तोंके नामकी महिमा तो इतनी अधिक है कि नाम लेते ही पुण्यकी प्राप्ति हो जाती है। भगवन्नामकी तो महिमा अवर्णनीय है। नामीसे भी नामकी महिमा अधिक है। इसी कारण जातकका नामकरण-संस्कार किया जाता है।

स्मृतिसंग्रहमें बताया गया है कि व्यवहारकी सिद्धि, आयु एवं ओजकी वृद्धिके लिये नामकरण-संस्कार करना चाहिये—

आयुर्वर्चोऽभिवृद्धिश्च सिद्धिर्व्यवहृतेस्तथा।
नामकर्मफलं त्वेतत् समुद्दिष्टं मनीषिभिः॥

नामकरणसंस्कारका समय—

नामकरण-संस्कार कब करना चाहिये। इस सम्बन्धमें गृह्यसूत्रोंमें व्यवस्था दी गयी है। आचार्य पारस्करने बताया है कि '**दशम्यामुत्थाप्य ब्राह्मणान् भोजयित्वा पिता नाम करोति**' (पा०गृ०सू० १।१७।१) इसमें तीन बातें बतायी हैं—

१-यह संस्कार दसवें दिनकी रात्रिके व्यतीत हो जानेपर ग्यारहवें दिन होता है।

२-पहले तीन ब्राह्मणोंको भोजन कराना चाहिये।

३-बालकका नामकरण पिता करता है। कदाचित् पिता उपस्थित न हो तो पितामह, चाचा आदि भी यह संस्कार कर सकते हैं।

दसवें दिनतक जननाशौच रहता है और अशौचमें नामकरण नहीं होता। अतः अशौचकी निवृत्ति हो जानेपर ग्यारहवें दिन नामकरण-संस्कार करना चाहिये। व्यासस्मृति (१।१८)-में कहा गया है—'**एकादशेऽह्नि नाम**' यही बात शंखस्मृतिमें कही गयी है—'**अशौचे तु व्यतिक्रान्ते नामकर्म विधीयते।**' याज्ञवल्क्यस्मृति (आचार० १२)-में बताया गया है—'**अहन्येकादशे नाम।**' सुश्रुतसंहितामें भी कहा गया है—'**ततो दशमेऽहनि मातापितरौ कृतमङ्गलकौतुकौ स्वस्तिवाचनं कृत्वा नाम कुर्यातां यदभिप्रेतं नक्षत्र नाम वा**' (शारीर० १०।२४)। यदि किसी कारण नामकरणका नियत समय बीत जाय तो अठारहवें, उन्नीसवें, सौवें दिन अथवा अयनके बीतनेपर बालकका नामकरण-संस्कार किया जा सकता है। अथवा अपने कुलाचार एवं देशाचारके अनुसार शुभ मुहूर्तमें बालकका नामकरण-संस्कार कर लेना चाहिये। कुलाचारके अनुसार नामकरणका नियत

समय होनेपर भी भद्रा, वैधृति, व्यतीपात, ग्रहण, संक्रान्ति, अमावास्या और श्राद्धके दिन बालकका नामकरण करना निषिद्ध है, परंतु नियत समयमें नामकरण करनेमें गुरु तथा शुक्रके अस्तका एवं मलमासादिका निषेध नहीं है।

नाम कैसा हो—

नामकी संरचना कैसी हो, इस विषयमें भी गृह्यसूत्रों एवं स्मृतियोंमें विस्तारसे प्रकाश डाला गया है। पारस्करगृह्यसूत्र (१।१७।२-३)-में बताया गया है—'**द्व्यक्षरं चतुरक्षरं वा घोषवदाद्यन्तरन्तस्थम्। दीर्घाभिनिष्ठानं कृतं कुर्यान्न तद्धितम्॥ अयुजाक्षरमाकारान्तꣳ स्त्रियै तद्धितम्॥**'

इसका तात्पर्य यह है कि बालकका नाम दो या चार अक्षरयुक्त, पहला अक्षर घोषवर्णयुक्त (वर्गका तीसरा, चौथा, पाँचवाँ वर्ण), मध्यमें अन्तःस्थवर्ण (य,र,ल,व आदि) और नामका अन्तिम वर्ण दीर्घ एवं कृदन्त हो, तद्धितान्त न हो। यथा देवशर्मा, शूरवर्मा आदि। कन्याका नाम विषमवर्णी तीन या पाँच अक्षरयुक्त, दीर्घवर्णान्त एवं तद्धितान्त होना चाहिये यथा श्रीदेवी आदि।

वीरमित्रोदय-संस्कारप्रकाशमें चार प्रकारके नामका विधान आया है—१-कुलदेवतासे सम्बद्ध, २-माससे सम्बद्ध, ३-नक्षत्रसे सम्बद्ध तथा ४-व्यावहारिक नाम—'**तच्च नाम चतुर्विधम्। कुलदेवतासम्बद्धं माससम्बद्धं नक्षत्रसम्बद्धं व्यावहारिकं चेति।**'

धर्मसिन्धुमें चार प्रकारके नाम बताये गये हैं—१-देवनाम, २-मासनाम, ३-नक्षत्रनाम तथा नक्षत्रके चार चरणोंके आधारपर नाम और ४-व्यावहारिक नाम (पुकारनेका नाम)।

देवनाम—रामदास, कृष्णानुज आदि।

चैत्रादि मासनाम—वैकुण्ठ, जनार्दन, उपेन्द्र आदि।

नक्षत्रनाम—नक्षत्रके नामसे अथवा नक्षत्रोंके स्वामियोंके नामसे। यथा—अश्वयुक्, कार्तिक आदि।

नक्षत्रचरणोंके आधारपर—

अश्विनीसे लेकर रेवतीतक २७ नक्षत्र होते हैं। प्रत्येक नक्षत्रके चार चरण होते हैं। एक नक्षत्र प्राय: ६० घटी रहता है। इस प्रकार एक चरण १५ घटीका होता है। जिस समय पुत्र या पुत्रीका जन्म होता है, उस समय इष्टकालके अनुसार जिस नक्षत्रके जिस चरणमें जन्म होता है, उस चरणमें जो अक्षर अवकहडाचक्रके अनुसार आता है, उसी अक्षरके अनुसार नाम पड़ता है। प्रत्येक नक्षत्रके चारों चरणोंके अक्षर अवकहडाचक्रमें निश्चित रहते हैं। जैसे—चू चे चो ला अश्विनी, ली लू ले लो भरणी इत्यादि। यदि अश्विनी नक्षत्रके पहले चरणमें जन्म हो तो 'चू' से नाम प्रारम्भ होगा, जैसे चूडामणि आदि, द्वितीय चरणमें जन्म हो तो 'चे' अक्षरसे नाम होगा, जैसे चेतनशर्मा आदि। तृतीय चरणमें जन्म हो तो 'चो' अक्षरसे नाम होगा, जैसे चोलदास आदि और यदि चतुर्थचरणमें जन्म हो तो 'ला' अक्षरसे नाम होगा, जैसे लालमणि आदि। इसी प्रकार अन्य नक्षत्रोंके चरणोंसे भी नामकी कल्पना करनी चाहिये।

व्यावहारिक नाम—

कुछ ऋषियोंने नाक्षत्रिक नामको केवल उपनयन-संस्कारतक ही उपयुक्त बताया है, जिसे माता-पिता ही जानें अन्य नहीं, इसीलिये माता-पिता पुकारनेका कोई सुन्दर-सा नाम रख लेते हैं, यही व्यावहारिक नाम कहलाता है। शास्त्रकारोंने कहा है कि माता-पिताको बालकके मूल नामको गुप्त रखना चाहिये ताकि शत्रु आदिके अभिचारादि कर्मोंसे बालककी रक्षा की जा सके। पिताद्वारा ज्येष्ठ पुत्रका नाम सम्बोधित नहीं होता, ऐसी परम्परा है, अत: कोई व्यवहारका नाम भी रखा जाता है।

नाक्षत्रिक (राशि)-नामका प्राधान्य—

ज्योतिषशास्त्रके अनुसार जो नाम रखा जाता है, उसे नक्षत्राश्रय या नाक्षत्रिक एवं राशिनाम भी कहते हैं। ज्योतिष ग्रन्थोंके अतिरिक्त आयुर्वेदशास्त्रमें भी नाक्षत्रिक नामका ही प्राधान्य बताया गया है। सुश्रुतसंहितामें भी कहा गया है कि '**यद् अभिप्रेतं नक्षत्र नाम वा**' (सुश्रुतसंहिता शारीर० १०।२४) अर्थात् माता-पिताको अभीष्ट हो वह अथवा जिस नक्षत्रमें जन्म हो उस नक्षत्रसे सम्बद्ध नाम रखना चाहिये। मानवगृह्यसूत्र (१।१८।२)-में भी कहा गया है कि नाम ऐसा रखना चाहिये, जो यशोवर्धक या यशका सूचक हो अथवा देवता या नक्षत्रके आश्रित हो—**यशस्यं नामधेयं देवताश्रयं नक्षत्राश्रयं च।** आचार्य चरकने भी कहा है—'**कुमारस्य पिता द्वे नामनी कारयेत् नाक्षत्रिकं नामाभिप्रायिकम्**' (चरक० शारीर० ८।५०) अर्थात् बालकका पिता दो नाम निश्चित करे—एक नक्षत्रसम्बन्धी हो और दूसरा अपनी अभिरुचिके अनुसार हो। वर्तमानमें ज्योतिषके अनुसार नक्षत्रोंके चरणोंके नामपर नाम रखनेकी परम्परा प्रचलित है। नक्षत्रपर रखे गये नामसे ही पता चल जाता है कि यह बालक या बालिका अमुक वर्षके अमुक मास, अमुक तिथि, अमुक वार तथा अमुक समयमें उत्पन्न हुआ है। जन्म-लग्नकुण्डली उसमें सहायक होती है, केवल पुकारका नाम रखनेपर यह सप्रमाण सिद्ध नहीं होता कि यह पुरुष कब उत्पन्न हुआ है। नक्षत्र नामसे चिकित्साका विचार भी आयुर्वेदशास्त्रमें हुआ है। वैद्य जब नामके आधारपर रोगीका जन्मनक्षत्र जान जाता है, तब उसके सामने रोगका स्वरूप भी स्पष्ट हो जाता है। वह जानता है कि अमुक नक्षत्रमें उत्पन्न होनेसे सामान्यतया इस शिशुकी प्रकृति यह है, वह तदनुकूल ही चिकित्सा करता है।

नक्षत्रोंके आधारपर निर्धारित नामको राशिनाम भी कहा जाता है; क्योंकि नक्षत्रोंसे ही राशियाँ बनती हैं। २७ नक्षत्रोंमें बारह राशियाँ

बनती हैं। सवा दो नक्षत्र (नौ चरणों)–की एक राशि होती है, यथा अश्विनीके चार चरण, भरणीके चार चरण और कृत्तिकाका पहला चरण। इस प्रकार ९ चरणोंकी पहली राशि मेष होती है। इसी प्रकार कृत्तिकाके अवशिष्ट तीन चरण, रोहिणीके चार चरण और मृगशिराके पहले दो चरण कुल मिलाकर नौ चरणोंकी 'वृष राशि' होती है। इसी प्रकार आगे भी क्रमशः मिथुन आदि राशियाँ बनती हैं। जो शिशु अश्विनी, भरणी तथा कृत्तिकाके प्रथम चरणमें उत्पन्न होगा, उसकी मेष राशि होगी। आगे वृष आदि राशियाँ होंगी।

वर्णानुसार नामकी व्यवस्था—

नामकरणसंस्कार चारों वर्णोंका होता है। स्त्री एवं शूद्रका अमन्त्रक एवं द्विजातियोंका समन्त्रक होता है। पारस्करगृह्यसूत्र एवं मनुस्मृतिके अनुसार ब्राह्मणका नाम मंगल और आनन्दसूचक तथा शर्मायुक्त, क्षत्रियका नाम बल, रक्षा और शासनक्षमताका सूचक तथा वर्मायुक्त, वैश्यका नाम धन–ऐश्वर्यसूचक, पुष्टियुक्त तथा गुप्तयुक्त और शूद्रका नाम सेवा आदि गुणोंसे युक्त एवं दासान्त होना चाहिये—

शर्म ब्राह्मणस्य वर्म क्षत्रियस्य गुप्तेति वैश्यस्य।

(पा०गृ०सू० १।१७।४)

मङ्गल्यं ब्राह्मणस्य स्यात्क्षत्रियस्य बलान्वितम्।
वैश्यस्य धनसंयुक्तं शूद्रस्य तु जुगुप्सितम्॥
शर्मवद् ब्राह्मणस्य स्याद्राज्ञो रक्षासमन्वितम्।
वैश्यस्य पुष्टिसंयुक्तं शूद्रस्य प्रेष्यसंयुतम्॥

(मनुस्मृति २।३१–३२)

यही बात विष्णुपुराणमें भी बतायी गयी है—

शर्मेति ब्राह्मणस्योक्तं वर्मेति क्षत्रसंश्रयम्।
गुप्तदासात्मकं नाम प्रशस्तं वैश्यशूद्रयोः॥

(विष्णुपुराण ३।१०।९)

जन्मराशिनाम और पुकारनामकी व्यवस्था—

शास्त्रोंमें किस कर्मको राशिनामसे करना चाहिये तथा किस कर्मको पुकारनामसे ग्रहण करना चाहिये, इसपर विचार करते हुए कहा गया है कि विवाहमें, सभी प्रकारके मांगलिक कृत्योंमें, यात्राके मुहूर्तादि विचारमें तथा ग्रहगोचरकी गणना करनेमें जन्मराशि (नक्षत्रनाम)-का प्राधान्य है। इसी प्रकार देश, ग्राम, युद्ध, सेवा तथा व्यावहारिक कार्योंमें नामराशिकी प्रधानता है—

विवाहे सर्वमाङ्गल्ये यात्रायां ग्रहगोचरे।
जन्मराशिप्रधानत्वं नामराशिं न चिन्तयेत्॥
देशे ग्रामे गृहे युद्धे सेवायां व्यवहारके।
नामराशिप्रधानत्वं जन्मराशिं न चिन्तयेत्॥

नामकरण-संस्कारकी बहुत उपयोगिता है, मनुष्यका जैसा नाम होता है, वैसे ही गुण भी होते हैं, यद्यपि इसका अपवाद भी मिलता है, किंतु अपवादसे उत्सर्गका खण्डन नहीं हो सकता। बालकोंका नाम लेकर पुकारनेसे उनके मनपर उस नामका असर पड़ता है और प्रायः उसीके अनुरूप चलनेका प्रयास भी होने लगता है, इसलिये नाममें यदि उदात्त भावना होती है तो बालकोंमें यश एवं भाग्यका अवश्य ही उदय सम्भव है। अजामिल एक पापात्मा था, फिर भी वह अपनी मृत्युके समय अपने पुत्रके 'नारायण' नामके उच्चारणके प्रभावसे सद्गतिको प्राप्त हो गया, इसी कारण अधिकांश लोग अपने पुत्र-पुत्रियोंका नाम भगवन्नामपर रखना शुभ समझते हैं, ताकि इसी बहाने भगवन्नामका उच्चारण हो जाय।

विडम्बना है कि आज पाश्चात्य सभ्यताके अन्धानुकरणमें नामकरण-संस्कारका मूल स्वरूप प्रायः समाप्त ही हो गया है।

[५] नामकरणसंस्कार-प्रयोग

आचार्य पारस्करने यद्यपि निष्क्रमण-संस्कारको चतुर्थ मासमें करनेके लिये बताया है, किंतु व्यवहारकी सिद्धिके लिये शिष्टजन भविष्योत्तरपुराणके इस वचन—'**द्वादशेऽहनि राजेन्द्र शिशोर्निष्क्रमणं गृहात्**' के आधारपर नामकरणसंस्कारके अनन्तर इसे भी सम्पन्न कर लेते हैं। इसी दृष्टिसे नामकरण-संस्कार तथा निष्क्रमणसंस्कार—इन दोनों संस्कारोंकी विधि यहाँ एकतन्त्रसे दी जा रही है। इसलिये दोनों संस्कारोंको एक साथ कर लेना चाहिये। भूम्युपवेशनकर्म निष्क्रमण-संस्कारका अंग है। अतः उसे भी साथमें कर लेना चाहिये। सर्वप्रथम नामकरण-संस्कारकी विधि दी जा रही है—

नामकरण-संस्कारके दिन प्रातः सूतिका पुत्र (पुत्री)-सहित स्नानादिसे पवित्र हो जाय। सूतिकागृह आदिको भी शुद्ध कर लेना चाहिये।

नामकरणकर्ता पिता स्वयं भी स्नानादिसे पवित्र होकर स्वच्छ धुले हुए धोती, उत्तरीय (चादर) आदि वस्त्रोंको धारणकर दीप प्रज्वलितकर पवित्र आसनपर पूर्वाभिमुख हो बैठ जाय, आचमन, प्राणायाम आदि कर ले। सभी पूजनादि सामग्रीको यथास्थान रख ले।

तदनन्तर हाथमें त्रिकुश, पुष्प, अक्षत तथा जल लेकर निम्न संकल्प करे। यहाँ नामकरणसंस्कार तथा भूम्युपवेशनसहित निष्क्रमण-संस्कारका प्रतिज्ञा-संकल्प एक साथ लिखा जा रहा है—

प्रतिज्ञा-संकल्प—

ॐ विष्णुर्विष्णुर्विष्णुः श्रीमद्भगवतो महापुरुषस्य विष्णो-राज्ञया प्रवर्तमानस्य ब्रह्मणो द्वितीयपरार्धे श्रीश्वेतवाराहकल्पे वैवस्वतमन्वन्तरे अष्टाविंशतितमे कलियुगे कलिप्रथमचरणे जम्बूद्वीपे भारतवर्षे आर्यावर्तैकदेशे (यदि काशी हो तो **अविमुक्तवाराणसीक्षेत्रे**

आनन्दवने गौरीमुखे त्रिकण्टकविराजिते महाश्मशाने भगवत्या उत्तरवाहिन्या भागीरथ्या वामभागे) ......नगरे/ग्रामे/क्षेत्रे षष्टि-संवत्सराणां मध्ये ......संवत्सरे ......अयने ......ऋतौ ......मासे ......पक्षे ......तिथौ ......नक्षत्रे ......योगे ......करणे ......वासरे ......राशिस्थिते सूर्ये ......राशिस्थिते चन्द्रे शेषेषु ग्रहेषु यथायथाराशिस्थानस्थितेषु सत्सु एवं ग्रहगुणगणविशिष्टे शुभमुहूर्ते ......गोत्रः सपत्नीकः ......शर्मा/वर्मा/गुप्तोऽहं मम अस्य कुमारस्य बीजगर्भ-समुद्भवैनोनिबर्हणेन बलायुर्वर्चोऽभिवृद्धिव्यवहारसिद्धिद्वारा श्रीपरमेश्वरप्रीत्यर्थं नाम-करणसंस्कारं तथास्य बालस्य सूर्यावलोकनसहितनिष्क्रमणकर्म भूम्युपवेशनं चैकतन्त्रेण करिष्ये। करिष्यमाणनामकर्मसूर्या-वलोकनसहितनिष्क्रमणभूम्युपवेशनकर्मणां पूर्वाङ्गतया स्वस्ति-पुण्याहवाचनं निर्विघ्नतासिद्ध्यर्थं गणेशाम्बिकापूजनं मातृकापूजनं वसोर्धारापूजनमायुष्यमन्त्रजपं साङ्कल्पिकेन विधिना नान्दीश्राद्धं च करिष्ये। इस प्रकार कहकर संकल्प-जल छोड़ दे।

[गणपति-पंचांगपूजनादि परिशिष्ट पृष्ठ-सं० ४१५ के अनुसार सम्पन्न करें।]

ब्राह्मणभोजन-संकल्प—

इसके बाद कर्ता नामकरण-संस्कारकर्म करनेकी अधिकार-सिद्धिके लिये हाथमें जल, अक्षत आदि लेकर तीन ब्राह्मणोंको भोजन करानेका निम्न संकल्प करे—

ॐ अद्य ......गोत्र ......शर्मा/वर्मा/गुप्तोऽहं अस्य जातस्य पुत्रस्य नामकरणपूर्वाङ्गतया विहितान् त्रीन् ब्राह्मणान् भोजयिष्ये। ऐसा संकल्पकर ब्राह्मणोंको भोजन कराये या निष्क्रयभूत द्रव्य-दक्षिणा प्रदान करे।

पंचगव्य-हवनके लिये अग्निस्थापनका संकल्प—

तदनन्तर होमका संकल्प करे। कर्ता हाथमें कुश, अक्षत, जल

आदि लेकर निम्नलिखित संकल्पवाक्य बोले—

ॐ अद्य पूर्वोच्चारितग्रहगुणगणविशेषणविशिष्टायां शुभ-पुण्यतिथौ ....गोत्रः ....शर्मा/वर्मा/गुप्तोऽहम् अस्मिन् नामकरण-कर्मणि पञ्चगव्यादिहोमार्थं पञ्चभूसंस्कारपूर्वकं विधिनामान-मग्निस्थापनं करिष्ये। हाथका संकल्पजलादि छोड़ दे।

वेदीनिर्माण तथा पंच-भूसंस्कार—

तदनन्तर हवनके लिये मिट्टी अथवा बालूसे एक हाथ लम्बी-चौड़ी और चार अंगुल ऊँची एक वेदी बनाये और निम्न रीतिसे वेदीका पंच-भूसंस्कार करे—

(१) तीन पूर्वाग्र कुशाओंसे वेदीको दक्षिणसे उत्तरकी ओरतक साफ कर दे। उन कुशोंको ईशानकोणमें फेंक दे।

(२) गोबर और जलसे वेदीको दक्षिणसे उत्तरकी ओर लीप दे।

(३) स्रुवा अथवा तीन कुशोंके मूलसे वेदीके बीचमें प्रादेशमात्र (अंगुष्ठ और तर्जनीके बीचकी दूरी) लम्बी तीन रेखाएँ दक्षिणसे प्रारम्भकर उत्तरकी ओर पश्चिमसे पूर्वकी ओर खींचे।

(४) उल्लेखन-क्रमसे रेखाओंसे अनामिका और अंगुष्ठके द्वारा मिट्टी निकालकर बायें हाथमें रखता जाय। तीन बार मिट्टी निकालनेके बाद उसको बायें हाथसे दायें हाथमें लेकर ईशानकोणमें फेंक दे।

(५) जलद्वारा वेदीको सींच दे।

तदनन्तर वेदीमें अग्निकी स्थापना करे। किसी काँस्य अथवा ताम्रपात्रमें या मिट्टीके कसोरेमें स्थित अग्निको वेदीके अग्निकोणमें रखे और इसमेंसे क्रव्यादांश निकालकर नैर्ऋत्यकोणमें डाल दे। तत्पश्चात् अग्निपात्रको स्वाभिमुख करते हुए निम्न मन्त्रसे अग्निको वेदीमें स्थापित करे—

अग्निं दूतं पुरो दधे हव्यवाहमुप ब्रुवे। देवाँ२ आ सादयादिह॥

अग्निकी सुरक्षाके लिये कुछ ईंधन डाल दे।

अग्निकी प्रतिष्ठा एवं पूजन—

तदनन्तर **ॐ भूर्भुव स्वः विधिनामाग्ने इहागच्छ इह तिष्ठ सुप्रतिष्ठितो वरदो भव।**

—ऐसा कहकर अग्निकी प्रतिष्ठाकर '**ॐ विधिनामाग्नये नमः**' इस मन्त्रसे गन्धादि उपचारोंसे अग्निका पूजन कर ले।

आचार्य तथा ब्रह्माका वरण-संकल्प—

यदि स्वयं होम करनेमें समर्थ हो तो केवल ब्रह्माका वरण करे अन्यथा आचार्य एवं ब्रह्मा दोनोंका निम्न संकल्पसे वरण करे।

दाहिने हाथमें त्रिकुश, अक्षत, जल, वरण-सामग्री तथा द्रव्य ग्रहणकर बोले—

ॐ अद्य पूर्वोच्चारितग्रहगुणगणविशेषणविशिष्टायां शुभ-पुण्यतिथौ ....गोत्र ....शर्मा/वर्मा/गुप्तोऽहं ....राशेः मम पुत्रस्य करिष्यमाणशुद्ध्यर्थपञ्चगव्यपानाङ्गहोमकर्मणि आचार्यब्रह्मणोः वरणं पूजनं च करिष्ये। ऐसा कहकर संकल्प-जल तथा वरण-सामग्री उन्हें प्रदान करे तथा हवनकी तैयारी (कुशकण्डिका)* करे।

प्रणीतापात्रस्थापन—

प्रणीतापात्रको वेदीके उत्तर भागमें कुशोंके आसनपर रख दे। कर्मपात्रके जलसे उसे भर दे। तदनन्तर वेदीके चारों ओर यथाविधि कुश बिछाये।

पात्रासादन—

हवनमें प्रयुक्त होनेवाली सभी वस्तुओं तथा पात्रोंको पश्चिमसे

* कुशकण्डिकाकी पूर्णविधि पृ० ५६ में दी गयी है। जो विस्तारसे करना चाहते हैं, उसके अनुसार कर सकते हैं। विभिन्न संस्कारोंमें हवनकी अग्निका नाम पृथक्-पृथक् रहता है और हवनीय द्रव्य चरु आदि और पात्रासादनकी सामग्री भी पृथक्-पृथक् रहती है। इसका निर्देश तत्तद् संस्कारोंके प्रयोगमें किया गया है।

पूर्वतक उत्तराग्र अथवा अग्निके उत्तरकी ओर पूर्वाग्र रख ले।

पवित्रक बना ले तथा प्रोक्षणीपात्रका संस्कार करे। आज्यस्थालीमें घृत रखकर वेदीके पश्चिम भागमें उत्तरकी ओर रख ले। स्रुवाका सम्मार्जन कर ले। तीन समिधाओंको घीमें डुबोकर मौन होकर प्रजापति देवताके निमित्त अग्निमें छोड़ दे। तदनन्तर प्रोक्षणीके जलको दायें हाथकी अंजलिमें लेकर अग्निके ईशानकोणसे ईशानकोणतक जलधारा दे।

पंचगव्य-निर्माण—

नामकरणसंस्कारमें दस दिनतकका जननाशौच प्राप्त रहता है तथा सूतकजन्य अशुद्धि रहती है, अतः नामकरणके दिन शुद्धिके लिये पंचगव्यसे सूतिका-गृहका प्रोक्षण, सूतिकाद्वारा पंचगव्यका पान तथा पंचगव्यसे हवन भी किया जाता है। अतः यहाँ संक्षेपमें पंचगव्य-निर्माणकी विधि दी जा रही है—

सर्वप्रथम गायत्री मन्त्रके[१] द्वारा गोमूत्र ग्रहण करके वरुण देवताका ध्यान करते हुए उस गोमूत्रको किसी ताम्रपात्र अथवा पलाशके दोनेमें रख ले। तदनन्तर **ॐ गन्धद्वारां**[२] इस मन्त्रका पाठ करते हुए गोमय (गोबर) ग्रहण करे और अग्निदेवका ध्यान करते हुए उसी ताम्रपात्र अथवा पलाशपुटकमें रख दे। **ॐ आ प्यायस्व०**[३] मन्त्रसे गोदुग्ध ग्रहणकर सोम (चन्द्रमा)-का ध्यान करते हुए उसी पात्रमें रख दे। पुनः **ॐ दधिक्राव्णो०**[४] इस मन्त्रसे दधि (दही) ग्रहण करके वायुदेवताका ध्यान करते हुए उसी पात्रमें रख दे। तदनन्तर

---

१. ॐ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि। धियो यो नः प्रचोदयात्॥

२. गन्धद्वारां दुराधर्षां नित्यपुष्टां करीषिणीम्। ईश्वरीं सर्वभूतानां तामिहोप ह्वये श्रियम्॥

३. आ प्यायस्व समेतु ते विश्वतः सोम वृष्ण्यम्। भवा वाजस्य सङ्गथे॥

४. दधिक्राव्णो अकारिषं जिष्णोरश्वस्य वाजिनः। सुरभि नो मुखा करत्प्र ण आयूꣳषि तारिषत्॥

ॐ तेजोऽसि०[1] इस मन्त्रसे गोघृत ग्रहणकर सूर्यका ध्यान करते हुए उसी पात्रमें रख दे। अन्तमें **ॐ देवस्य त्वा०**[2] मन्त्रसे कुशोदक लेकर हरि (विष्णु)-का ध्यान करते हुए उसी पात्रमें रख दे।

पंचगव्यद्रव्योंका प्रमाण—

एक पल[3] गोमूत्र, उसका आधा गोमय, गोदुग्ध सात पल, दधि तीन पल, गोघृत एक पल तथा एक पल कुशोदक लेना चाहिये।[4]

पंचगव्यका आलोडन—

ताम्रपात्र अथवा पलाशके दोनेमें स्थित उन द्रव्योंका हरितकुशोंद्वारा निम्न मन्त्रसे आलोडन करना चाहिये—

ॐ आपो हि ष्ठा मयोभुवस्ता न ऊर्जे दधातन। महे रणाय चक्षसे॥

इस प्रकार पंचगव्य निर्माणकर यथास्थान रख ले और आगेका हवन-कार्य करे।

हवन—

स्रुवामें घृत लेकर सर्वप्रथम निम्न मन्त्रोंसे आघार एवं आज्यभागकी चार आहुतियाँ प्रदान करे। ब्रह्मा कुशासे होताका स्पर्श किये रहे। प्रत्येक आहुतिके बाद शेष घृत प्रोक्षणीपात्रमें डालता जाय—

१. ॐ प्रजापतये स्वाहा, इदं प्रजापतये न मम।

२. ॐ इन्द्राय स्वाहा, इदमिन्द्राय न मम।

३. ॐ अग्नये स्वाहा, इदमग्नये न मम।

४. ॐ सोमाय स्वाहा, इदं सोमाय न मम।

---

१. तेजोऽसि शुक्रमस्यमृतमसि धामनामसि प्रियं देवानाममनाधृष्टं देवयजनमसि॥

२. देवस्य त्वा सवितुः प्रसवेऽश्विनोर्बाहुभ्यां पूष्णो हस्ताभ्याम्॥

३. एक पलका मान ३ तोला, ४ मासा है, जो लगभग ४० ग्रामके बराबर होता है। जितना पंचगव्य बनाना हो, उसके अनुसार पाँचों पदार्थोंकी मात्रा कर लेनी चाहिये।

४. मूत्रस्यैकपलं दद्यात्तदर्धं गोमयं स्मृतम्। क्षीरं सप्तपलं दद्याद्दधि त्रिपलमुच्यते। आज्यस्यैकपलं दद्यात्पलमेकं कुशोदकम्॥ (पराशरस्मृति)

अनन्वारब्ध व्याहृतिहोम—

तदनन्तर निम्न मन्त्रोंसे घृतसे व्याहृति होम करे। ब्रह्मा होतासे कुशाका स्पर्श हटा लें। आहुतिशेष घृत प्रोक्षणीपात्रमें छोड़ता जाय।

१. ॐ भूः स्वाहा, इदमग्नये न मम।

२. ॐ भुवः स्वाहा, इदं वायवे न मम।

३. ॐ स्वः स्वाहा, इदं सूर्याय न मम।

पंचगव्यहोम—

तदनन्तर बने हुए पंचगव्यको सामने रख ले और हरित कुशोंद्वारा निम्न मन्त्रोंसे अग्निमें पंचगव्यकी आहुति प्रदान करे—

(१) ॐ इरावती धेनुमती हि भूत ँ्सूयवसिनी मनवे दशस्या। व्यस्कभ्ना रोदसी विष्णवेते दाधर्थ पृथिवीमभितो मयूखैः स्वाहा। इदं विष्णवे न मम।

(२) ॐ इदं विष्णुर्वि चक्रमे त्रेधा नि दधे पदम्। समूढमस्य पाँ्सुरे स्वाहा। इदं विष्णवे न मम।

(३) ॐ मा नस्तोके तनये मा न आयुषि मा नो गोषु मा नो अश्वेषु रीरिषः। मा नो वीरान् रुद्र भामिनो वधीर्हविष्मन्तः सदमित् त्वा हवामहे स्वाहा। इदं रुद्राय न मम। जलका स्पर्श कर ले।

(४) ॐ शं नो देवीरभिष्टय आपो भवन्तु पीतये। शं योरभि स्त्रवन्तु नः स्वाहा। इदमद्भ्यो न मम।

(५) ॐ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात् स्वाहा। इदं सवित्रे न मम।

(६) ॐ प्रजापते न त्वदेतान्यन्यो विश्वा रूपाणि परिता बभूव। यत्कामास्ते जुहुमस्तन्नो अस्तु वयँ् स्याम पतयो रयीणाम् स्वाहा। इदं प्रजापतये न मम।

प्रायश्चित्तहोम (पञ्चवारुणहोम)—

पंचगव्य हवनके अनन्तर निम्नलिखित मन्त्रोंसे घृतद्वारा स्त्रुवासे

प्रायश्चित्त हवन करना चाहिये। शेष घृत प्रोक्षणीपात्रमें डालता जाय।

१-ॐ त्वं नो अग्ने वरुणस्य विद्वान् देवस्य हेडो अव यासिसीष्ठाः। यजिष्ठो वह्नितमः शोशुचानो विश्वा द्वेषाꣳसि प्र मुमुग्ध्यस्मत्स्वाहा, इदमग्नीवरुणाभ्यां न मम।

२-ॐ स त्वं नो अग्नेऽवमो भवोती नेदिष्ठो अस्या उषसो व्युष्टौ। अव यक्ष्व नो वरुणꣳरराणो वीहि मृडीकꣳ सुहवो न एधि स्वाहा। इदमग्नीवरुणाभ्यां न मम।

३-ॐ अयाश्चाग्नेऽस्यनभिशस्तिपाश्च सत्यमित्त्वमया असि। अया नो यज्ञं वहास्यया नो धेहि भेषजꣳ स्वाहा। इदमग्नये ऽयसे न मम।

४-ॐ ये ते शतं वरुण ये सहस्त्रं यज्ञियाः पाशा वितता महान्तः। तेभिर्नो ऽअद्य सवितोत विष्णुर्विश्वे मुञ्चन्तु मरुतः स्वर्काः स्वाहा॥ इदं वरुणाय सवित्रे विष्णवे विश्वेभ्यो देवेभ्यो मरुद्भ्यः स्वर्केभ्यश्च न मम।

५-ॐ उदुत्तमं वरुण पाशमस्मदवाधमं वि मध्यमꣳश्रथाय। अथा वयमादित्य व्रते तवानागसो अदितये स्याम स्वाहा॥ इदं वरुणायादित्यायादितये न मम।

तदनन्तर प्रजापति देवताका ध्यानकर मनमें निम्न मन्त्रका उच्चारणकर आहुति दे—

६-(मौन होकर) **ॐ प्रजापतये स्वाहा, इदं प्रजापतये न मम।**

स्विष्टकृत् आहुति—

इसके बाद ब्रह्माद्वारा कुशसे स्पर्श किये जानेकी स्थितिमें (ब्रह्मणान्वारब्ध) निम्न मन्त्रसे घृतद्वारा स्विष्टकृत् आहुति दे—

ॐ अग्नये स्विष्टकृते स्वाहा, इदमग्नये स्विष्टकृते न मम।

संस्त्रवप्राशन—

हवन पूर्ण होनेपर प्रोक्षणीपात्रसे घृत दाहिने हाथमें लेकर यत्किंचित् पान करे। हाथ धो ले। फिर आचमन करे।

मार्जनविधि—

इसके बाद निम्नलिखित मन्त्रद्वारा प्रणीतापात्रके जलसे कुशोंके द्वारा अपने सिरपर मार्जन करे—

ॐ सुमित्रिया न आप ओषधयः सन्तु।

इसके बाद निम्न मन्त्रसे जल नीचे छोड़े—

ॐ दुर्मित्रियास्तस्मै सन्तु योऽस्मान् द्वेष्टि यं च वयं द्विष्मः।

पवित्रप्रतिपत्ति—

पवित्रकको अग्निमें छोड़ दे।

पूर्णपात्रदान—

पूर्वमें स्थापित पूर्णपात्रमें द्रव्य-दक्षिणा रखकर निम्न संकल्पकर दक्षिणासहित पूर्णपात्र ब्रह्माको प्रदान करे—

ॐ अद्य नामकरणसंस्कारहोमकर्मणि कृताकृतावेक्षणरूप-ब्रह्मकर्मप्रतिष्ठार्थमिदं वृषनिष्क्रयद्रव्यसहितं पूर्णपात्रं प्रजापति-दैवतं ''''गोत्राय ''''शर्मणे ब्रह्मणे भवते सम्प्रददे।

ब्रह्मा **'स्वस्ति'** कहकर उस पूर्णपात्रको ग्रहण कर ले।

प्रणीताविमोक—

प्रणीतापात्रको ईशानकोणमें उलटकर रख दे।

मार्जन—

पुनः कुशाद्वारा निम्न मन्त्रसे उलटकर रखे गये प्रणीताके जलसे मार्जन करे—

ॐ आपः शिवाः शिवतमाः शान्ताः शान्ततमास्तास्ते कृण्वन्तु भेषजम्। उपयमन कुशोंको अग्निमें छोड़ दे।

बर्हिहोम—

तदनन्तर पहले बिछाये हुए कुशाओंको जिस क्रमसे बिछाये गये थे, उसी क्रमसे उठाकर घृतमें भिगोये और निम्न मन्त्रसे स्वाहाका उच्चारणकर अग्निमें डाल दे—

ॐ देवा गातुविदो गातुं वित्त्वा गातुमित। मनसस्पत इमं देव यज्ञꣳ स्वाहा वाते धाः स्वाहा।

कुशमें लगी ब्रह्मग्रन्थिको खोल दे।

सूतिकाद्वारा पंचगव्यका पान—

हवनके अनन्तर हुतशेष (हवनसे बचे हुए) पंचगव्य (ब्रह्मकूर्च)-मेंसे थोड़ा पंचगव्य सूतिकाको पान करनेके लिये देना चाहिये। वह दाहिने हाथके ब्राह्मतीर्थ अथवा पलाशके दोनेमें लेकर तीन बार पंचगव्यका प्राशन करे। तदनन्तर पंचगव्य छिड़ककर प्रसवगृहको शुद्ध कर लेना चाहिये।

सूतिकाका सूतिकागृहसे बाहर आना—

अभीतक सूतिका प्रसवगृहमें ही स्थित थी, अब उसे पूजन तथा नामकरणके लिये बाहर पूजास्थलमें आना है। सूतिकागृहसे बाहर आनेके लिये कई देशाचार हैं, एक आचारके अनुसार यह विधि है कि हवनकार्यके लिये वृणीत ब्रह्मा गन्धाक्षतपुष्प आदिसे स्रुवाका पूजनकर उससे सूतिकाका स्पर्श कराकर बाहर लाते हैं और वह बालकको गोदमें लेकर अग्निकी प्रदक्षिणाकर पतिके वामभागमें बैठ जाती है और गणेशादि देवोंको प्रणामकर पुष्प निवेदित करती है।

बालकके नामकरणकी विधि—

शुभलग्न एवं मुहूर्तके आनेपर श्वेत नवीन वस्त्र बिछाकर उसपर कुमकुम आदिके द्वारा अथवा पीपलके पत्तेपर कुमकुम आदिके द्वारा पाँच नामोंको लिखे—

पहला नाम—अपने कुलदेवतासे सम्बद्ध होना चाहिये।

दूसरा नाम—कृष्ण, अनन्त, अच्युत, चक्रधर, वैकुण्ठ, जनार्दन, उपेन्द्र, यज्ञपुरुष, वासुदेव, हरि, योगीश तथा पुण्डरीक—इन बारह नामोंसे जो अभीष्ट हो, एक नाम रखना चाहिये।

तीसरा नाम—अवकहडाचक्रके अनुसार नक्षत्रसे सम्बद्ध नाम रखना चाहिये।

चौथा नाम—व्यावहारिक नाम रखना चाहिये।

पाँचवाँ नाम—जो अपनेको प्रिय हो, वह नाम रखना चाहिये।

प्रतिष्ठा—

'**ॐ भूर्भुवः स्वः बालकनामानि सुप्रतिष्ठितानि भवन्तु**'—ऐसा कहकर नामोंकी प्रतिष्ठा करे और गन्धादिसे उनका पूजन कर ले।

ब्राह्मणका नाम शर्मान्त, क्षत्रियका वर्मान्त, वैश्यका गुप्तान्त और शूद्रका दासान्त होना चाहिये। नाम दो या चार अक्षरका सुखपूर्वक उच्चारण करनेयोग्य सार्थक होना चाहिये। कन्याका नाम विषमाक्षर होना चाहिये। नामांकित वस्त्र या अश्वत्थ (पीपल)-पत्रद्वारा शंखको लपेटे। इसके बाद पूर्वमुख बालकके दाहिने कानमें पिता अथवा आचार्यके द्वारा '.....**शर्मासि दीर्घायुर्भव**'—इस प्रकारसे शंखके माध्यमसे नामोंका तीन बार श्रवण कराना चाहिये।

बालकके कानमें नाम कहनेके बाद निम्नलिखित मन्त्रका पाठ पिताको करना चाहिये—

ॐ अङ्गादङ्गात्सम्भवसि हृदयादधिजायसे।
आत्मा वै पुत्रनामासि स जीव शरदः शतम्॥

बालकद्वारा ब्राह्मणोंको प्रणाम करवाना चाहिये तथा ब्राह्मण उसे आशीर्वाद प्रदान करें।

तदनन्तर आगे दी गयी विधिके अनुसार निष्क्रमणसंस्कार करे।

निष्क्रमणसंस्कार एवं सूर्यावलोकन

सामान्य परिचय एवं संस्कारकी संक्षिप्त प्रक्रिया—

आचार्य पारस्करजीने निष्क्रमणकर्मके सम्बन्धमें दो सूत्र दिये हैं—'**चतुर्थे मासि निष्क्रमणिका।**' '**सूर्यमुदीक्षयति तच्चक्षुरिति**' (पा०गृ०सू० १।१७।५-६)। इन सूत्रोंमें यह बताया गया है कि निष्क्रमण-संस्कार बालकके जन्मके बाद चौथे मासमें करना चाहिये, किंतु व्यवहारकी सुविधाके लिये शिष्टजन प्रायः नामकरण-संस्कारके अनन्तर ही अपकृष्ट करके इस कर्मको भी सम्पन्न कर लेते हैं—'**द्वादशेऽहनि राजेन्द्र शिशोर्निष्क्रमणं गृहात्**' (भविष्योत्तरपुराण)।

इस संस्कारमें मुख्य रूपसे शिशुको सूतिकागृहसे बाहर लाकर सूर्यका दर्शन कराया जाता है—'**अथ निष्क्रमणं नाम गृहात्प्रथम-निर्गमः**' (बृहस्पति)। इसका तात्पर्य यह है कि निष्क्रमणकर्मके पूर्व शिशुको घरके अन्दर ही रखना चाहिये। इसमें कारण यह है कि अभी शिशुकी आँखें कोमलतावश कच्ची रहती हैं, यदि शिशुको शीघ्र ही सूर्यके तीव्र प्रकाशमें लाया जायगा तो उसकी आँखोंपर दुष्प्रभाव पड़ेगा, भविष्यमें उसकी आँखोंकी शक्ति या तो मन्द रहेगी या उसका शीघ्र ही ह्रास होगा। इस कारण भारतीय नारियाँ बच्चेको शीशा भी नहीं देखने देतीं; क्योंकि शीशेकी चमक भी कच्ची आँखोंको चौंधिया देती हैं, सूतिकागृहमें तेज रोशनी भी इसी कारण नहीं रखी जाती। धीरे-धीरे शिशुमें शक्तिसंचय हो जानेसे क्रम-क्रमसे घरके दीपककी ज्योति देखनेमें अभ्यस्त होकर तब उसकी आँखें बाह्य प्रकाशमें गमनके योग्य होती हैं। यद्यपि बिना संस्कारके भी यह लाभ उसे प्राप्त होना सम्भव है, किंतु मन्त्रोंके साथ होनेपर

इनका प्रभाव अमोघ और दीर्घकालीन होता है तथा शास्त्रकी मर्यादाका भी रक्षण होता है। अतः संस्कार विहित विधिके अनुसार ही करना चाहिये।

इस कर्ममें दिग्देवताओं, दिशाओं, चन्द्र, सूर्य, वासुदेव तथा गगन (आकाश)—इन देवताओंका किसी जलपूर्ण पात्रमें आवाहन करके उनके नाम-मन्त्रोंसे पूजन होता है और पूजनके अनन्तर उनकी प्रार्थना की जाती है।

तदनन्तर शंख-घण्टानादपूर्वक शान्तिपाठ करते हुए बालकको लेकर घरसे बाहर आँगनमें, जहाँसे सूर्यदर्शन हो सके, ऐसे स्थानमें आकर किसी ताम्रपात्रमें सूर्यकी स्थापना-प्रतिष्ठाकर उनका पूजन करना चाहिये और सूर्यार्घ्य प्रदानकर '**ॐ तच्चक्षुर्देवहितं०**' इस मन्त्रका पाठ करते हुए बालकको सूर्यका दर्शन कराना चाहिये और ब्राह्मणोंको दक्षिणा-भोजन आदि कराकर कर्म सम्पन्न करना चाहिये।

निष्क्रमण-संस्कारके उपांगकर्म

(क) भूमि-उपवेशन कर्म—

पारस्करगृह्यसूत्र (१।१७।६)-के भाष्यमें आचार्य गदाधरने प्रयोगपारिजातका उद्धरण देते हुए बताया है कि जन्मके पाँचवें मासमें भूमि-उपवेशन कर्म होता है, जिसमें भूमिपूजन करके पहली बार बालकको भूमिका स्पर्श कराया जाता है। '**पञ्चमे च तथा मासि भूमौ तमुपवेशयेत्।**'

उपर्युक्त वचनसे भूम्युपवेशन कर्म पाँचवें मासमें विहित है, किंतु समाचारसे सुविधाकी दृष्टिसे नामकर्म-संस्कारके दिन निष्क्रमणकर्म करके यह संस्कार कर लेनेकी परम्परा भी है।

बालकके लिये भूम्युपवेशन-संस्कारका अत्यन्त महत्त्व है। इसे करनेसे पृथ्वीमाता जीवनपर्यन्त उसकी रक्षा करती हैं और मृत्युके अनन्तर भी अपनी गोदमें धारण करती हैं। शास्त्रोंमें मनुष्योंका पृथ्वीमाताकी गोदमें मरनेका विशेष महत्त्व है, इसीलिये मरणासन्न व्यक्तिको भूमिपर लिटा दिया जाता है। मृत्युके समय पलंग आदिपर मरनेसे सद्गति नहीं होती, ऐसा शास्त्रीय नियम है।

(ख) दोलारोहण—पर्यंकारोहण—

शिशुके लिये नया दोला (झूला, पर्यंक, हिंडोला) आदि बनवाया जाता है और प्रथम बार माताकी गोदसे उस दोलापर बैठानेका मांगलिक कर्म दोलारोहण कहा जाता है। इसे कब करना चाहिये, इसके विषयमें बताया गया है कि नामकरण-संस्कारके दिन, सोलहवें दिन अथवा २२वें दिन अथवा किसी शुभ दिन, शुभ मुहूर्तमें कुलदेवताका पूजन करके हरिद्रा, कुमकुम आदिसे सुसज्जित डोलेमें माता, सौभाग्यवती स्त्रियाँ योगशायी भगवान् विष्णुका स्मरण करते हुए मंगल गीत-वाद्योंकी ध्वनिके साथ भली प्रकारसे अलंकृत किये शिशुको नवीन वस्त्रसे आच्छादित पर्यंकपर पूर्वकी ओर सिर करके सुलाती हैं और मांगलिक कार्योंको सम्पन्न करती हैं।

(ग) गोदुग्धपान—

अभीतक बालक माताके दूधपर ही आश्रित था, अब उसे विशेष दूधकी भी आवश्यकता होने लगती है। अतः जन्मके ३१वें दिन अथवा किसी शुभ दिनमें शुभ मुहूर्तमें कुलदेवताका पूजन करनेके अनन्तर बालककी माता अथवा कोई सौभाग्यशालिनी स्त्री शंखमें गोदुग्ध भरकर धीरे-धीरे बच्चेको प्रथम बार पान कराती है। आयुर्वेदशास्त्रमें गोदुग्धके

गुणों तथा उसकी उपयोगिताको बताते हुए कहा गया है कि गायका दूध स्वादिष्ट, शीतल, मृदु, स्निग्ध, बहल (गाढ़ा), श्लक्ष्ण, पिच्छिल, गुरु, मन्द और प्रसन्न—इन दस गुणोंसे युक्त रहता है। यह जीवनीशक्ति प्रदान करनेवाले द्रव्योंमें सबसे श्रेष्ठ और रसायन है—**'प्रवरं जीवनीयानां क्षीरमुक्तं रसायनम्'** (चरकसंहिता सूत्रस्थान २७। २१८)। माताके दूधके विषयमें बताया गया है कि यह शरीरमें जीवनी शक्तिको देनेवाला होता है, बृंहण होता है, जन्मसे ही प्रत्येक मनुष्यके लिये अनुकूल होता है तथा शरीरमें स्निग्धता लाता है—**'जीवनं बृंहणं सात्म्यं स्नेहनं मानुषं पयः।'** (चरकसंहिता, सूत्रस्थान २७। २२४)

[६] निष्क्रमणसंस्कार [सूर्यावलोकन तथा भूम्युपवेशन]-प्रयोग

नामकरणसंस्कार सम्पन्न हो जानेके बाद निष्क्रमणसंस्कारकी सामग्री यथास्थान स्थितकर हाथमें कुशाक्षत, जल लेकर निम्न संकल्प करे—

ॐ विष्णुर्विष्णुर्विष्णुः श्रीमद्भगवतो महापुरुषस्य विष्णो-राज्ञया प्रवर्तमानस्य ब्रह्मणो द्वितीयपरार्धे श्रीश्वेतवाराहकल्पे वैवस्वतमन्वन्तरे अष्टाविंशतितमे कलियुगे कलिप्रथमचरणे जम्बूद्वीपे भारतवर्षे आर्यावर्तैकदेशे (यदि काशी हो तो **अविमुक्तवाराणसीक्षेत्रे आनन्दवने गौरीमुखे त्रिकण्टकविराजिते महाश्मशाने भगवत्या उत्तरवाहिन्या भागीरथ्या वामभागे) .....नगरे/ग्रामे/क्षेत्रे षष्टि-संवत्सराणां मध्ये .....संवत्सरे .....अयने .....ऋतौ .....मासे .....पक्षे .....तिथौ .....नक्षत्रे .....योगे .....करणे .....वासरे .....राशिस्थिते सूर्ये .....राशिस्थिते चन्द्रे शेषेषु ग्रहेषु यथायथाराशिस्थानस्थितेषु सत्सु एवं ग्रहगुणगणविशिष्टे शुभमुहूर्ते .....गोत्रः सपत्नीकः .....शर्मा/वर्मा/गुप्तोऽहं ममास्य बालस्य करिष्यमाणनिष्क्रमणकर्मणि सर्वारिष्टनिवृत्तये जले दिगीशानां दिशां चन्द्रस्य अर्कस्य वासुदेवस्य गगनस्य च पूर्वांगत्वेन पूजनं करिष्ये।** ऐसा कहकर संकल्प-जल छोड़ दे।

दिशाओं तथा दिग्देवता आदिका स्थापन-पूजन—

किसी पवित्र पात्रमें जल लेकर सामने रख ले और निम्न मन्त्रोंसे उस जलमें दिगीशादि देवोंपर अक्षत छोड़ते हुए उनका आवाहन एवं प्रतिष्ठापन करे—

‘ॐ भूर्भुवः स्वः जले दिगीशादिदेवा गगनपर्यन्ता आगच्छन्तु तिष्ठन्तु सुप्रतिष्ठिता वरदा भवन्तु।’

पूजन—

तदनन्तर **ॐ दिगीशेभ्यो नमः, ॐ दिग्भ्यो नमः, ॐ चन्द्राय नमः, ॐ अर्काय नमः, ॐ वासुदेवाय नमः, ॐ गगनाय नमः**—इन नाममन्त्रोंसे ध्यान करके इन्हीं नाममन्त्रोंद्वारा गन्धाक्षत, पुष्प आदि उपचारोंसे जलमें उनका पूजन करे।

प्रार्थना—

हाथमें फूल लेकर निम्न मन्त्रसे देवोंसे बालककी रक्षाकी प्रार्थना करे—

ॐ चन्द्रार्कयोर्दिगीशानां दिशां च गगनस्य च।
निक्षेपार्थमिमं दद्मि ते मे रक्षन्तु बालकम्॥
अप्रमत्तं प्रमत्तं वा दिवा रात्रावथापि वा।
रक्षन्तु सततं सर्वे देवाः शक्रपुरोगमाः॥

सूर्यपूजन—

तदनन्तर बालकको सूर्यदर्शन करानेके लिये माता बालकको गोदमें लेकर बाहर उस स्थानपर आ जाय, जहाँसे सूर्यदर्शन हो सके। उस समय शंख-घण्टानादपूर्वक मंगल वाद्योंकी ध्वनि तथा स्वस्तिमंगलपाठका उच्चारण होता रहे। तदनन्तर पिता तथा बालककी माता पुत्रको गोदमें लेकर यथास्थान शुभ आसनपर बैठ जायँ और किसी ताम्रपात्रमें जल, गन्धादि छोड़कर उसमें भगवान् सूर्यका आवाहन तथा प्रतिष्ठा करें। तदनन्तर निम्न मन्त्रसे हाथमें रक्त पुष्पों तथा अक्षतोंद्वारा भगवान् सूर्यका ध्यान करें—

ॐ पद्मासनः पद्मकरो द्विबाहुः पद्मद्युतिः सप्ततुरङ्गवाहः।
दिवाकरो लोकगुरुः किरीटी मयि प्रसादं विदधातु देवः॥

हाथमें लाल पुष्पाक्षत लेकर '**ॐ आदित्याय नमः**' इस मन्त्रसे पुष्पादि जलमें छोड़ दे। सूर्यका यथालब्धोपचार पूजन करे और निम्न मन्त्रसे प्रार्थना करे—

ॐ आ कृष्णेन रजसा वर्तमानो निवेशयन्नमृतं मर्त्यञ्च। हिरण्ययेन सविता रथेना देवो याति भुवनानि पश्यन्॥

सूर्यार्घ्यदान—

ताम्रके पात्रमें फल, पुष्पयुक्त जल लेकर सूर्यको निम्नलिखित मन्त्रसे अर्घ्य देना चाहिये—

एहि सूर्य सहस्त्रांशो तेजोराशे जगत्पते।
अनुकम्पय मां भक्त्या गृहाणार्घ्यं दिवाकर॥

'एषोऽर्घ्यः ब्रह्मस्वरूपिणे श्रीसूर्यनारायणाय नमः।'

सूर्योदीक्षणविधि—

इसके बाद माताकी गोदमें स्थित शिशुको पिता अथवा आचार्य निम्नलिखित मन्त्र बोलते हुए सूर्यका दर्शन कराये—

ॐ तच्चक्षुर्देवहितं पुरस्ताच्छुक्रमुच्चरत्। पश्येम शरदः शतं जीवेम शरदः शतꣳ शृणुयाम शरदः शतं प्र ब्रवाम शरदः शतमदीनाः स्याम शरदः शतं भूयश्च शरदः शतात्।

सूर्यप्रदक्षिणा—

इसके बाद निम्न मन्त्र बोलता हुआ अपने स्थानपर ही चारों ओर तीन बार प्रदक्षिणा करे—

यानि कानि च पापानि जन्मान्तरकृतानि च।
तानि सर्वाणि नश्यन्तु प्रदक्षिण पदे पदे॥

सूर्यप्रणामाञ्जलि—

हाथमें लाल पुष्प, अक्षत लेकर निम्नलिखित मन्त्र बोलता हुआ सूर्यको प्रणाम करे—

ॐ जपाकुसुमसङ्काशं काश्यपेयं महाद्युतिम्।
ध्वान्तारिं सर्वपापघ्नं प्रणतोऽस्मि दिवाकरम्॥

तदनन्तर भूम्युपवेशनकर्म करे—

भूम्युपवेशन

बालकको सूर्यदर्शन करानेके अनन्तर पहली बार भूमिका स्पर्श कराया जाता है। अतः प्रारम्भमें गणेश आदिका स्मरण करके गोमय आदिसे भूमिको लीपकर उसपर मिट्टीसे एक गोल मण्डल बना ले। भूमिकी अक्षत, पुष्पादिसे प्रतिष्ठा कर ले। तदनन्तर निम्न नाम मन्त्रोंसे भूमिदेवी, पृथ्वीका उद्धार करनेवाले भगवान् वराह तथा अपने कुल-देवताका गन्धादि उपचारोंसे पूजन करे—

ॐ पृथिव्यै नमः, ॐ वाराहाय नमः, ॐ कुलदेवतायै नमः।

भूमिप्रार्थना—

तदनन्तर निम्न मन्त्रोंसे बालककी रक्षा तथा दीर्घायुष्यके लिये भूमिदेवीकी प्रार्थना करे—

रक्षैनं वसुधे देवि सदा सर्वगते शुभे।
आयुष्प्रमाणं निखिलं निक्षिपस्व हरिप्रिये॥
अचिरादायुषस्तस्य ये केचित् परिपन्थिनः।
जीवितारोग्यवित्तेषु निर्दहस्वाचिरेण तान्॥
धारिण्यशेषभूतानां मातस्त्वमधिका ह्यसि।
अजरा चाप्रमेया च सर्वभूतनमस्कृते॥
त्वमेवमशेषजगतां प्रतिष्ठा चाश्रयो ह्यसि।
कुमारं पाहि मातस्त्वं ब्रह्मा तदनुमन्यताम्॥*

इस प्रकार भूमिकी प्रार्थनाकर शंखघंटानाद करते हुए बालकको

---

* प्रार्थनाके मन्त्रोंमें कहा गया है—हे पृथ्वीदेवि! आप सर्वत्र व्याप्त रहनेवाली हैं, कल्याण मंगल करनेवाली हैं, आप मेरे इस बालक (बालिका)-की सदा रक्षा करें। हे विष्णुप्रिये! आप इसे दीर्घ आयु प्रदान करें। इसके दीर्घायु होनेमें, इसके जीवित रहनेमें, इसके आरोग्य तथा वैभवके सम्बन्धमें जो भी बाधाएँ हों, उन सबको आप शीघ्र जला डालें, हे माता! आप समस्त प्राणियोंको धारण करनेवाली हैं, सबसे श्रेष्ठ हैं, हे माता! आप मेरे इस कुमारकी रक्षा करें। आपके विधानका विधाता ब्रह्माजी भी अनुमोदन करें।

कुछ क्षणोंके लिये उस पूजित भूमिपर बैठाना चाहिये। कहीं-कहीं भूमिपर चाँदीके रुपयेकी स्थापनाकर उसपर भी बालकके दाहिने पैरका स्पर्श करानेकी परम्परा है।

तदनन्तर ब्राह्मणोंको बालकको आशीर्वाद ग्रहण कराना चाहिये। इसके अनन्तर पुनः घरके भीतर आकर कल्याणी, मंगला, भद्रा, पुण्या, पुण्यमुखी, जया तथा विजया नामवाली इन सात जीवमातृकाओंका नाम-मन्त्रसे पूजनकर उनपर वसोर्धारा (घृतधारा) देनी चाहिये।

दक्षिणा-दान—

इसके बाद आचार्यको दक्षिणा देनी चाहिये और अन्य ब्राह्मणोंको निम्न संकल्पसे भूयसी दक्षिणा प्रदान करनी चाहिये—

ॐ अद्य ......शर्मा/वर्मा/गुप्तोऽहं कृतस्य नामकरण-सूर्याद्यवलोकनपूर्वकनिष्क्रमणसंस्कारस्य साङ्गतासिद्ध्यर्थं न्यूनाति-रिक्तदोषपरिहारार्थं नानानामगोत्रेभ्यो ब्राह्मणेभ्यो भूयसीदक्षिणां विभज्य दातुमुत्सृज्ये। कहकर अन्योंको दक्षिणा प्रदान करे और ब्राह्मण-भोजनका संकल्प करे।

ब्राह्मणभोजनसंकल्प—

ॐ अद्य ......शर्मा/वर्मा/गुप्तोऽहं कृतस्य नामकरणसूर्याद्य-वलोकनपूर्वकनिष्क्रमणसंस्कारस्य साङ्गताप्रतिष्ठासंसिद्ध्यर्थं यथा-संख्याकान् ब्राह्मणान् भोजयिष्ये। संकल्पका जल आदि छोड़ दे और कर्मके अन्तमें ब्राह्मणोंको भोजन कराये।

विसर्जन—

हाथमें पुष्प-अक्षत लेकर निम्नलिखित मन्त्र बोलकर आवाहित देवों तथा अग्निपर अक्षत छोड़कर उनका विसर्जन करे—

यान्तु देवगणाः सर्वे पूजामादाय मामकीम्।
इष्टकामसमृद्ध्यर्थं पुनरागमनाय च॥

भगवत्स्मरण—

हाथमें अक्षत-पुष्प लेकर भगवान्‌का ध्यान करते हुए समस्त कर्म उन्हें समर्पित करे—

ॐ प्रमादात्कुर्वतां कर्म प्रच्यवेताध्वरेषु यत्।
स्मरणादेव तद्विष्णोः सम्पूर्णं स्यादिति श्रुतिः॥
यस्य स्मृत्या च नामोक्त्या तपोयज्ञक्रियादिषु।
न्यूनं सम्पूर्णतां याति सद्यो वन्दे तमच्युतम्॥
यत्पादपङ्कजस्मरणात् यस्य नामजपादपि।
न्यूनं कर्म भवेत् पूर्णं तं वन्दे साम्बमीश्वरम्॥
ॐ विष्णवे नमः। ॐ विष्णवे नमः। ॐ विष्णवे नमः।
ॐ साम्बसदाशिवाय नमः। ॐ साम्बसदाशिवाय नमः।
ॐ साम्बसदाशिवाय नमः।

॥ निष्क्रमणसंस्कारसहित नामकरणसंस्कार पूर्ण हुआ ॥

अन्नप्राशनसंस्कार

अन्नप्राशन-संस्कारका काल तथा उद्देश्य—

उत्पन्न हुए बालकको प्रथम बार सात्त्विक पवित्र मधुरान्न खिलाना (प्राशन कराना) अन्नप्राशन-संस्कार कहलाता है। कब अन्न खिलाना चाहिये, इसकी जिज्ञासामें पारस्करगृह्यसूत्रमें बताया गया है कि बालकके जन्मके छठे मासमें अन्नप्राशन-संस्कार करना चाहिये—'**षष्ठे मासेऽन्नप्राशनम्।**' (१।१९।१)। व्यासस्मृति (१।१८)-में भी यही बात कही गयी है—'**षष्ठे मास्यन्नमश्नीयात्।**' आयुर्वेदके ग्रन्थोंमें भी पहली बार अन्न-सेवन करनेका यही समय दिया गया है—'**षण्मासं चैनमन्नं प्राशयेल्लघु हितं च॥**' (सुश्रुत० शारीर० १०।४९) बालिकाके लिये भी अन्नप्राशनका यही समय कहा गया है।

एक दूसरे आचार्यका कहना है कि बालकका अन्नप्राशन आठवें, दसवें और बारहवें सम मासोंमें अथवा संवत्सर पूर्ण होनेपर तथा बालिकाका पाँचवें, सातवें, नवें, ग्यारहवें विषम मासोंमें अथवा संवत्सर पूर्ण होनेपर करना चाहिये; किंतु महर्षि पारस्करजीका मत अधिक प्रचलित एवं मान्य है। यदि किसी कारणवश बालक-बालिकाका छठे मासमें अन्नप्राशन-संस्कार न हो सके तो द्वितीय मतके अनुसार करना चाहिये।

यदि छठे मासमें ही अन्नप्राशन-संस्कार करना हो तो गुरु तथा शुक्रके अस्त होने तथा मलमासादिका दोष नहीं होता।

इस संस्कारका उद्देश्य क्या है, इसके उत्तरमें बताया गया है कि इस संस्कारके करनेसे माताके आहारसे गर्भावस्थामें मलिनता-भक्षणजन्य जो दोष शिशुपर आ जाता है, वह दूर हो जाता है। अर्थात् गर्भके समय माताके द्वारा जैसा पवित्र-अपवित्र, शीत-उष्ण, मन्दाग्नि

गुणयुक्त आहार लिया जाता है, उसी आहारसे शिशुका पोषण होता है और उस कदन्नका दोष शिशुपर भी आ जाता है, उस दोषकी निवृत्तिके लिये हवनपूर्वक पवित्र हविष्यान्न तथा मधु, घृतयुक्त पायस बालकको दिया जाता है, जिसके ग्रहण करनेसे बालकका शरीर एवं अन्तःकरण दोषरहित होकर पवित्र हो जाता है। इसी बातको स्मृति-संग्रहमें इस प्रकार कहा गया है—

'अन्नप्राशनान्मातृगर्भमलाशादपि शुद्ध्यति।'

अभीतक अर्थात् छठे मासतक शिशुकी शारीरिक संरचना ऐसी रहती है कि वह मातृदुग्ध अथवा गोदुग्धसे ही शरीर-पोषणके लिये सभी आवश्यक तत्त्व प्राप्त कर लेता है, किंतु अब शरीरकी तीव्रतासे वृद्धि होती है और इसके लिये दुग्ध पर्याप्त नहीं होता, अतः उसे अन्न आदि ठोस आहार ग्रहण करनेकी आवश्यकता होती है। दूसरी बात यह है कि प्रायः इसी समय बालकके दाँत भी इसीलिये निकलने लगते हैं ताकि वह ग्रहण किये जानेवाले अन्नको धीरे-धीरे चबानेमें समर्थ हो जाय। यह सब भगवान्‌की अद्भुत लीला है। अन्न-ग्रहण प्रारम्भ करनेसे शिशु अब धीरे-धीरे माताके स्तन्यपर आश्रित न होकर स्वावलम्बी भी होने लगता है। अन्नप्राशनसे शिशुके मुखसे स्तन्यपानजन्य गन्ध भी धीरे-धीरे दूर हो जाती है। इस प्रकार अन्नप्राशन-संस्कारका बड़ा ही वैज्ञानिक रहस्य है। इस संस्कारसे जातककी दैहिक पुष्टि और उसके ओजकी वृद्धि होती है।

अन्नप्राशनका उपांग—जीविकानिर्धारण-विज्ञान

जीविकानिर्धारण-विज्ञान अन्नप्राशन-कर्मका ही अंग माना जाता है। महर्षियोंने बालक बड़ा होकर किस जीविका (वृत्ति)-के द्वारा अपने जीवनका निर्वाह करेगा, इसकी परीक्षाकी विधि भी बतायी है,

जो मनोविज्ञान एवं ज्योतिष आदिके द्वारा भी पुष्ट है। बताया गया है कि अन्नप्राशन पूर्ण होनेके अनन्तर बालकके सामने पुस्तक, शस्त्र, लेखनी, वस्त्र, अन्न तथा शिल्पकी वस्तुएँ रखनी चाहिये। तदनन्तर माताको चाहिये कि अपनी गोदसे बालकको उतारकर उन वस्तुओंको दिखाये और बालक जिस वस्तुको अपनी स्वेच्छासे सर्वप्रथम ग्रहण करे, उसीसे उसकी जीविका चलेगी, यह समझना चाहिये।*

तदनन्तर आवाहित देवताओंका विसर्जनकर ब्राह्मणोंको यथोचित दक्षिणा देकर उन्हें भोजन कराकर बन्धु-बान्धवोंसहित स्वयं भी भोजन करे। इस प्रकारके मांगलिक कृत्योंद्वारा अन्नप्राशन-कर्म सम्पन्न करना चाहिये।

---

* कृतप्राशनमुत्सङ्गाद्धात्री बालं समुत्सृजेत्। कार्यं तस्य परिज्ञानं जीविकाया अनन्तरम्॥
देवताग्रेऽथ विन्यस्य शिल्पभाण्डानि सर्वशः।
शास्त्राणि चैव शस्त्राणि ततः पश्येत्तु लक्षणम्॥
प्रथमं यत्स्पृशेद् बालस्ततो भाण्डं स्वयं तदा। जीविका तस्य बालस्य तेनैवेति भविष्यति॥
(पार०गृ०सू० १।१९।१३ कारिकावचन)

[७] अन्नप्राशनसंस्कार-प्रयोग

ज्योतिर्विद्‌के द्वारा निर्दिष्ट शुभ मुहूर्तमें प्रातःकाल स्नानपूर्वक शुद्ध हो पवित्र धुले हुए सफेद वस्त्र धारणकर आचमन, प्राणायाम करके कुमारका पिता पूर्वमुख शुद्ध आसनपर बैठकर नवीन वस्त्रोंसे अलंकृत बालकसहित पत्नीको अपने दक्षिण भागमें बैठाकर सभी पूजा-सामग्रियोंको यथास्थान रख ले। दीपक प्रज्वलित करे। तदनन्तर अन्नप्राशनसंस्कारके लिये निम्न संकल्प करे।

प्रतिज्ञा-संकल्प—

दाहिने हाथमें जल, अक्षत, पुष्प, द्रव्य, फल लेकर निम्न संकल्प-वाक्य बोले—

ॐ विष्णुर्विष्णुर्विष्णुः श्रीमद्भगवतो महापुरुषस्य विष्णो-राज्ञया प्रवर्तमानस्य ब्रह्मणो द्वितीयपरार्धे श्रीश्वेतवाराहकल्पे वैवस्वतमन्वन्तरे अष्टाविंशतितमे कलियुगे कलिप्रथमचरणे जम्बूद्वीपे भारतवर्षे आर्यावर्तैकदेशे (यदि काशी हो तो **अविमुक्तवाराणसीक्षेत्रे आनन्दवने गौरीमुखे त्रिकण्टकविराजिते महाश्मशाने भगवत्या उत्तरवाहिन्या भागीरथ्या वामभागे**) **....नगरे/ग्रामे/क्षेत्रे षष्टि-संवत्सराणां मध्ये ....संवत्सरे ....अयने ....ऋतौ ....मासे ....पक्षे ....तिथौ ....नक्षत्रे ....योगे ....करणे ....वासरे ....राशिस्थिते सूर्ये ....राशिस्थिते चन्द्रे शेषेषु ग्रहेषु यथायथाराशिस्थानस्थितेषु सत्सु एवं ग्रहगुणगणविशिष्टे शुभमुहूर्ते ....गोत्रः सपत्नीकः ....शर्मा/वर्मा/गुप्तोऽहं ममास्य शिशोर्मातृगर्भमलप्राशनविशुद्ध्यर्थं अन्नाद्यब्रह्मवर्चस्तेजायुर्बलेन्द्रियलक्षणफलसिद्धिपूर्वकबीजगर्भ-समुद्भवैनोनिबर्हणद्वाराश्रीपरमेश्वरप्रीत्यर्थमन्नप्राशनाख्यं कर्म करिष्ये। तदङ्गत्वेन स्वस्तिपुण्याहवाचनं मातृकापूजनं वसोर्धारापूजनमायुष्य-मन्त्रजपं साङ्कल्पिकेन विधिना नान्दीश्राद्धं च करिष्ये। तत्रादौ**

निर्विघ्नतासिद्ध्यर्थं गणेशाम्बिकयोः पूजनं करिष्ये। संकल्प-जल छोड़ दे।

[गणेशपूजनादि कर्म परिशिष्ट पृ०सं० ४१५ के अनुसार सम्पन्न करें।]

वेदीनिर्माण—

पंचांगपूजनके अनन्तर हवन-कार्यके लिये बालू अथवा शुद्ध मिट्टीसे एक हाथ लम्बी-चौड़ी एक वेदी बनाये तथा निम्न विधिसे उसका संस्कार करे—

सर्वप्रथम वेदीके पाँच संस्कार करे—तीन कुशोंके द्वारा दक्षिणसे उत्तरकी ओर वेदीको साफ करे और उन कुशोंको ईशानकोणमें फेंक दे। गायके गोबर तथा जलसे वेदीको लीप दे। स्रुवाके मूलसे वेदीके मध्यभाग में प्रादेशमात्र (अँगूठेसे तर्जनीके बीचकी दूरी) लम्बी तीन रेखाएँ पश्चिमसे पूर्वकी ओर खींचे। रेखा खींचनेका क्रम दक्षिणसे प्रारम्भकर उत्तरकी ओर होना चाहिये। उन खींची गयी तीनों रेखाओंसे उल्लेखन-क्रमसे अनामिका तथा अंगुष्ठके द्वारा थोड़ी-थोड़ी मिट्टी निकालकर बायें हाथमें रखता जाय। बादमें सब मिट्टी दाहिने हाथपर रखकर ईशानकोणकी ओर फेंक दे। जलके छींटोंसे वेदीको सींच दे।

अग्निस्थापन—

किसी कांस्य अथवा ताम्रपात्रमें या नये मिट्टीके पात्र (कसोरे)-में स्थित पवित्र अग्निको वेदीके अग्निकोणमें रखे और इस अग्निमेंसे क्रव्यादांश निकालकर नैर्ऋत्यकोणमें डाल दे। तदनन्तर अग्निपात्रको स्वाभिमुख करते हुए वेदीमें स्थापित करे और उस समय बोले—

ॐ शुचिनामाग्नये सुप्रतिष्ठितो वरदो भव।

तदनन्तर '**ॐ शुचिनामाग्नये नमः**' इस मन्त्रसे गन्धाक्षत-पुष्पसे अग्निकी पूजा करे।

चरुपाक—

धुले हुए चावलोंमें दूध डालकर हवनके लिये पायस (चरु) बना ले।

कुशकण्डिका*

ब्रह्माका वरण करनेके अनन्तर प्रणीतापात्रको जलसे भर दे और उसे कुशोंसे ढककर ब्रह्माका मुख देखते हुए अग्निके उत्तरकी तरफ कुशोंके ऊपर रख दे। कुशपरिस्तरण कर ले। तदनन्तर निम्न रीतिसे पात्रासादन करे।

पात्रासादन—

हवनकार्यमें प्रयोगमें आनेवाली सभी वस्तुओं तथा पात्रोंको पश्चिमसे पूर्वतक उत्तराग्र अथवा अग्निके उत्तरकी ओर पूर्वाग्र रख ले।

अन्नप्राशनकर्ममें प्रयुक्त होनेवाली विशिष्ट वस्तुओं यथा—बालकको प्राशन करानेके लिये मधुर रसोंसे युक्त विविध व्यंजन, मधु, घृत, उद्धरणपात्र, गीता, रामायण आदि पुस्तक, लेखनी, शस्त्र, सुवर्ण, बर्तन आदिको भी यथास्थान रख ले।

पवित्रकका निर्माण तथा प्रोक्षणीपात्रका संस्कार कर ले और घृतको आज्यस्थालीमें निकालकर वेदीके दक्षिणभागमें अग्निपर रख दे। स्रुवाका सम्मार्जन कर ले। घृतपात्र तथा चरुपात्रको यथास्थान रख ले। घृतमें कोई वस्तु आदि पड़ गयी हो तो उसे निकाल दे। ब्रह्माका स्पर्श करते हुए बायें हाथमें उपयमन (सात) कुशोंको लेकर हृदयमें बायाँ हाथ लगाकर तीन समिधाओंको घीमें डुबोकर मनसे प्रजापति-देवताका ध्यान करते हुए खड़े हो मौन होकर अग्निमें डाल दे, तदनन्तर

* कुशकण्डिकाकी पूर्णविधि पृ० ५६ में दी गयी है। जो विस्तार करना चाहते हैं, उसके अनुसार कर सकते हैं। विभिन्न संस्कारोंमें हवनकी अग्निका नाम पृथक्-पृथक् रहता है तथा हवनीय द्रव्य चरु आदि तथा पात्रासादनकी सामग्री भी पृथक्-पृथक् रहती है। इसका निर्देश तत्तद् संस्कारोंके प्रयोगमें किया गया है।

बैठ जाय।

अग्निके ईशानकोणसे ईशानकोणतक प्रदक्षिणक्रमसे जलधारा गिरा दे। तदनन्तर हवन करे।

आघार-आज्यभागसंज्ञक हवन—

इसके बाद निम्न मन्त्र बोलते हुए स्वाहाका उच्चारणकर घृतकी आहुति अग्निमें दे, पुनः स्रुवामें बचे हुए घृतको 'न मम' कहकर प्रोक्षणीपात्रमें छोड़े—

ॐ प्रजापतये स्वाहा, इदं प्रजापतये न मम।

ॐ इन्द्राय स्वाहा, इदमिन्द्राय न मम।

ॐ अग्नये स्वाहा, इदमग्नये न मम।

ॐ सोमाय स्वाहा, इदं सोमाय न मम।

घृताहुति—

निम्नलिखित दो मन्त्रोंसे अनन्वारब्धपूर्वक घृतकी आहुति पूर्वके अनुसार डाले—

१. ॐ देवीं वाचमजनयन्त देवास्तां विश्वरूपाः पशवो वदन्ति। सा नो मन्द्रेषमूर्जं दुहाना धेनुर्वागस्मानुप सुष्टुतैतु स्वाहा। इदं वाचे न मम।

२. (क) ॐ देवीं वाचमजनयन्त देवास्तां विश्वरूपाः पशवो वदन्ति। सा नो मन्द्रेषमूर्जं दुहाना धेनुर्वागस्मानुप सुष्टुतैतु।

(ख) ॐ वाजो नो अद्य प्र सुवाति दानं वाजो देवाँ२ ऋतुभिः कल्पयाति। वाजो हि मा सर्ववीरं जजान विश्वा आशा वाजपतिर्जयेयꣳ स्वाहा। इदं वाचे वाजाय न मम।

चरु-होम—

इसके बाद बने हुए पायस (चरु)-में थोड़ा घृत डाल दे और उस चरुके द्वारा निम्नलिखित मन्त्रोंसे एक-एक आहुतियाँ दे—

१. ॐ प्राणेनान्नमशीय स्वाहा। इदं प्राणाय न मम।

२. ॐ अपानेन गन्धानशीय स्वाहा। इदमपानाय न मम।

३. ॐ चक्षुषा रूपाण्यशीय स्वाहा। इदं चक्षुषे न मम।

४. ॐ श्रोत्रेण यशोऽयशीय स्वाहा। इदं श्रोत्राय न मम।

भूरादि नौ आहुति—

तदनन्तर घृतसे नौ आहुतियाँ दे। प्रत्येक आहुतिके अनन्तर स्रुवामें बचे घृतको प्रोक्षणीपात्रमें डाले—

१-ॐ भूः स्वाहा, इदमग्नये न मम।

२-ॐ भुवः स्वाहा, इदं वायवे न मम।

३-ॐ स्वः स्वाहा, इदं सूर्याय न मम।

४-ॐ त्वं नो अग्ने वरुणस्य विद्वान् देवस्य हेडो अव यासिसीष्ठाः। यजिष्ठो वह्नितमः शोशुचानो विश्वा द्वेषाꣳसि प्र मुमुग्ध्यस्मत्स्वाहा, इदमग्नीवरुणाभ्यां न मम।

५-ॐ स त्वं नो अग्नेऽवमो भवोती नेदिष्ठो अस्या उषसो व्युष्टौ। अव यक्ष्व नो वरुणꣳरराणो वीहि मृडीकꣳ सुहवो न एधि स्वाहा। इदमग्नीवरुणाभ्यां न मम।

६-ॐ अयाश्चाग्नेऽस्यनभिशस्तिपाश्च सत्यमित्त्वमया असि। अया नो यज्ञं वहास्यया नो धेहि भेषजꣳ स्वाहा। इदमग्नये ऽयसे न मम।

७-ॐ ये ते शतं वरुण ये सहस्रं यज्ञियाः पाशा वितता महान्तः। तेभिर्नो ऽअद्य सवितोत विष्णुर्विश्वे मुञ्चन्तु मरुतः स्वर्काः स्वाहा॥ इदं वरुणाय सवित्रे विष्णवे विश्वेभ्यो देवेभ्यो मरुद्भ्यः स्वर्केभ्यश्च न मम।

८-ॐ उदुत्तमं वरुण पाशमस्मदवाधमं वि मध्यमꣳश्रथाय। अथा वयमादित्य व्रते तवानागसो अदितये स्याम स्वाहा॥ इदं

वरुणायादित्यायादितये न मम।

तदनन्तर प्रजापति देवताका ध्यानकर मनमें निम्न मन्त्रका उच्चारणकर आहुति दे—

९-(मौन होकर) **ॐ प्रजापतये स्वाहा, इदं प्रजापतये न मम।**

स्विष्टकृत् आहुति—

इसके बाद घृत और चरु—इन दोनोंसे निम्न मन्त्रसे ब्रह्माद्वारा कुशसे स्पर्श किये जानेकी स्थितिमें स्विष्टकृत् आहुति दे—

ॐ अग्नये स्विष्टकृते स्वाहा, इदमग्नये स्विष्टकृते न मम।

संस्रवप्राशन—

हवन पूर्ण होनेपर प्रोक्षणीपात्रसे घृत दाहिने हाथमें लेकर यत्किंचित् पान करे। हाथ धो ले। फिर आचमन करे।

मार्जनविधि—

इसके बाद निम्नलिखित मन्त्रद्वारा प्रणीतापात्रके जलसे कुशोंके द्वारा अपने सिरपर मार्जन करे—

ॐ सुमित्रिया न आप ओषधयः सन्तु।

इसके बाद निम्न मन्त्रसे जल नीचे छोड़े—

ॐ दुर्मित्रियास्तस्मै सन्तु योऽस्मान् द्वेष्टि यं च वयं द्विष्मः।

पवित्रप्रतिपत्ति—

पवित्रकको अग्निमें छोड़ दे।

पूर्णपात्रदान—

पूर्वमें स्थापित पूर्णपात्रमें द्रव्य-दक्षिणा रखकर निम्न संकल्पकर दक्षिणासहित पूर्णपात्र ब्रह्माको प्रदान करे—

ॐ अद्य अन्नप्राशनहोमकर्मणि कृताकृतावेक्षणरूपब्रह्म-कर्मप्रतिष्ठार्थमिदं वृषनिष्क्रयद्रव्यसहितं पूर्णपात्रं प्रजापतिदैवतं ....गोत्राय ....शर्मणे ब्रह्मणे भवते सम्प्रददे।

ब्रह्मा '**स्वस्ति**' कहकर उस पूर्णपात्रको ग्रहण कर ले।

प्रणीताविमोक—

प्रणीतापात्रको ईशानकोणमें उलटकर रख दे।

मार्जन—

पुनः कुशाद्वारा निम्न मन्त्रसे उलटकर रखे गये प्रणीताके जलसे मार्जन करे—

ॐ आपः शिवाः शिवतमाः शान्ताः शान्ततमास्तास्ते कृण्वन्तु भेषजम्। उपयमन कुशोंको अग्निमें छोड़ दे।

बर्हिहोम—

तदनन्तर पहले बिछाये हुए कुशाओंको जिस क्रमसे बिछाये गये थे, उसी क्रमसे उठाकर घृतमें भिगोये और निम्न मन्त्रसे स्वाहाका उच्चारणकर अग्निमें डाल दे—

ॐ देवा गातुविदो गातुं वित्त्वा गातुमित। मनसस्पत इमं देव यज्ञꣳ स्वाहा वाते धाः स्वाहा।

कुशमें लगी ब्रह्मग्रन्थिको खोल दे।

अन्नप्राशनकी विधि

हवन-कार्य सम्पन्न हो जानेके अनन्तर सभी रसों (भोज्य, लेह्य, चोष्य तथा पेय) तथा सभी प्रकारके अन्नोंको जो घरमें बनाये गये हों, उन सबमेंसे थोड़ा-थोड़ा एक उत्तम पात्रमें परोसकर मधु तथा घृतसे संयुक्तकर भगवान्‌का भोग लगाकर स्नानपूर्वक शुद्ध नवीन वस्त्र पहनाये हुए शिशुको खिलाना चाहिये। माताकी गोदमें अथवा अपनी गोदमें स्थित वस्त्राभूषणोंसे अलंकृत पूर्वाभिमुखस्थित शिशुको मंगलघोषपूर्वक सोनेके चम्मच या चाँदीके चम्मचसे एक बार पहले '**हन्त**' इस मन्त्रसे खिलाना चाहिये। तदनन्तर थोड़ा-थोड़ा पाँच बार मौन होकर अमन्त्रक ही खिलाना चाहिये। इसके बाद स्वच्छ जलसे

शिशुका मुख तीन बार धोना चाहिये।

कन्याका अन्नप्राशन—

कन्याके अन्नप्राशनमें भी उपर्युक्त सभी विधि बिना मन्त्रके करनी चाहिये।

शिशुकी जीविकाका परीक्षण—

इसके बाद शिशुको भूमिपर बैठाकर उसके सामने अस्त्र-शस्त्र, पुस्तक, कलम आदि तथा कलाकी सामग्री रखे। अपनी इच्छासे बालक जिसे स्पर्श करे, वही उसकी जीविकाका साधन होगा, यह समझना चाहिये।*

दक्षिणादान—

अन्नप्राशन हो जानेपर आचार्यको दक्षिणा प्रदानकर हाथमें जल और अक्षत तथा द्रव्य-दक्षिणा लेकर भूयसी दक्षिणाका निम्न संकल्प बोले—

ॐ अद्य कृतस्यान्नप्राशनकर्मणः साङ्गतासिद्ध्यर्थं न्यूना-तिरिक्तदोषपरिहारार्थञ्च नानानामगोत्रेभ्यो ब्राह्मणेभ्यो भूयसीदक्षिणां विभज्य दातुमहमुत्सृज्ये।

विसर्जन—

इसके बाद मातृकाओं, अग्नि तथा आवाहित देवोंपर अक्षत-पुष्प छोड़ते हुए निम्नमन्त्र बोलकर विसर्जन करे—

यान्तु देवगणाः सर्वे पूजामादाय मामकीम्।
इष्टकामसमृद्ध्यर्थं पुनरागमनाय च॥

---

* कृतप्राशनमुत्सङ्गाद्धात्री बालं समुत्सृजेत्। कार्यं तस्य परिज्ञानं जीविकाया अनन्तरम्॥
देवताग्रेऽथ विन्यस्य शिल्पभाण्डानि सर्वशः।
शास्त्राणि चैव शस्त्राणि ततः पश्येत्तु लक्षणम्॥
प्रथमं यत्स्पृशेद्बालस्ततो भाण्डं स्वयं तदा। जीविका तस्य बालस्य तेनैवेति भविष्यति॥
(पार०गृ०सू० १।१९ कारिकावचन)

भगवत्स्मरण—

हाथमें अक्षत-पुष्प लेकर भगवान्‌का ध्यान करते हुए समस्त कर्म उन्हें समर्पित करे—

ॐ प्रमादात्कुर्वतां कर्म प्रच्यवेताध्वरेषु यत्।
स्मरणादेव तद्विष्णोः सम्पूर्णं स्यादिति श्रुतिः॥
यस्य स्मृत्या च नामोक्त्या तपोयज्ञक्रियादिषु।
न्यूनं सम्पूर्णतां याति सद्यो वन्दे तमच्युतम्॥
यत्पादपङ्कजस्मरणात् यस्य नामजपादपि।
न्यूनं कर्म भवेत् पूर्णं तं वन्दे साम्बमीश्वरम्॥

ॐ विष्णवे नमः। ॐ विष्णवे नमः। ॐ विष्णवे नमः।
ॐ साम्बसदाशिवाय नमः। ॐ साम्बसदाशिवाय नमः।
ॐ साम्बसदाशिवाय नमः।

चूडाकरणसंस्कार

चूडाकरणका अभिप्राय और उसका काल—

'**चूडा क्रियते अस्मिन्**'—इस विग्रहके अनुसार चूडाकरण-संस्कारका अभिप्राय है, वह संस्कार जिसमें बालकको चूडा अथवा शिखा धारण करायी जाय। इसको मुण्डन-संस्कार भी कहते हैं। इसमें अनुष्ठेय मुख्य कार्य शिशुका केशमुण्डन है। यह संस्कार बल, आयु एवं तेजकी वृद्धिके लिये किया जानेवाला संस्कार है। मनुजीने इस संस्कारके विषयमें कहा है कि जन्मसे प्रथम या तृतीय वर्षमें बालकका चूडाकर्म करना चाहिये—

चूडाकर्म द्विजातीनां सर्वेषामेव धर्मतः।
प्रथमेऽब्दे तृतीये वा कर्तव्यं श्रुतिचोदनात्॥

(मनुस्मृति २। ३५)

महर्षि पारस्करजीका भी कहना है कि बालकके जन्म होनेके बाद पहले अथवा तीसरे वर्षमें चूडाकर्मसंस्कार करे (पा०गृ०सू० २।१।१-२)। महर्षि आश्वलायन, बृहस्पति एवं नारद आदिका मत है कि यह संस्कार तीसरे, पाँचवें, सातवें, दसवें और ग्यारहवें वर्षमें भी किया जा सकता है। महर्षि याज्ञवल्क्यजीका कथन है कि जिसके यहाँ जैसी कुलकी प्रथा हो, तदनुसार चूडाकर्म करे—'**चूडा कार्या यथाकुलम्।**' कुलाचारके अनुसार कहीं-कहीं पाँचवें वर्षमें अथवा यज्ञोपवीत-संस्कारके साथ भी चूडाकरण करनेकी परम्परा है।

चूडाकरणसंस्कारकी उपयोगिता और वैज्ञानिकता—

चूडाकरणसंस्कारमें मुख्य रूपसे गर्भकालीन केशोंका कर्तन करके शिखा रखी जाती है, शिखा क्यों रखी जाती है और इसकी क्या उपयोगिता है, इसके सम्बन्धमें महर्षियोंने बहुत बातें बतायी हैं, संक्षेपमें कुछ बातें यहाँ दी जा रही हैं—

महर्षि कात्यायनका वचन है—

सदोपवीतिना भाव्यं सदा बद्धशिखेन च।
विशिखो व्युपवीतश्च यत् करोति न तत्कृतम्॥

अर्थात् द्विजोंको सदा यज्ञोपवीत धारण करना चाहिये और सदा शिखामें ग्रन्थि लगाये रखनी चाहिये। शिखा तथा यज्ञोपवीतके बिना वह जो कर्म करता है, वह निष्फल होता है।

स्नान, दान, जप, होम, सन्ध्या, देवपूजन आदि समस्त नित्य-नैमित्तिक कर्मोंमें शिखामें ग्रन्थि लगी होनी चाहिये—

स्नाने दाने जपे होमे सन्ध्यायां देवतार्चने।
शिखाग्रन्थिं सदा कुर्यादित्येतन्मनुरब्रवीत्॥

यदि रोग या वृद्धावस्थाके कारण शिखास्थानके बाल गिर गये हों तो उस स्थानपर तिल, कुशपत्र, दूर्वा या चावल रखनेका विधान है।

शिखा तेजको बढ़ाती है, दीर्घ आयु तथा बलवर्धक भी है—'**दीर्घायुत्वाय बलाय वर्चसे शिखायै वषट्।**' इसीलिये जपादि एवं पाठादिके पूर्व शिखाका स्पर्श करके न्यास किया जाता है। शिखा हमारी ज्ञानशक्तिको बढ़ाती है और हमें चैतन्यता प्रदान करती है।

शिखा सिरमें जिस स्थानपर रखी जाती है, वह स्थान सहस्रारचक्रका केन्द्र है। शिखाके स्थानके नीचे बुद्धिका चक्र है और इसीके पास ब्रह्मरन्ध्र है। बुद्धिचक्र एवं ब्रह्मरन्ध्रके ऊपर सहस्रदलकमलमें अमृतरूपी ब्रह्मका अधिष्ठान है। जब हम चिन्तन, मनन आदि करते हैं या ध्यान करते हैं तब इस ध्यानसे उत्पन्न अमृततत्त्व सहस्रदलकर्णिकामें प्रविष्ट होकर सिरसे बाहर निकलनेका प्रयत्न करता है। इस समय यदि शिखामें ग्रन्थि लगी हो तो वह अमृततत्त्व नहीं निकलने पाता, अतः शिखास्थानका बहुत महत्त्व है।

शरीरविज्ञानके अनुसार शिखाके स्थानपर 'पिट्यूटरी' नामक एक विशेष ग्रन्थि होती है। इस ग्रन्थिसे शरीरमें एक विशेष रसका संचार होता है, जो शरीरको हृष्ट-पुष्ट तथा मस्तिष्कको विकसित करता है, अतः इस ग्रन्थिकी सुरक्षाके लिये शिखास्थानपर बाल बढ़ाना आवश्यक है।

शिखास्थान शरीरके मर्मस्थलोंमेंसे प्रधान स्थान है। यहाँ चोट लगनेपर मृत्यु भी हो जाती है— '**मस्तकाभ्यन्तरोपरिष्टात् सिरा-सन्धिसन्निपातो रोमावर्तोऽधिपतिः, तत्रापि सद्य एव मरणम्**' (सुश्रुतसंहिता ३।६।२७)

अतः लम्बी और मोटी शिखा मर्मस्थलकी रक्षा करती है।

मनुष्यके दीर्घ आयु, बल और तेजके उन्नयनमें शिखाकी भूमिका सभीने स्वीकारी है। यह ज्ञानशक्तिको चैतन्य रखते हुए उसे सदा अभिवृद्धिकी ओर अग्रसर रखती है।

शिखा सूर्यकिरणोंसे प्राप्त प्रकाशिनी शक्तिको आकर्षित करने एवं सहस्रदलकर्णिकातक पहुँचानेमें सम्प्रेषकका कार्य करती है। शिखा रखने एवं इसके नियमोंके अनुशीलनसे सद्बुद्धि, सद्वृत्ति, शुचिता एवं सद्विचारमें वृद्धि होती है।

इस संस्कारमें शिखाको छोड़कर अन्य बालोंको उतार देनेसे त्वचा-सम्बन्धी रोगोंका प्रभाव नहीं होने पाता और जो नये बाल निकलते हैं, वे झड़ते नहीं, बद्धमूल हो जाते हैं। मुण्डन करनेके अनन्तर सिरमें मलाई आदिकी मालिशका विधान है, जिससे मस्तिष्कके मज्जा-तन्तुओंको स्निग्धता, कोमलता, शीतलता तथा शक्ति प्राप्त होती है, जो आगे चलकर बुद्धिके विकासमें सहायक होती है। सुस्वास्थ्यके लिये मस्तिष्कका शीतल रहना उत्तम है।

माताके गर्भसे आये बाल अशुद्ध होते हैं और वे झड़ते रहते हैं,

उनसे शिशुके तेजकी वृद्धि ठीकसे नहीं हो पाती, इसलिये उन केशोंको मुँडवाकर शिशुकी शिखा रखी जाती है, जिससे वह कर्मके योग्य हो सके। प्रायः छठे माससे दाँत निकलने लगते हैं और तीन वर्षमें जाकर प्रायः पूर्ण हो जाते हैं। इस समय बालकके मस्तिष्कमें गरमी रहती है और अनेक प्रकारके सिरमें रोग होते हैं, अतः रोगोंसे बचानेके लिये मुण्डन और सिरकी उष्णताको कम करनेके लिये मुण्डनके अनन्तर दही-माखन आदि लगाया जाता है। केशकर्तन पौष्टिक, आयुष्यवर्धक एवं मलरूप पापका निवारक माना गया है। इसी कारण प्रायः पहले और तीसरे वर्षमें मुण्डन-संस्कार किया जाता है। समन्त्रक चूड़ाकरणसे आयुवृद्धि और जठराग्निसन्दीपन होता है; बल, बुद्धि तथा सौभाग्यबल बढ़ता है। चूडाकरण हिन्दुत्वको बाह्य रूपमें प्रकट करनेवाला विशेष संस्कार है, जैसे राजाका चिह्न ध्वज है, वैसे ही हिन्दुत्वका चिह्न शिखा (चोटी) है।

चरकसंहितामें बताया गया है कि केश, श्मश्रु और नख आदिके कटानेसे शरीर पुष्ट होता है, शक्तिमें वृद्धि होती है, आयु दीर्घ होती है, पापका अपनोदन होता है और सौन्दर्यकी वृद्धि होती है—

पौष्टिकं वृष्यमायुष्यं शुचि रूपविराजनम्।
केशश्मश्रुनखादीनां कल्पनं सम्प्रसाधनम्॥

(चरक० सूत्रस्थान ५। ९९)

[८] चूडाकरणसंस्कार-प्रयोग

इस संस्कारमें बालकके सिरका मुण्डनकर शिखा (चूड़ा) रखी जाती है, इसलिये यह चूडाकरण अथवा मुण्डनसंस्कार कहलाता है। इसमें सर्वप्रथम बालकके केशोंका अधिवासन सम्पन्न कर लेना चाहिये।

केशाधिवासन—

स्नानादिसे निवृत्त चूडाकरण किये जानेवाले बालक (माणवक)-के सिरके बालोंको संकल्पित जलसे विधिपूर्वक भिगोकर तथा जूड़ा बनाकर कपड़ेसे बाँधकर आच्छादित करनेका कर्म अधिवासन कहलाता है। यह कर्म प्राय: चूडाकरणके पहले दिन रात्रिमें किया जाता है, यदि पहले दिन सम्भव न हो तो चूडाकरणके दिन भी प्रारम्भमें किया जा सकता है। इसमें नये पीले वस्त्रके द्वादश खण्ड करके प्रत्येकमें गन्ध, अक्षत, दूर्वा, पीली सरसों तथा हल्दी (गाँठवाली) छोड़कर त्रिगुणित सूतके द्वारा बाँधकर बारह पोटलिका बना लेनी चाहिये। इन पोटलिकाओंको **'गणाधिपं नमस्कृत्य'*** इत्यादि मन्त्रोंसे प्रतिष्ठित करके एक पोटलिकाके द्वारा बालककी शिखाके स्थानवाले बालोंको दृढ़तापूर्वक बाँध लेना चाहिये। तदनन्तर बालकके दाहिनी ओरके बालोंकी तीन जुटिका बनाकर एक-एक पोटलिकासे उन्हें बाँध देना चाहिये, इसी प्रकार सिरके पीछे तथा फिर बायीं ओर भी तीन-तीन जुटिका बनाकर उन्हें एक-एक पोटलीसे बाँध देना चाहिये। इस प्रकार बालकके सिरके बालोंके दस जूड़े बन जायँगे। इस प्रकार जूड़ा बनाकर किसी कपड़े अथवा पगड़ीद्वारा बालकके सिरको अच्छी प्रकारसे ढँक देना चाहिये। शेष दो पोटलिकामेंसे एक छूरेमें तथा एक कैंचीमें बाँध देना चाहिये।

---

* देखें पृ० २९९।

चूडाकरणके दिन बालकसहित पिता तथा माता दोनों स्नानादिसे निवृत्त हो धुले हुए नवीन वस्त्रोंको धारणकर आसनपर पूर्वाभिमुख बैठ जायँ। पिता आचमन, प्राणायाम आदि करके सर्वप्रथम चूडाकरणसंस्कारके लिये दाहिने हाथमें जलादि लेकर निम्न संकल्प करे—

प्रतिज्ञा-संकल्प—

ॐ विष्णुर्विष्णुर्विष्णुः श्रीमद्भगवतो महापुरुषस्य विष्णो-राज्ञया प्रवर्तमानस्य ब्रह्मणो द्वितीयपरार्धे श्रीश्वेतवाराहकल्पे वैवस्वतमन्वन्तरे अष्टाविंशतितमे कलियुगे कलिप्रथमचरणे जम्बूद्वीपे भारतवर्षे आर्यावर्तैकदेशे (यदि काशी हो तो **अविमुक्तवाराणसीक्षेत्रे आनन्दवने गौरीमुखे त्रिकण्टकविराजिते महाश्मशाने भगवत्या उत्तरवाहिन्या भागीरथ्या वामभागे**) **.....नगरे/ग्रामे/क्षेत्रे षष्टिसंवत्सराणां मध्ये .....संवत्सरे .....अयने .....ऋतौ .....मासे .....पक्षे .....तिथौ .....नक्षत्रे .....योगे .....करणे .....वासरे .....राशिस्थिते सूर्ये .....राशिस्थिते चन्द्रे शेषेषु ग्रहेषु यथायथाराशिस्थानस्थितेषु सत्सु एवं ग्रहगुणगणविशिष्टे शुभमुहूर्ते .....गोत्रः सपत्नीकः .....शर्मा/वर्मा/गुप्तोऽहं .....नाम्नः अस्य कुमारस्य बीजगर्भसमुद्भवै-नोनिबर्हणायुर्वर्चोऽभिवृद्धिद्वारा श्रीपरमेश्वरप्रीत्यर्थं चूडाकरणसंस्कारं करिष्ये। तदङ्गत्वेन स्वस्तिपुण्याहवाचनं मातृकापूजनं वसोर्धारापूजन-मायुष्यमन्त्रजपं साङ्कल्पिकेन विधिना नान्दीश्राद्धं च करिष्ये। तत्रादौ कर्मणः निर्विघ्नतासिद्ध्यर्थं गणेशाम्बिकयोः पूजनं करिष्ये।** हाथका संकल्पादि जल छोड़ दे।

[गणेशाम्बिकादिपूजनकर्म परिशिष्ट पृ०सं० ४१५ के अनुसार सम्पन्न कर ले।]

ब्राह्मणभोजनका संकल्प—

तदनन्तर तीन ब्राह्मण भोजन करानेके लिये दाहिने हाथमें जल,

अक्षत, द्रव्य लेकर निम्न वाक्यको पढ़ते हुए संकल्प करे—

ॐ अद्य ……गोत्रः ……शर्मा/वर्मा/गुप्तोऽहमस्य कुमारस्य चूडाकरणसंस्कारपूर्वाङ्गतया विहितान् त्रीन् ब्राह्मणान् भोजयिष्ये।

ब्राह्मणोंको भोजन कराये अथवा निष्क्रयद्रव्य प्रदान करे।

वेदीनिर्माण—

पंचांगपूजनके अनन्तर हवन-कार्यके लिये बालू अथवा शुद्ध मिट्टीसे एक हाथ लम्बी-चौड़ी एक वेदी बनाये तथा उसका संस्कार करे।

सर्वप्रथम वेदीके पाँच संस्कार करे—तीन कुशोंके द्वारा दक्षिणसे उत्तरकी ओर वेदीको साफ करे और उन कुशोंको ईशानकोणमें फेंक दे। गायके गोबर तथा जलसे वेदीको लीप दे। स्रुवाके मूलसे वेदीके मध्यभागमें प्रादेशमात्र (अँगूठेसे तर्जनीके बीचकी दूरी) लम्बी तीन रेखाएँ पश्चिमसे पूर्वकी ओर खींचे। रेखा खींचनेका क्रम दक्षिणसे प्रारम्भकर उत्तरकी ओर होना चाहिये। उन खींची गयी तीनों रेखाओंसे उल्लेखन-क्रमसे अनामिका तथा अंगुष्ठके द्वारा थोड़ी-थोड़ी मिट्टी निकालकर बायें हाथमें रखता जाय। बादमें सब मिट्टी दाहिने हाथपर रखकर ईशानकोणकी ओर फेंक दे। जलके छींटोंसे वेदीको सींच दे।

अग्निस्थापन—

किसी कांस्य अथवा ताम्रपात्रमें या नये मिट्टीके पात्र (कसोरे)-में स्थित पवित्र अग्निको वेदीके अग्निकोणमें रखे और इस अग्निमेंसे क्रव्यादांश निकालकर नैर्ऋत्यकोणमें डाल दे। तदनन्तर अग्निपात्रको स्वाभिमुख करते हुए वेदीमें स्थापित करे और उस समय बोले—

ॐ सभ्यनामाग्नये सुप्रतिष्ठितो वरदो भव।

तदनन्तर '**ॐ सभ्यनामाग्नये नमः**' इस मन्त्रसे गन्धाक्षतपुष्पसे अग्निकी पूजा करे।

कुशकण्डिका *

ब्रह्माका वरण करनेके अनन्तर प्रणीतापात्रको जलसे भर दे और उसे कुशोंसे ढककर ब्रह्माका मुख देखते हुए अग्निके उत्तरकी तरफ कुशोंके ऊपर रख दे। कुशपरिस्तरण कर ले। तदनन्तर निम्न रीतिसे पात्रासादन करे।

पात्रासादन—

हवनकार्यमें प्रयोगमें आनेवाली सभी वस्तुओं तथा पात्रोंको पश्चिमसे पूर्वतक उत्तराग्र अथवा अग्निसे उत्तरकी ओर पूर्वाग्र रख ले।

चूडाकरणकी विशेष सामग्री—

चूडाकरणमें प्रयुक्त होनेवाली विशिष्ट वस्तुओं यथा—शीतल जल, उष्ण जल, मक्खन, दही अथवा घृतका पिण्ड (मुण्डनके अनन्तर सिरमें लगानेके लिये), त्र्येणी—शल्लकी—साहीका काँटा (बनाये गये बालोंके जूड़ेको सुलझानेके लिये), २७ हरित कुश, ताँबेसे शोधित लोहेका छुरा (बालोंको काटनेके लिये), बैलके गोबरका पिण्ड (कटे हुए बालोंको रखनेके लिये) यथास्थान रख ले। कुशल नाईको भी बैठा ले।

पवित्रकका निर्माण तथा प्रोक्षणीपात्रका संस्कार कर ले और घृतको आज्यस्थालीमें निकालकर वेदीके दक्षिणभागमें अग्निपर रख दे। स्रुवाका सम्मार्जन कर ले। घृतपात्रको यथास्थान रख ले। घृतमें कोई वस्तु आदि पड़ गयी हो तो उसे निकाल दे। ब्रह्माका स्पर्श करते हुए बायें हाथमें उपयमन (सात) कुशोंको लेकर हृदयमें बायाँ हाथ लगाकर तीन समिधाओंको घीमें डुबोकर मनसे प्रजापतिदेवताका ध्यान

* कुशकण्डिकाकी पूर्णविधि पृ० ५६ में दी गयी है। जो विस्तार करना चाहते हैं, उसके अनुसार कर सकते हैं। विभिन्न संस्कारोंमें हवनकी अग्निका नाम पृथक्-पृथक् रहता है तथा हवनीय द्रव्य चरु आदि तथा पात्रासादनकी सामग्री भी पृथक्-पृथक् रहती है। इसका निर्देश तत्तद् संस्कारोंके प्रयोगमें किया गया है।

करते हुए खड़े हो मौन होकर अग्निमें डाल दे, तदनन्तर बैठ जाय।

अग्निके ईशानकोणसे ईशानकोणतक प्रदक्षिणक्रमसे जलधारा गिरा दे। तदनन्तर हवन करे।

आघार-आज्यभागसंज्ञकहवन—

इसके बाद निम्न मन्त्र बोलते हुए स्वाहाका उच्चारणकर घृतकी आहुति अग्निमें दे, स्रुवामें बचे हुए घृतको **'न मम'** कहकर प्रोक्षणी-पात्रमें छोड़े—

ॐ प्रजापतये स्वाहा, इदं प्रजापतये न मम।

ॐ इन्द्राय स्वाहा, इदमिन्द्राय न मम।

ॐ अग्नये स्वाहा, इदमग्नये न मम।

ॐ सोमाय स्वाहा, इदं सोमाय न मम।

भूरादि नौ आहुति (प्रायश्चित्तहोम)—

पुनः घृतद्वारा निम्न आहुतियाँ प्रदान करे—

१-ॐ भूः स्वाहा, इदमग्नये न मम।

२-ॐ भुवः स्वाहा, इदं वायवे न मम।

३-ॐ स्वः स्वाहा, इदं सूर्याय न मम।

४-ॐ त्वं नो अग्ने वरुणस्य विद्वान् देवस्य हेडो अव यासिसीष्ठाः। यजिष्ठो वह्नितमः शोशुचानो विश्वा द्वेषाᳬसि प्र मुमुग्ध्यस्मत्स्वाहा, इदमग्नीवरुणाभ्यां न मम।

५-ॐ स त्वं नो अग्नेऽवमो भवोती नेदिष्ठो अस्या उषसो व्युष्टौ। अव यक्ष्व नो वरुणᳬरराणो वीहि मृडीकᳬ सुहवो न एधि स्वाहा। इदमग्नीवरुणाभ्यां न मम।

६-ॐ अयाश्चाग्नेऽस्यनभिशस्तिपाश्च सत्यमित्त्वमया असि। अया नो यज्ञं वहास्यया नो धेहि भेषजᳬ स्वाहा। इदमग्नये ऽयसे न मम।

७-ॐ ये ते शतं वरुण ये सहस्त्रं यज्ञिया: पाशा वितता महान्त:। तेभिर्नो ऽअद्य सवितोत विष्णुर्विश्वे मुञ्चन्तु मरुत: स्वर्का: स्वाहा॥ इदं वरुणाय सवित्रे विष्णवे विश्वेभ्यो देवेभ्यो मरुद्भ्य: स्वर्केभ्यश्च न मम।

८-ॐ उदुत्तमं वरुण पाशमस्मदवाधमं वि मध्यमꣳश्रथाय। अथा वयमादित्य व्रते तवानागसो अदितये स्याम स्वाहा॥ इदं वरुणायादित्यायादितये न मम।

तदनन्तर प्रजापति देवताका ध्यानकर मनमें निम्न मन्त्रका उच्चारणकर आहुति दे—

९-(मौन होकर) **ॐ प्रजापतये स्वाहा, इदं प्रजापतये न मम।**

स्विष्टकृत् आहुति—

इसके बाद ब्रह्माद्वारा कुशसे स्पर्श किये जाते हुए निम्न मन्त्रसे घृतद्वारा स्विष्टकृत् आहुति दे—

ॐ अग्नये स्विष्टकृते स्वाहा, इदमग्नये स्विष्टकृते न मम।

संस्त्रवप्राशन—

हवन पूर्ण होनेपर प्रोक्षणीपात्रसे घृत दाहिने हाथमें लेकर थोड़ा प्राशन करना चाहिये, फिर हाथ धो ले। शुद्ध जलसे आचमन कर ले।

मार्जन—

पवित्र कुशासे प्रणीतापात्रके जलसे निम्न मन्त्र बोलते हुए मार्जन करे—

ॐ सुमित्रिया न आप ओषधय: सन्तु।

इसके बाद निम्न मन्त्रसे जल नीचे छोड़े—

ॐ दुर्मित्रियास्तस्मै सन्तु योऽस्मान् द्वेष्टि यं च वयं द्विष्म:।

पवित्रप्रतिपत्ति—

पवित्रकको अग्निमें छोड़ दे।

पूर्णपात्रदान—

ॐ अद्य कृतैतच्चूडाकरणहोमकर्मणि कृताकृतावेक्षणरूप-

ब्रह्मकर्मप्रतिष्ठार्थमिदं पूर्णपात्रं सदक्षिणाकं प्रजापतिदैवतं ....गोत्राय ....शर्मणे ब्रह्मणे भवन्तमहं सम्प्रददे। ऐसा कहकर संकल्पजलसहित पूर्णपात्र ब्रह्माको दे दे।

ब्रह्मा कहे—**ॐ स्वस्ति।**

प्रणीताविमोक—

इसके बाद प्रणीतापात्रको ईशानकोणमें उलट दे।

मार्जन—

निम्न मन्त्रसे उपयमन कुशोंद्वारा उलटकर रखे गये प्रणीताके जलसे अपने मस्तकपर मार्जन करे—

ॐ आपः शिवाः शिवतमाः शान्ताः शान्ततमाभिस्तास्ते कृण्वन्तु भेषजम्।

उपयमन कुशोंको अग्निमें छोड़ दे।

बर्हिहोम—

कुशकण्डिकामें जिस क्रमसे कुश बिछाये गये थे, उसी क्रमसे उन कुशोंको उठाये और फिर उनको घृतमें भिगोकर निम्न मन्त्र बोलते हुए अग्निमें डाल दे—

ॐ देवा गातुविदो गातुं वित्त्वा गातुमित। मनसस्पत इमं देव यज्ञꣳ स्वाहा वाते धाः स्वाहा।

कुशमें लगी ब्रह्मग्रन्थिको खोल दे।

चूडाकरणकी मुख्यविधि

हवनकर्म पूर्ण करके चूडाकरणकी मुख्य क्रिया निम्न रीतिसे सम्पन्न करनी चाहिये—

सर्वप्रथम बालकके काटे जानेवाले केशोंका संस्कार करनेके लिये जलको शोधित करे।

पूर्वस्थापित शीतल जलको गरम जलमें निम्नलिखित मन्त्र बोलते हुए मिलाये—

ॐ उष्णेन वाय उदकेनेह्यदिते केशान् वप।

पुनः मौन होकर उस जलमें थोड़ा मट्ठा डालकर पूर्व स्थापित घृत, दही या मक्खनके पिण्डमेंसे भी थोड़ा पिण्ड बनाकर जलमें डाल दे।

(क) दाहिने भागका केशसंस्कार

केशोंका उन्दन (भिगोना)—

तदनन्तर उत्तरकी ओर मुख किया हुआ बालकका पिता अपने वामभागमें बैठी हुई भार्याके दक्षिण भागमें स्थित पूर्वाभिमुख बालकके दाहिने भागमें बाँधी हुई तीनों जूटिकाओंमेंसे दक्षिण तरफवाली पहली जूटिकाको निम्न मन्त्र पढ़ते हुए शीतोदक, उष्णोदक, मट्ठा और दधिमिश्रित जलसे भिंगोये—

ॐ सवित्रा प्रसूता दैव्या आप उन्दन्तु ते तनूं दीर्घायुत्वाय वर्चसे।

कुशोंद्वारा बन्धन—

इसके बाद दक्षिण तरफकी पहली जूटिका (जूड़े)-को साहीके काँटेसे सुलझा ले। पूर्व स्थापित सत्ताईस कुशोंमेंसे तीन कुश लेकर उनके अग्रभागको पहली जूटिकाके साथ लगाकर (कुशका मूल भाग ऊपर करते हुए) निम्न मन्त्रसे बाँध दे—

ॐ ओषधे त्रायस्व स्वधिते मैनꣳ हिꣳसीः।

उस्तराग्रहण—

इसके बाद कुशयुक्त केशोंको बाँयें हाथसे पकड़कर निम्न मन्त्र बोलकर उस्तरे (छुरे)-को दाहिने हाथमें ग्रहण करे—

शिवो नामासि स्वधितिस्ते पिता नमस्ते अस्तु मा मा हिꣳसीः।

उस्तरेद्वारा बालोंका स्पर्श—

तदनन्तर निम्न मन्त्रसे उस उस्तरेको पहली जूटिकाके बालोंमें

लगाये—

ॐ नि वर्त्तयाम्यायुषेऽन्नाद्याय प्रजननाय रायस्पोषाय सुप्रजास्त्वाय सुवीर्याय।

जूटिकाछेदन—

पुनः निम्नलिखित मन्त्रसे कुशोंसमेत बालोंकी पहली जूटिका (जूड़ा)-को काटे—

ॐ येनावपत्सविता क्षुरेण सोमस्य राज्ञो वरुणस्य विद्वान्। तेन ब्रह्माणो वपतेदमस्यायुष्यं जरदष्टिर्यथाऽसत्।

केशस्थापन—

इसके बाद पिता उन कुशसहित काटे हुए बालोंके अग्रभागको आगेकी ओर करता हुआ शिशुकी माताको दे और माता काँस्यपात्रमें रखे हुए उत्तरकी ओर स्थापित बैलके गोबरपर उन्हें रख दे। पिता कटे हुए केशोंका स्पर्श होनेसे जलका स्पर्श कर ले।

इसके बाद दाहिनी ओरकी दोनों जूटिकाओंका पूर्वोक्त रीतिसे जलद्वारा भिंगोना, साहीके काँटेद्वारा बालोंको सुलझाना, जूड़ेमें कुशोंको बाँधना, बालोंसे उस्तरेका स्पर्श कराना तथा बालोंको काटना और उन्हें गोमयपिण्डपर रखना आदि सभी कार्य बिना मन्त्र पढ़े (अमन्त्रक) पूर्ववत् सम्पन्न करे।

(ख) पिछले भागका केशसंस्कार

इसके बाद पिछले भागकी जूटिकाका संस्कार निम्न मन्त्रोंसे करे।

केशोंका उन्दन—

सर्वप्रथम पिछले भागकी जूटिकामेंसे दाहिनी ओरकी पहली जूटिकाको निम्न मन्त्रसे भिंगोये—

ॐ सवित्रा प्रसूता दैव्या आप उन्दन्तु ते तनूं दीर्घायुत्वाय वर्चसे।

कुशोंद्वारा बन्धन—

तदनन्तर केशोंको बिना मन्त्रके साहीके काँटेसे अलग-अलग करके पूर्वोक्त रीतिसे तीन कुशोंको निम्न मन्त्रसे जूटिकामें बाँधे—

ॐ ओषधे त्रायस्व स्वधिते मैन ँ हि ँ सीः।

उस्तराग्रहण—

निम्न मन्त्रसे ताँबेसे शोधित लोहेका छुरा हाथमें ग्रहण करे—

ॐ शिवो नामाऽसि स्वधितिस्ते पिता नमस्ते अस्तु मा मा हि ँ सीः।

उस्तरेद्वारा बालोंका स्पर्श—

छुरेको निम्न मन्त्रसे केशोंमें लगाये—

ॐ नि वर्त्तयाम्यायुषेऽन्नाद्याय प्रजननाय रायस्पोषाय सुप्रजास्त्वाय सुवीर्याय।

जूटिकाछेदन—

निम्न मन्त्रसे केशोंका वपन (छेदन) करे—

ॐ त्र्यायुषं जमदग्नेः कश्यपस्य त्र्यायुषम्। ॐ यद्देवेषु त्र्यायुषं तन्नोऽस्तु त्र्यायुषम्॥

केशस्थापन—

जलका स्पर्श करे। इस प्रकार पिछले भागकी पहली जूटिकाका छेदन करके उन बालोंको पूर्वकी भाँति माताके द्वारा गोमयपिण्डपर रखवा दे।

तदनन्तर पिछले भागकी बची हुई दो जूटिकाओंकी भी दो बार बिना मन्त्र पढ़े सभी क्रियाएँ करे। अर्थात् केशोंका भिगोना, साहीके काँटोंद्वारा अलग-अलग करना, उसमें कुशोंको बाँधना, छुरेद्वारा स्पर्श करते हुए केशोंको काटकर गोमयपिण्ड (गोबर)-में रखना आदि।

(ग) बायें भागका केशसंस्कार

इसके बाद बायें भागकी तीनों जूटिकाओंका संस्कार करना चाहिये।

केशोंका उन्दन—

सर्वप्रथम दाहिनी ओरकी पहली जूटिकाको निम्न मन्त्रसे जलद्वारा भिंगोये—

ॐ सवित्रा प्रसूता दैव्या आप उन्दन्तु ते तनूं दीर्घायुत्वाय वर्चसे।

कुशोंद्वारा बन्धन—

तदनन्तर साहीके काँटेसे मौन हो बालोंको अलग करे और केशोंके बीचमें निम्न मन्त्रसे पूर्वोक्त रीतिसे तीन कुशोंको बाँधे—

ॐ ओषधे त्रायस्व स्वधिते मैन ँ हि ँ सीः।

उस्तराग्रहण—

निम्न मन्त्रसे छुरेको हाथमें ले—

ॐ शिवो नामाऽसि स्वधितिस्ते पिता नमस्ते अस्तु मा मा हि ँ सीः।

उस्तरेद्वारा बालोंका स्पर्श—

तदनन्तर निम्न मन्त्रसे छुरेको केशोंके मध्यमें लगाये—

ॐ नि वर्त्तयाम्यायुषेऽन्नाद्याय प्रजननाय रायस्पोषाय सुप्रजास्त्वाय सुवीर्याय।

जूटिकाछेदन—

निम्न मन्त्रसे केशोंका छेदन करे—

ॐ येन भूरिश्चरा दिवं ज्योक्च पश्चाद्धि सूर्यम्। तेन ते वपामि ब्रह्मणा जीवातवे जीवनाय सुश्लोक्याय स्वस्तये। तदनन्तर जलका स्पर्श करे।

केशस्थापन—

इसके बाद काटे गये केशोंको पूर्ववत् माताके द्वारा गोमयपिण्डपर

रखवा दे।

इसी प्रकार पुनः बची हुई जूटिकाओंकी कर्तनकी पूरी प्रक्रिया अमन्त्रक करनी चाहिये। अर्थात् केशोंको गीला करना, साहीके काँटेसे अलग करना, केशोंके मध्य तीन कुशा रखना, छुरेको हाथमें लेना, छुरेको केशोंके मध्यमें लगाना, केशोंका छेदन करना, जलस्पर्श करना तथा बालोंको गोमयपिण्डमें रखवाना आदि।

इस प्रकार कुल नौ बार पिता या आचार्य केश–छेदनकी प्रक्रिया पूर्ण करे।

छुरभ्रमण—

इसके बाद सिरके चारों ओर निम्न मन्त्रसे प्रदक्षिण क्रमसे तीन बार छुरेको घुमाये। पहली बार समन्त्रक तथा दो बार अमन्त्रक। पहली बार निम्न मन्त्रसे छुरा घुमाये—

ॐ यत्क्षुरेण मज्जयता सुपेशसा वप्त्वा वा वपति केशाँश्छिन्धि शिरो माऽस्यायुः प्रमोषीः।

नापितको छुरप्रदान—

तदनन्तर पूर्वके घृतादि मिले बचे हुए शीतल और उष्ण जलसे सारे सिरको भिगोकर सुखपूर्वक मुण्डनके लिये निम्न मन्त्र कहकर नापितको छुरा दे दे—

ॐ अक्षण्वन् परिवप।

इसके बाद नापित (नाई) उत्तराभिमुख बैठकर पूर्वाभिमुख बालकके सिरका पूर्वभागसे प्रारम्भकर अथवा उत्तरभागसे आरम्भकर बालोंका मुण्डन करे तथा अपनी कुलपरम्परा या गोत्रके अनुसार (शिखा या चोटी) रखे।

केशस्थापन—

इसके बाद उन सभी काटे गये केशोंको गोमयपिण्डमें रखकर

गोशाला, कीचड़युक्त गड्ढे या नदीके समीपमें गाड़ दे।

इसके बाद स्नानकर शुद्ध होकर बालक माता-पिता, आचार्य आदिको प्रणाम करे। वे सभी बालकको आशीर्वाद प्रदान करें। तदनन्तर कुलाचारके अनुसार उसी दिन जलाशय अथवा कुएँका पूजन भी कर लेना चाहिये।

भस्मधारणविधि—

इसके बाद आसनपर बैठकर स्रुवासे अग्निकी भस्म ले दाहिने हाथकी अनामिका अंगुलीसे उस भस्मको निम्न विधिसे धारण करे।

ॐ त्र्यायुषं जमदग्नेः—कहकर ललाटमें।

ॐ कश्यपस्य त्र्यायुषम्—कहकर ग्रीवामें।

ॐ यद्देवेषु त्र्यायुषम्—कहकर दक्षिण बाहुमूलमें।

ॐ तन्नो अस्तु त्र्यायुषम्—ऐसा कहकर हृदयमें।

पुनः इसी रीतिसे बालकको भी भस्म लगानी चाहिये।

नापितको देय पदार्थ—

क्षौर करनेके बाद नापितको घी और चावल तथा द्रव्य अथवा निष्क्रयद्रव्य देना चाहिये।

आचार्यको गोदान एवं दक्षिणा—

कुमारका पिता दाहिने हाथमें जल-अक्षत लेकर आचार्यको देनेके लिये गोदानका संकल्प करे—

ॐ अद्य ....शर्मा/वर्मा/गुप्तोऽहं कृतस्य चूडाकरणकर्मणः साङ्गतासिद्ध्यर्थं साद्गुण्यार्थं च मनसोद्दिष्टं गोनिष्क्रयभूतं द्रव्यं रजतं चन्द्रदैवतं दक्षिणाद्रव्यं च आचार्याय भवते सम्प्रददे।

आचार्य द्रव्य ग्रहणकर बोले—**ॐ स्वस्ति।**

ब्राह्मणभोजनका संकल्प—

इसके बाद ब्राह्मणभोजन करानेका संकल्प करे—

ॐ अद्य कृतस्य चूडाकरणकर्मणः साङ्गतासिद्ध्यर्थं दश-

संख्याकान् यथासंख्याकान् वा ब्राह्मणान् भोजयिष्ये।

भूयसीदक्षिणा-संकल्प—

इसके बाद भूयसी दक्षिणाका संकल्प करे—

ॐ अद्य कृतस्य चूडाकरणकर्मणः तन्मध्ये न्यूनातिरिक्त-दोषपरिहारार्थं नानानामगोत्रेभ्यो ब्राह्मणेभ्यो यथोत्साहं भूयसीं दक्षिणां विभज्य दातुमहमुत्सृज्ये।

विसर्जन—

इसके बाद आवाहित सभी देवताओंपर अक्षत-पुष्प समर्पितकर निम्न मन्त्रसे विसर्जन करे—

यान्तु देवगणाः सर्वे पूजामादाय मामकीम्।
इष्टकामसमृद्ध्यर्थं पुनरागमनाय च॥

भगवत्स्मरण—

हाथमें अक्षत-पुष्प लेकर भगवान्का ध्यान करते हुए समस्त कर्म उन्हें समर्पित करे—

ॐ प्रमादात्कुर्वतां कर्म प्रच्यवेताध्वरेषु यत्।
स्मरणादेव तद्विष्णोः सम्पूर्णं स्यादिति श्रुतिः॥
यस्य स्मृत्या च नामोक्त्या तपोयज्ञक्रियादिषु।
न्यूनं सम्पूर्णतां याति सद्यो वन्दे तमच्युतम्॥
यत्पादपङ्कजस्मरणात् यस्य नामजपादपि।
न्यूनं कर्म भवेत् पूर्णं तं वन्दे साम्बमीश्वरम्॥

ॐ विष्णवे नमः। ॐ विष्णवे नमः। ॐ विष्णवे नमः।
ॐ साम्बसदाशिवाय नमः। ॐ साम्बसदाशिवाय नमः।
ॐ साम्बसदाशिवाय नमः।

इसी प्रकार कन्याका भी चूडाकरण-संस्कार अमन्त्रक करना चाहिये।

अक्षरारम्भसंस्कार

अक्षरारम्भ संस्कार की महिमा—

अक्षराम्भसंस्कार क्षर (जीव)-का अक्षर (परमात्मा)-से सम्बन्ध करानेवाला संस्कार है, इस दृष्टिसे इस संस्कारकी मानव-जीवनमें महती भूमिका है। गीतामें स्वयं भगवान् अक्षरकी महिमा बताते हुए कहते हैं कि अक्षरोंमें 'अ'कार मैं ही हूँ—**अक्षराणामकारोऽस्मि।** इसी प्रकार '**गिरामस्म्येकमक्षरम्**' कहकर उन्होंने अपनेको ओंकार अक्षर बताया है। इतना ही नहीं उन्होंने अक्षरकी महिमाका ख्यापन करते हुए कहा—'**अक्षरं ब्रह्म परमं**' अर्थात् परम अक्षर ही परम ब्रह्म परमात्मा है, जो ओंकार-पदसे अभिव्यक्त है—'**ओमित्येकाक्षरं ब्रह्म।**' इसीलिये पाटीपूजनमें प्रारम्भमें '**ॐ नमः सिद्धम्**' लिखाया जाता है। इस अक्षरारम्भसंस्कारको ही लोकमें विद्यारम्भसंस्कार और 'पाटीपूजन' आदि नामोंसे भी अभिहित किया जाता है।

प्रत्येक शुभ कर्मके पहले जैसे आदिपूज्य गणेशजीके पूजनका विधान है, वैसे ही इस अक्षरारम्भ या विद्यारम्भसंस्कारके श्रीगणेशमें भी गणेशजीके ध्यान-पूजनका विधान है। श्रीगणेशद्वादशनामस्तोत्रकी फलश्रुतिमें विद्यारम्भसंस्कारकी चर्चा आयी है, जिसमें कहा गया है कि श्रीगणेशजीके द्वादश नामोंका स्मरण करनेसे विद्यारम्भ, विवाहादि संस्कारोंमें कोई विघ्न नहीं आते—

विद्यारम्भे विवाहे च प्रवेशे निर्गमे तथा।
संग्रामे सङ्कटे चैव विघ्नस्तस्य न जायते॥

इस प्रकार अक्षरारम्भ या विद्यारम्भसंस्कार मानव-जीवनका अत्यन्त महत्त्वपूर्ण संस्कार है, इसकी प्रयोगविधि आगे दी जा रही है।

[९] अक्षरारम्भसंस्कार-प्रयोग

बालकके पाँचवें वर्षमें उसका अक्षरारम्भ-संस्कार करना चाहिये अर्थात् उसे अक्षरोंका ज्ञान कराना चाहिये। संस्कारमयूखमें महर्षि मार्कण्डेयजीका वचन है—‘**प्राप्तेऽथ पञ्चमे वर्षे विद्यारम्भं तु कारयेत्।**’

अक्षरारम्भ-संस्कारमें गुरुद्वारा भगवान्‌के स्मरणपूर्वक बालकको लिखना-पढ़ना प्रारम्भ कराया जाता है। लोकमें इस संस्कारको ‘पाटीपूजन’ के नामसे भी जाना जाता है।

यह संस्कार बालकके पाँचवें वर्षमें किया जाता है। किसी शुभ दिनमें शुभ मुहूर्तमें स्नानादिसे निवृत्त हो पवित्र वस्त्रोंको धारणकर पूजास्थलपर आ जाय, बालकको भी स्नानादिसे निवृत्त करा ले। संस्कार एवं पूजन-सम्बन्धी सभी सामग्रियोंको यथास्थान रख ले। अपने आसनपर पूर्वाभिमुख बैठ जाय। दीपक प्रज्वलित कर ले। आचमन, प्राणायाम तथा पवित्रीधारण आदि कर्म कर ले।

दाहिने हाथमें जल, अक्षत, पुष्पादि लेकर अक्षरारम्भ-संस्कार सम्पन्न करनेके लिये प्रधान संकल्प करे—

प्रतिज्ञा-संकल्प—

ॐ विष्णुर्विष्णुर्विष्णुः श्रीमद्भगवतो महापुरुषस्य विष्णो-राज्ञया प्रवर्तमानस्य ब्रह्मणो द्वितीयपरार्धे श्रीश्वेतवाराहकल्पे वैवस्वतमन्वन्तरे अष्टाविंशतितमे कलियुगे कलिप्रथमचरणे जम्बूद्वीपे भारतवर्षे आर्यावर्तैकदेशे (यदि काशी हो तो **अविमुक्तवाराणसीक्षेत्रे आनन्दवने गौरीमुखे त्रिकण्टकविराजिते महाश्मशाने भगवत्या उत्तरवाहिन्या भागीरथ्या वामभागे**) ......**नगरे/ग्रामे/क्षेत्रे षष्टि-संवत्सराणां मध्ये ......संवत्सरे ......अयने ......ऋतौ ......मासे ......पक्षे**

""तिथौ ""नक्षत्रे ""योगे ""करणे ""वासरे ""राशिस्थिते सूर्ये ""राशिस्थिते चन्द्रे शेषेषु ग्रहेषु यथायथाराशिस्थानस्थितेषु सत्सु एवं ग्रहगुणगणविशिष्टे शुभमुहूर्ते ""गोत्रः सपत्नीकः ""शर्मा/ वर्मा/गुप्तोऽहं ""राशेः ""नाम्नः मम पुत्रस्य लेखनवाचनादि-विपुलविद्याज्ञानप्राप्तये श्रीपरमेश्वरप्रीत्यर्थं अक्षरारम्भसंस्कारं करिष्ये। तत्पूर्वाङ्गत्वेन गणपतिसहितगौर्यादिषोडशमातॄणां पूजनं स्वस्ति-पुण्याहवाचनं वसोर्धारापूजनं आयुष्यमन्त्रजपं साङ्कल्पिकेन विधिना नान्दीश्राद्धं च करिष्ये।

[गणेशपूजनादि कर्म परिशिष्ट पृ० सं० ४१५ से सम्पन्न कर लें।]

देवताओंकी स्थापना—

गणेश-पूजनके अनन्तर किसी वेदिका अथवा काष्ठपीठपर नवीन श्वेत वस्त्र बिछा ले तथा उसमें श्वेत चावलोंके द्वारा एक अष्टदल कमलकी संरचना करे।

उस अष्टदलकमलमें गणेश, सरस्वती, कुलदेवता, गुरु तथा लक्ष्मीनारायणकी स्थापना करे।

तदनन्तर उसी वेदिका या पीठपर पंक्तिबद्धरूपसे अक्षतपुंजोंको रखते हुए क्रमशः नारद, पाणिनि, पतंजलि, कपिल, कात्यायन, पारस्कर, यास्क, कपिंजल, गोभिल, जैमिनि, विश्वकर्मा, आचार्य (देवगुरु बृहस्पति) तथा व्यास—इन विद्याके आचार्योंकी स्थापना करे। साथ ही वेद, व्याकरणशास्त्र आदि ग्रन्थोंको भी स्थापित करे।

प्रतिष्ठा—

निम्न मन्त्रसे अक्षत छोड़ते हुए सबकी प्रतिष्ठा करे—

ॐ एतन्ते देव सवितर्यज्ञं प्राहुर्बृहस्पतये ब्रह्मणे। तेन यज्ञमव तेन यज्ञपतिं तेन मामव॥

ॐ गणेशादिदेवाः नारदादिदेवर्षयः विद्याचार्याश्च

सुप्रतिष्ठिताः वरदा भवन्तु।

पूजन—

तदनन्तर नाममन्त्रोंके द्वारा यथालब्धोपचार सबका पूजन करे। यथा—

१–ॐ गणेशाय नमः सर्वोपचारार्थे गन्धाक्षतपुष्पाणि समर्पयामि, नमस्करोमि।

२–ॐ सरस्वत्यै नमः सर्वोपचारार्थे गन्धाक्षतपुष्पाणि समर्पयामि, नमस्करोमि।

३–ॐ कुलदेवतायै नमः सर्वोपचारार्थे गन्धाक्षतपुष्पाणि समर्पयामि, नमस्करोमि।

४–ॐ गुरवे नमः सर्वोपचारार्थे गन्धाक्षतपुष्पाणि समर्पयामि, नमस्करोमि।

५–ॐ लक्ष्मीनारायणाभ्यां नमः सर्वोपचारार्थे गन्धाक्षतपुष्पाणि समर्पयामि, नमस्करोमि।

तदनन्तर ऋषियों तथा विद्याचार्योंका भी नाममन्त्रसे पूजन करे।

यथा—

१–ॐ नारदाय नमः सर्वोपचारार्थे गन्धाक्षतपुष्पाणि समर्पयामि, नमस्करोमि।

२–ॐ पाणिनये नमः सर्वोपचारार्थे गन्धाक्षतपुष्पाणि समर्पयामि, नमस्करोमि।

३–ॐ पतञ्जलये नमः सर्वोपचारार्थे गन्धाक्षतपुष्पाणि समर्पयामि, नमस्करोमि।

इत्यादि।

पूजनके अनन्तर हाथमें पुष्प लेकर निम्न मन्त्रसे सभी विद्याओंकी अधिष्ठात्री देवी सरस्वतीकी प्रार्थना करे और पुष्प चढ़ा दे।

सर्वविद्ये त्वमाधारः स्मृतिज्ञानप्रदायिके।
प्रसन्ना वरदा भूत्वा देहि विद्यां स्मृतिं यशः॥

अन्तमें बोले—**अनया पूजया आवाहितदेवताः प्रीयन्तां न मम।**

इस प्रकार पूजनकर निम्न रीतिसे हवन करे—

हवन

जो लोग हवन करना चाहें, उनके लिये यहाँ संक्षेपमें हवनविधि दी जा रही है।

किसी स्थण्डिल अथवा वेदीके पंचभूसंस्कार करके उसमें पुष्टिवर्धन नामक अग्निकी स्थापना करके उसका गन्धादि उपचारोंसे पूजन करे। तदनन्तर ब्रह्माका वरण करके कुशकण्डिका* करे और फिर घृतके द्वारा निम्न मन्त्रोंसे एक-एक आहुति प्रदान करे—

(१) ॐ प्रजापतये स्वाहा, इदं प्रजापतये न मम।

(२) ॐ इन्द्राय स्वाहा, इदं इन्द्राय न मम।

(३) ॐ अग्नये स्वाहा, इदं अग्नये न मम।

(४) ॐ सोमाय स्वाहा, इदं सोमाय न मम।

इस प्रकार आघार एवं आज्यभागकी चार आहुति देनेके अनन्तर गणेशादि सभी आवाहित देवताओंके नाममन्त्रोंसे क्रमसे पृथक्-पृथक् आठ-आठ आहुति घीद्वारा प्रदान करे। यथा—

ॐ गणेशाय स्वाहा (८), ॐ सरस्वत्यै स्वाहा (८), ॐ कुलदेवतायै स्वाहा (८), ॐ गुरवे स्वाहा (८), ॐ

---

* अक्षरारम्भ-संस्कारमें हवनकर्मका विकल्प है। यदि सम्भव न हो तो छोड़ा भी जा सकता है। कुशकण्डिकाकी पूर्णविधि पृ० ५६ में दी गयी है। जो विस्तार करना चाहते हैं, उसके अनुसार कर सकते हैं। विभिन्न संस्कारोंमें हवनकी अग्निका नाम पृथक्-पृथक् रहता है तथा हवनीय द्रव्य चरु आदि तथा पात्रासादनकी सामग्री भी पृथक्-पृथक् रहती है। इसका निर्देश तत्तद् संस्कारोंके प्रयोगमें किया गया है।

लक्ष्मीनारायणाभ्यां स्वाहा (८) आदि। तदनन्तर ऋषियों तथा विद्याचार्योंके नामसे प्रत्येकके लिये आठ-आठ आहुति घीसे दे—**ॐ नारदाय स्वाहा, ॐ पाणिनये स्वाहा** आदि।

भूरादि नवाहुति—

पुनः घीद्वारा निम्न मन्त्रोंसे एक-एक आहुति प्रदान करे—

१-ॐ भूः स्वाहा, इदमग्नये न मम।

२-ॐ भुवः स्वाहा, इदं वायवे न मम।

३-ॐ स्वः स्वाहा, इदं सूर्याय न मम।

४-ॐ त्वं नो अग्ने वरुणस्य विद्वान् देवस्य हेडो अव यासिसीष्ठाः। यजिष्ठो वह्नितमः शोशुचानो विश्वा द्वेषाꣳसि प्र मुमुग्ध्यस्मत्स्वाहा, इदमग्नीवरुणाभ्यां न मम।

५-ॐ स त्वं नो अग्नेऽवमो भवोती नेदिष्ठो अस्या उषसो व्युष्टौ। अव यक्ष्व नो वरुणꣳरराणो वीहि मृडीकꣳ सुहवो न एधि स्वाहा। इदमग्नीवरुणाभ्यां न मम।

६-ॐ अयाश्चाग्नेऽस्यनभिशस्तिपाश्च सत्यमित्त्वमया असि। अया नो यज्ञं वहास्यया नो धेहि भेषजꣳ स्वाहा। इदमग्नये ऽयसे न मम।

७-ॐ ये ते शतं वरुण ये सहस्त्रं यज्ञियाः पाशा वितता महान्तः। तेभिर्नो ऽअद्य सवितोत विष्णुर्विश्वे मुञ्चन्तु मरुतः स्वर्काः स्वाहा॥ इदं वरुणाय सवित्रे विष्णवे विश्वेभ्यो देवेभ्यो मरुद्भ्यः स्वर्केभ्यश्च न मम।

८-ॐ उदुत्तमं वरुण पाशमस्मदवाधमं वि मध्यमꣳश्रथाय। अथा वयमादित्य व्रते तवानागसो अदितये स्याम स्वाहा॥ इदं वरुणायादित्यायादितये न मम।

तदनन्तर प्रजापति देवताका ध्यानकर मनमें निम्न मन्त्रका उच्चारणकर

आहुति दे—

९-(मौन होकर) **ॐ प्रजापतये स्वाहा, इदं प्रजापतये न मम।**

स्विष्टकृत् आहुति—

इसके बाद ब्रह्माद्वारा कुशसे स्पर्श किये जानेकी स्थितिमें निम्न मन्त्रसे घृतद्वारा स्विष्टकृत् आहुति दे—

ॐ अग्नये स्विष्टकृते स्वाहा, इदमग्नये स्विष्टकृते न मम।

तदनन्तर संस्रवप्राशन (प्रणीतामें स्थित घृतयुक्त जलका किंचित् पान) तथा मार्जन एवं ब्रह्माको पूर्णपात्रदान आदि क्रियाएँ सम्पन्न करे और आचार्य आदि ब्राह्मणोंको दक्षिणा प्रदान करे।

अक्षरारम्भकी विधि

इस प्रकार देवपूजन तथा हवनके अनन्तर अभ्यंगस्नान किये हुए तथा वस्त्रालंकारों और चन्दनादिसे विभूषित बालकको अपने समीप ले आये और उसके द्वारा गणेशादि देवोंको प्रणाम कराये। तदनन्तर पश्चिमाभिमुख बालकको पूर्वाभिमुख गुरुके सामने बैठाये।

गुरुनमस्कार—

बालकद्वारा निम्न मन्त्रसे गुरुको नमस्कार करवाये—

अज्ञानतिमिरान्धस्य ज्ञानाञ्जनशलाकया।
चक्षुरुन्मीलितं येन तस्मै श्रीगुरवे नमः॥

सरस्वती-प्रणाम—

गुरुको प्रणाम करनेके अनन्तर बालकद्वारा निम्न मन्त्रसे वागधिष्ठात्री देवी सरस्वतीको प्रणाम करवाना चाहिये—

ॐ सरस्वति नमस्तुभ्यं वरदे कामरूपिणि।
विश्ववन्द्ये विशालाक्षि विद्यां देहि नमोऽस्तु ते॥

तदनन्तर बालकके द्वारा गन्धाक्षतपुष्पद्वारा गुरु तथा सरस्वतीका

संक्षेपमें पूजन कराये।

गुरुद्वारा-लेखन तथा वाचन—

तदनन्तर विद्याप्रदाता गुरु किसी चाँदीकी पाटी अथवा काष्ठकी पाटीपर कुंकुमादिका लेपन करके उस पाटीका पूजन करके सोने अथवा चाँदीकी शलाकासे निम्न अक्षरादिको लिखे—

श्रीगणेशाय नमः। श्रीसरस्वत्यै नमः, श्रीकुलदेवतायै नमः, श्रीगुरुभ्यो नमः, श्रीलक्ष्मीनारायणाभ्यां नमः। ॐ नमः सिद्धम्।

तदनन्तर वर्णाक्षरोंको भी लिखे—**अ, आ, इ, ई, उ, ऊ, ऋ, ॠ, ऌ, ॡ, ए, ऐ, ओ, औ, अं, अः। क ख ग घ ङ। च छ ज झ ञ। ट ठ ड ढ ण। त थ द ध न। प फ ब भ म। य र ल व। श ष स ह क्ष त्र ज्ञ।**

इस प्रकार पाटीपर देवताओं तथा अक्षरोंको लिखनेके अनन्तर निम्न मन्त्रसे अक्षरांकित सरस्वतीरूपा उस पाटीका निम्न मन्त्रद्वारा गन्धादि उपचारोंसे पूजन करे—

ॐ पावका नः सरस्वती वाजेभिर्वाजिनीवती। यज्ञं वष्टु धियावसुः॥

ॐ लिखितसरस्वत्यै नमः।

बालकद्वारा लेखन-वाचन—

तदनन्तर आचार्य बालकके दाहिने हाथमें लेखनी पकड़ाकर उसके हाथद्वारा इन अक्षरोंपर तीन बार लेखनी चलवाये तथा धीरे-धीरे उच्चारणका अभ्यास कराये।

इसके बाद बालकका पिता बालकद्वारा गुरु तथा पाटीकी तीन प्रदक्षिणा कराये। बालकद्वारा गुरुको उष्णीष (पगड़ी) वस्त्र आदि प्रदान कराये। उनकी पूजा करे तथा सुवासिनियाँ कुमारकी आरती करें। पिता आचार्यको दक्षिणा प्रदानकर निम्न संकल्पद्वारा अन्य ब्राह्मणोंको

भूयसी दक्षिणा प्रदान करे—

भूयसीदक्षिणा-संकल्प—

ॐ अद्य पूर्वोच्चारितग्रहगुणगणविशेषणविशिष्टायां शुभ-पुण्यतिथौ ......राशेर्बालकस्य अक्षरस्वीकारविद्यारम्भकर्मणोरङ्गत्वेन अक्षतपुञ्जेषु गणेशादिदेवानां पूजनस्य होमकर्मणश्च साद्गुण्यार्थं साङ्गफलप्राप्त्यर्थं चेमां दक्षिणां नानानामगोत्रेभ्यो ब्राह्मणेभ्यो विभज्य दास्ये ॐ न मम।

संकल्पजल छोड़ दे और दक्षिणा प्रदान करे।

विसर्जन—

इसके बाद आवाहित सभी देवताओंपर अक्षत-पुष्प समर्पितकर निम्न मन्त्रसे विसर्जन करे—

यान्तु देवगणाः सर्वे पूजामादाय मामकीम्।
इष्टकामसमृद्ध्यर्थं पुनरागमनाय च॥

भगवत्स्मरण—

हाथमें अक्षत-पुष्प लेकर भगवान्‌का ध्यान करते हुए समस्त कर्म उन्हें समर्पित करे—

ॐ प्रमादात्कुर्वतां कर्म प्रच्यवेताध्वरेषु यत्।
स्मरणादेव तद्विष्णोः सम्पूर्णं स्यादिति श्रुतिः॥
यस्य स्मृत्या च नामोक्त्या तपोयज्ञक्रियादिषु।
न्यूनं सम्पूर्णतां याति सद्यो वन्दे तमच्युतम्॥
यत्पादपङ्कजस्मरणात् यस्य नामजपादपि।
न्यूनं कर्म भवेत् पूर्णं तं वन्दे साम्बमीश्वरम्॥
ॐ विष्णवे नमः। ॐ विष्णवे नमः। ॐ विष्णवे नमः।
ॐ साम्बसदाशिवाय नमः। ॐ साम्बसदाशिवाय नमः।
ॐ साम्बसदाशिवाय नमः।

कर्णवेधसंस्कार

कर्णवेधका तात्पर्य और उसकी महिमा—

जिस संस्कारमें विशेष विधिपूर्वक बालक एवं बालिकाके दाहिने एवं बायें कानका छेदन किया जाता है, उसे कर्णवेधसंस्कार कहा गया है। व्याससस्मृतिमें इस संस्कारकी षोडश संस्कारोंमें गणना है और वहाँ बताया गया है कि '**कृतचूडे च बाले च कर्णवेधो विधीयते॥**' (व्याससस्मृति १।१९) अर्थात् जिसका चूडाकरण हो गया हो, उस बालकका कर्णवेध करना चाहिये। बालकके जन्म होनेके तीसरे अथवा पाँचवें वर्षमें कर्णवेध करनेकी आज्ञा है। दीर्घायु और श्रीकी वृद्धिके लिये कर्णवेधसंस्कारकी शास्त्रोंमें विशेष प्रशंसा की गयी है—'**कर्णवेधं प्रशंसन्ति पुष्ट्यायुः श्रीविवृद्धये**' (गर्ग)। इसमें दोनों कानोंमें वेध करके उनकी नसको ठीक करनेके लिये सुवर्णका कुण्डल धारण कराया जाता है। इससे शारीरिक रक्षा होती है। महान् चिकित्साशास्त्री आचार्य सुश्रुतने लिखा है कि रक्षा और आभूषणके लिये बालकके दोनों कान छेदे जाते हैं। शुभ मुहूर्त और नक्षत्रमें मांगलिक कृत्य एवं स्वस्तिवाचन करके कुमारको माताके अंकमें बिठाकर खिलौनेसे बहलाते हुए-पुचकारते हुए उसके दोनों कान छेदने चाहिये। यदि पुत्र हो तो पहले दाहिना कान छेदे और कन्याका पहले बायाँ कान छेदना चाहिये। कन्याकी नाक भी छेदी जाती है और बींधनेके पश्चात् छेदमें पिचुवर्ति (कपड़ेकी नरम बत्ती) पहना देनी चाहिये—'**रक्षाभूषणनिमित्तं बालस्य कर्णौ विध्येते। ''''पूर्वं दक्षिणं कुमारस्य, वामं कुमार्याः, ततः पिचुवर्तिं प्रवेशयेत्।**' (सुश्रुतसंहिता सूत्र० १६।३) जब छिद्र पुष्ट हो जाय

तो सुवर्णका कुण्डल आदि पहनाना चाहिये। सुवर्णके स्पर्शसे बालक स्वस्थ और दीर्घायु होता है। बालकके कानमें सूर्यकी किरणके प्रवेशके योग्य और कन्याके कानमें आभूषण पहननेके योग्य छिद्र कराना चाहिये। कुमारतन्त्र (चक्रपाणि)–में कहा गया है कि कर्णवेधनसंस्कारसे बालारिष्ट उत्पन्न करनेवाले बालग्रहोंसे बालककी रक्षा होती है और इसमें कुण्डल आदि धारण करनेसे मुखकी शोभा होती है—

कर्णव्यधे कृतो बालो न ग्रहैरभिभूयते।
भूष्यतेऽस्य मुखं तस्मात् कार्यस्तत् कर्णयोर्व्यधः ॥

[१०] कर्णवेधसंस्कार-प्रयोग

कर्णवेधसंस्कार तीसरे अथवा पाँचवें वर्षमें किया जाता है। इसमें यथाविधि बालक अथवा बालिकाके दाहिने और बायें कानका छेदन होता है। इसीलिये यह कर्णवेधसंस्कार कहलाता है।

किसी शुभ दिन कर्णवेधके लिये निर्दिष्ट नक्षत्रोंमें पिता प्रातःकाल उठकर नित्यकर्मोंको सम्पन्नकर पूजास्थलपर आकर अपने आसनपर पूर्वाभिमुख बैठ जाय। बालकको गोदमें लेकर माता भी दाहिनी ओर बैठ जाय। सभी सामग्रियोंको यथास्थान रख ले। दीपक प्रज्वलित कर ले। आचमन, प्राणायाम, पवित्रीधारण आदि कर्म करके कर्णवेधसंस्कारके लिये संकल्प करे।

दाहिने हाथमें जल, कुश, पुष्प आदि लेकर निम्न संकल्प करे—

प्रतिज्ञा-संकल्प—

ॐ विष्णुर्विष्णुर्विष्णुः श्रीमद्भगवतो महापुरुषस्य विष्णोराज्ञया प्रवर्तमानस्य ब्रह्मणो द्वितीयपरार्धे श्रीश्वेतवाराहकल्पे वैवस्वतमन्वन्तरे अष्टाविंशतितमे कलियुगे कलिप्रथमचरणे जम्बूद्वीपे भारतवर्षे आर्यावर्तैकदेशे (यदि काशी हो तो **अविमुक्तवाराणसीक्षेत्रे आनन्दवने गौरीमुखे त्रिकण्टकविराजिते महाश्मशाने भगवत्या उत्तरवाहिन्या भागीरथ्या वामभागे**) **.....नगरे/ग्रामे/क्षेत्रे षष्टि-संवत्सराणां मध्ये .....संवत्सरे .....अयने .....ऋतौ .....मासे .....पक्षे .....तिथौ .....नक्षत्रे .....योगे .....करणे .....वासरे .....राशिस्थिते सूर्ये .....राशिस्थिते चन्द्रे शेषेषु ग्रहेषु यथा-यथाराशिस्थानस्थितेषु सत्सु एवं ग्रहगुणगणविशिष्टे शुभमुहूर्ते .....गोत्रः सपत्नीकः .....शर्मा/वर्मा/गुप्तोऽहं .....राशेः .....नाम्नः मम पुत्रस्य बीजगर्भसमुद्भवैनोनिबर्हणपुष्ट्यायुःश्रीवृद्धिद्वारा श्रीपरमेश्वरप्रीतये कर्णवेधाख्यं कर्म करिष्ये। तदङ्गत्वेन गणपति-**

सहितगौर्यादिषोडशमातॄणां पूजनं स्वस्तिपुण्याहवाचनं वसोर्धारा-पूजनं आयुष्यमन्त्रजपं सांकल्पिकेन विधिना नान्दीश्राद्धं च करिष्ये। हाथका संकल्पजल छोड़ दे।

[गणपत्यादिपूजन परिशिष्ट पृ०सं० ४१५ से सम्पन्न करें।]

तदनन्तर कलशकी स्थापनाकर उसमें ब्रह्मवरुणसहित सूर्यादि नवग्रहोंका आवाहन करे तथा किसी पात्रमें जल लेकर उस जलमें नीचे लिखे हुए केशव आदि देवोंका नाममन्त्रोंसे आवाहन करे।

प्रतिष्ठा—

हाथमें अक्षत लेकर निम्न मन्त्रसे कलश तथा उसमें आवाहित देवों तथा जलमें आवाहित देवोंकी प्रतिष्ठा करे—

ॐ एतं ते देव सवितर्यज्ञं प्राहुर्बृहस्पतये ब्रह्मणे। तेन यज्ञमव तेन यज्ञपतिं तेन मामव॥

ॐ भूर्भुवः स्वः कलशे ब्रह्मवरुणरुद्रसहिता आदित्यादि-नवग्रहाः जले केशवादिदेवाः सुप्रतिष्ठिता वरदा भवन्तु।

सबपर अक्षत छोड़ दे।

देवोंका पूजन—

तदनन्तर निम्न नाममन्त्रोंके द्वारा पहले नवग्रहोंका गन्धादि उपचारोंसे पूजन करे—

(१) ॐ ब्रह्मणे नमः, (२) ॐ वरुणाय नमः, (३) ॐ सूर्याय नमः, (४) ॐ चन्द्रमसे नमः, (५) ॐ भौमाय नमः, (६) ॐ बुधाय नमः, (७) ॐ गुरवे नमः, (८) ॐ शुक्राय नमः, (९) ॐ शनैश्चराय नमः, (१०) ॐ राहवे नमः, (११) ॐ केतवे नमः।

तदनन्तर जलमें आवाहित देवोंका गन्धादि उपचारोंसे निम्न नाममन्त्रोंसे पूजन करे—

(१) ॐ केशवाय नमः, (२) ॐ हराय नमः, (३) ॐ

ब्रह्मणे नमः, (४) ॐ चन्द्राय नमः, (५) ॐ सूर्याय नमः, (६) ॐ दिगीशेभ्यो नमः, (७) ॐ नासत्याभ्यां नमः, (८) ॐ सरस्वत्यै नमः, (९) ॐ ब्राह्मणेभ्यो नमः, (१०) ॐ गवे नमः, (११) ॐ गुरुभ्यो नमः।

इस प्रकार पूजनकर नीराजन तथा पुष्पांजलि प्रदान करे।

तदनन्तर अपने कुलदेवता, वैद्य, ब्राह्मणों तथा कर्णच्छेदनकर्ताको नमस्कार करके माताकी गोदमें वस्त्राभूषणोंसे अलंकृत पूर्वाभिमुख बालकके हाथमें गुड़,मोदक आदि मधुर द्रव्य देना चाहिये। बालकको रुचिकर लगे तो कोई खिलौना भी देना चाहिये। (ताकि बालकका ध्यान खाने और खेलनेमें लगा रहे और उसको कर्णवेधनकी पीड़ाका ध्यान न रहे)

कानोंका अभिमन्त्रण—

तदनन्तर पिता निम्न मन्त्रसे पहले बालकके दाहिने कानका अभिमन्त्रण करे (जलसे भिगोये)—

ॐ भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम देवा भद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्राः। स्थिरैरङ्गैस्तुष्टुवाꣳ सस्तनूभिर्व्यशेमहि देवहितं यदायुः॥ (यजु० २५।२१)

इस प्रकार दाहिने कानके अभिमन्त्रणके अनन्तर निम्न मन्त्रसे बायें कानका अभिमन्त्रण करे—

ॐ वक्ष्यन्तीवेदा गनीगन्ति कर्णं प्रियꣳ सखायं परिषस्वजाना। योषेव शिङ्क्ते वितताधि धन्वञ्ज्या इयꣳ समने पारयन्ती॥ (यजु० २९।४०)

कानोंका वेधन—

अभिमन्त्रणके अनन्तर सौभाग्यवती स्त्री अलक्तक अथवा लाल रंगसे पहले दाहिने कानमें छेदे जानेवाले स्थानको चिह्नित करे

(निशान लगाये), तदनन्तर स्वर्णकार अथवा कोई कुशल नाई या कोई दक्ष व्यक्ति चिह्नित स्थानपर मांगलिक डोरेसे युक्त सुवर्ण, चाँदी या ताँबेकी सूईद्वारा छेदन करे और सूईको अलगकर मांगलिक डोरेको कुण्डलकी भाँति कानमें बाँध दे। इसी प्रकार बायें कानमें भी छेदन करना चाहिये।

कन्याओंका पहले बायें कानका वेधनकर फिर दायें कानका वेधन करना चाहिये। कन्याओंका नासिकाके वामभागमें (आभूषण-धारणार्थ) भी वेध करना चाहिये। कन्याओंकी यह क्रिया अमन्त्रक होती है।

दक्षिणा एवं ब्राह्मणभोजनसंकल्प—

आचार्यको दक्षिणा देनेके अनन्तर हाथमें जलाक्षत लेकर भूयसी-दक्षिणा तथा ब्राह्मणभोजनका निम्न संकल्प करे—

ॐ अद्य पूर्वोच्चारितग्रहगणगुणविशेषणविशिष्टायां शुभपुण्यतिथौ .....गोत्रोत्पन्नोऽहं .....राशेः .....नाम्नः मम बालकस्य कर्णवेधकर्मणः साङ्गफलप्राप्तये तन्मध्ये न्यूनातिरिक्तदोषपरिहारार्थं नानानामगोत्रेभ्यो ब्राह्मणेभ्यो भूयसीं दक्षिणां विभज्य दातुमुत्सृज्ये। ॐ तत्सन्न मम। तथा यथोपन्नेनान्नेन दश यथासंख्याकान् वा ब्राह्मणान् भोजयिष्ये। संकल्पजल छोड़ दे। सभीको दक्षिणा प्रदान करे।

विसर्जन—

इसके बाद आवाहित सभी देवताओंपर अक्षत-पुष्प समर्पितकर निम्न मन्त्रसे विसर्जन करे—

यान्तु देवगणाः सर्वे पूजामादाय मामकीम्।
इष्टकामसमृद्ध्यर्थं पुनरागमनाय च॥

भगवत्स्मरण—

हाथमें अक्षत-पुष्प लेकर भगवान्‌का ध्यान करते हुए समस्त कर्म उन्हें समर्पित करे—

ॐ प्रमादात्कुर्वतां कर्म प्रच्यवेताध्वरेषु यत्।
स्मरणादेव तद्विष्णोः सम्पूर्णं स्यादिति श्रुतिः॥
यस्य स्मृत्या च नामोक्त्या तपोयज्ञक्रियादिषु।
न्यूनं सम्पूर्णतां याति सद्यो वन्दे तमच्युतम्॥
यत्पादपङ्कजस्मरणात् यस्य नामजपादपि।
न्यूनं कर्म भवेत् पूर्णं तं वन्दे साम्बमीश्वरम्॥
ॐ विष्णवे नमः। ॐ विष्णवे नमः। ॐ विष्णवे नमः।
ॐ साम्बसदाशिवाय नमः। ॐ साम्बसदाशिवाय नमः।
ॐ साम्बसदाशिवाय नमः।

उपनयनसंस्कार

उपनयन-संस्कारकी महिमा—

'उपनयन' शब्द 'उप' उपसर्गपूर्वक 'नी' धातुसे 'ल्यु' प्रत्यय करनेपर निष्पन्न होता है। उप अर्थात् आचार्यके समीप नयन अर्थात् बालकको विद्याध्ययनके लिये ले जानेको 'उपनयन' कहते हैं। बालकके पिता आदि अपने पुत्रादिकोंको विद्याध्ययनार्थ आचार्यके पास ले जायँ, यही उपनयन शब्दका अर्थ है। बालकमें यह योग्यता आ जाय इसलिये विशेष-विशेष कर्मद्वारा उसे संस्कृत किया जाता है, उसे संस्कृत करनेका संस्कार ही उपनयन या यज्ञोपवीत-संस्कार है। इसीका नाम व्रतबन्ध भी है। इसमें यज्ञोपवीत धारणकर बालक विशेष-विशेष व्रतोंमें उपनिबद्ध हो जाता है। द्विजोंका जीवन व्रतमय होता है, जिसका प्रारम्भ इसी व्रतबन्ध-संस्कारसे होता है। इस व्रतबन्धसे बालक दीर्घायु, बली और तेजस्वी होता है—'**यज्ञोपवीतमसि यज्ञस्य त्वा यज्ञोपवीतेनोपनह्यामि दीर्घायुत्वाय बलाय वर्चसे**' (कौषीतकि ब्राह्मण)।

संस्कारोंमें षोडश संस्कार मुख्य माने गये हैं, उनमें भी उपनयनकी ही सर्वोपरि महत्ता है। उपनयनके बिना बालक किसी भी श्रौत-स्मार्त कर्मका अधिकारी नहीं होता। '**न ह्यस्मिन् युज्यते कर्म किञ्चिदामौञ्जिबन्धनात्**' (मनुस्मृ० २। १७१)। यह योग्यता उपनयन-संस्कारके अनन्तर यज्ञोपवीत धारण करनेपर ही प्राप्त होती है। उपनयनके बिना देवकार्य और पितृकार्य नहीं किये जा सकते और श्रौत-स्मार्त-कर्मोंमें तथा विवाह, सन्ध्या, तर्पण आदि कर्मोंमें भी उसका अधिकार नहीं रहता। उपनयन-संस्कारसे ही द्विजत्व प्राप्त होता है। उपनयन-संस्कारमें समन्त्रक एवं संस्कारित यज्ञोपवीत-धारण तथा गायत्री-मन्त्रका उपदेश—ये दो प्रधान कर्म होते हैं, शेष

कर्म अंगभूत कर्म हैं।

उपनयनका अधिकार केवल द्विजाति (ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य)-को है। प्रथम माताके गर्भसे उत्पत्ति तथा द्वितीय जन्म मौंजीबन्धन—उपनयनसंस्कारद्वारा होनेसे ब्राह्मण-क्षत्रिय-वैश्योंकी द्विज संज्ञा है—

मातुर्यदग्रे जायन्ते द्वितीयं मौञ्जिबन्धनात्।
ब्राह्मणक्षत्रियविशस्तस्मादेते द्विजाः स्मृताः॥

(याज्ञवल्क्यस्मृति १। ३९)

शंखस्मृति (१। ६)-में कहा गया है कि ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य—इन तीन वर्णोंको द्विज कहते हैं, इनका दूसरा जन्म यज्ञोपवीत-संस्कारसे होता है—

ब्राह्मणः क्षत्रियोवैंश्यस्त्रयो वर्णा द्विजातयः।
तेषां जन्म द्वितीयं तु विज्ञेयं मौञ्जिबन्धनात्॥

मौंजीबन्धन-संस्कारके अनन्तर द्वितीय जन्म होनेपर उनका पिता आचार्य होता है और माता गायत्री होती है—

(क) आचार्यस्तु पिता प्रोक्तः सावित्री जननी तथा।
ब्रह्मक्षत्रविशाञ्चैव मौञ्जिबन्धनजन्मनि॥

(शंखस्मृति १। ७)

(ख) तत्र यद् ब्रह्मजन्मास्य मौञ्जीबन्धनचिह्नितम्।
तत्रास्य माता सावित्री पिता त्वाचार्य उच्यते॥

(मनुस्मृति २। १७०)

ब्रह्मपुराणमें कहा गया है कि ब्राह्मण माता-पिताके सविधि विवाहके अनन्तर उत्पन्न बालक ब्राह्मण है, जब उस बटुका ५ से ८ वर्षकी अवस्थामें यज्ञोपवीत-संस्कार होता है तब वह द्विज (द्विजन्मा) कहा जाता है और वह वेदाध्ययन तथा यज्ञाग्निरूप धर्मकार्य आदि करनेका अधिकारी होता है। वेदज्ञान प्राप्त करनेसे 'विप्र' तथा ये तीनों बातें होनेसे वह 'श्रोत्रिय' कहलाता है—

जन्मना ब्राह्मणो ज्ञेयः संस्कारैर्द्विज उच्यते।
विद्यया वापि विप्रत्वं त्रिभिः श्रोत्रिय उच्यते॥

इसीलिये द्विजोंका दो बार जन्म होता है और दो बार जन्म होनेसे ही द्विजसंज्ञा सार्थक होती है—'**द्विधा जन्म। जन्मना विद्यया च।**'

तैत्तिरीय संहिताने बताया है कि मनुष्य तीन ऋणोंको लेकर जन्म लेता है—१-ऋषि-ऋण, २-देव-ऋण तथा ३-पितृ-ऋण। इन तीन ऋणोंसे मुक्ति बिना यज्ञोपवीत-संस्कार हुए सम्पन्न नहीं होती। मनुष्य यज्ञोपवीत-संस्कारके अनन्तर विहित ब्रह्मचर्यव्रतका पालनकर ऋषियोंके ऋणसे मुक्त होता है, यजन-पूजन आदिके द्वारा देव-ऋणसे मुक्त होता है और गृहस्थधर्मके पालनपूर्वक सन्तानोत्पत्तिसे पितृ-ऋणसे उऋण होता है। यदि यज्ञोपवीत-संस्कार न हो तो इन तीनों कर्मोंको करनेका उसका अधिकार नहीं रहता, अतः यज्ञोपवीत-संस्कारका बहुत महत्त्व है। इस संस्कारमें मौंजीमेखलाधारण करनेके कारण इसे मौंजीबन्धनसंस्कार भी कहते हैं। यह संस्कार उसके ब्रह्मचर्यव्रत और विद्याध्ययनका प्रतीक है।

यज्ञोपवीतसे पूर्वतक कामाचार, कामवाद तथा कामभक्षणजन्य दोष बालकको नहीं लगता तथा उसके कर्मोंका प्रत्यवाय भी नहीं बनता। इसीलिये कोई प्रायश्चित्तविधान भी नहीं रहता। यज्ञोपवीत-संस्कारके अनन्तर उसे ब्रह्मचर्य, सदाचार, शौचाचार, भक्ष्याभक्ष्य आदि नियमोंका सावधानीपूर्वक पालन करना चाहिये। यम-नियम-संयमपूर्वक रहना चाहिये।* वास्तवमें जितने भी संस्कार हैं, वे सब द्विजत्वप्राप्तिके उपकारक हैं। यज्ञोपवीतके पूर्वके जातकर्मादि संस्कार भी द्विजत्वप्राप्तिमें सहयोगी हैं और उसके बादके विवाहादि संस्कार भी बिना यज्ञोपवीत-

* आजकल कई लोग संयम-नियम पालन करनेके डरसे जनेऊ लेना नहीं चाहते। यह उचित नहीं है। अपनी मनःस्थितिके अनुसार यथासम्भव नियम-पालन करते हुए जनेऊ लेना अवश्य अनिवार्य है।

संस्कार हुए सम्पन्न नहीं होने चाहिये, इसलिये यह संस्कार बहुत ही उपयोगी है और आवश्यक है, किंतु विडम्बना है कि वर्तमानमें सबसे अधिक हानि इस यज्ञोपवीत-संस्कारकी ही हो रही है।

उपनयन-संस्कार कब करें—

आचार्य पारस्करने ब्राह्मण, क्षत्रिय तथा वैश्य बालकके लिये क्रमसे जन्मसे अथवा गर्भसे आठ, ग्यारह और बारह वर्ष उपनयनका मुख्य काल बताया है—'**अष्टवर्षं ब्राह्मणमुपनयेद् गर्भाष्टमे वा। एकादशवर्षं राजन्यम्। द्वादशवर्षं वैश्यम्**' (पारस्करगृह्यसूत्र २। २। १—३)। यही समय मनुस्मृति (२। ३६)-में भी निर्धारित किया गया है—

गर्भाष्टमेऽब्दे कुर्वीत ब्राह्मणस्योपनायनम्।
गर्भादेकादशे राज्ञो गर्भात्तु द्वादशे विशः॥

उपनयनका गौणकाल—

किसी कारणवश मुख्यकालमें यज्ञोपवीत-संस्कार न हो सका हो तो ब्राह्मण बालकका सोलह, क्षत्रिय बालकका बाईस तथा वैश्य बालकका चौबीस वर्षतक उपनयन-संस्कार हो जाना चाहिये, यह उपनयनकालकी चरमावधि है—

आषोडशाद्वर्षाद् ब्राह्मणस्यानतीतः कालो भवति।
आद्वाविंशाद्राजन्यस्य। आचतुर्विंशाद्वैश्यस्य॥

(पा०गृ०सू० २। ५। ३६—३८)

आषोडशाद् ब्राह्मणस्य सावित्री नातिवर्तते।
आद्वाविंशात् क्षत्रबन्धोराचतुर्विंशतेर्विशः॥

(मनु०)

मुख्यकाल तथा गौणकालके अतिक्रमण होनेपर यज्ञोपवीत-संस्कारकी व्यवस्था—

उपनयनके लिये विहित मुख्य काल तथा गौणकालके व्यतीत हो जानेपर वह द्विज बालक '**पतितसावित्रीक**', '**सावित्रीपतित**' अथवा

'**व्रात्य**' कहलाता है। अर्थात् वह संस्कार न होनेसे पतित हो जाता है, विगर्हित—निन्दित हो जाता है* और सभी प्रकारके व्यवहारके अयोग्य हो जाता है तथा धर्म-कर्मादिमें उसका कोई अधिकार नहीं रहता। वह प्रायश्चित्ती हो जाता है। ऐसे अनुपनीतके विषयमें शास्त्रने व्यवस्था दी है कि ऐसी स्थितिमें 'अनादिष्टप्रायश्चित्त' करके वह पुनः संस्कारकी योग्यता प्राप्त कर लेता है। अतः 'व्रात्यस्तोम' प्रायश्चित्त करके उपनयन-संस्कार करना चाहिये। यह व्रात्यस्तोम लौकिक अग्निमें होता है, इस व्रात्यस्तोमकी विधि कात्यायनश्रौतसूत्र (२२।४)-में उपलब्ध है। अज्ञानतावश यदि यज्ञोपवीत नहीं किया गया हो तो अधिक उम्र होनेपर भी प्रायश्चित्तका संकल्पकर यज्ञोपवीत धारण करना चाहिये।

यथामङ्गलं वा सर्वेषाम्—

आचार्य पारस्करजीने कुलपरम्पराका समादर करते हुए बताया है कि उपर्युक्त बताये गये उपनयनकालके लिये नियत मुख्य अथवा गौण वर्षोंमें बालकका उपनयन न हो सके तो अपने कुलाचारानुकूल उपनयनकालकी सीमाके अन्दर नवें, दसवें, ग्यारहवें, बारहवें, तेरहवें, चौदहवें और पन्द्रहवें वर्षमें भी उपनयनसंस्कार हो सकता है—'**यथामङ्गलं वा सर्वेषाम्**' (पा०गृ०सू० २।२।४) का तात्पर्य यह है कि द्विजातियोंको शास्त्रविहित उपनयनकालके भीतर सुविधानुसार उपनयनसंस्कार अवश्य सम्पन्न कर लेना चाहिये।

कामनापरक यज्ञोपवीत—

ब्राह्मणबालकको विशेष ब्रह्मतेजसम्पन्न बनानेकी इच्छा हो तो पाँचवें वर्षमें, बलाभिलाषी क्षत्रिय बालकका छठे वर्षमें तथा धनार्थी

---

* (क) अत ऊर्ध्वं त्रयोऽप्येते यथाकालमसंस्कृताः।
सावित्रीपतिता व्रात्या भवन्त्यार्यविगर्हिताः॥ (मनु०)

(ख) सावित्रीपतिता व्रात्याः सर्वधर्मबहिष्कृताः॥ (शंखस्मृति २।९)

वैश्यबालकका आठवें वर्षमें उपनयन करना चाहिये—

ब्रह्मवर्चसकामस्य कार्यं विप्रस्य पञ्चमे।
राज्ञो बलार्थिनः षष्ठे वैश्यस्येहार्थिनोऽष्टमे॥

(मनुस्मृति)

उपनयन-संस्कार और यज्ञोपवीत (जनेऊ)-का अभेद सम्बन्ध—

उपनयन-संस्कारमें मुख्य रूपसे यज्ञोपवीतधारण होता है, मौंजी, मेखला आदि भी धारण कराया जाता है, किंतु समावर्तनके समयमें उनके परित्यागकी विधि है और फिर विवाहके अनन्तर गृहस्थाश्रममें प्रवेश होता है, किंतु यज्ञोपवीत और शिखासूत्र यदि संन्यास धारण न करे तो यावज्जीवन बने रहते हैं। अतः यज्ञोपवीत (जनेऊ)-के विषयमें यहाँ कुछ विचार प्रस्तुत हैं—

कात्यायनस्मृति (१।४)-में कहा गया है—

सदोपवीतिना भाव्यं सदा बद्धशिखेन च।
विशिखो व्युपवीतश्च यत् करोति न तत्कृतम्॥

अर्थात् यज्ञोपवीत (जनेऊ) सदैव धारण करना चाहिये और शिखामें ओंकाररूपिणी ग्रन्थि बाँधे रखनी चाहिये। शिखा-सूत्रविहीन होकर (जनेऊ और चोटी न रखकर) जो कुछ धर्म-कर्म किया जाता है, वह निष्फल होता है।

सामान्य अर्थोंमें यज्ञोपवीत तीन तागोंके जोड़में लगी ग्रन्थियोंसे युक्त सूतकी एक माला है, जिसे ब्राह्मण, क्षत्रिय तथा वैश्य धारण करते हैं। वैदिक अर्थोंमें यज्ञोपवीत शब्द 'यज्ञ' और 'उपवीत'—इन दो शब्दोंके योगसे बना है, जिसका अर्थ है—'यज्ञसे पवित्र किया गया सूत्र'। साकार परमात्माको 'यज्ञ' और निराकार परमात्माको 'ब्रह्म' कहा गया है—इन दोनोंको प्राप्त करनेका अधिकार दिलानेवाला

यह सूत्र यज्ञोपवीत है। ब्रह्मसूत्र, सवितासूत्र तथा यज्ञसूत्र इसीके नाम हैं। स्मृतिप्रकाशमें इसके ब्रह्मसूत्र नामकी सार्थकताके विषयमें कहा गया है—

सूचनाद् ब्रह्मतत्त्वस्य वेदतत्त्वस्य सूचनात्।
तत्सूत्रमुपवीतत्वाद् ब्रह्मसूत्रमिति स्मृतम्॥

अर्थात् यह सूत्र द्विजातिको ब्रह्मतत्त्व और वेदज्ञानकी सूचना देता है, इसीलिये इसे 'ब्रह्मसूत्र' कहा गया है।

यज्ञोपवीतका प्रादुर्भाव—

यज्ञोपवीतकी उत्पत्ति और उसके धारणकी परम्परा अनादिकालसे ही है। इसका सम्बन्ध तो उस कालसे है, जब मानवसृष्टि हुई थी। उस समय सृष्टिकर्ता ब्रह्माजी स्वयं यज्ञोपवीत धारण किये हुए थे। इसीलिये यज्ञोपवीत धारण करते समय यह मन्त्र पढ़ा जाता है—

ॐ यज्ञोपवीतं परमं पवित्रं प्रजापतेर्यत्सहजं पुरस्तात्।
आयुष्यमग्र्यं प्रतिमुञ्च शुभ्रं यज्ञोपवीतं बलमस्तु तेजः॥
ॐ यज्ञोपवीतमसि यज्ञस्य त्वा यज्ञोपवीतेनोपनह्यामि।

इस मन्त्रमें बताया गया है कि शुभ कर्मानुष्ठानार्थ बनाये गये, अत्यन्त पवित्र, ब्रह्माके द्वारा आदिमें धारण किये गये, आयुष्यको प्रदान करनेवाले, सर्वश्रेष्ठ, अत्यन्त शुद्ध यज्ञोपवीतको मैं धारण करता हूँ। यह मुझे तेज और बल प्रदान करे। बह्मसूत्र ही यज्ञोपवीत है, मैं ऐसे यज्ञोपवीतको धारण करता हूँ।

सारूपमें यह मन्त्र यज्ञोपवीतकी उत्पत्तिका स्पष्ट संकेत देता है। देवता भी यज्ञोपवीत धारण करते हैं, ग्रन्थोंमें भगवान् श्रीराम, भगवान् श्रीकृष्णके यज्ञोपवीत–संस्कारका बड़ा ही भव्य वर्णन आया है। वैदिक ग्रन्थोंमें इसका उल्लेख होनेसे यह किन्हीं परवर्ती ऋषियोंद्वारा निर्मित सूत्र नहीं है। यज्ञोपवीत–निर्माणकी विशेष प्रक्रिया शास्त्रोंमें बतायी

गयी है। इससे स्पष्ट होता है कि यह माला-जैसा दिखनेवाला सूत नहीं है, अपितु यह ब्रह्मतेजको धारण करनेवाला तथा समस्त देव एवं पितृकर्मोंको सम्पादित कर सकनेकी योग्यता प्रदान करनेवाला देवसूत्र है।

यज्ञोपवीत क्या है?—

यज्ञोपवीत स्वयं अथवा ब्राह्मणकन्या या साध्वी ब्राह्मणीके हाथोंसे काते गये कपासके सूतके नौ तारोंको तीन-तीन तारोंमें बँटकर (उमेठकर) बनाये गये तीन सूत्रको ९६ चौओंके नापमें तीन वृतोंकी तैयार की गयी माला है, जिसके मूलमें ब्रह्मग्रन्थि लगाकर गायत्री और प्रणवमन्त्रोंसे अभिमन्त्रित किये जानेके पश्चात् 'यज्ञोपवीत' नाम दिया गया है। इसे निश्चित आयु, काल (समय) और विधानके साथ द्विज बालकों (बटुक)-को ब्रह्मचर्य, गार्हस्थ्य और वानप्रस्थ—इन तीन आश्रम-व्यवस्थामें श्रौत और स्मार्तविहित कर्म करनेहेतु पिता, आचार्य या गुरुद्वारा गायत्रीमन्त्रके साथ धारण कराया जाता है। इसीके साथ बालकका दूसरा जन्म होता है और वह 'द्विज' कहा जाने लगता है। इससे उपनीत बालकको विनश्वर स्थूल शरीरकी अपेक्षा अविनाशी ज्ञानमय शरीर प्राप्त होता है। इस विशेष महत्त्वको ध्यानमें रखते हुए इसके निर्माणमें शुचिता और पवित्रतापर विशेष ध्यान दिया गया है। यज्ञोपवीतकी निर्माणविधि आगे परिशिष्टमें दी गयी है।

किस स्थितिमें नवीन यज्ञोपवीत धारण करें—

यज्ञोपवीत संस्कार हो जानेपर द्विजको इसे अखण्ड रूपसे धारण किये रहनेका निर्देश दिया गया है। शास्त्रकारोंके अनुसार ब्रह्मचारीको एक यज्ञोपवीत तथा स्नातकको दो या उससे अधिक (तीन) यज्ञोपवीत धारण करना चाहिये यथा—'**ब्रह्मचारिण एकं स्यात् स्नातकस्य द्वे बहूनि वा।**' (आश्वलायनगृह्यसूत्र) इसी तरह श्रौत-स्मार्त कर्मोंकी

निष्पत्तिके लिये दो यज्ञोपवीत धारण करना चाहिये, यदि उत्तरीय वस्त्र न हो तो तीसरा धारण किया जा सकता है।

यज्ञोपवीते द्वे धार्ये श्रौते स्मार्ते च कर्मणि।
तृतीयमुत्तरार्धे च वस्त्राभावे तदिष्यते॥

(हेमाद्रि)

कुछ लोग इस स्थितिमें एक कपड़ा या गमछा बायें कन्धेपर रख लेते हैं।

उपवीत संस्कारित ब्रह्मसूत्र है, जो संस्कारके दिनसे मृत्युपर्यन्त शरीरसे अलग नहीं किया जाता है। इतने कड़े नियमोंका पालन करते हुए कई अवसर आते हैं, जब धारण किये हुए यज्ञोपवीतको अशुद्ध मानकर नवीन यज्ञोपवीत धारण करनेकी आवश्यकता पड़ती है। शास्त्रकारोंके अनुसार इन स्थितियोंमें धारण किये हुए यज्ञोपवीतको अपवित्र मानकर नवीन यज्ञोपवीतके धारण करनेका निर्देश दिया गया है—

१–यदि स्वतःकी असावधानीसे यज्ञोपवीत बाँये कन्धेसे खिसककर बाँये हाथके नीचे आ जाय या उससे निकलकर कमरके नीचे आ जाय या वस्त्रादि उतारते समय उससे लिपटकर शरीरसे अलग हो जाय अथवा यज्ञोपवीतका कोई धागा टूट जाय तो नवीन प्रतिष्ठित यज्ञोपवीत धारण करना चाहिये—'**वामहस्ते व्यतीते तु तत् त्यक्त्वा धारयेत् नवम्।**'

२–मल-मूत्रका त्याग करते समय कानमें लपेटना भूल जाय अथवा कानमें लिपटा सूत्र कानसे सरककर अलग हो जाय—

मलमूत्रे त्यजेद् विप्रो विस्मृत्यैवोपवीतधृक्।
उपवीतं तदुत्सृज्य धार्यमन्यन्नवं तदा॥

(आचारेन्दु)

३–उपाकर्म, जननाशौच, मरणाशौच, श्राद्धकर्म, सूर्य-चन्द्रग्रहणके

समय, अस्पृश्यसे स्पर्श हो जाने तथा श्रावणीमें यज्ञोपवीतको अवश्य बदल लेना चाहिये—

(क) सूतके मृतके क्षौरे चाण्डालस्पर्शने तथा।
रजस्वलाशवस्पर्शे धार्यमन्यन्नवं तदा॥

(नारायणसंग्रह)

(ख) उपाकर्मणि चोत्सर्गे सूतकद्वितये तथा।
श्राद्धकर्मणि यज्ञादौ शशिसूर्यग्रहेऽपि च॥
नवयज्ञोपवीतानि धृत्वा जीर्णानि च त्यजेत्॥

(ज्योतिषार्णव)

४–प्राय: तीन–चार मासमें यज्ञोपवीत शरीरके मलादिसे दूषित और जीर्ण हो जाता है, अत: नया यज्ञोपवीत धारण करे—

धारणाद् ब्रह्मसूत्रस्य गते मासचतुष्टये।
त्यक्त्वा तान्यपि जीर्णानि नवान्यन्यानि धारयेत्॥

(गोभिल आचारभूषण)

उपर्युक्त स्थितियोंमें उपाकर्म संस्कारके समय अभिमन्त्रित उपवीतको अथवा अभिमन्त्रित यज्ञोपवीत न होनेकी स्थितिमें विधिसे अभिमन्त्रित कर उपवीतको धारण करे।

अभिमन्त्रित यज्ञोपवीतको धारण करना—

स्नानादिकर एक आसनपर बैठकर नवीन यज्ञोपवीतमें हल्दी लगाकर संकल्पकर निम्नलिखित विनियोग पढ़कर जल गिराये। तदनन्तर नीचे दिया मन्त्र पढ़ते हुए एक यज्ञोपवीत धारण करे। आचमन करे और फिर दूसरा यज्ञोपवीत धारण करे। इस प्रकार एक–एक करके ही यज्ञोपवीत पहनना चाहिये—

विनियोग—

ॐ यज्ञोपवीतमिति मन्त्रस्य परमेष्ठी ऋषिः लिङ्गोक्तादेवता:,

त्रिष्टुप् छन्दः यज्ञोपवीतधारणे विनियोगः।

यज्ञोपवीत धारण करते हुए यह मन्त्र पढ़े—

ॐ यज्ञोपवीतं परम पवित्रं प्रजापतेर्यत् सहजं पुरस्तात्।
आयुष्यमग्र्यं प्रतिमुञ्च शुभ्रं यज्ञोपवीतं बलमस्तु तेजः॥
ॐ यज्ञोपवीतमसि यज्ञस्य त्वा यज्ञोपवीतेनोपनह्यामि॥

पुराने (जीर्ण) यज्ञोपवीतको उतारना—

इसके बाद निम्नलिखित मन्त्र पढ़कर पुराने उपवीतको कण्ठी-जैसा बनाकर सिरपरसे पीठकी ओरसे अलग कर दे—

एतावद्दिनपर्यन्तं ब्रह्म त्वं धारितं मया।
जीर्णत्वात् त्वत्परित्यागो गच्छ सूत्र यथासुखम्॥

त्याज्य यज्ञोपवीतको जलमें प्रवाहित कर दे अथवा किसी पवित्र स्थानपर छोड़ दे।

इसके उपरान्त यथाशक्ति गायत्रीमन्त्रका जप करे अथवा कम-से-कम दस गायत्रीमन्त्रका जप करे और '**ॐ तत्सत् श्रीब्रह्मार्पणमस्तु**' कहते हुए हाथ जोड़कर भगवान्‌का स्मरण करे।

नवीन यज्ञोपवीतको अभिमन्त्रित करना—

श्रावणी उपाकर्मके दिन वर्षभरके लिये यज्ञोपवीतको अभिमन्त्रितकर रख लेना चाहिये। किसी कारणवश यज्ञोपवीत अभिमन्त्रित न हो तो नवीन यज्ञोपवीतको निम्न रीतिसे अभिमन्त्रितकर धारण करना चाहिये।

सर्वप्रथम शुद्ध आसनपर पूर्वाभिमुख होकर बैठे और आचमन करनेके उपरान्त अपने सामने पलाशके पत्ते अथवा किसी पात्रपर नवीन यज्ञोपवीतको रखकर जलसे प्रक्षालित करे। तदुपरान्त निम्नलिखित एक-एक मन्त्र पढ़कर अक्षत—चावल या एक-एक फूल अथवा जलको यज्ञोपवीतपर छोड़ता जाय—

प्रथमतन्तौ ॐ ओङ्कारमावाहयामि। द्वितीयतन्तौ ॐ अग्नि-

मावाहयामि। तृतीयतन्तौ ॐ सर्पानावाहयामि। चतुर्थतन्तौ ॐ सोममावाहयामि। पञ्चमतन्तौ ॐ पितॄनावाहयामि। षष्ठतन्तौ ॐ प्रजापतिमावाहयामि। सप्तमतन्तौ ॐ अनिलमावाहयामि। अष्टमतन्तौ ॐ सूर्यमावाहयामि। नवमतन्तौ ॐ विश्वान् देवानावाहयामि। प्रथमग्रन्थौ ॐ ब्रह्मणे नमः, ब्रह्माणमावाहयामि। द्वितीयग्रन्थौ ॐ विष्णवे नमः, विष्णुमावाहयामि। तृतीयग्रन्थौ ॐ रुद्राय नमः, रुद्रमावाहयामि।

इसके बाद '**प्रणवाद्यावाहितदेवताभ्यो नमः**' मन्त्रसे '**यथास्थानं न्यसामि**' कहकर उन-उन तन्तुओंमें न्यासकर चन्दन आदिसे पूजन करे। फिर यज्ञोपवीतको दस बार गायत्री मन्त्रसे अभिमन्त्रित करे। इस प्रकार नूतन यज्ञोपवीतकी प्रतिष्ठा करनी चाहिये। तब वह धारण करने योग्य हो जाता है।

यज्ञोपवीत ब्रह्मसूत्र है। गायत्रीमन्त्रद्वारा अभिमन्त्रित है। इसमें नौ देवताओंका वास है। अतः इसकी प्रतिष्ठाको बनाये रखनेके लिये जरूरी है कि यह सदा पवित्र रहे, जिससे इसके धारणकर्ताका बल, आयु और तेज अक्षुण्ण बना रहे।

शौचादिके समय यज्ञोपवीतकी स्थिति—

गृह्यसूत्रकारोंने उपवीतको शौच, लघुशङ्काके समय दाहिने कानमें लपेटनेका विधान किया है, यथा—

१-'**निवीती दक्षिणकर्णे यज्ञोपवीतं कृत्वा……पुरीषे विसृजेत्**' (वैखानसधर्मप्रश्न २।९।१ शौचविधि)।

२-'**यज्ञोपवीतं शिरसि दक्षिणकर्णे वा कृत्वा**' (बोधायनगृह्यशेषसूत्र ४।६।१)।

३-'……**कर्णस्थब्रह्मसूत्र उदङ्मुखः। कुर्यान्मूत्रपुरीषे च**……' (याज्ञवल्क्यस्मृति आचाराध्याय)

४–'**कर्णस्थब्रह्मसूत्रो मूत्रपुरीषं विसृजति**' (आग्निवेश्यगृह्यसूत्र २।६) इत्यादि।

मल-मूत्रका त्याग करते समय दाहिने कानमें सूत्र लपेटनेके रहस्यके पीछे अनेक कारण दिये गये हैं। सिर मानव-शरीरमें ज्ञानका केन्द्र होता है तथा दाहिने कानमें रुद्र, आदित्य, वसु आदि देवताओंका वास बताया गया है, अतः इस क्षेत्रको अपवित्रतासे मुक्त रखनेहेतु यज्ञोपवीतको कानपर रखनेका विधान किया गया है, यथा—

आदित्या वसवो रुद्रा वायुरग्निश्च धर्मराट्।
विप्रस्य दक्षिणे कर्णे नित्यं तिष्ठन्ति देवताः॥

पुरुष नाभिके ऊपर पवित्र है, नाभिके नीचेका भाग मलमूत्र-धारक होनेसे विशेषतः शौचके समय अपवित्र होता है। इसीलिये उस समय पवित्र यज्ञोपवीतको वहाँ न रखकर ऊर्ध्वभाग—कर्णप्रदेशमें रखा जाता है।

शरीरविज्ञानके अनुसार यदि मानव-शरीरका अवलोकन करें तो मध्यमें वीर्यकोष है। यहाँसे निकलनेवाली रक्तवाहिनी नाड़ी दाहिने कानसे होते हुए शरीरके मल-मूत्रद्वारतक जाती है। प्रायः लघुशङ्का या शौचके समय जोर लगानेसे वीर्य अज्ञात रूपसे स्खलित होने लगता है। यदि इसपर ध्यान न रखा जाय तो यह शरीरको भयङ्कर रोगोंसे ग्रस्त कर सकता है। अतः महर्षियोंने इस प्रवाहको रोकनेके लिये जहाँ एक ओर कर्णवेध-संस्कारमें कर्णच्छेदनकी रीति प्रचलित की, वहीं यज्ञोपवीतद्वारा इस नाडीको बाँधकर वीर्यरक्षा करनेका प्राविधान भी किया और उन्होंने इस नियमको बनाया। यह रक्तचापपर नियन्त्रण रखता है और हृदयको मज़बूत बनाता है।

यज्ञोपवीतकी तीन स्थितियाँ

यज्ञोपवीत तीन रूपोंमें धारण किया जाता है और उन तीन

स्थितियोंके तीन नाम हैं, जो इस प्रकार हैं—१–उपवीती (सव्य), २–निवीती (कण्ठीकी तरह—मालाकी तरह), ३–प्राचीनावीती (अपसव्य)।

क–उपवीती—

यज्ञोपवीत (जनेऊ) जब बाँयें कन्धेसे दाहिने हाथके नीचे दाहिनी तरफ होता है तो इसे उपवीती या सव्यावस्थाकी स्थिति कहते हैं। सामान्य स्थितिमें जनेऊ ऐसे ही पहना हुआ रहता है और सभी मांगलिक एवं देवकार्य भी सव्यावस्थामें ही होते हैं।

ख–निवीती—

जनेऊको गलेमें कण्ठीकी तरह (मालाकी भाँति) धारण करनेको निवीती–अवस्था कहा जाता है। तर्पणमें जब सनकादि ऋषियोंको जलांजलि दी जाती है तो निवीती होकर ही दी जाती है। इसी जनेऊको जब आगे न करके पीठकी ओर माला कराकर पहना जाता है, वह भी निवीती–अवस्था कहलाती है, ऐसा ग्राम्य धर्म (मैथुनकर्म)–के समय करनेका विधान है।

ग–प्राचीनावीती—

यज्ञोपवीत (जनेऊ) जब दाहिने कंधेसे बायें हाथके नीचे बायीं ओर किया जाता है तो इसे प्राचीनावीती या अपसव्यावस्था कहते हैं। सम्पूर्ण पितृकर्म–श्राद्ध–तर्पण आदि अपसव्य होकर ही करनेकी विधि है।

कन्याओंका उपनयन–संस्कार नहीं होता—

स्त्रियोंका विवाह–संस्कार ही द्विजत्व–सम्पादक उपनयन है। वैवाहिक वरप्रदत्त उपवस्त्रको ही विवाहतक यज्ञोपवीतकी तरह लपेटना कन्याओंका उपनयन–सूत्रधारण होता है। पुरुषके लिये शास्त्रोंमें प्रयुक्त ‘संस्कार’ शब्द जैसे उपनयनवाचक है, वैसे ही स्त्रीके

लिये शास्त्रवचनोंमें आया 'संस्कार' शब्द उसके विवाहका बोधन कराता है। **'असंस्कृतः'** यह पुंलिंग शब्द **'अनुपनीतः'** इस अर्थमें आता है, **'असंस्कृता'** यह स्त्रीलिंग शब्द **'अविवाहिता'** अर्थमें आता है। अतः विवाहसे भिन्न स्त्रियोंका कोई उपनयन-संस्कार पृथक् नहीं होता। इसीलिये पुरुषको विवाहके पूर्व ही यज्ञोपवीत-संस्कार करना चाहिये, जिससे पत्नी भी उपवीती हो जाय।

संस्कारोंके अनुपालनमें शुचिता और पवित्रताका विशेष ध्यान रखना होता है। स्त्रीके शरीरका निर्माण इस तरह हुआ है कि उसे मासमें कुछ दिन (रजोधर्मके समय) अपवित्र दशामें रहना पड़ता है। इसी तरह प्रसवकालमें भी वह अपवित्र दशामें रहनेके लिये बाध्य होती है। पुरुषके समान स्त्री ब्रह्मचर्यधर्मका पालन (रजस्वला होनेपर) करनेयोग्य नहीं होती। अतः उनके लिये उपनयनका विधान नहीं है। मनुजीने बताया है कि स्त्रियोंका विवाह-संस्कार ही उनके यज्ञोपवीत संस्कारके समान है—**'वैवाहिको विधिः स्त्रीणां संस्कारो वैदिकः स्मृतः।'** (मनुस्मृति २। ६७)

उपनयनसंस्कारके मुख्य कर्म तथा उनकी सामान्य विधि—

उपनयन संस्कारकी विधि बहुत विस्तृत है तथापि उसके मुख्य करणीय कर्मोंका यहाँ संक्षेपमें उल्लेख किया जाता है। सर्वप्रथम अन्य सामग्रियोंके अतिरिक्त जो विशेष सामग्री है, उसका संचयन कर लेना चाहिये। यथा—कटिसूत्र, नवीन कौपीन, प्रावरणवस्त्र, मौंजी आदिकी मेखला, संस्कारित यज्ञोपवीत, मृगचर्म, पलाश आदिका दण्ड तथा भिक्षापात्र आदि।

सर्वप्रथम वटु (माणवक)-को स्नानादि कराकर अलंकारादिसे अलंकृतकर आचार्यके पास ले आये। आचार्य उसे मन्त्रपूर्वक कटिसूत्र

और कौपीन धारण कराते हैं, मेखला बाँधते हैं और माणवकको गायत्रीमन्त्रपूर्वक शिखाबन्धन करवाते हैं और मन्त्रपूर्वक एक यज्ञोपवीत भी धारण करवाते हैं। तदनन्तर माणवकको मृगचर्म और बिना मन्त्रके दण्ड धारण करवाया जाता है। तदनन्तर आचार्य अपनी अंजलिमें जल लेकर माणवककी अंजलिको जलसे पूरित करते हैं और माणवक उस जलसे सूर्यको अर्घ्य प्रदान करता है और '**तच्चक्षुर्देवहितं०**' इस मन्त्रद्वारा उससे सूर्यदर्शन तथा सूर्योपस्थान कराया जाता है। तदनन्तर आचार्य माणवकके दक्षिण कंधेके ऊपरसे अपना दाहिना हाथ ले जाकर '**मम व्रते०**' इस मन्त्रके द्वारा उसके हृदयका स्पर्श करते हैं। इस क्रियाको हृदयालम्भन कहते हैं। तदनन्तर आचार्य माणवकके अंगुष्ठसहित दाहिने हाथको पकड़कर उससे नाम पूछते हैं तथा किसके ब्रह्मचारी हो—ऐसा प्रश्न करते हैं। आचार्य उसकी रक्षाके लिये मन्त्रपूर्वक उसे प्रजापति आदि देवताओंका संरक्षण प्रदान करते हैं।

गायत्रीमन्त्रका उपदेश—

तदनन्तर माणवक उपनयनवेदीस्थित अग्निकी प्रदक्षिणा करके आचार्यके उत्तरकी ओर बैठता है, आचार्य उपनयनांग-हवनका कार्य सम्पन्न करते हैं और उसे ब्रह्मचर्यव्रत तथा आचारकी शिक्षा प्रदान करते हैं। तदनन्तर आचार्य गायत्रीमन्त्रका उसके दक्षिण कर्णमें निम्न रीतिसे उपदेश करते हैं*—

१-प्रथम बार गायत्रीके प्रथम पाद—'**ॐ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यम्**' को कहकर माणवकसे उसका यथाशक्ति उच्चारण

* शास्त्रोंमें क्षत्रिय एवं वैश्य बालकोंके लिये अन्य गायत्रीमन्त्रका भी विधान आया है, परंतु सभी द्विजोंके लिये ब्रह्मगायत्री मन्त्रका उपदेश भी विहित है। अतः इसी मन्त्रका उपदेश ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य—तीनों वर्णोंको प्रदान किया जाता है।

करवाते हैं। पुनः गायत्रीमन्त्रके द्वितीय पाद—'**भर्गो देवस्य धीमहि**' इसे सुनाकर उससे उच्चारण करवाते हैं। पुनः गायत्रीके तृतीय पाद—'**धियो यो नः प्रचोदयात्**'—इसे सुनाकर उससे उच्चारण करवाते हैं।

२–द्वितीय बार गायत्री मन्त्रकी आधी ऋचा—'**ॐ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि**' सुनाकर उससे उच्चारण करवाते हैं फिर शेष आधी ऋचा '**धियो यो नः प्रचोदयात्**' सुनाकर उच्चारण करवाते हैं।

३–तृतीय बारमें सम्पूर्ण गायत्री मन्त्र '**ॐ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि। धियो यो नः प्रचोदयात्**' को उसके कानमें सुनाकर उससे उच्चारण करवाते हैं।

इस प्रकार तीन बारके अभ्याससे माणवकको गायत्रीमन्त्रका उच्चारण प्रायः सहज होने लगता है। यह गायत्रीमन्त्र ब्रह्मगायत्री कहलाता है। इस गायत्रीमन्त्रके द्रष्टा ऋषि विश्वामित्र हैं, इसका गायत्री छन्द है और इसके देवता सविता (सूर्य) हैं।

उत्तरांगकर्म—

गायत्री–मन्त्रदानके अनन्तर माणवक आचार्यको दक्षिणा प्रदानकर उन्हें प्रणाम करता है और आचार्य आशीर्वाद प्रदानकर उसका अभिनन्दन करते हैं।

तदनन्तर माणवक उपनयनाग्निमें घृतयुक्त समिधा प्रदान करता है और हाथोंके द्वारा अग्निको तापकर अपने देहके विभिन्न अंगोंमें अग्निका आप्यायन करता है और स्रुवमूलसे वेदीसे भस्म ग्रहणकर अनामिका अँगुलीके द्वारा ललाट, ग्रीवा, दक्षिण स्कन्ध तथा हृदयमें मन्त्रपूर्वक भस्म (त्र्यायुष्) धारण करता है, यह कर्म त्र्यायुष्करण कहलाता है। इससे आयुकी वृद्धि होती है, इसका क्रम इस प्रकार है—

'**ॐ त्र्यायुषं जमदग्नेः—इति ललाटे**' '**ॐ कश्यपस्य त्र्यायुषम्—**

इति ग्रीवायाम्' 'ॐ यद्देवेषु त्र्यायुषम्—इति दक्षिणांसे' 'ॐ तन्नो अस्तु त्र्यायुषम्—इति हृदि।'

तदनन्तर अग्नि तथा गुरुका अभिवादन करना चाहिये। गुरुके अभिवादनके अनन्तर जो विद्या, अवस्था तथा तपोवृद्धजन हों, उनका भी माणवकको उस समय अभिवादन करना चाहिये।

तदनन्तर ब्रह्मचारी बटुक नये पीत वस्त्रको गलेमें झोलीकी तरह डालकर दण्ड ग्रहण करके भिक्षाकी याचना करता है। सर्वप्रथम ब्रह्मचारीको मातासे '**भवति भिक्षां देहि मातः**' कहकर भिक्षा माँगनी चाहिये। क्षत्रिय ब्रह्मचारी '**भिक्षां भवति देहि मातः**' यह कहे और वैश्य ब्रह्मचारी '**देहि भिक्षां भवति मातः**'—ऐसा कहे। पुरुषोंसे '**भवन् भिक्षां देहि**' ऐसा कहे। ब्रह्मचारी '**स्वस्ति**' ऐसा कहकर भिक्षा ग्रहण करे और प्राप्त भिक्षाको आचार्यको निवेदित करे। अन्तमें आचार्यको दक्षिणा प्रदानकर ब्राह्मणभोजनका संकल्पकर अग्निको विसर्जित करना चाहिये।

आगे इस संस्कारकी प्रयोगविधि दी जा रही है।

[११] उपनयनसंस्कार-प्रयोग

उपनयन-संस्कारसे पहले दिन अथवा उपनयन-संस्कारके दिन उपनयन-संस्कार करनेवाला कुमारका पिता (अथवा उपनयन करनेका अधिकारी[१]) उस दिन सपत्नीक उपवास रखे। प्रातःकालिक शौचादि नित्य क्रिया सम्पन्न करके मांगलिक स्नान करके धुले हुए दो वस्त्र (धोती एवं उत्तरीय) धारण करके सन्ध्यावन्दनादिसे निवृत्त होकर अल्पना आदिसे अलंकृत शुद्ध पवित्र देशमें[२] अपने आसनपर पूर्वाभिमुख बैठ जाय। अपने दाहिनी ओर[३] पत्नीको बैठा ले और पत्नीके दाहिनी ओर कुमार[४] (जिसका उपनयन होना हो) बैठ जाय। तिलक लगा

---

१. (क) पितैवोपनयेत्पुत्रं तदभावे पितुः पिता। तदभावे पितुर्भ्राता तदभावे तु सोदरः॥

(ख) पिता पितामहो भ्राता ज्ञातयो गोत्रजाग्रजाः।
उपायनेऽधिकारी स्यात् पूर्वाभावे परः परः॥

पितेति विप्रपरं न क्षत्रियवैश्ययोः। तयोस्तु पुरोहित एव उपनयनस्य दृष्टार्थत्वात्। तयोस्त्वध्यापनेऽनधिकारात्।

जिस द्विजाति बालकका उपनयन होता है, शास्त्रीय भाषामें उसे 'माणवक' कहा जाता है। उस माणवकका उपनयनसंस्कार करनेका अधिकारी कौन है, इसकी व्यवस्थामें पारस्करगृह्यसूत्र (२। २। १)-के गदाधरभाष्यमें महर्षि वृद्धगर्गके वचनसे बताया गया है कि पिता, पितामह, चाचा, सहोदर भाई, बन्धु-बान्धव तथा गोत्रके लोग उपनयन करानेके अधिकारी होते हैं। इनमें पूर्वके प्राप्त न होनेपर ही उत्तरवर्ती लोगोंको अधिकार है अर्थात् यदि पिता हैं तो पितामह आदिको उपनयन करानेका अधिकार नहीं है। यहाँ यह व्यवस्था ब्राह्मणके लिये है। क्षत्रिय-वैश्य बालकका उपनयन तो पुरोहित (आचार्य)-को ही कराना चाहिये; क्योंकि उन दोनोंको अध्यापनका शास्त्रतः अधिकार नहीं है।

२. पुण्यक्षेत्रं नदीतीरं गुहा पर्वतमस्तकम्। तीर्थप्रदेशः सिन्धूनां सङ्गमः पावनं वनम्॥
उद्यानानि विविक्तानि बिल्वमूलं तटं गिरेः। तुलसीकाननं गोष्ठं वृषशून्यशिवालयः॥
अश्वत्थामलकीमूलं गोशाला जलमध्यतः। देवतायतनं कूलं समुद्रस्य निजं गृहम्॥

३. संस्कार्यः पुरुषो वापि स्त्री वा दक्षिणतः सदा। संस्कारकर्ता सर्वत्र तिष्ठेदुत्तरतः सदा॥
व्रतबन्धे विवाहे च चतुर्थ्यां सह भोजने। व्रते दाने मखे श्राद्धे पत्नी तिष्ठति दक्षिणे॥

४. शिशुस्त्वन्नप्राशनात्प्रागाचौलं बालकः स्मृतः। कुमारकस्तु विज्ञेयो यावन्मौञ्जीनिबन्धनम्॥

ले। शिखा बाँध ले।[1] रक्षादीपको प्रज्वलित कर ले।[2] पूजन-सम्बन्धी सभी सामग्रियोंको यथास्थान रख ले। दोनों हाथोंकी अनामिकामें पवित्री धारणकर आचमन कर ले तथा प्राणायाम कर ले। स्वयंको तथा पूजन-सामग्रीको निम्न मन्त्रसे जल छिड़ककर पवित्र कर ले—

अपवित्रः पवित्रो वा सर्वावस्थां गतोऽपि वा।
यः स्मरेत् पुण्डरीकाक्षं स बाह्याभ्यन्तरः शुचिः॥

तदनन्तर हाथमें पुष्प-अक्षत लेकर निम्न शान्तिमन्त्रोंका पाठ करे—

आ नो भद्राः क्रतवो यन्तु विश्वतोऽदब्धासो अपरीतास उद्भिदः। देवा नो यथा सदमिद् वृधे असन्नप्रायुवो रक्षितारो दिवे दिवे॥ १॥

देवानां भद्रा सुमतिर्ऋजूयतां देवानाꣳ रातिरभि नो निवर्तताम्। देवानाꣳ सख्यमुपसेदिमा वयं देवा न आयुः प्रतिरन्तु जीवसे॥ २॥

तान्पूर्वया निविदा हूमहे वयं भगं मित्रमदितिं दक्षमस्त्रिधम्। अर्यमणं वरुणꣳ सोममश्विना सरस्वती नः सुभगा मयस्करत्॥ ३॥

तन्नो वातो मयोभु वातु भेषजं तन्माता पृथिवी तत्पिता द्यौः। तद् ग्रावाणः सोमसुतो मयोभुवस्तदश्विना शृणुतं धिष्ण्या युवम्॥ ४॥

तमीशानं जगतस्तस्थुषस्पतिं धियञ्जिन्वमवसे हूमहे वयम्। पूषा नो यथा वेदसामसद् वृधे रक्षिता पायुरदब्धः स्वस्तये॥ ५॥

स्वस्ति न इन्द्रो वृद्धश्रवाः स्वस्ति नः पूषा विश्ववेदाः। स्वस्ति नस्तार्क्ष्यो अरिष्टनेमिः स्वस्ति नो बृहस्पतिर्दधातु॥ ६॥

१.सदोपवीतिना भाव्यं सदा बद्धशिखेन च। विशिखो व्युपवीतश्च यत्करोति न तत्कृतम्॥
खल्वाटत्वादिदोषेण विशिखश्चेन्नरो भवेत्। कौशीं तदा धारयतीति ब्रह्मग्रन्थियुतां शिखाम्॥
कार्येयं सप्तभिर्दर्भैर्धार्या श्रोत्रे तु दक्षिणे

२.देवस्य दक्षिणे पार्श्वे दीपं दद्याद्यथाविधि। दीपं न स्थापयेद्भूमौ घृततैले न मिश्रयेत्॥

पृषदश्वा मरुतः पृश्निमातरः शुभं यावानो विदथेषु जग्मयः। अग्निजिह्वा मनवः सूरचक्षसो विश्वे नो देवा अवसागमन्निह॥ ७॥

भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम देवा भद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्राः। स्थिरैरङ्गैस्तुष्टुवाꣳ सस्तनूभिर्व्यशेमहि देवहितं यदायुः॥ ८॥

शतमिन्नु शरदो अन्ति देवा यत्रा नश्चक्रा जरसं तनूनाम्। पुत्रासो यत्र पितरो भवन्ति मा नो मध्या रीरिषतायुर्गन्तोः॥ ९॥

अदितिर्द्यौरदितिरन्तरिक्षमदितिर्माता स पिता स पुत्रः। विश्वे देवा अदितिः पञ्च जना अदितिर्जातमदितिर्जनित्वम्॥ १०॥

द्यौः शान्तिरन्तरिक्षꣳ शान्तिः पृथिवी शान्तिरापः शान्तिरोषधयः शान्तिः। वनस्पतयः शान्तिर्विश्वे देवाः शान्तिर्ब्रह्म शान्तिः सर्वꣳ शान्तिः शान्तिरेव शान्तिः सा मा शान्तिरेधि॥ ११॥

यतो यतः समीहसे ततो नो अभयं कुरु। शं नः कुरु प्रजाभ्योऽभयं नः पशुभ्यः॥ १२॥

सुशान्तिर्भवतु।

ॐ लक्ष्मीनारायणाभ्यां नमः। ॐ उमामहेश्वराभ्यां नमः। ॐ वाणीहिरण्यगर्भाभ्यां नमः। ॐ शचीपुरन्दराभ्यां नमः। ॐ मातापितृचरणकमलेभ्यो नमः। ॐ इष्टदेवताभ्यो नमः। ॐ कुलदेवताभ्यो नमः। ॐ ग्रामदेवताभ्यो नमः। ॐ स्थानदेवताभ्यो नमः। ॐ वास्तुदेवताभ्यो नमः। ॐ सर्वेभ्यो देवेभ्यो नमः। ॐ सर्वेभ्यो ब्राह्मणेभ्यो नमः। ॐ सिद्धिबुद्धिसहिताय श्रीमन्महागणाधिपतये नमः—

कहकर देवोंको प्रणाम करे और हाथमें पुष्पाक्षत लेकर निम्न मन्त्रोंका पाठ करे—

सुमुखश्चैकदन्तश्च कपिलो गजकर्णकः।
लम्बोदरश्च विकटो विघ्ननाशो विनायकः॥

धूम्रकेतुर्गणाध्यक्षो भालचन्द्रो गजाननः।
द्वादशैतानि नामानि यः पठेच्छृणुयादपि॥
विद्यारम्भे विवाहे च प्रवेशे निर्गमे तथा।
संग्रामे संकटे चैव विघ्नस्तस्य न जायते॥
शुक्लाम्बरधरं देवं शशिवर्णं चतुर्भुजम्।
प्रसन्नवदनं ध्यायेत् सर्वविघ्नोपशान्तये॥
अभीप्सितार्थसिध्यर्थं पूजितो यः सुरासुरैः।
सर्वविघ्नहरस्तस्मै गणाधिपतये नमः॥
सर्वमङ्गलमाङ्गल्ये शिवे सर्वार्थसाधिके।
शरण्ये त्र्यम्बके गौरि नारायणि नमोऽस्तु ते॥
सर्वदा सर्वकार्येषु नास्ति तेषाममङ्गलम्।
येषां हृदिस्थो भगवान् मङ्गलायतनं हरिः॥
तदेव लग्नं सुदिनं तदेव ताराबलं चन्द्रबलं तदेव।
विद्याबलं दैवबलं तदेव लक्ष्मीपते तेऽङ्घ्रियुगं स्मरामि॥
लाभस्तेषां जयस्तेषां कुतस्तेषां पराजयः।
येषामिन्दीवरश्यामो हृदयस्थो जनार्दनः॥
यत्र योगेश्वरः कृष्णो यत्र पार्थो धनुर्धरः।
तत्र श्रीर्विजयो भूतिर्ध्रुवानीतिर्मतिर्मम॥
अनन्याश्चिन्तयन्तो मां ये जनाः पर्युपासते।
तेषां नित्याभियुक्तानां योगक्षेमं वहाम्यहम्॥
स्मृतेः सकलकल्याणं भाजनं यत्र जायते।
पुरुषं तमजं नित्यं व्रजामि शरणं हरिम्॥
सर्वेष्वारम्भकार्येषु त्रयस्त्रिभुवनेश्वराः।
देवा दिशन्तु नः सिद्धिं ब्रह्मेशानजनार्दनाः॥
विनायकं गुरुं भानुं ब्रह्मविष्णुमहेश्वरान्।
सरस्वतीं प्रणम्यादौ सर्वकामार्थसिद्धये॥

विश्वेशं माधवं ढुण्ढिं दण्डपाणिं च भैरवम्।
वन्दे काशीं गुहां गङ्गां भवानीं मणिकर्णिकाम्॥

हाथके अक्षत-पुष्प सामने छोड़ दे।

प्रायश्चित्त-गोदान-संकल्प—

सर्वप्रथम उपनयनसंस्कारसे पूर्व गर्भाधानादि अन्य संस्कारोंके न किये जानेसे उत्पन्न प्रत्यवायोंके परिहारके लिये प्रायश्चित्तस्वरूप गोदान अथवा गोनिष्क्रय-द्रव्यका संकल्प निम्न रीतिसे करना चाहिये।

दाहिने हाथमें जल-पुष्पाक्षतादि लेकर बोले—

ॐ विष्णुर्विष्णुर्विष्णुः श्रीमद्भगवतो महापुरुषस्य विष्णो-राज्ञया प्रवर्तमानस्य ब्रह्मणो द्वितीयपरार्धे श्रीश्वेतवाराहकल्पे वैवस्वतमन्वन्तरे अष्टाविंशतितमे कलियुगे कलिप्रथमचरणे जम्बूद्वीपे भारतवर्षे आर्यावर्तैकदेशे (यदि काशी हो तो **अविमुक्तवाराणसीक्षेत्रे आनन्दवने गौरीमुखे त्रिकण्टकविराजिते महाश्मशाने भगवत्या उत्तरवाहिन्या भागीरथ्या वामभागे) ....नगरे/ग्रामे/क्षेत्रे षष्टि-संवत्सराणां मध्ये ....संवत्सरे ....अयने ....ऋतौ ....मासे ....पक्षे ....तिथौ ....नक्षत्रे ....योगे ....करणे ....वासरे ....राशिस्थिते सूर्ये ....राशिस्थिते चन्द्रे शेषेषु ग्रहेषु यथायथाराशिस्थानस्थितेषु सत्सु एवं ग्रहगुणगणविशिष्टे शुभमुहूर्ते ....गोत्रः सपत्नीकः ....शर्मा/वर्मा/गुप्तोऽहं अस्य कुमारस्य गर्भाधान-पुंसवन-सीमन्तोन्नयन-जातकर्म-नामकरण-निष्क्रमणान्नप्राशन-चूडाकरण-संस्काराणां स्व-स्वकालेऽकृतानां कालातिपत्तिदोषपरिहारेण व्रात्य-दोषपरिहारद्वारा/उच्छिन्नयज्ञोपवीतसंस्कारपरम्परादोषपरिहारार्थं* उपनयनाधिकारसिद्धिद्वारा श्रीपरमेश्वरप्रीत्यर्थं कृच्छ्रात्मकं प्रायश्चित्तं**

---

* जिन लोगोंका जनेऊ निर्धारित समयपर नहीं हुआ, वे '**व्रात्यदोषपरिहारद्वारा**' शब्द संकल्पमें जोड़ लें तथा जिनके पिताका यज्ञोपवीत-संस्कार न हुआ हो, वे '**उच्छिन्नयज्ञोपवीतसंस्कारपरम्परादोषपरिहारार्थं**' शब्द संकल्पमें जोड़ लें।

गोनिष्क्रयद्रव्यदानप्रत्याम्नायेन करिष्ये। कहकर संकल्प छोड़ दे।

हाथमें देयद्रव्यको ग्रहणकर **'देयद्रव्याय नमः'** कहकर गन्धपुष्पादिद्वारा उसका पूजन कर ले और निम्न संकल्प करे—

ॐ अद्य ममास्य कुमारस्य संकल्पितनानादोषपरिहारार्थं कृच्छ्रप्रायश्चित्तप्रत्याम्नायभूतगोनिष्क्रयद्रव्यदानद्वारेण उपनयनाधिकारसिद्धिद्वारा श्रीपरमेश्वरप्रीतये गोनिष्क्रयद्रव्यं ....नाम ....गोत्राय ....ब्राह्मणाय भवते सम्प्रददे (यदि बादमें देना हो तो **दातुमुत्सृज्ये** बोले)।

ऐसा कहकर निष्क्रय-द्रव्य ब्राह्मणको दे दे और निम्न प्रार्थना करे—

गोप्रार्थना—

यज्ञसाधनभूता या विश्वस्याघौघनाशिनी।
विश्वरूपधरो देवः प्रीयतामनया गवा॥

संकल्प—

हाथमें जलाक्षतादि लेकर एक साथ तीनों संस्कारों (उपनयन, वेदारम्भ तथा समावर्तन)-का निम्न संकल्प करे—

ॐ अद्य ....शर्मा/वर्मा/गुप्तोऽहं अस्य कुमारस्य* द्विजत्वसिद्ध्या वेदाध्ययनाद्यधिकारसिद्धिद्वारा श्रीपरमेश्वरप्रीतये उपनयनसंस्कारं श्रौतस्मार्तकर्मानुष्ठानाधिकारप्राप्तिपूर्वकब्रह्मवर्चससिद्धिद्वारा श्रीपरमेश्वरप्रीत्यर्थं वेदारम्भसंस्कारं गृहस्थाश्रमार्हतासिद्धिद्वारा श्रीपरमेश्वरप्रीत्यर्थं समावर्तनसंस्कारं च करिष्ये।

हाथका जलाक्षतादि छोड़ दे, पुनः हाथमें जल लेकर निम्न संकल्प करे—

तत्पूर्वाङ्गत्वेन अस्य कुमारस्य करिष्यमाणोपनयनवेदारम्भसमावर्तनसंस्काराणां विहितं तन्त्रेण गणेशाम्बिकयोः पूजनं स्वस्ति-

* दो बालक हों तो **'अनयोः'** तथा तीन या तीनसे अधिक हों तो संकल्पमें **'एषां कुमाराणाम्'** शब्द बोलना चाहिये।

पुण्याहवाचनं मातृकापूजनं वसोर्धारापूजनं आयुष्यमन्त्रजपमाभ्युदयिकश्राद्धं[1] च करिष्ये।

ऐसा संकल्प करके गणेशाम्बिकापूजन, कलशस्थापन, स्वस्ति-पुण्याहवाचन, मातृकापूजन, वसोर्धारापूजन, आयुष्यमन्त्रजप तथा सांकल्पिक विधिसे आभ्युदयिक श्राद्ध करे।

उपनयनसंस्कार करनेकी योग्यता प्राप्त करनेके लिये गोदान—

उपनयन-संस्कारसे पूर्व कुमारका पिता आदि स्वयंकी उपनयन-कर्ममें योग्यताप्राप्तिके लिये प्रायश्चित्तस्वरूप गोदान (निष्क्रयद्रव्य-दान)-का निम्न संकल्प करें—

ॐ अद्य मम सकलपापक्षयपूर्वकमस्य कुमारस्य उपनयन-कर्मणि मम उपनेतृत्वाधिकारसिद्धिद्वारा श्रीपरमेश्वरप्रीतये कृच्छ्रत्रय-प्रत्याम्नायभूतगोत्रयनिष्क्रयद्रव्यं ....गोत्राय ....ब्राह्मणाय सम्प्रददे— ऐसा संकल्पकर निष्क्रय-द्रव्य ब्राह्मणको दे दे।

गायत्री-जपहेतु ब्राह्मण-वरण—

इसके बाद पिता आदि आचार्य गायत्री-उपदेश देनेकी अधिकार-प्राप्तिके लिये स्वयं अथवा वृत ब्राह्मणके द्वारा द्वादश सहस्र, द्वादशाधिक सहस्र अथवा अयुतगायत्री जप कराये, उसके लिये निम्न संकल्प करे और ब्राह्मणका वरण करे—

ॐ अद्य मम गायत्र्युपदेशाधिकारसिद्धये ....यथासंख्याकं[2] गायत्रीजपं ब्राह्मणद्वारा कारयिष्ये।

बटुकका प्रवेश

इसके बाद हाथमें अक्षत और फल लिये हुए बटुकको आचार्यके

१. इनकी विधि परिशिष्ट पृ०-सं० ४१५ तकमें दी गयी है।

२. समय एवं सामर्थ्य होनेपर कुछ ब्राह्मणोंको बैठाकर दस हजार, बारह हजार संख्या तथा इससे अधिक अथवा यथाशक्ति गायत्रीमन्त्रजप करा सकते हैं।

समीप लाये। बटुक अभीतक किये गये मनमाने आचरण, भाषण और भक्षण आदि दोषोंके परिहारके लिये तथा उपनयन-संस्कारकी योग्यतासिद्धिके लिये प्रायश्चित्तके रूपमें गोदान (गोनिष्क्रयद्रव्य)-का संकल्प करे—

ॐ अद्य ....गोत्रः ....बटुकोऽहं कामचारकामवादकाम-भक्षणादिदोषपरिहारेण स्वस्योपनेयत्वाधिकारसिद्धये कृच्छ्रत्रय-प्रत्याम्नायगोत्रयनिष्क्रयद्रव्यं ....गोत्राय ....शर्मणे ब्राह्मणाय सम्प्रददे।

ब्राह्मणको गोदान (गोनिष्क्रयद्रव्य) दे।

बटुकके मुण्डनका संकल्प—

इसके बाद आचार्य बटुकके मुण्डनके लिये दाहिने हाथमें जलाक्षतादि लेकर संकल्प करे—

ॐ अद्य अस्य कुमारस्योपनयनाङ्गभूतं वपनं[1] करिष्ये। कहकर हाथमें लिये जल-अक्षत छोड़ दे।

इसके बाद बटुककी शिखाको छोड़कर चूड़ाकरण-संस्कार[2]के अनुसार मुण्डन कराये, स्नान कराकर वस्त्रधारण कराकर पुष्पमालादिसे अलंकृतकर बैठाये।

ब्राह्मणभोजनसंकल्प—

इसके बाद तीन ब्राह्मणोंको भोजन करानेके लिये दाहिने हाथमें जलाक्षतादि लेकर संकल्प करे—

ॐ अद्य अस्य कुमारस्योपनयनाख्ये कर्मणि पूर्वाङ्गत्वेन त्रीन् ब्राह्मणान् भोजयिष्यामि। भोजनपर्याप्तं मिष्टान्नं तन्निष्क्रयद्रव्यं वा दास्ये। ऐसा कहकर संकल्पजल छोड़ दे।

तदनन्तर तीन ब्राह्मणोंको भोजन कराये। कुमारको भी क्षार-

१. वपनं तु भोजनात्पूर्वमेव कार्यम्।

२. पृ०सं० १५२ देखें।

लवणरहित पय (खीर) आदि मधुर भोजन कराये।

अग्निस्थापनसंकल्प—

इसके बाद आचार्य दाहिने हाथमें जलाक्षतादि लेकर अग्निस्थापनका* संकल्प करे—

ॐ अद्य अस्मिन्नुपनयनकर्मणि समुद्भवनामाग्नेः स्थापनं करिष्ये। कहकर जल-अक्षत छोड़ दे।

वेदीनिर्माण

सुविधाकी दृष्टिसे उपनयन, वेदारम्भ तथा समावर्तन-संस्कारके लिये तीन वेदी बनाये और एक साथ तीनोंका पंचभूसंस्कार निम्न रीतिसे कर ले। पहले उपनयनवेदी तदनन्तर वेदारम्भवेदी और फिर समावर्तन-वेदीका संस्कार करे।

पंच-भूसंस्कार

(१) परिसमूहन—

तीन कुशोंके द्वारा दक्षिणसे उत्तरकी ओर वेदीको साफ करे और उन कुशोंको ईशानकोणमें फेंक दे। **(त्रिभिर्दर्भैः परिसमुह्य तान् कुशानैशान्यां परित्यज्य)**

(२) उपलेपन—

गायके गोबर तथा जलसे वेदीको लीप दे। **(गोमयोदकेनोपलिप्य)**

(३) उल्लेखन या रेखाकरण—

स्रुवाके मूलसे वेदीके मध्य भागमें प्रादेशमात्र (अँगूठेसे तर्जनीके बीचकी दूरी) लम्बी तीन रेखाएँ पश्चिमसे पूर्वकी ओर खींचे। रेखा खींचनेका क्रम दक्षिणसे प्रारम्भकर उत्तरकी ओर होना चाहिये। **(स्फ्येन, स्रुवमूलेन, कुशमूलेन वा त्रिरुल्लिख्य)**

---

* अग्निको अरणिमन्थनद्वारा प्रकट करने अथवा सुवासिनीद्वारा लानेका विधान है।

(४) उद्धरण—

उन खींची गयी तीनों रेखाओंसे उल्लेखन-क्रमसे अनामिका तथा अंगुष्ठके द्वारा थोड़ी-थोड़ी मिट्टी निकालकर बायें हाथमें रखता जाय। बादमें सब मिट्टी दाहिने हाथपर रखकर ईशानकोणकी ओर फेंक दे। **(अनामिकाङ्गुष्ठाभ्यां मृदमुद्धृत्य)**

(५) अभ्युक्षण या सेचन—

तदनन्तर गंगा आदि पवित्र नदियोंके जलके छींटोंसे वेदीको पवित्र करे। **(जलेनाभ्युक्ष्य)**

अग्निस्थापन—

इसके बाद सुवासिनीके द्वारा लायी गयी प्रदीप्त, निर्धूम अग्निकी स्थापना उपनयन-वेदीपर निम्न मन्त्रसे करे—

ॐ अग्निं दूतं पुरो दधे हव्यवाहमुप ब्रुवे। देवाँ२ आ सादयादिह।

अग्निके ऊपर उसकी रक्षाके लिये कुछ काष्ठ आदि डाल दे और अग्निको प्रज्वलित करे।

बटुकका संस्कार

इसके बाद बटुकको आचार्यके समीप लाये। बटुक आचार्यके दक्षिण भागमें और अग्निके पश्चिम भागमें आसनपर बैठ जाय। तब आचार्य निम्न मन्त्र पढ़कर बटुकको प्रतिष्ठित करे—

ॐ मनो जूतिर्जुषतामाज्यस्य बृहस्पतिर्यज्ञमिमन्तनो त्वरिष्टं यज्ञꣳ समिमन्दधातु। विश्वेदेवास इह मादयन्तामों प्रतिष्ठ॥

इसके बाद आचार्य बटुकसे निम्न वाक्य कहलाये—

ॐ ब्रह्मचर्यमागाम्।

बटुक बोले—

ॐ ब्रह्मचर्यमागाम्।

पुनः आचार्य बटुकसे यह कहलाये—

ॐ ब्रह्मचार्यसानि।

बटुक बोले—

ॐ ब्रह्मचार्यसानि।

बटुकको कटिसूत्र और कौपीन धारण कराना—

इसके बाद आचार्य मौन हो बटुकको कटिसूत्र धारण कराये। तदनन्तर निम्न मन्त्र बोलते हुए कौपीन वस्त्र धारण कराये—

ॐ येनेन्द्राय बृहस्पतिवासः पर्यदधादमृतम्।
तेन त्वा परि दधाम्यायुषे दीर्घायुत्वाय बलाय वर्चसे॥

इसके बाद दो बार आचमन कराये।[1]

मेखलाबन्धन—

इसके बाद आचार्य बटुकको खड़ाकर उसके कटिप्रदेशमें प्रदक्षिण क्रमसे तीन आवृतकर प्रवरके नियमानुसार तीन या पाँच गाँठ बाँधकर निम्न मन्त्रसे ब्राह्मणको मुंजकी, क्षत्रियको प्रत्यंचाकी और वैश्यको शणकी मेखला धारण कराये[2]—

ॐ इयं दुरुक्तं परि बाधमाना वर्णं पवित्रं पुनती म ऽआऽगात्।
प्राणापानाभ्यां बलमादधाना स्वसा देवी सुभगा मेखलेयम्।

शिखाबन्धन—

प्रणवपूर्वक गायत्रीमन्त्रसे बटुककी शिखा बाँधे।

---

१. (क) द्विवारं तालुस्पर्शगामिजलप्राशनमात्रम् न तु त्रिरावृत्तहृदयस्पर्शगामिजलप्राशनस्य द्विरावृत्तिः। (संस्कारदीपक)

(ख) ॐ केशवाय नमः, ॐ नारायणाय नमः, ॐ माधवाय नमः—कहकर आचमन करे और ॐ हृषीकेशाय नमः—कहकर हाथ धोये। आचमनका जल तालुमात्रको स्पर्श करे। इसी प्रकार एक बार आचमन और करे।

२. मौञ्जी मेखला त्रिवृता ग्रन्थयश्च प्रवरसंख्यया।
त्रिवृन्मौञ्जी समा श्लक्ष्णा कार्या विप्रस्य मेखला।
क्षत्रियस्य तु मौर्वी ज्या वैश्यस्य शणतस्तथा॥

यज्ञोपवीतसहित अष्ट भाण्डदान—

इसके बाद यज्ञोपवीतधारणकी योग्यता प्राप्त करनेके लिये बटुक यज्ञोपवीत और चावलसे पूर्ण दक्षिणासहित आठ पात्रों (भाण्डों)-के दानका निम्न संकल्प करे—

ॐ अद्य ""गोत्रः ""बटुकोऽहं स्वकीयोपनयनकर्मविषयक-सत्संस्कारप्राप्त्यर्थं तथा च द्विजत्वसिद्धिवेदाध्ययनाधिकारसिध्यर्थं यज्ञोपवीतधारणार्थं च श्रीसवितृनारायणप्रीतये इमान्यष्टौ भाण्डानि सयज्ञोपवीतफलाक्षतदक्षिणासहितानि यथानामगोत्रेभ्यो ब्राह्मणेभ्यो दातुमुत्सृज्ये।

—इस प्रकार संकल्प बोलकर पात्रोंको ब्राह्मणोंको दे दे और यज्ञोपवीत-धारणकी निम्न प्रक्रिया सम्पन्न करे—

यज्ञोपवीतसंस्कार—

आचार्य निम्न मन्त्रोंसे यज्ञोपवीतका प्रक्षालन करे—

ॐ आपो हि ष्ठा मयोभुवस्ता न ऊर्जे दधातन। महे रणाय चक्षसे॥ १॥
यो वः शिवतमो रसस्तस्य भाजयतेह नः। उशतीरिव मातरः॥ २॥
तस्मा अरङ्गमाम वो यस्य क्षयाय जिन्वथ। आपो जनयथा च नः॥ ३॥

यज्ञोपवीतका अभिमन्त्रण—

तदनन्तर आचार्य यज्ञोपवीतकी गाँठका स्पर्शकर निम्न मन्त्रसे अभिमन्त्रण करे—

ॐ प्राणानां ग्रन्थिरसि रुद्रो मा विशान्तकः। तेनान्नेनाप्यायस्व॥

यज्ञोपवीतमें देवताओंका पूजन—

इसके बाद यज्ञोपवीतको '**ॐ भूर्भुवः स्वरोम्**' कहकर किसी पात्रमें रखकर '**एतं ते देव सवितर्यज्ञं प्राहुर्बृहस्पतये ब्रह्मणे। तेन यज्ञमव तेन यज्ञपतिं तेन मामव॥**' इस मन्त्रसे प्रतिष्ठित करे। तदनन्तर निम्न मन्त्रोंको पढ़कर यज्ञोपवीतके नवों तन्तुओंमें अक्षत

छोड़कर आवाहन करे तथा **गन्धाक्षतपुष्पाणि समर्पयामि** कहते हुए नौ तन्तुओंमें अधिष्ठित देवताओंका गन्धाक्षतपुष्पसे पूजन करे—

१-ॐ ओंकारदैवत्याय प्रथमतन्तवे नमः।

२-ॐ अग्निदैवत्याय द्वितीयतन्तवे नमः।

३-ॐ नागदैवत्याय तृतीयतन्तवे नमः।

४-ॐ सोमदैवत्याय चतुर्थतन्तवे नमः।

५-ॐ इन्द्रदैवत्याय पञ्चमतन्तवे नमः।

६-ॐ प्रजापतिदैवत्याय षष्ठतन्तवे नमः।

७-ॐ वायुदैवत्याय सप्तमतन्तवे नमः।

८-ॐ सूर्यदैवत्याय अष्टमतन्तवे नमः।

९-ॐ विश्वेदेवदैवत्याय नवमतन्तवे नमः।

ग्रन्थियोंके अधिदेवताओंका पूजन—

आचार्य निम्न मन्त्रोंसे यज्ञोपवीतकी तीनों ग्रन्थियोंका '**गन्धाक्षत-पुष्पाणि समर्पयामि**' कहकर गन्धाक्षतपुष्प छोड़ते हुए क्रमसे पूजन करे—

१-ॐ ब्रह्म जज्ञानं प्रथमं पुरस्ताद्वि सीमतः सुरुचो वेन आवः। स बुध्न्या उपमा अस्य विष्ठाः सतश्च योनिमसतश्च वि वः॥ ॐ ब्रह्मणे नमः।

२-इदं विष्णुर्विचक्रमे त्रेधा नि दधे पदम्। समूढमस्य पाꣳसुरे स्वाहा॥ ॐ विष्णवे नमः।

३-ॐ नमस्ते रुद्र मन्यव उतो त इषवे नमः। बाहुभ्यामुत ते नमः॥ ॐ ईश्वराय नमः।

समग्र यज्ञोपवीतके अधिदेवताका '**ॐ परब्रह्मणे नमः**' कहकर पूजन करे।

सूर्यदर्शन—

इसके बाद यज्ञोपवीतको हाथमें लेकर उसे सूर्यको निम्न मन्त्रसे दिखाये—

ॐ आ कृष्णेन रजसा वर्तमानो निवेशयन्नमृतं मर्त्यञ्च।
हिरण्ययेन सविता रथेना देवो याति भुवनानि पश्यन्॥
श्रीसूर्यनारायणाय नमः।

यज्ञोपवीतका अभिमन्त्रण—

इसके बाद **ॐ आपो हि ष्ठा मयोभुवस्ता न ऊर्जे दधातन। महे रणाय चक्षसे॥**

यो वः शिवतमो रसस्तस्य भाजयतेह नः। उशतीरिव मातरः॥

तस्मा अरङ्गमाम वो यस्य क्षयाय जिन्वथ। आपो जनयथा च नः॥ इन मन्त्रोंसे यज्ञोपवीतका जलसे मार्जन करे तथा दस बार गायत्रीमन्त्रसे उसे अभिमन्त्रित करे।

यज्ञोपवीतधारणविनियोग—

आचार्य हाथमें जल लेकर निम्न प्रकारसे विनियोगमन्त्र बोले—

ॐ यज्ञोपवीतमित्यस्य परमेष्ठी ऋषिः त्रिष्टुप्छन्दो लिङ्गोक्ता देवता यज्ञोपवीतधारणे विनियोगः। यह कहकर जल छोड़े।

यज्ञोपवीतधारण—

इसके बाद आचार्य निम्न मन्त्र बोलता हुआ गणेश आदि देवताओंको स्पर्श कराकर बटुकके दक्षिण बाहुको ऊपरकर बायें कन्धेपर यज्ञोपवीत पहनाये—

ॐ यज्ञोपवीतं परमं पवित्रं प्रजापतेर्यत्सहजं पुरस्तात्
आयुष्यमग्र्यं प्रतिमुञ्च शुभ्रं यज्ञोपवीतं बलमस्तु तेजः॥
यज्ञोपवीतमसि यज्ञस्य त्वा यज्ञोपवीतेनोपनह्यामि।

आचमन—

बटुक प्रत्येक यज्ञोपवीत धारण करनेके बाद पूर्वरीति (पृ०-सं०२०३)-के अनुसार दो बार आचमन करे।

मृगचर्मधारण—

तदनन्तर आचार्य मौन होकर बटुकको उत्तरीयके रूपमें धारण करनेके लिये मृगचर्म दे और बटुक निम्न मन्त्र बोलता हुआ उसे यज्ञोपवीतकी भाँति धारण करे—

ॐ मित्रस्य चक्षुर्द्धरुणं बलीयस्तेजो यशस्वी स्थविरꣳसमिद्धम्। अनाहनस्यं वसनं जरिष्णुः परीदं वाज्यजिनं दधेऽहम्॥

दण्डधारण—

इसके बाद आचार्य मौन होकर पैरसे लेकर मस्तकतक लम्बा पलाश दण्ड बटुकको दे। यह दण्ड ब्राह्मणके लिये केशपर्यन्त, क्षत्रियके लिये ललाटपर्यन्त और वैश्यके लिये नासिका (नाक)-पर्यन्त होता है। बटुक निम्न मन्त्र बोलता हुआ उसे ग्रहण करे—

ॐ यो मे दण्डः परापतद्वैहायसोऽधिभूम्याम्।
तमहं पुनरादद आयुषे ब्रह्मणे ब्रह्मवर्चसाय॥

बटुक दण्डको निम्न मन्त्र बोलता हुआ ऊपर उठाये—

ॐ उच्छ्रयस्व वनस्पत ऊर्ध्वो मा पाह्यꣳ हसऽ आऽस्य यज्ञस्योदृचः॥

अंजलिपूरण—

इसके बाद आचार्य जलसे अपनी अंजलि भरकर निम्न तीन मन्त्र पढ़ते हुए उसी जलसे बटुककी अंजलि भरे—

ॐ आपो हि ष्ठा मयोभुवस्ता न ऊर्जे दधातन। महे रणाय चक्षसे॥ १॥
यो वः शिवतमो रसस्तस्य भाजयतेह नः। उशतीरिव मातरः॥ २॥
तस्मा अरङ्गमाम वो यस्य क्षयाय जिन्वथ। आपो जनयथा च नः॥ ३॥

सूर्यदर्शन—

इसके बाद आचार्य बटुकको सूर्यदर्शनके लिये कहे—**सूर्यमुदीक्षस्व।**

बटुक खड़ा होकर आचार्यद्वारा प्रदत्त अंजलिस्थ जलसे सूर्यको

अर्घ्य प्रदान करे। तत्पश्चात् दोनों हाथ उठाकर निम्न मन्त्रोंसे सूर्योपस्थान करे—

ॐ तच्चक्षुर्देवहितं पुरस्ताच्छुक्रमुच्चरत्। पश्येम शरदः शतं जीवेम शरदः शतꣳ शृणुयाम शरदः शतं प्र ब्रवाम शरदः शतमदीनाः स्याम शरदः शतं भूयश्च शरदः शतात्॥

हृदयालम्भन—

आचार्य बटुकके दाहिने कन्धेपरसे अपना दाहिना हाथ ले जाकर बटुकके हृदयका स्पर्श करे और निम्न मन्त्र कहे—

ॐ मम व्रते ते हृदयं दधामि। मम चित्तमनुचित्तं ते ऽ अस्तु॥ मम वाचमेकमना जुषस्व। बृहस्पतिष्ट्वा नियुनक्तु मह्यम्॥

बटुकपरिचय—

इसके बाद आचार्य बालकके दाहिने हाथके अँगूठेको पकड़कर पूछे—

को नामासि?—तुम्हारा क्या नाम है?

कुमार बोले—

""शर्मा/वर्मा/गुप्तोऽहं भो३। (शर्मा/वर्मा/गुप्त आदि विशेषणके साथ अपना नाम बताये।)

आचार्य पुनः पूछे—

कस्य ब्रह्मचार्यसि? (तुम किसके ब्रह्मचारी हो?)

कुमार कहे—**भवतः।** (आपका)

आचार्य कहे—

ॐ इन्द्रस्य ब्रह्मचार्यसि, अग्निराचार्यस्तवाहमाचार्यः ""शर्मन्/वर्मन्/गुप्त।

इसके बाद आचार्य बटुकको पंचभूतोंके लिये प्रदान करे। बटुक उन-उन दिशाओंको हाथ जोड़कर प्रणाम करे। उसका क्रम है—

ॐ प्रजापतये त्वा परिददामि इति प्राच्याम्।

ॐ देवाय त्वा सवित्रे परिददामि इति दक्षिणस्याम्।
ॐ अद्भ्यस्त्वौषधीभ्यः परिददामि इति प्रतीच्याम्।
ॐ द्यावापृथिवीभ्यां त्वा परिददामि इत्युदीच्याम्।
ॐ विश्वेभ्यस्त्वा देवेभ्यः परिददामि इत्यधः।
ॐ सर्वेभ्यस्त्वा भूतेभ्यः परिददामि इत्यूर्ध्वम्।

अग्निप्रदक्षिणा—

इसके बाद अग्निकी प्रदक्षिणा करके बटुक आचार्यके दाहिनी ओर बैठे।

ब्रह्माका वरण—

इसके बाद आचार्य वरण-सामग्री लेकर[1] ब्रह्माके वरणका संकल्प करे—

ॐ अद्य करिष्यमाणोपनयनहोमकर्मणि कृताकृतावेक्षणरूप-ब्रह्मकर्मकर्तुं ....गोत्रम् ....शर्माणं ब्राह्मणमेभिः वरणद्रव्यैः ब्रह्मत्वेन भवन्तमहं वृणे। वरण-सामग्री ब्रह्माको प्रदान करे।

ब्रह्मा कहे—**ॐ वृतोऽस्मि।**

ब्रह्माकी प्रार्थना—

इसके बाद आचार्य निम्न मन्त्रसे ब्रह्माकी प्रार्थना करे—

यथा चतुर्मुखो ब्रह्मा सर्ववेदधरः प्रभुः।
तथा त्वं मम यज्ञेऽस्मिन् ब्रह्मा भव द्विजोत्तम॥

ब्रह्माको अग्निकी परिक्रमा कराकर अग्निके दक्षिणमें[2] आसनपर बैठा दे।

---

१. प्रत्यक्ष ब्रह्माके अभावमें पचास कुशासे ब्रह्मा बनाना चाहिये। जैसा कि कहा है—
पञ्चाशत्कुशैः ब्रह्मा तदर्धेन तु विष्टरः। दक्षिणावर्तको ब्रह्मा वामावर्तस्तु विष्टरः॥
ऊर्ध्वकेशो भवेद् ब्रह्मा लम्बकेशस्तु विष्टरः॥
इस वचनके अनुसार पचास कुशाका ब्रह्मा बनाकर ब्रह्माके स्थानपर स्थापित करे।

२. उत्तरे सर्वपात्राणि उत्तरे सर्वदेवताः। उत्तरेऽपां प्रणयनं किमर्थं ब्रह्म दक्षिणे॥
यमो वैवस्वतो राजा वसते दक्षिणां दिशि। तस्य संरक्षणार्थाय ब्रह्मा तिष्ठति दक्षिणे॥

कुशकण्डिका एवं हवनविधान

प्रणीतापात्रस्थापन—

प्रणीतापात्रको आगे रखकर जलसे भर दे और उसको कुशोंसे ढककर तथा ब्रह्माका मुख देखकर अग्निके उत्तरकी तरफ कुशोंके ऊपर रखे।

अग्नि (वेदी)-के चारों ओर कुश-आच्छादन (कुश-परिस्तरण)—

इक्यासी कुशोंको ले।* उनके बीस-बीसके चार भाग करे। इन्हीं चार भागोंको अग्निके चारों ओर फैलाया जाता है। इसमें ध्यान देनेकी बात यह है कि कुशसे हाथ खाली नहीं रहना चाहिये। प्रत्येक भाग फैलानेपर हाथमें एक कुश बचा रहेगा। इसलिये प्रथम बारमें इक्कीस कुश लिये जाते हैं। वेदीके चारों ओर कुश बिछानेका क्रम इस प्रकार है—कुशोंका प्रथम भाग (२०+१) लेकर पहले वेदीके अग्निकोणसे प्रारम्भकर ईशानकोणतक उन्हें उत्तराग्र बिछाये। फिर दूसरे भागको ब्रह्मासनसे अग्निकोणतक पूर्वाग्र बिछाये। तदनन्तर तीसरे भागको नैर्ऋत्यकोणसे वायव्यकोणतक उत्तराग्र बिछाये और चौथे भागको वायव्यकोणसे ईशानकोणतक पूर्वाग्र बिछाये। पुनः दाहिने खाली हाथसे वेदीके ईशानकोणसे प्रारम्भकर वामावर्त ईशानपर्यन्त प्रदक्षिणा करे।

पात्रासादन—

हवनकार्यमें प्रयोक्तव्य सभी वस्तुओं तथा पात्रों यथा—समूल तीन कुश उत्तराग्र (पवित्रक बनानेवाली पत्तियोंको काटनेके लिये), साग्र दो कुशपत्र (बीचवाली सींक निकालकर पवित्रक बनानेके लिये), प्रोक्षणीपात्र (अभावमें दोना या मिट्टीका कसोरा), आज्यस्थाली (घी रखनेका पात्र), पाँच सम्मार्जन कुश, सात उपयमन कुश, तीन

* इतने कुश न मिलें तो तेरह कुशोंको ग्रहण करना चाहिये। उनके तीन-तीनके चार भाग करे। कुशोंके सर्वथा अभावमें दूर्वासे भी क्रिया सम्पन्न की जा सकती है।

समिधाएँ (प्रादेशमात्र लम्बी), स्रुवा, आज्य (घृत), यज्ञीय काष्ठ (पलाश आदिकी लकड़ी), २५६ मुट्ठी चावलोंसे भरा पूर्णपात्र*, चावलसे भरा कांस्यपात्र, सुवर्णशलाका, शुष्क गोमयखण्ड, भिक्षापात्र आदिको पश्चिमसे पूर्वतक उत्तराग्र अथवा अग्निके उत्तरकी ओर पूर्वाग्र रख ले।

पवित्रकनिर्माण—

दो कुशोंके पत्रोंको बायें हाथमें पूर्वाग्र रखकर इनके ऊपर उत्तराग्र तीन कुशोंको दायें हाथसे प्रादेशमात्र दूरी छोड़कर मूलकी तरफ रख दे। तदनन्तर दो कुशोंके मूलको पकड़कर कुशत्रयको बीचमें लेते हुए दो कुशपत्रोंको प्रदक्षिणक्रमसे लपेट ले, फिर दायें हाथसे तीन कुशोंको मोड़कर बायें हाथसे पकड़ ले तथा दाहिने हाथसे कुशपत्रद्वय पकड़कर जोरसे खींच ले। जब दो पत्तोंवाला कुश कट जाय, तब उसके अग्रभागवाला प्रादेशमात्र दाहिनी ओरसे घुमाकर गाँठ दे दे ताकि दो पत्र अलग-अलग न हों। इस तरह पवित्रक बन गया। शेष सबको (दो पत्रोंके कटे भाग तथा काटनेवाले तीनों कुशोंको) उत्तर दिशामें फेंक दे।

पवित्रकके कार्य तथा प्रोक्षणीपात्रका संस्कार—

पूर्वस्थापित प्रोक्षणीको अपने सामने पूर्वाग्र रखे। प्रणीतामें रखे जलका आधा भाग आचमनी आदि किसी पात्रद्वारा प्रोक्षणीपात्रमें तीन बार डाले। अब पवित्रीके अग्रभागको बायें हाथकी अनामिका तथा अंगुष्ठसे और मूलभागको दाहिने हाथकी अनामिका तथा अंगुष्ठसे पकड़कर इसके मध्यभागके द्वारा प्रोक्षणीके जलको तीन बार उछाले

---

* आठ मुट्ठी अन्नको 'किंचित्' कहते हैं, आठ किंचित्का एक 'पुष्कल' (६४ मुट्ठी) होता है और चार पुष्कल (६४×४=२५६)-का एक पूर्णपात्र होता है। इस प्रकार पूर्णपात्रका परिमाण २५६ मुट्ठी होता है। 'अष्टमुष्टिर्भवेत्किञ्चित्किञ्चिदष्टौ तु पुष्कलम्। पुष्कलानि च चत्वारि पूर्णपात्रं विधीयते॥' (रेणुकारिका)

(उत्प्लवन)। पवित्रकको प्रोक्षणीपात्रमें पूर्वाग्र रख दे। प्रोक्षणीपात्रको बायें हाथमें रख ले। पुनः पवित्रकके द्वारा प्रणीताके जलसे प्रोक्षणीको प्रोक्षित करे। तदनन्तर इसी प्रोक्षणीके जलसे आज्यस्थाली, स्रुवा आदि सभी सामग्रियों तथा पदार्थोंका प्रोक्षण करे अर्थात् उनपर जलके छींटे डाले **(अर्थवत्प्रोक्ष्य)**। इसके बाद उस प्रोक्षणीपात्रको प्रणीतापात्र तथा अग्निके मध्यस्थान (असंचरदेश)-में पूर्वाग्र रख दे।

घृतको पात्र (आज्यस्थाली)-में निकालना—

आज्यपात्रसे घीको कटोरेमें निकालकर उस पात्रको वेदीके दक्षिणभागमें अग्निपर रख दे। घीके गरम हो जानेपर एक जलती हुई लकड़ीको लेकर घृतपात्रके ईशानभागसे प्रारम्भकर ईशानभागतक दाहिनी ओर घुमाकर अग्निमें डाल दे। फिर खाली बायें हाथको बायीं ओरसे घुमाकर ईशानभागतक ले आये। यह क्रिया पर्यग्निकरण कहलाती है।

स्रुवाका सम्मार्जन—

दायें हाथमें स्रुवाको पूर्वाग्र तथा अधोमुख लेकर आगपर तपाये। पुनः स्रुवाको बायें हाथमें पूर्वाग्र ऊर्ध्वमुख रखकर दायें हाथसे सम्मार्जन कुशके अग्रभागसे स्रुवाके अग्रभागका, कुशके मध्यभागसे स्रुवाके मध्यभागका और कुशके मूलभागसे स्रुवाके मूलभागका स्पर्श करे अर्थात् स्रुवाका सम्मार्जन करे। प्रणीताके जलसे स्रुवाका प्रोक्षण करे। उसके बाद सम्मार्जन कुशोंको अग्निमें डाल दे।

स्रुवाका पुनः प्रतपन—

अधोमुख स्रुवाको पुनः अग्निमें तपाकर अपने दाहिनी ओर किसी पात्र, पत्ते या कुशोंपर पूर्वाग्र रख दे।

घृतपात्रका स्थापन—

घीके पात्रको अग्निसे उतारकर अग्नि (वेदी)-के पश्चिमभागमें उत्तरकी ओर रख दे।

घृतका उत्प्लवन—

घृतपात्रको सामने रख ले। प्रोक्षणीमें रखी हुई पवित्रीको लेकर उसके मूलभागको दाहिने हाथके अंगुष्ठ तथा अनामिकासे और बायें हाथके अंगुष्ठ तथा अनामिकासे पवित्रीके अग्रभागको पकड़कर कटोरेके घृतको तीन बार ऊपर उछाले। घृतका अवलोकन करे और यदि घृतमें कोई विजातीय वस्तु हो तो निकालकर फेंक दे। तदनन्तर प्रोक्षणीके जलको तीन बार उछाले और पवित्रीको पुनः प्रोक्षणीपात्रमें रख दे।

तीन समिधाओंकी आहुति—

ब्रह्माका स्पर्श करते हुए बायें हाथमें उपयमन (सात)-कुशोंको लेकर हृदयमें बायाँ हाथ सटाकर तीन समिधाओंको घीमें डुबोकर मनसे प्रजापतिदेवताका ध्यान करते हुए खड़े होकर मौन हो अग्निमें डाल दे। तदनन्तर बैठ जाय।

पर्युक्षण (जलधारा देना)—

पवित्रकसहित प्रोक्षणीपात्रके जलको दक्षिण हाथकी अंजलिमें लेकर अग्निके ईशानकोणसे ईशानकोणतक प्रदक्षिणक्रमसे जलधारा गिरा दे। पवित्रकको बायें हाथमें लेकर फिर दाहिने खाली हाथको उलटे अर्थात् ईशानकोणसे उत्तर होते हुए ईशानकोणतक ले आये **(इतरथावृत्तिः)** और पवित्रकको दायें हाथमें लेकर प्रणीतामें पूर्वाग्र रख दे।

अग्निप्रतिष्ठा—

पूर्वमें वेदीमें स्थापित अग्निकी निम्न मन्त्रसे अक्षत छोड़ते हुए प्रतिष्ठा करे—

‘ॐ समुद्भवनामाग्ने सुप्रतिष्ठितो वरदो भव’

तदनन्तर अग्निका ध्यान करे—

अग्निं प्रज्वलितं वन्दे जातवेदं हुताशनम्।
सुवर्णवर्णममलमनन्तं विश्वतोमुखम्।
सर्वतः पाणिपादश्च सर्वतोऽक्षिशिरोमुखः॥
विश्वरूपो महानग्निः प्रणीतः सर्वकर्मसु।

ॐ चत्वारि शृङ्गा त्रयो अस्य पादा द्वे शीर्षे सप्त हस्तासो अस्य। त्रिधा बद्धो वृषभो रोरवीति महो देवो मर्त्याँ२ आविवेश॥

ॐ भूर्भुवः स्वः समुद्भवनाम्ने अग्नये नमः। सर्वोपचारार्थे गन्धाक्षतपुष्पाणि समर्पयामि। कहकर अग्निका पूजन कर ले।

अग्निको काष्ठ छोड़कर तथा वेणुधमनीसे अथवा हाथके माध्यमसे फूँककर प्रज्वलित करे।* तदनन्तर हवन करे।

हवन-विधि

सर्वप्रथम प्रजापतिदेवताके निमित्त आहुति दी जाती है। तदनन्तर इन्द्र, अग्नि तथा सोमदेवताको आहुति देनेका विधान है। इन चार आहुतियोंमें प्रथम दो आहुतियाँ '**आघार**' नामवाली हैं एवं तीसरी और चौथी आहुति '**आज्यभाग**' नामसे कही जाती है। ये चारों आहुतियाँ घीसे देनी चाहिये। इन आहुतियोंको प्रदान करते समय ब्रह्मा कुशके द्वारा हवनकर्ताके दाहिने हाथका स्पर्श किये रहे, इस क्रियाको '**ब्रह्मणान्वारब्ध**' कहते हैं।

दाहिना घुटना पृथ्वीपर लगाकर स्रुवामें घी लेकर, प्रजापतिदेवताका ध्यानकर निम्न मन्त्रका मनसे उच्चारणकर प्रज्वलित अग्निमें आहुति दे।

(१) ॐ प्रजापतये स्वाहा, इदं प्रजापतये न मम। कहकर वेदीके मध्यभागमें आहुति दे। (स्रुवामें बचे घीको प्रोक्षणीपात्रमें छोड़े।)

आगेकी तीन आहुतियाँ इस प्रकार बोलकर दे—

* धमनीमन्तरा कृत्वा तृणं वा काष्ठमेव वा। मुखेनोपधमेदग्निं मुखादग्निरजायत॥ अग्नेर्वेणुस्पर्शस्तु न कार्यः। न वेणुनाग्निं संस्पृशेत्—इति निषेधात्।

(२) ॐ इन्द्राय स्वाहा, इदमिन्द्राय न मम। कहकर वेदीके मध्यभागमें आहुति दे। (स्रुवामें बचे घीको प्रोक्षणीपात्रमें छोड़े।)

(३) ॐ अग्नये स्वाहा, इदमग्नये न मम। कहकर वेदीके उत्तरपूर्वार्धभागमें आहुति दे। (स्रुवामें बचे घीको प्रोक्षणीपात्रमें छोड़े।)

(४) ॐ सोमाय स्वाहा, इदं सोमाय न मम। कहकर वेदीके दक्षिणपूर्वार्धभागमें आहुति दे। (स्रुवामें बचे घीको प्रोक्षणीपात्रमें छोड़े।)

नवाहुति

१-ॐ भूः स्वाहा, इदमग्नये न मम।

२-ॐ भुवः स्वाहा, इदं वायवे न मम।

३-ॐ स्वः स्वाहा, इदं सूर्याय न मम।

४-ॐ त्वं नो अग्ने वरुणस्य विद्वान् देवस्य हेडो अव यासिसीष्ठाः। यजिष्ठो वह्नितमः शोशुचानो विश्वा द्वेषाꣳसि प्र मुमुग्ध्यस्मत्स्वाहा॥ इदमग्नीवरुणाभ्यां न मम॥

५-ॐ स त्वं नो अग्नेऽवमो भवोती नेदिष्ठो अस्या उषसो व्युष्टौ। अव यक्ष्व नो वरुणꣳरराणो वीहि मृडीकꣳ सुहवो न एधि स्वाहा॥ इदमग्नीवरुणाभ्यां न मम॥

६-ॐ अयाश्चाग्नेऽस्यनभिशस्तिपाश्च सत्यमित्वमया असि। अया नो यज्ञं वहास्यया नो धेहि भेषजꣳ स्वाहा॥ इदमग्नये ऽयसे न मम॥

७-ॐ ये ते शतं वरुण ये सहस्त्रं यज्ञियाः पाशा वितता महान्तः। तेभिर्नो ऽअद्य सवितोत विष्णुर्विश्वे मुञ्चन्तु मरुतः स्वर्काः स्वाहा॥ इदं वरुणाय सवित्रे विष्णवे विश्वेभ्यो देवेभ्यो मरुद्भ्यः स्वर्केभ्यश्च न मम॥

८-ॐ उदुत्तमं वरुण पाशमस्मदवाधमं वि मध्यमꣳश्रथाय। अथा वयमादित्य व्रते तवानागसोऽअदितये स्याम स्वाहा॥ इदं वरुणायादित्यायादितये न मम॥

तदनन्तर प्रजापति देवताका ध्यानकर मनमें निम्न मन्त्रका उच्चारणकर मौन होकर आहुति दे—

९-ॐ प्रजापतये स्वाहा, इदं प्रजापतये न मम।

स्विष्टकृत् आहुति—

इसके बाद ब्रह्माद्वारा कुशसे स्पर्श किये जानेकी अवस्थामें निम्न मन्त्रसे घृतद्वारा स्विष्टकृत् आहुति दे—

ॐ अग्नये स्विष्टकृते स्वाहा, इदमग्नये स्विष्टकृते न मम।

संस्रवप्राशन—

हवन पूर्ण होनेपर प्रोक्षणीपात्रसे घृत दाहिने हाथमें लेकर यत्किंचित् पान करे। हाथ धो ले। फिर आचमन करे।

मार्जनविधि—

निम्नलिखित मन्त्रद्वारा प्रणीतापात्रके जलसे कुशोंके द्वारा अपने सिरपर मार्जन करे—

ॐ सुमित्रिया न आप ओषधयः सन्तु।

इसके बाद निम्न मन्त्रसे जल नीचे छोड़े—

ॐ दुर्मित्रियास्तस्मै सन्तु योऽस्मान् द्वेष्टि यं च वयं द्विष्मः।

पवित्रप्रतिपत्ति—

पवित्रकको अग्निमें छोड़ दे।

पूर्णपात्रदान—

पूर्वमें स्थापित पूर्णपात्रमें द्रव्य-दक्षिणा रखकर निम्न संकल्पकर दक्षिणासहित पूर्णपात्र ब्रह्माको प्रदान करे—

ॐ अद्य उपनयनाङ्गहोमकर्मणि कृताकृतावेक्षणरूपब्रह्म-

कर्मप्रतिष्ठार्थमिदं पूर्णपात्रं सदक्षिणाकं प्रजापतिदैवतं ....गोत्राय ....शर्मणे ब्रह्मणे भवते सम्प्रददे।

ब्रह्मा '**स्वस्ति**' कहकर उस पूर्णपात्रको ग्रहण कर ले।

प्रणीताविमोक—

प्रणीतापात्रको ईशानकोणमें उलटकर रख दे।

मार्जन—

पुनः कुशाद्वारा निम्न मन्त्रसे उलटकर रखे गये प्रणीताके जलसे मार्जन करे—

ॐ आपः शिवाः शिवतमाः शान्ताः शान्ततमास्तास्ते कृण्वन्तु भेषजम्।

उपयमन कुशोंको अग्निमें छोड़ दे।

बर्हिहोम—

तदनन्तर पहले बिछाये हुए कुशाओंको जिस क्रमसे बिछाये गये थे, उसी क्रमसे उठाकर घृतमें भिगोये और निम्न मन्त्रका उच्चारणकर अग्निमें डाल दे—

ॐ देवा गातुविदो गातुं वित्त्वा गातुमित। मनसस्पत इमं देव यज्ञꣳ स्वाहा वाते धाः स्वाहा।

कुशमें लगी ब्रह्मग्रन्थिको खोल दे।

कुमारका अनुशासन—

इसके बाद आचार्य कुमारको उपदेश प्रदान करे—

आचार्य कुमारसे कहे—**ब्रह्मचार्यसि**। (हे बालक! तुम मेरे ब्रह्मचारी हो)।

बटुक कहे—**असानि**। (गुरुदेव! मैं आपका ब्रह्मचारी हूँ)।

आचार्य कहे—**अपोऽशान**। (तुम सर्वदा अपोशान-विधिसे ही

अन्न-भक्षण करना)।

बटुक कहे—**अश्नानि।** (गुरुदेव! मैं अपोशानविधिसे ही अन्न ग्रहण करूँगा अर्थात् आचमन करके ही भोजन करूँगा)।

आचार्य कहे—**कर्म कुरु।** (ब्रह्मचारीके कर्म करो)।

बटुक कहे—**करवाणि।** (गुरुदेव! मैं पालन करूँगा)।

आचार्य कहे—**मा दिवा सुषुप्थाः।** (तुम दिनमें शयन मत करना)।

बटुक कहे—**न स्वपानि।** (गुरुदेव! मैं दिनमें शयन नहीं करूँगा)।

आचार्य कहे—**वाचं यच्छ।** (तुम वाणीपर संयम रखना)।

बटुक कहे—**यच्छानि।** (गुरुदेव! मैं अपनी वाणीपर संयम रखूँगा)।

आचार्य कहे—**समिधमाधेहि।** (तुम समिधा लाओ)।

बटुक कहे—**आदधानि।** (गुरुदेव! मैं समिधाधान करूँगा)।

पुनः आचार्य कहे—**अपोऽशान।** (तुम सर्वदा अपोशानविधिसे ही अन्न-भक्षण करना)।

बटुक कहे—**अश्नानि।** (गुरुदेव! मैं अपोशानविधिसे ही अन्न ग्रहण करूँगा)।

लग्नदान—

इसके बाद बटुक गायत्री-मन्त्रग्रहणमें अधिकारप्राप्तिके लिये लग्नदोषकी शान्तिके लिये दानका निम्न संकल्प करे—

ॐ अद्य अस्य कुमारस्य सावित्रीग्रहणलग्नात् ''''स्थानस्थितैः दुष्टग्रहैः सूचितदुष्टफलनिवृत्तिपूर्वकशुभफलप्राप्तये आदित्यादि-नवग्रहाणां प्रीतये च इदं सुवर्णनिष्क्रयीभूतं द्रव्यं आचार्याय सम्प्रददे। कहकर दैवज्ञ ब्राह्मणको दक्षिणा प्रदान करे।

देवपूजन

आचार्य एक काँसेकी थालीमें चावल बिछाकर ओंकार, व्याहृतिपूर्वक गायत्रीके अक्षरसहित गणेश और कुलदेवताको सुवर्णकी शलाका अथवा कुशासे लिखकर बटुकद्वारा निम्न संकल्पपूर्वक उनका पूजन कराये।

ॐ अद्य ""गोत्रः ""शर्मा मम ब्रह्मवर्चससिद्ध्यर्थं वेदाध्ययनाधिकारसिद्ध्यर्थं गायत्र्युपदेशाङ्गविहितं गायत्रीसावित्रीसरस्वतीपूजनपूर्वकमाचार्यपूजनं गणपतिपूजनञ्च करिष्ये। सर्वप्रथम निम्न मन्त्र पढ़ते हुए गणपतिका पूजन करे—

गणपतिपूजन—

ॐ गणानां त्वा गणपतिꣳ हवामहे प्रियाणां त्वा प्रियपतिꣳ हवामहे निधीनां त्वा निधिपतिꣳ हवामहे वसो मम। आहमजानि गर्भधमा त्वमजासि गर्भधम्॥

ॐ भूर्भुवः स्वः सिद्धिबुद्धिसहिताय गणपतये नमः गणपतिमावाहयामि, स्थापयामि, पूजयामि, सर्वोपचारार्थे गन्धाक्षतपुष्पाणि समर्पयामि। अक्षत, पुष्प, चन्दन चढ़ाये।

गायत्रीपूजन—

निम्न मन्त्रसे गायत्रीका पूजन करे—

ॐ ताꣳ सवितुर्वरेण्यस्य चित्रामाऽहं वृणे सुमतिं विश्वजन्याम्। यामस्य कण्वो अदुहत्प्रपीनाꣳ सहस्रधारां पयसा महीङ्गाम्॥

ॐ भूर्भुवः स्वः गायत्र्यै नमः गायत्रीमावाहयामि, स्थापयामि, पूजयामि, सर्वोपचारार्थे गन्धाक्षतपुष्पाणि समर्पयामि। अक्षत, पुष्प, चन्दन आदि चढ़ाये।

सावित्रीपूजन—

निम्न मन्त्रसे सावित्रीका पूजन करे—

ॐ सवित्रा प्रसवित्रा सरस्वत्या वाचा त्वष्ट्रा रूपैः पूष्णा पशुभिरिन्द्रेणास्मे बृहस्पतिना ब्रह्मणा वरुणेनौजसाऽग्निना तेजसा

सोमेन राज्ञा विष्णुना दशम्या देवतया प्रसूतः प्र सर्पामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः सावित्र्यै नमः सावित्रीमावाहयामि, स्थापयामि, पूजयामि, सर्वोपचारार्थे गन्धाक्षतपुष्पाणि समर्पयामि। अक्षत, पुष्प, चन्दन चढ़ाये।

सरस्वतीपूजन—

ॐ पावका नः सरस्वती वाजेभिर्वाजिनीवती। यज्ञं वष्टु धियावसुः।

ॐ भूर्भुवः स्वः सरस्वत्यै नमः सरस्वतीमावाहयामि, स्थापयामि, पूजयामि, सर्वोपचारार्थे गन्धाक्षतपुष्पाणि समर्पयामि। अक्षत, पुष्प, चन्दन चढ़ाये।

गुरुपूजन—

ॐ बृहस्पते अति यदर्यो अर्हाद् द्युमद्विभाति क्रतुमज्जनेषु। यद्दीदयच्छवस ऋतप्रजात तदस्मासु द्रविणं धेहि चित्रम्॥

ॐ भूर्भुवः स्वः गुरवे नमः, गुरुमावाहयामि, स्थापयामि, पूजयामि, सर्वोपचारार्थे गन्धाक्षतपुष्पाणि समर्पयामि। अक्षत, पुष्प, चन्दन चढ़ाये।

गायत्रीमन्त्रोपदेश[१]

इसके बाद अग्निकुण्डके समीप उत्तर-पश्चिमाभिमुख बैठा हुआ बटुक आचार्यके दोनों पैर[२] स्पर्श करे। आचार्य बटुकके अभिमुख होकर एकान्तमें गायत्रीमन्त्रका उपदेश दे। गुरु बटुकको वस्त्रसे आच्छादितकर[३] निम्न क्रमसे गायत्रीका उपदेश करे—

---

१. सर्वत्र तु वरेण्यं स्यात् जपकाले वरेणियम्।
गायत्रीमन्त्रके जपके समय वरेण्यंकी जगह वरेणियम् उच्चारण करना चाहिये। अतः मन्त्रोपदेशमें वरेण्यंके साथ वरेणियम्का भी उपदेश करना चाहिये।

२. ब्रह्मारम्भेऽवसाने च पादौ ग्राह्यौ गुरोः सदा। व्यत्यस्तपाणिना कार्यमुपसङ्ग्रहणं गुरोः॥
सव्येन सव्यः स्प्रष्टव्यो दक्षिणेन तु दक्षिणः॥ (मनु० २।७१-७२)

३. उपदेशं तु गायत्र्या वाससाऽऽच्छादयेद् बटुम्॥

गायत्री-उपदेशहेतु विनियोग—

आचार्य हाथमें जल लेकर विनियोग मन्त्र पढ़े—

प्रणवस्य ब्रह्मा ऋषिः, दैवी गायत्री छन्दः, परमात्मा देवता, व्याहृतीनां प्रजापतिर्ऋषिः गायत्र्युष्णिगनुष्टुप्छन्दांसि अग्निवायुसूर्या देवताः तत्सवितुरिति विश्वामित्रऋषिर्गायत्री छन्दः सविता देवता सर्वेषां माणवकोपदेशने विनियोगः। जल भूमिपर छोड़ दे।

गायत्री-उपदेश—

बटुकको उपदेश देते समय आचार्य पहले गायत्रीका प्रथम पाद, बादमें आधी ऋचा और उसके बाद व्याहृतिसहित सम्पूर्ण मन्त्रका उपदेश दे। इस प्रकार दाहिने कानमें तीन बार गायत्रीमन्त्रोपदेश देना चाहिये। यथा—

प्रथम बार—

प्रथम पाद—**ॐ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यम्।**

द्वितीय पाद—**भर्गो देवस्य धीमहि।**

तृतीय पाद—**धियो यो नः प्रचोदयात्॥**

आचार्य बटुकसे इनका उच्चारण भी करवाये।

द्वितीय बार—

प्रथम आधी ऋचा—**ॐ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि।**

द्वितीय आधी ऋचा—**धियो यो नः प्रचोदयात्।**

आचार्य बटुकसे इनका उच्चारण भी करवाये।

तृतीय बार—

तृतीय बार त्रिपदा गायत्रीका उपदेश एक साथ दे।

ॐ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि। धियो यो नः प्रचोदयात्।

इस प्रकार तीसरी बार सम्पूर्ण गायत्री सुनाकर यथाशक्ति बटुकसे उच्चारण कराये।

परिसमूहन—

इसके बाद ब्रह्मचारी अग्निकुण्डके पश्चिमकी ओर बैठकर घीमें डूबी हुई सूखी पाँच समिधाएँ अथवा पाँच शुष्क गोमयपिण्ड लेकर निम्न मन्त्रोंका उच्चारण करता हुआ हवन करे—

१–**ॐ अग्ने सुश्रवः सुश्रवसं मा कुरु।**

२–**ॐ यथा त्वमग्ने सुश्रवः सुश्रवा असि।**

३–**ॐ एवं माꣳ सुश्रवः सौश्रवसं कुरु।**

४–**ॐ यथा त्वमग्ने देवानां यज्ञस्य निधिपा असि।**

५–**ॐ एवमहं मनुष्याणां वेदस्य निधिपो भूयासम्।**

अग्निपर्युक्षण तथा समिदाधान—

इसके बाद प्रदक्षिणक्रमसे ईशानसे उत्तरतक जलसे अग्निका प्रोक्षणकर एक समिधाको घीमें डुबोकर खड़े होकर निम्न मन्त्रको पढ़कर अग्निमें एक आहुति प्रदान करे—

ॐ अग्नये समिधमाहार्षं बृहते जातवेदसे। यथा त्वमग्ने समिधा समिध्यस एवमहमायुषा मेधया वर्चसा प्रजया पशुभि-र्ब्रह्मवर्चसेन समिन्धे जीवपुत्रो ममाचार्यो मेधाव्यहमसान्यनिरा-करिष्णुर्यशस्वी तेजस्वी ब्रह्मवर्चस्व्यन्नादो भूयासꣳस्वाहा।

इसी मन्त्रसे घृताक्त समिधाके द्वारा दो आहुतियाँ और प्रदान करे।

तदनन्तर पूर्वरीतिसे **अग्नेः सुश्रवः** आदि पाँच मन्त्रोंद्वारा सूखी समिधाओं अथवा शुष्क गोमयपिण्डसे पाँच आहुतियाँ दे।

पुनः पूर्ववत् जलसे अग्निका प्रोक्षण करे तथा अग्निमें हाथ सेंककर निम्न मन्त्रोंसे मुखपर हाथ फेरे—

ॐ तनूपा ऽ अग्नेऽसि तन्वं मे पाहि।

ॐ आयुर्दा अग्नेऽस्यायुर्मे देहि।

ॐ वर्चोदा अग्नेऽसि वर्चो मे देहि।

ॐ अग्ने यन्मे तन्वा ऊनं तन्म आपृण।

ॐ मेधां मे देवः सविता आदधातु।

ॐ मेधां मे देवी सरस्वती आदधातु।

ॐ मेधामश्विनौ देवावाधत्तां पुष्करस्त्रजौ।

सर्वांगस्पर्श—

इसके बाद निम्न मन्त्रसे ब्रह्मचारी अपने सम्पूर्ण शरीरपर हाथ फेरे—

ॐ अङ्गानि च म आप्यायन्ताम्।

इसके बाद निम्न मन्त्रोंसे यथानिर्दिष्ट अंगोंका स्पर्श करे—

ॐ वाक् च म आप्यायताम्—मुखका स्पर्श करे।

ॐ प्राणश्च म आप्यायताम्—दोनों नासिकारन्ध्रोंका स्पर्श करे।

ॐ चक्षुश्च म आप्यायताम्—दोनों नेत्रोंका स्पर्श करे।

ॐ श्रोत्रञ्च म आप्यायताम्—क्रमसे दाहिने और बायें कानका स्पर्श करे।

ॐ यशो बलं च म आप्यायताम्—दोनों भुजाओंका दाहिनेसे बायेंका और बायेंसे दाहिनेका परस्पर एक साथ स्पर्श करे। तदनन्तर जलका स्पर्श कर ले।

त्र्यायुष्करण—

तत्पश्चात् आचार्य स्रुवासे भस्म लेकर दायें हाथकी अनामिकाके अग्रभागसे निम्न मन्त्रोंसे बटुकके निर्दिष्ट अंगोंमें भस्म लगाये—

ॐ त्र्यायुषं जमदग्नेः—ललाटमें।

ॐ कश्यपस्य त्र्यायुषम्—ग्रीवामें।

ॐ यद्देवेषु त्र्यायुषम्—दक्षिण बाहुमूलपर।

ॐ तन्नो अस्तु त्र्यायुषम्—हृदयमें।

अग्नि तथा आचार्यका अभिवादन—

तदनन्तर ब्रह्मचारी गोत्र-प्रवरपूर्वक अपना नामोच्चारण करता हुआ अग्नि तथा गुरु आदिको निम्न रीतिसे प्रणाम करे।

अग्ने त्वामभिवादये .....गोत्रः .....प्रवरान्वितः .....शर्माहं भोः ३ कहकर अग्निको प्रणाम करे।

बटुक अपने दाहिने हाथसे गुरुके दाहिने चरणका और बायें हाथसे बायें चरणका स्पर्श करते हुए बोले—**त्वामभिवादये .....गोत्रः .....प्रवरान्विन्तः .....शर्माहं भोः ३**—आचार्यको प्रणाम करे।

आशीर्वाद—

आचार्य निम्न वाक्य कहकर आशीर्वाद दे—**आयुष्मान् भव सौम्य श्रीशर्मन्/वर्मन्/गुप्त।**

बटुक अन्य श्रेष्ठजनोंका भी वन्दन करे।

भिक्षाग्रहण—

तदनन्तर ब्रह्मचारी भिक्षापात्र लेकर दण्ड धारणकर सर्वप्रथम माताके पास जाय और निम्न वाक्यका उच्चारणकर भिक्षा माँगे—

ब्राह्मण ब्रह्मचारी कहे—**भवति भिक्षां देहि मातः।**

क्षत्रिय ब्रह्मचारी कहे—**भिक्षां भवति देहि मातः।**

वैश्य ब्रह्मचारी कहे—**देहि भिक्षां भवति मातः।**

भिक्षा ग्रहण करनेके बाद ब्रह्मचारी कहे—**स्वस्ति।**

इसके बाद पुनः '**भवन् भिक्षां देहि**' कहकर अन्य लोगोंसे भिक्षा माँगे। प्राप्त भिक्षाको यह कहते हुए गुरुको दे—**भो गुरो इयं भिक्षा मया लब्धा।**

आचार्यकी '**भुङ्क्ष्व**' अनुमति पाकर ब्रह्मचारी भिक्षाको स्वीकार करे।

अग्निपूजन—

इसके बाद गन्धाक्षतपुष्प छोड़ते हुए समुद्भवनामक अग्निका पूजन करे—

ॐ भूर्भुवः स्वः समुद्भवनामाग्नये नमः समुद्भवनामाग्निं पूजयामि, सर्वोपचारार्थे गन्धाक्षतपुष्पाणि समर्पयामि।

अग्निका विसर्जन—

निम्नलिखित मन्त्रसे अग्निपर अक्षत छोड़ते हुए विसर्जन करे—

गच्छ गच्छ सुरश्रेष्ठ स्वस्थाने परमेश्वर।
यत्र ब्रह्मादयो देवास्तत्र गच्छ हुताशन॥

ब्रह्मचारीके लिये नियमोपदेश—

इसके बाद आचार्य ब्रह्मचारीके लिये नियमोंका उपदेश करे—

अधःशायी स्यात्—ब्रह्मचारीको जमीनपर सोना चाहिये।

अक्षारालवणाशी स्यात्—क्षार, लवण, मधु और मांस नहीं खाना चाहिये।

समावर्तनपर्यन्तं दण्डधारणम्—समावर्तनसंस्कारतक दण्ड धारण करना चाहिये।

अग्निपरिचरणम्—अग्निकी उपासना करनी चाहिये।

प्रत्यहं समिदाहरणम्—प्रतिदिन समिधा लानी चाहिये।

गुरुशुश्रूषणम्—गुरुकी सेवा करनी चाहिये।

भिक्षाचर्यां कुर्यात्—भिक्षावृत्तिसे रहना चाहिये।

मधु, मांसम्, मज्जनम्, उपर्यासनम्, स्त्रीगमनम्, अनृत-वदनम्, अदत्तादानम् एतानि वर्जयेत्—मधु, मांस, शरीर मलकर स्नान, उच्चासन, स्त्रीगमन, असत्यभाषण, दूसरेके द्वारा बिना दिये कुछ ग्रहण करना आदिका वर्जन करना चाहिये।

ताम्बूलम्, अभ्यङ्गम्, अञ्जनम्, आदर्शम्, छत्रोपानहौ,

कांस्यपात्रभोजनादीनि च वर्जयेत्—ताम्बूल, उबटन, काजल, दर्पण, छाता-जूता तथा कांस्यपात्रमें भोजन आदिका त्याग करे।

आचार्येणाहूत उत्थाय प्रतिशृणुयात्—आचार्यके बुलानेपर शीघ्र उठकर उनके वचन सुने।

शयानं चेत् आसीनः आसीनञ्चेत्तिष्ठन्, तिष्ठन्तं चेदभिक्रामन्, अभिक्रामन्तं चेद् अभिधावन् प्रतिवचनं दद्यात्—आचार्यके द्वारा बुलानेपर लेटे हुए शिष्यद्वारा बैठकर, बैठे हुए शिष्यद्वारा खड़े होकर, खड़े हुए शिष्यद्वारा चलते हुए, चलते हुए शिष्यद्वारा दौड़ते हुए उत्तर देना चाहिये।

स एवं वर्तमानः इहैव स्वर्गे वसति—इस प्रकारका आचरण करनेवाला ब्रह्मचारी यहाँ रहता हुआ भी मानो उत्तम लोकमें निवास करता है।

विष्णुस्मरण—

इसके बाद हाथमें पुष्प-अक्षत लेकर विष्णुका स्मरण करते हुए समस्त कर्म उन्हें अर्पण करे—

प्रमादात् कुर्वतां कर्म प्रच्यवेताऽध्वरेषु यत्।
स्मरणादेव तद्विष्णोः सम्पूर्णं स्यादिति श्रुतिः॥
यस्य स्मृत्या च नामोक्त्या तपोयज्ञक्रियादिषु।
न्यूनं सम्पूर्णतां यातु सद्यो वन्दे तमच्युतम्॥
यत्पादपङ्कजस्मरणात् यस्य नामजपादपि।
न्यूनं कर्म भवेत् पूर्णं तं वन्दे साम्बमीश्वरम्॥
ॐ विष्णवे नमः। ॐ विष्णवे नमः। ॐ विष्णवे नमः।
ॐ साम्बसदाशिवाय नमः। ॐ साम्बसदाशिवाय नमः।
ॐ साम्बसदाशिवाय नमः।

वेदारम्भसंस्कार

वेदारम्भका तात्पर्य तथा सामान्य विधान—

प्रायः उपनयन–संस्कारके ही दिन वेदारम्भ–संस्कार कर लेते हैं। जैसा कि 'वेदारम्भ'—इस नामसे ही स्पष्ट है कि इस संस्कारमें आचार्यके द्वारा ब्रह्मचारीको अपनी वेदशाखाका ज्ञान और मन्त्रोपदेश कराया जाता है। योगियाज्ञवल्क्यस्मृतिमें बताया गया है कि आचार्य कुमारका उपनयन करके उसे महाव्याहृतियोंके साथ वेदका अध्ययन कराये और शौचाचारकी शिक्षा भी प्रदान करे—

उपनीय गुरुः शिष्यं महाव्याहृतिपूर्वकम्।
वेदमध्यापयेदेनं शौचाचाराँश्च शिक्षयेत्॥

इस संस्कारमें प्रारम्भमें वेदारम्भवेदीमें पंचभू–संस्कारपूर्वक अग्नि–स्थापन तथा हवनकर्म होता है। तदनन्तर ब्रह्मचारी बटुकको चाहिये कि वह प्रारम्भमें गणेश आदिका पूजनकर वाग्देवी सरस्वती, गुरुका पूजन करे और उन्हें प्रणाम करके वेदमाता गायत्रीका पाठ करनेके अनन्तर वेदोंकी शिक्षा प्राप्त करे। अपने वेदका सम्पूर्ण स्वाध्याय करके अनन्तर अन्य वेदोंकी भी शिक्षा आचार्यसे प्राप्त करे। अन्तमें प्रणवपूर्वक पुनः गायत्रीका पाठ करके गुरुके द्वारा '**ॐ विरामोऽस्तु**' ऐसा कहनेपर शिष्य गुरुके चरणोंमें प्रणाम करके विराम करे और आचार्यसे अध्ययनके नियमोंका ज्ञान प्राप्त करे।

वीरमित्रोदय–संस्कारप्रकाशमें महर्षि वसिष्ठके वचनसे बताया गया है कि '**अधीत्य शाखामात्मीयां परशाखां ततः पठेत्**' अर्थात् सर्वप्रथम अपनी वेदशाखाका सांगोपांग अध्ययन करनेके अनन्तर दूसरी शाखाओंका अध्ययन करे।

[१२] वेदारम्भसंस्कार-प्रयोग

उपनयनके अनन्तर आचार्य वेदारम्भवेदीके समीप आकर बटुकको भी अपने दाहिने एक शुद्ध आसनपर बैठाये। तदनन्तर आचमन, प्राणायाम आदि करके गणेशादि देवोंका स्मरणात्मक पूजन कर ले। इसके बाद निम्न रीतिसे वेदीपर अग्निकी स्थापना करे।

अग्निस्थापन—

आचार्य वेदारम्भ-संस्कारके लिये बनायी गयी पंच-भूसंस्कारसे सम्पन्न[1] वेदीपर समुद्भव नामक अग्निकी स्थापनाके लिये जल, अक्षत, पुष्प आदि लेकर संकल्प करे—

ॐ अद्य .....गोत्रः .....शर्माहमस्य माणवकस्य वेदारम्भसंस्कार-कर्मणि समुद्भवनामकमग्नेः स्थापनं करिष्ये। कहकर संकल्पजल छोड़ दे।

इसके बाद सुवासिनीके द्वारा लायी गयी प्रदीप्त, निर्धूम समुद्भव नामक अग्निकी स्थापना वेदीपर निम्न मन्त्रसे करे—

ॐ अग्निं दूतं पुरो दधे हव्यवाहमुप ब्रुवे। देवाँ२ आ सादयादिह।

इसके बाद अग्निके ऊपर उसकी रक्षाके लिये कुछ काष्ठ आदि डाल दे और अग्निको प्रज्वलित करे।

ब्रह्मावरण[2]**—**

इसके बाद वरणसामग्री लेकर ब्रह्माके वरणका संकल्प करे—

ॐ अद्य .....गोत्रः .....शर्माऽहमस्मिन् वेदारम्भहवनकर्मणि

---

१. वेदारम्भ-वेदीका संस्कार उपनयन-संस्कारके समय सम्पन्न हो गया है, अतः पुनः करनेकी आवश्यकता नहीं है।

२. प्रायः परम्पराके अनुसार ब्रह्माके न होनेपर पचास कुशोंमें ग्रन्थि लगाकर कुशब्रह्मा बना लिया जाता है। इस स्थितिमें ब्रह्मावरणकी प्रक्रिया आचार्यद्वारा की जानी चाहिये।

कृताकृतावेक्षणादिब्रह्मकर्मकर्तुं ....गोत्रं ....शर्माणं ब्राह्मणमेभि-र्वरणद्रव्यैर्ब्रह्मत्वेन त्वामहं वृणे। वरणसामग्री ब्रह्माको प्रदान करे।

ब्रह्मा कहे—**वृतोऽस्मि।**

इसके बाद ब्रह्माकी प्रार्थना करे—

यथा चतुर्मुखो ब्रह्मा सर्ववेदधरः प्रभुः।
तथा त्वं मम यज्ञेऽस्मिन् ब्रह्मा भव द्विजोत्तम॥

ब्रह्माको अग्निकी प्रदक्षिणा कराकर वेदीके दक्षिण भागमें आसनपर बैठा दे।

कुशकण्डिका—

पृ०सं० ५६ में दी गयी विधिके अनुसार कुशकण्डिका करे।

अग्निप्रतिष्ठा—

निम्न वाक्य बोलकर अक्षत छोड़ते हुए पूर्वमें वेदीपर स्थापित अग्निकी प्रतिष्ठा करे—

समुद्भवनामाग्ने सुप्रतिष्ठितो वरदो भव।

इस प्रकार प्रतिष्ठाकर अग्निका ध्यान करे—

अग्निं प्रज्वलितं वन्दे जातवेदं हुताशनम्।
सुवर्णवर्णममलमनन्तं विश्वतोमुखम्॥
सर्वतः पाणिपादश्च सर्वतोऽक्षिशिरोमुखः।
विश्वरूपो महानग्निः प्रणीतः सर्वकर्मसु॥

ॐ चत्वारि शृङ्गा त्रयो अस्य पादा द्वे शीर्षे सप्त हस्तासो अस्य। त्रिधा बद्धो वृषभो रोरवीति महो देवो मर्त्याँ २ आ विवेश॥

ॐ भूर्भुवः स्वः समुद्भवनाम्ने अग्नये नमः सर्वोपचारार्थे गन्धाक्षतपुष्पाणि समर्पयामि—कहकर अग्निका पूजन कर ले।

हवनविधि—

उक्त मन्त्रोंसे अग्निकी प्रतिष्ठा और पूजा करनेके अनन्तर

आचमन करके दक्षिण जानुको भूमिपर टेककर, मौन रहकर मूल और मध्य भागके मध्यसे स्रुवाको पकड़कर घृतसे हवन करे। हवनके समय ब्रह्मा कुशासे हवनकर्ताका स्पर्श किये रहे (**ब्रह्मणान्वारब्ध**)। इसके पूर्व द्रव्यत्यागके लिये हाथमें जल लेकर निम्न वाक्यसे छोड़ दे—

इदमाज्यं तत्तद्देवतायै मया परित्यक्तं यथादैवतमस्तु न मम।

तदनन्तर निम्न मन्त्रोंसे घृतकी आहुति प्रदान करे। स्रुवामें बचे घीको प्रोक्षणीपात्रमें छोड़ता जाय।

(१) ॐ प्रजापतये स्वाहा, इदं प्रजापतये न मम।

(२) ॐ इन्द्राय स्वाहा, इदमिन्द्राय न मम।

(३) ॐ अग्नये स्वाहा, इदमग्नये न मम।

(४) ॐ सोमाय स्वाहा, इदं सोमाय न मम।

इसके बाद ब्रह्मा हवनकर्तासे कुशोंका स्पर्श हटा ले (**अनन्वारब्ध**), तत्पश्चात् हवन करे।

पहले यजुर्वेदके मन्त्रोंसे आहुति प्रदान करे—

यजुर्वेदके लिये आहुतियाँ—

(१) ॐ अन्तरिक्षाय स्वाहा, इदमन्तरिक्षाय न मम।

(२) ॐ वायवे स्वाहा, इदं वायवे न मम।

(३) ॐ ब्रह्मणे स्वाहा, इदं ब्रह्मणे न मम।

(४) ॐ छन्दोभ्यः स्वाहा, इदं छन्दोभ्यो न मम।

इसके बाद ऋग्वेदके मन्त्रोंसे आहुति प्रदान करे—

ऋग्वेदके लिये आहुतियाँ—

(१) ॐ पृथिव्यै स्वाहा, इदं पृथिव्यै न मम।

(२) ॐ अग्नये स्वाहा, इदमग्नये न मम।

(३) ॐ ब्रह्मणे स्वाहा, इदं ब्रह्मणे न मम।

(४) ॐ छन्दोभ्यः स्वाहा, इदं छन्दोभ्यो न मम।

इसके बाद सामवेदके मन्त्रोंसे आहुति प्रदान करे—

सामवेदके लिये आहुतियाँ—

(१) ॐ दिवे स्वाहा, इदं दिवे न मम।

(२) ॐ सूर्याय स्वाहा, इदं सूर्याय न मम।

(३) ॐ ब्रह्मणे स्वाहा, इदं ब्रह्मणे न मम।

(४) ॐ छन्दोभ्यः स्वाहा, इदं छन्दोभ्यो न मम।

इसके बाद अथर्ववेदके मन्त्रोंसे आहुति प्रदान करे—

अथर्ववेदके लिये आहुतियाँ—

(१) ॐ दिग्भ्यः स्वाहा, इदं दिग्भ्यो न मम।

(२) ॐ चन्द्रमसे स्वाहा, इदं चन्द्रमसे न मम।

(३) ॐ ब्रह्मणे स्वाहा, इदं ब्रह्मणे न मम।

(४) ॐ छन्दोभ्यः स्वाहा, इदं छन्दोभ्यो न मम।

सामान्य आहुतियाँ—

(१) ॐ प्रजापतये स्वाहा, इदं प्रजापतये न मम।

(२) ॐ देवेभ्यः स्वाहा, इदं देवेभ्यो न मम।

(३) ॐ ऋषिभ्यः स्वाहा, इदमृषिभ्यो न मम।

(४) ॐ श्रद्धायै स्वाहा, इदं श्रद्धायै न मम।

(५) ॐ मेधायै स्वाहा, इदं मेधायै न मम।

(६) ॐ सदसस्पतये स्वाहा, इदं सदसस्पतये न मम।

(७) ॐ अनुमतये स्वाहा, इदमनुमतये न मम।

पुनः ब्रह्मा हवनकर्ताका कुशोंसे स्पर्श करे और निम्न मन्त्रोंसे आहुति प्रदान करे—

नवाहुति

१-ॐ भूः स्वाहा, इदमग्नये न मम।

२–ॐ भुवः स्वाहा, इदं वायवे न मम।

३–ॐ स्वः स्वाहा, इदं सूर्याय न मम।

४–ॐ त्वं नो अग्ने वरुणस्य विद्वान् देवस्य हेडो अव यासिसीष्ठाः। यजिष्ठो वह्नितमः शोशुचानो विश्वा द्वेषाꣳसि प्र मुमुग्ध्यस्मत्स्वाहा, इदमग्नीवरुणाभ्यां न मम।

५–ॐ स त्वं नो अग्नेऽवमो भवोती नेदिष्ठो अस्या उषसो व्युष्टौ। अव यक्ष्व नो वरुणꣳरराणो वीहि मृडीकꣳ सुहवो न एधि स्वाहा। इदमग्नीवरुणाभ्यां न मम।

६–ॐ अयाश्चाग्नेऽस्यनभिशस्तिपाश्च सत्यमित्वमयाऽअसि। अया नो यज्ञं वहास्यया नो धेहि भेषजꣳ स्वाहा। इदमग्नये ऽयसे न मम।

७–ॐ ये ते शतं वरुण ये सहस्त्रं यज्ञियाः पाशा वितता महान्तः। तेभिर्नो ऽअद्य सवितोत विष्णुर्विश्वे मुञ्चन्तु मरुतः स्वर्काः स्वाहा॥ इदं वरुणाय सवित्रे विष्णवे विश्वेभ्यो देवेभ्यो मरुद्भ्यः स्वर्केभ्यश्च न मम।

८–ॐ उदुत्तमं वरुण पाशमस्मदवाधमं वि मध्यमꣳश्रथाय। अथा वयमादित्य व्रते तवानागसोऽअदितये स्याम स्वाहा॥ इदं वरुणायादित्यायादितये न मम।

९–(मौन होकर) **ॐ प्रजापतये स्वाहा, इदं प्रजापतये न मम।**

स्विष्टकृत् आहुति—

इसके बाद ब्रह्माद्वारा कुशसे स्पर्श किये जानेकी स्थितिमें निम्न मन्त्रसे घृतद्वारा स्विष्टकृत् आहुति दे—

ॐ अग्नये स्विष्टकृते स्वाहा, इदमग्नये स्विष्टकृते न मम।

संस्रवप्राशन—

हवन पूर्ण होनेपर प्रोक्षणीपात्रसे घृत दाहिने हाथमें लेकर यत्किंचित् प्राशन करे। हाथ धो ले। फिर आचमन करे।

मार्जनविधि—

इसके बाद निम्नलिखित मन्त्रद्वारा प्रणीतापात्रके जलसे कुशोंके द्वारा अपने सिरपर मार्जन करे—

ॐ सुमित्रिया न आप ओषधयः सन्तु।

इसके बाद निम्न मन्त्रसे जल नीचे छोड़े—

ॐ दुर्मित्रियास्तस्मै सन्तु योऽस्मान् द्वेष्टि यं च वयं द्विष्मः।

पवित्रप्रतिपत्ति—

पवित्रकको अग्निमें छोड़ दे।

पूर्णपात्रदान—

पूर्वमें स्थापित पूर्णपात्रमें द्रव्य-दक्षिणा रखकर निम्न संकल्पकर दक्षिणासहित पूर्णपात्र ब्रह्माको प्रदान करे—

ॐ अद्य ……गोत्रः ……शर्माहं अस्य कुमारस्य वेदारम्भसंस्कार-होमकर्मणि कृताकृतावेक्षणरूपब्रह्मकर्मप्रतिष्ठार्थमिदं वृषनिष्क्रय-द्रव्यसहितं पूर्णपात्रं प्रजापतिदैवतं ……गोत्राय ……शर्मणे ब्रह्मणे भवते सम्प्रददे।

ब्रह्मा '**स्वस्ति**' कहकर उस पूर्णपात्रको ग्रहण कर ले।

प्रणीताविमोक—

प्रणीतापात्रको ईशानकोणमें उलटकर रख दे।

मार्जन—

पुनः उपयमन कुशोंद्वारा निम्न मन्त्रसे उलटकर रखे गये प्रणीताके जलसे मार्जन करे—

ॐ आपः शिवाः शिवतमाः शान्ताः शान्ततमास्तास्ते

कृण्वन्तु भेषजम्।

उपयमन कुशोंको अग्निमें छोड़ दे।

बर्हिहोम—

तदनन्तर पहले बिछाये हुए कुशाओंको जिस क्रमसे बिछाये गये थे, उसी क्रमसे उठाकर घृतमें भिगोये और निम्न मन्त्रका उच्चारणकर अग्निमें डाल दे—

ॐ देवा गातुविदो गातुं वित्त्वा गातुमित। मनसस्पत इमं देव यज्ञꣳ स्वाहा वाते धाः स्वाहा।

कुशमें लगी ब्रह्मग्रन्थिको खोल दे।

देवपूजन*—

इसके बाद ब्रह्मचारी देवपूजन करनेके लिये हाथमें जल, अक्षत, पुष्प, सुपारी लेकर संकल्प करे—

ॐ अद्य ''''गोत्रः ''''शर्माहं पूर्वोच्चारितग्रहगुणगणविशेषण-विशिष्टायां पुण्यतिथौ मम ब्रह्मवर्चससिद्ध्यर्थं वेदारम्भकर्मणः पूर्वाङ्गत्वेन गणपतिसहितसरस्वतीविष्णुलक्ष्मीयजुर्वेदगुरूणां पूजनं करिष्ये।

इसके बाद लकड़ीके पाटेपर दक्षिणसे उत्तरकी ओरसे पाँच स्थानोंपर दही-चावल मिलाकर (दध्यक्षतपुंज) रखे तथा उनपर सुपारी रखे और उनपर निम्न मन्त्रोंसे गणपति आदि देवताओंकी यथाक्रम स्थापना करे—

(१) ॐ भूर्भुवः स्वः गणेश इहागच्छ पूजार्थं त्वामावाहयामि। इह तिष्ठ।

---

* आदौ गणपतिं चेष्ट्वा सम्पूज्य च सरस्वतीम्। गुरुपूजां ततः कृत्वा विद्याः सर्वाः समारभेत्॥
प्राशनादिविमोकान्ते कृत्वा विघ्नेशपूजनम्। सरस्वतीं हरिं लक्ष्मीं स्वविद्यां पूजयेत्ततः॥

(संस्कारप्रकाश)

(२) ॐ भूर्भुवः स्वः विष्णो इहागच्छ पूजार्थं त्वामावाहयामि। इह तिष्ठ।

(३) ॐ भूर्भुवः स्वः सरस्वति इहागच्छ पूजार्थं त्वामावाहयामि। इह तिष्ठ।

(४) ॐ भूर्भुवः स्वः लक्ष्मि इहागच्छ पूजार्थं त्वामावाहयामि। इह तिष्ठ।

(५) ॐ भूर्भुवः स्वः स्वविद्ये इहागच्छ पूजार्थं त्वा-मावाहयामि। इह तिष्ठ।

निम्न मन्त्रसे अक्षत छोड़ते हुए देवोंकी प्रतिष्ठा करे—

ॐ एतं ते देव सवितर्यज्ञं प्राहुर्बृहस्पतये ब्रह्मणे। तेन यज्ञमव तेन यज्ञपतिं तेन मामव॥

नाममन्त्रोंसे गन्धाक्षतपुष्पोंद्वारा सबका पूजन करे।

गुरुपूजन—

बटुक गन्ध-पुष्पादिद्वारा गुरुका पूजन करे और उनके चरणोंमें प्रणाम करे।

वेदारम्भ

इसके बाद सर्वप्रथम प्रणवव्याहृतिपूर्वक गायत्री मन्त्रको पढ़कर अपने वेदकी शाखाका आरम्भ करे। यथा—

हरिः ॐ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात्।

शुक्लयजुर्वेदका आरम्भ—

ॐ इषे त्वोर्जे त्वा वायव स्थ देवो वः सविता प्रार्पयतु श्रेष्ठतमाय कर्मण आप्यायध्व मघ्न्या इन्द्राय भागम्प्रजावती-रनमीवा अयक्ष्मा मा व स्तेन ईशत माघशꣳ सो ध्रुवा अस्मिन् गोपतौ स्यात बह्वीर्यजमानस्य पशून् पाहि॥

ऋग्वेदारम्भ—

ॐ अग्निमीळे पुरोहितं यज्ञस्य देवमृत्विजम्। होतारं रत्नधातमम्।

सामवेदारम्भ—

ॐ अग्न आ याहि वीतये गृणानो हव्यदातये। नि होता सत्सि बर्हिषि।

अथर्ववेदारम्भ—

ॐ शं नो देवीरभिष्टय आपो भवन्तु पीतये। शं योरभि स्त्रवन्तु नः।

पुनः गायत्रीमन्त्रका पाठ करे और '**विरामोऽस्तु**'—ऐसा गुरुके कहनेपर शिष्य उनके चरणोंमें प्रणाम करे और पाठ बन्द करे।

काशीप्रस्थान—

आचारानुसार इस अवसरपर ब्रह्मचारीको वेद पढ़नेके लिये काशी भेजते हैं।

विद्यार्थीके नियम—

आचार्यके द्वारा बुलानेपर लेटे हुए शिष्यद्वारा बैठकर, बैठे हुए शिष्यद्वारा खड़े होकर, खड़े हुए शिष्यद्वारा चलते हुए, चलते हुए शिष्यको दौड़ते हुए उत्तर देना चाहिये।

त्र्यायुष्करण—

इसके बाद आचार्य बैठकर स्त्रुवाद्वारा भस्म ले और दाहिने हाथकी अनामिका अँगुलीसे निम्न मन्त्रोंका पाठ करता हुआ पहले स्वयं पुनः इसी रीतिसे शिष्यको भी लगाये—

ॐ त्र्यायुषं जमदग्नेः—ललाटपर भस्म लगाये।

ॐ कश्यपस्य त्र्यायुषम्—ग्रीवामें भस्म लगाये।

ॐ यद्देवेषु त्र्यायुषम्—दक्षिण बाहुके मूलमें।

ॐ तन्नो अस्तु त्र्यायुषम्—हृदयमें भस्म लगाये।

अग्निविसर्जन—

इसके बाद अक्षत छोड़ते हुए समुद्भव नामक अग्निकी पूजाकर विसर्जन करे—

गच्छ गच्छ सुरश्रेष्ठ स्वस्थाने परमेश्वर।
यत्र ब्रह्मादयो देवास्तत्र गच्छ हुताशन॥

विष्णुस्मरण—

इसके बाद हाथमें पुष्प-अक्षत लेकर विष्णुका स्मरण करते हुए समस्त कर्म उन्हें अर्पण करे—

प्रमादात् कुर्वतां कर्म प्रच्यवेताऽध्वरेषु यत्।
स्मरणादेव तद्विष्णोः सम्पूर्णं स्यादिति श्रुतिः॥
यस्य स्मृत्या च नामोक्त्या तपोयज्ञक्रियादिषु।
न्यूनं सम्पूर्णतां यातु सद्यो वन्दे तमच्युतम्॥
यत्पादपङ्कजस्मरणात् यस्य नामजपादपि।
न्यूनं कर्म भवेत् पूर्णं तं वन्दे साम्बमीश्वरम्॥
ॐ विष्णवे नमः। ॐ विष्णवे नमः। ॐ विष्णवे नमः।
ॐ साम्बसदाशिवाय नमः। ॐ साम्बसदाशिवाय नमः।
ॐ साम्बसदाशिवाय नमः।

समावर्तनसंस्कार

समावर्तनका अर्थ तथा संस्कारकी महिमा—

उपनयन-संस्कारके अनन्तर ब्रह्मचारी गुरुकुलमें निवास करता है और वहाँ वेदादिकी शिक्षा प्राप्त करता है। इस संस्कारमें उसकी विद्यासमाप्ति होती है और मन्त्राभिषेकपूर्वक गुरुकी आज्ञासे स्नात होता है। ब्रह्मचर्यके चिह्न मेखला आदिका त्याग करना पड़ता है, जटा-लोम आदिका छेदन करके गार्हस्थ्यके उपयुक्त चन्दन, पुष्पमाला, पगड़ी, वस्त्राभूषण, अलंकार आदिका धारण होता है। जिन कर्मोंका ब्रह्मचर्यव्रतमें निषेध आदिका वर्णन था, उनका ग्रहण होता है। जैसे दर्पण देखना, सुरमा लगाना, छाता लगाना, जूता पहनना आदि। ये सब कर्म आचार्यकी देख-रेखमें समन्त्रक होते हैं। फिर आचार्यको दक्षिणा देकर अपने घरमें आगमन होता है। समावर्तनका सामान्य अर्थ है—गुरुकुलसे शिक्षा ग्रहणकर अपने घर वापस आना। यह शिक्षाप्राप्तिका दीक्षान्त संस्कार है। इस संस्कारमें ब्रह्मचर्याश्रम—विद्याध्ययनकी पूर्णता होती है और फिर विवाहके अनन्तर गृहस्थाश्रमप्रवेशकी अधिकारसिद्धि होती है। वेदविद्या प्राप्तकर उसकी ब्रह्मचारी संज्ञा नहीं रहती, बल्कि अब वह 'स्नातक' अर्थात् विद्यारूपी प्रवाहमें स्नान किया हुआ कहलाता है। श्रुतिका आदेश है—'**आचार्याय प्रियं धनमाहृत्य प्रजातन्तुं मा व्यवच्छेत्सीः।**' अर्थात् आचार्यको दक्षिणारूपमें यथाशक्ति धन देकर प्रजातन्तु (सन्तानपरम्परा)-की रक्षाके लिये स्नातक द्विज गृहस्थाश्रममें प्रवेश करे। इस विषयमें महर्षि याज्ञवल्क्यजीका भी स्पष्ट निर्देश है—

वेदं व्रतानि वा पारं नीत्वा ह्युभयमेव वा॥
अविप्लुतब्रह्मचर्यो लक्षण्यां स्त्रियमुद्वहेत्।

(याज्ञ०स्मृ० १।३।५१-५२)

अर्थात् समग्र अथवा एक या दो वेदका अध्ययनकर अस्खलित ब्रह्मचारी सुलक्षणा स्त्रीसे उद्वाह करे। वेदविद्याप्राप्त यह स्नातक विद्याव्रतस्नातक कहलाता है, वह चूँकि वेदादिके अध्ययन एवं स्वाध्यायसे महान् ब्रह्मतेजसे सम्पन्न होता है। अतः उस समय पिता तथा आचार्यके द्वारा भी मधुपर्क आदिके द्वारा पूज्य होता है (मनुस्मृति ३। ३)।[१]

गुरुद्वारा स्नातकके लिये उपदेश[२]—

आश्वलायनस्मृतिमें बताया गया है कि गुरुकी आज्ञासे मंगलमय कलशोंसे मन्त्रद्वारा पूत जलसे स्नान सम्पन्नकर वह नवीन वस्त्र-आभूषणोंको धारणकर गुरुके चरणोंके समीप बैठता है, तब गुरु उसे आगे कैसे जीवन व्यतीत करना है, इसकी शिक्षा प्रदान करते हैं। विद्याध्ययनपर्यन्त गुरुके समीप रहता हुआ वह ब्रह्मचर्यपूर्वक शम-दमादि नियमोंके पालनमें तत्पर रहता है, अग्निकी उपासना करता है और गुरु-शुश्रूषामें तत्पर रहता है। किंतु अब उसे वापस घर लौटना होता है। यहाँपर गुरुकुलके परिवेशको छोड़कर उसे नये परिवेशमें रहना होता है। गृहके वातावरणमें माता-पिताके स्नेहसे कहीं वह नियमोंके पालनमें च्युत न हो जाय, शम-दमादिका उसका आचरण कहीं शिथिल न हो जाय, इसलिये गुरु उसे शिक्षा प्रदान करते हैं कि आगे भी तुम सावधान होकर यम-नियमोंका दृढ़तासे पालन करते रहना। कामवाद, कामाचार और कामभक्षणसे सदा बचते रहना। नृत्य-गीतादिमें अभिरुचि न रखना, सभीके साथ मित्रतापूर्ण व्यवहार रखना इत्यादि। विवाह हो जानेतक इन सभी नियमोंका पालन करते रहना

---

१. प्राचीनकालमें उपनयनके बाद वेदारम्भसंस्कार करके गुरुकुलमें रहकर वेदाध्ययन सम्पन्नकर समावर्तनसंस्कार करनेकी परम्परा थी, परंतु आजकल सामान्यतः उपनयन-संस्कारके अनन्तर वेदारम्भ-संस्कारकी प्रक्रिया पूरीकर समावर्तनसंस्कार तत्काल कर दिया जाता है।

२. गृहस्थधर्मके उपदेशको अलगसे पन्नेपर छपवाकर स्नातकोंको देना भी चाहिये।

और विवाहके अनन्तर गृहस्थधर्मके नियमोंका पालन करना।

तैत्तिरीयोपनिषद्की शीक्षावल्लीके ११वें अनुवाकमें स्नातकोंके लिये समावर्तन-संस्कारके अनन्तर गृहस्थधर्ममें प्रवेश करके कैसे रहना चाहिये—इसका बड़ा ही सुन्दर उपदेश आया है, जो दीक्षान्त उपदेश कहलाता है, प्रत्येक गृहस्थके लिये बहुत उपयोगी होनेसे उसको यहाँ दिया जा रहा है, इन उपदेशोंका पालन करनेसे स्नातकसे गृहस्थ हुए व्यक्तिका जीवन पूर्ण सदाचारमय, भगवद्भक्तिमय तथा आनन्दमय हो जाता है, वह उपदेश इस प्रकार है—

सत्यं वद। धर्मं चर। स्वाध्यायान्मा प्रमदः। आचार्याय प्रियं धनमाहृत्य प्रजातन्तुं मा व्यवच्छेत्सीः। सत्यान्न प्रमदितव्यम्। धर्मान्न प्रमदितव्यम्। कुशलान्न प्रमदितव्यम्। भूत्यै न प्रमदितव्यम्। स्वाध्यायप्रवचनाभ्यां न प्रमदितव्यम्। देवपितृकार्याभ्यां न प्रमदितव्यम्।

पुत्र! तुम सदा सत्य-भाषण करना, आपत्ति पड़नेपर भी झूठका कदापि आश्रय न लेना; अपने वर्ण-आश्रमके अनुकूल शास्त्रसम्मत धर्मका अनुष्ठान करना; स्वाध्यायसे अर्थात् वेदोंके अभ्यास, सन्ध्यावन्दन, गायत्रीजप और भगवन्नाम-गुणकीर्तन आदि नित्यकर्ममें कभी भी प्रमाद न करना—अर्थात् न तो कभी उन्हें अनादरपूर्वक करना और न आलस्यवश उनका त्याग ही करना। गुरुके लिये दक्षिणाके रूपमें उनकी रुचिके अनुरूप धन लाकर प्रेमपूर्वक देना; फिर उनकी आज्ञासे गृहस्थाश्रममें प्रवेश करके स्वधर्मका पालन करते हुए संतान-परम्पराको सुरक्षित रखना—उसका लोप न करना। अर्थात् शास्त्रविधिके अनुसार विवाहित धर्मपत्नीके साथ ऋतुकालमें नियमित सहवास करके संतानोत्पत्तिका कार्य अनासक्तिपूर्वक करना। तुमको कभी भी सत्यसे नहीं चूकना चाहिये अर्थात् हँसी-दिल्लगी या व्यर्थकी बातोंमें वाणीकी

शक्तिको न तो नष्ट करना चाहिये और न परिहास आदिके बहाने कभी झूठ ही बोलना चाहिये। इसी प्रकार धर्मपालनमें भी भूल नहीं करना चाहिये अर्थात् कोई बहाना बनाकर या आलस्यवश कभी धर्मकी अवहेलना नहीं करनी चाहिये। लौकिक और शास्त्रीय—जितने भी कर्तव्यरूपसे प्राप्त शुभ कर्म हैं, उनका कभी त्याग या उनकी उपेक्षा नहीं करनी चाहिये, अपितु यथायोग्य उनका अनुष्ठान करते रहना चाहिये। धन-सम्पत्तिको बढ़ानेवाले लौकिक उन्नतिके साधनोंके प्रति भी उदासीन नहीं होना चाहिये। इसके लिये भी वर्णाश्रमानुकूल चेष्टा करनी चाहिये। पढ़ने और पढ़ानेका जो मुख्य नियम है, उसकी कभी अवहेलना या आलस्यपूर्वक त्याग नहीं करना चाहिये। इसी प्रकार अग्निहोत्र और यज्ञादिके अनुष्ठानरूप देवकार्य तथा श्राद्ध-तर्पण आदि पितृकार्यके सम्पादनमें भी आलस्य या अवहेलनापूर्वक प्रमाद नहीं करना चाहिये।

मातृदेवो भव। पितृदेवो भव। आचार्यदेवो भव। अतिथिदेवो भव। यान्यनवद्यानि कर्माणि। तानि सेवितव्यानि। नो इतराणि। यान्यस्माकꣳसुचरितानि। तानि त्वयोपास्यानि। नो इतराणि। ये के चास्मच्छ्रेयाꣳसो ब्राह्मणाः। तेषां त्वयाऽऽसनेन प्रश्वसितव्यम्। श्रद्धया देयम्। अश्रद्धयादेयम्। श्रिया देयम्। ह्रिया देयम्। भिया देयम्। संविदा देयम्।

पुत्र! तुम मातामें देवबुद्धि रखना, पितामें भी देवबुद्धि रखना, आचार्यमें देवबुद्धि रखना तथा अतिथिमें भी देवबुद्धि रखना। आशय यह कि इन चारोंको ईश्वरकी प्रतिमूर्ति समझकर श्रद्धा और भक्तिपूर्वक सदा इनकी आज्ञाका पालन, नमस्कार और सेवा करते रहना; इन्हें सदा अपने विनयपूर्ण व्यवहारसे प्रसन्न रखना। जगत्में जो-जो निर्दोष कर्म हैं, उन्हींका तुम्हें सेवन करना चाहिये। उनसे

भिन्न जो दोषयुक्त—निषिद्ध कर्म हैं, उनका कभी भूलकर—स्वप्नमें भी आचरण नहीं करना चाहिये। हमारे—अपने गुरुजनोंके आचार-व्यवहारमें भी जो उत्तम (शास्त्र एवं शिष्ट पुरुषोंद्वारा अनुमोदित) आचरण हैं, जिनके विषयमें किसी प्रकारकी शंकाको स्थान नहीं है, उन्हींका तुम्हें अनुकरण करना चाहिये, उन्हींका सेवन करना चाहिये। जिनके विषयमें जरा-सी शंका हो, उनका अनुकरण कभी नहीं करना चाहिये। जो कोई भी हमसे श्रेष्ठ—वय, विद्या, तप, आचरण आदिमें बड़े तथा ब्राह्मण आदि पूज्य पुरुष घरपर पधारें, उनको पाद्य, अर्घ्य, आसन आदि प्रदान करके सब प्रकारसे उनका सम्मान तथा यथायोग्य सेवा करनी चाहिये। अपनी शक्तिके अनुसार दान करनेके लिये तुम्हें सदा उदारतापूर्वक तत्पर रहना चाहिये। जो कुछ भी दिया जाय, वह श्रद्धापूर्वक देना चाहिये। अश्रद्धापूर्वक नहीं देना चाहिये; क्योंकि बिना श्रद्धाके किये हुए दान आदि कर्म असत् माने गये हैं (गीता १७। २७)। लज्जापूर्वक देना चाहिये। अर्थात् सारा धन भगवान्‌का है, मैंने इसे अपना मानकर उनका अपराध किया है। इसे सब प्राणियोंके हृदयमें स्थित भगवान्‌की सेवामें ही लगाना उचित था, मैंने ऐसा नहीं किया। मैं जो कुछ दे रहा हूँ, वह भी बहुत कम है। यों सोचकर संकोचका अनुभव करते हुए देना चाहिये। मनमें दानीपनके अभिमानको नहीं आने देना चाहिये। सर्वत्र और सबमें भगवान् हैं, अतः दान लेनेवाले भी भगवान् ही हैं। उनकी बड़ी कृपा है कि मेरा दान स्वीकार कर रहे हैं। यों विचारकर भगवान्‌से भय मानते हुए दान देना चाहिये। 'हम किसीका उपकार कर रहे हैं' ऐसी भावना मनमें लाकर अभिमान या अविनय नहीं प्रकट करना चाहिये। परंतु जो कुछ दिया जाय—वह विवेकपूर्वक, उसके परिणामको समझकर निष्कामभावसे कर्तव्य समझकर देना चाहिये (गीता

१७।२०)। इस प्रकार दिया हुआ दान ही भगवान्‌की प्रीतिका—कल्याणका साधन हो सकता है। वही अक्षय फलका देनेवाला है।

अथ यदि ते कर्मविचिकित्सा वा वृत्तविचिकित्सा वा स्यात्। ये तत्र ब्राह्मणाः सम्मर्शिनः। युक्ता आयुक्ताः। अलूक्षा धर्मकामाः स्युः। यथा ते तत्र वर्तेरन्। तथा तत्र वर्तेथाः। अथाभ्याख्यातेषु। ये तत्र ब्राह्मणाः सम्मर्शिनः। युक्ता आयुक्ताः। अलूक्षा धर्मकामाः स्युः। यथा ते तेषु वर्तेरन्। तथा तेषु वर्तेथाः। एष आदेशः। एष उपदेशः। एषा वेदोपनिषत्। एतदनुशासनम्। एवमुपासितव्यम्। एवमु चैतदुपास्यम्।

यह सब करते हुए भी यदि तुमको किसी अवसरपर अपना कर्तव्य निश्चित करनेमें दुविधा उत्पन्न हो जाय, अपनी बुद्धिसे किसी एक निश्चयपर पहुँचना कठिन हो जाय—तुम किंकर्तव्यविमूढ़ हो जाओ, तो ऐसी स्थितिमें वहाँ जो कोई उत्तम विचार रखनेवाले, उचित परामर्श देनेमें कुशल, सत्कर्म और सदाचारमें तत्परतापूर्वक लगे हुए, सबके साथ प्रेमपूर्वक व्यवहार करनेवाले तथा एकमात्र धर्म-पालनकी ही इच्छा रखनेवाले विद्वान् ब्राह्मण (या अन्य कोई वैसे ही महापुरुष) हों—वे जिस प्रकार ऐसे प्रसंगोंपर आचरण करते हों, उसी प्रकारका आचरण तुम्हें भी करना चाहिये। ऐसे स्थलोंमें उन्हींके सत्परामर्शके अनुसार उन्हींके स्थापित आदर्शका अनुगमन करना चाहिये। इसके अतिरिक्त जो मनुष्य किसी दोषके कारण लांछित हो गया हो, उसके साथ किस समय कैसा व्यवहार करना चाहिये—इस विषयमें भी यदि तुमको दुविधा प्राप्त हो जाय—तुम अपनी बुद्धिसे निर्णय न कर सको तो वहाँ भी जो विचारशील, परामर्श देनेमें कुशल, सत्कर्म और सदाचारमें पूर्णतया संलग्न तथा धर्मकामी (सांसारिक धनादिकी कामनासे रहित) निःस्वार्थी विद्वान्

ब्राह्मण हों, वे लोग उसके साथ जैसा व्यवहार करें, वैसा ही तुमको भी करना चाहिये। उनका व्यवहार ही इस विषयमें प्रमाण है।

यही शास्त्रकी आज्ञा है—शास्त्रोंका निचोड़ है। यही गुरु एवं माता-पिताका अपने शिष्यों और संतानोंके प्रति उपदेश है तथा यही सम्पूर्ण वेदोंका रहस्य है। इतना ही नहीं, अनुशासन भी यही है। ईश्वरकी आज्ञा तथा परम्परागत उपदेशका नाम अनुशासन है। इसलिये तुमको इसी प्रकार कर्तव्य एवं सदाचारका पालन करना चाहिये।

[१३] समावर्तनसंस्कार-प्रयोग

पारस्करगृह्यसूत्रके '**एतदेव व्रतादेशनविसर्गेषु**'—इस वचनके अनुसार समावर्तन-संस्कारमें वेदारम्भ एवं उपनयन-संस्कारमें विहित अधिकांश विधियोंको सम्पादित किया जाता है। इसमें मातृपूजनादिसे लेकर पूर्णपात्रादिदानतकका कर्म आचार्यद्वारा सम्पन्न होता है, तदनन्तर अष्टकलशाभिषेकसे लेकर दण्डधारणतकके कार्य स्नातकद्वारा सम्पन्न होते हैं।[१]

सर्वप्रथम बटुक स्नान करनेके लिये वर[२] (दक्षिणा)-रूपसे आचार्यको गौ आदि प्रदान करे। एतदर्थ गोदान-संकल्प करे।

गोदान-संकल्प—

ॐ अद्य ....अहं स्नानाधिकारसिद्धये इमां गां गोप्रत्याम्नाय-निष्क्रयभूतां दक्षिणां आचार्याय भवते सम्प्रददे। कहकर आचार्यको गोनिष्क्रयद्रव्य प्रदान करे।

स्नानार्थ-अनुमति—

ब्रह्मचारी कहे—**भो गुरो! अहं स्नास्यामि।** (हे गुरो! मैं स्नान करूँगा।)

आचार्य कहे—**स्नाहि।** (स्नान करो) इस प्रकार गुरुकी आज्ञा प्राप्तकर बटुक स्नान करे।

इसके बाद आचार्य समावर्तन-संस्कारके लिये निर्मित वेदीके समीप आकर पूर्वमुख आसनपर बैठे और सभी सामग्रियोंको यथास्थान

---

१. अत्र समावर्तने मातृपूजनादिपूर्णपात्रदानान्तमाचार्यस्य कृत्यम्। अष्टकलशा-भिषेकादिदण्डनिधानान्तं ब्रह्मचारिणः बटोः कृत्यम्।

२. गौर्विशिष्टतमा विप्रैर्वेदेष्वपि निगद्यते। न ततोऽन्यद्वरं यस्मात्तस्माद्गौर्वर उच्यते॥

(कात्यायनस्मृति २७। १४)

अर्थात् वेदों तथा ब्राह्मणोंद्वारा गौको दक्षिणाके लिये सर्वश्रेष्ठ कहा गया है। चूँकि उससे अन्य कोई दक्षिणा श्रेष्ठ नहीं है, इसलिये गौको वर कहा जाता है।

रख ले। अपने दक्षिण भागमें स्नातकको उत्तरमुख बैठा ले। तदनन्तर आचमन-प्राणायाम आदि करके गणेशादि देवोंका स्मरणात्मक पूजन कर ले।

अग्निस्थापन—

आचार्य समावर्तन-संस्कारके लिये बनायी गयी पंच-भूसंस्कारसे सम्पन्न वेदीपर सुवासिनीके द्वारा लायी गयी निर्धूम अंगारमय अग्निको स्थापित करनेके लिये हाथमें जल-अक्षत-पुष्प लेकर निम्न संकल्प करे—

ॐ अद्य ....गोत्रः ....शर्माहमस्य माणवकस्य समावर्तन-संस्कारकर्मणि वैश्वानरनामकमग्नेः स्थापनं करिष्ये—कहकर संकल्पजल छोड़ दे।

निम्न मन्त्रसे वेदीपर अग्निकी स्थापना करे—

ॐ अग्निं दूतं पुरो दधे हव्यवाहमुप ब्रुवे। देवाँ२ आ सादयादिह।

अग्निके ऊपर उसकी रक्षाके लिये कुछ काष्ठ आदि रखकर उसे प्रज्वलित करे।

ब्रह्मावरण*—

इसके बाद ब्रह्माके वरणके लिये पुष्प-चन्दन-वस्त्र आदि वरण-सामग्री लेकर निम्न संकल्प करे—

ॐ अद्य ....बटोः समावर्तनहोमकर्मणि कृताकृतावेक्षण-रूपब्रह्मकर्मकर्तुं ....गोत्रं ....शर्माणं ब्राह्मणमेभिः पुष्पचन्दनताम्बूल-यज्ञोपवीतवासोभिः ब्रह्मत्वेन भवन्तमहं वृणे।

यह कहकर वरणसामग्री ब्रह्माको समर्पित करे।

ब्रह्मा कहे—**वृतोऽस्मि**।

---

* प्रायः परम्पराके अनुसार ब्रह्माके न होनेपर पचास कुशोंमें ग्रन्थि लगाकर कुशब्रह्मा बना लिया जाता है, इस स्थितिमें ब्रह्मावरणकी प्रक्रिया आचार्यद्वारा की जानी चाहिये।

आचार्य कहे—**यथाविहितं कर्म कुरु**—विधिके अनुसार कर्म करो।

ब्रह्मा कहे—**यथाज्ञानं करवाणि**—अपनी बुद्धिके अनुसार करूँगा।

इसके बाद अग्निके दक्षिण स्थापित शुद्ध आसनपर पूर्वको अग्रभाग करके कुश बिछाये। फिर ब्रह्मासे कहे—**अस्मिन् कर्मणि त्वं ब्रह्मा भव**—आप इस समावर्तन कर्ममें ब्रह्मा बनें।

ब्रह्मा कहें—**ॐ भवामि**—मैं बनता हूँ।

इसके बाद बटुक ब्रह्माकी प्रार्थना करे—

यथा चतुर्मुखो ब्रह्मा सर्ववेदधरः प्रभुः।
तथा त्वं मम यज्ञेऽस्मिन् ब्रह्मा भव द्विजोत्तम॥

ब्रह्माको अग्निकी प्रदक्षिणा कराकर वेदीके दक्षिण भागमें आसनपर बैठा दे।

कुशकण्डिका—

पृ०सं० ५६ में दी गयी विधिके अनुसार कुशकण्डिका करे।

अग्निप्रतिष्ठा—

निम्न मन्त्रसे अक्षत छोड़ते हुए अग्निकी प्रतिष्ठा करे—

ॐ वैश्वानरनामाग्ने* सुप्रतिष्ठितो वरदो भव।

अग्निका ध्यान—

इसके बाद निम्न मन्त्रोंसे अग्निका ध्यान करे—

अग्निं प्रज्वलितं वन्दे जातवेदं हुताशनम्।
सुवर्णवर्णममलमनन्तं विश्वतोमुखम्॥
सर्वतः पाणिपादश्च सर्वतोऽक्षिशिरोमुखः।
विश्वरूपो महानग्निः प्रणीतः सर्वकर्मसु॥

ॐ चत्वारि शृङ्गा त्रयो अस्य पादा द्वे शीर्षे सप्त हस्तासो अस्य।

* 'वैश्वानरो विसर्गे स्यात्' इस वचनके अनुसार समावर्तन-संस्कारकर्ममें सम्पन्न होनेवाले हवनकी अग्निका नाम 'वैश्वानर' है।

त्रिधा बद्धो वृषभो रोरवीति महो देवो मर्त्यां२ आ विवेश॥

ॐ भूर्भुवः स्वः वैश्वानरनाम्ने अग्नये नमः। सर्वोपचारार्थे गन्धाक्षतपुष्पाणि समर्पयामि। कहकर गन्धाक्षतपुष्पसे अग्निका पूजन करे। इसके बाद हवन करे।

दक्षिण जानु भूमिसे लगाये। ब्रह्मा कुशसे हवनकर्ताके दक्षिण बाहुका स्पर्श किये रहे **(अन्वारब्ध)**। हवनसे पूर्व हवनकर्ता आचमन कर ले। मूल और मध्यभागके मध्यसे स्त्रुवाको पकड़कर निम्न मन्त्रोंसे हवन करे और आहुतिसे बचा घी प्रणीतापात्रमें छोड़ता जाय।

हवन-विधि—

(१) **ॐ प्रजापतये** (मनसे उच्चारण करे) **स्वाहा, इदं प्रजापतये न मम**।

(२) ॐ इन्द्राय स्वाहा, इदमिन्द्राय न मम।

(३) ॐ अग्नये स्वाहा, इदमग्नये न मम।

(४) ॐ सोमाय स्वाहा, इदं सोमाय न मम।

इसके बाद ब्रह्मा हवनकर्तासे कुशोंका स्पर्श हटा ले (अनन्वारब्ध), तत्पश्चात् हवन करे।

यजुर्वेदके लिये आहुतियाँ—

(१) ॐ अन्तरिक्षाय स्वाहा, इदमन्तरिक्षाय न मम।

(२) ॐ वायवे स्वाहा, इदं वायवे न मम।

(३) ॐ ब्रह्मणे स्वाहा, इदं ब्रह्मणे न मम।

(४) ॐ छन्दोभ्यः स्वाहा, इदं छन्दोभ्यो न मम।

ऋग्वेदके लिये आहुतियाँ—

(१) ॐ पृथिव्यै स्वाहा, इदं पृथिव्यै न मम।

(२) ॐ अग्नये स्वाहा, इदमग्नये न मम।

(३) ॐ ब्रह्मणे स्वाहा, इदं ब्रह्मणे न मम।

(४) ॐ छन्दोभ्यः स्वाहा, इदं छन्दोभ्यो न मम।

सामवेदके लिये आहुतियाँ—

(१) ॐ दिवे स्वाहा, इदं दिवे न मम।

(२) ॐ सूर्याय स्वाहा, इदं सूर्याय न मम।

(३) ॐ ब्रह्मणे स्वाहा, इदं ब्रह्मणे न मम।

(४) ॐ छन्दोभ्यः स्वाहा, इदं छन्दोभ्यो न मम।

अथर्ववेदके लिये आहुतियाँ—

(१) ॐ दिग्भ्यः स्वाहा, इदं दिग्भ्यो न मम।

(२) ॐ चन्द्रमसे स्वाहा, इदं चन्द्रमसे न मम।

(३) ॐ ब्रह्मणे स्वाहा, इदं ब्रह्मणे न मम।

(४) ॐ छन्दोभ्यः स्वाहा, इदं छन्दोभ्यो न मम।

सामान्य आहुतियाँ—

(१) ॐ प्रजापतये स्वाहा, इदं प्रजापतये न मम।

(२) ॐ देवेभ्यः स्वाहा, इदं देवेभ्यो न मम।

(३) ॐ ऋषिभ्यः स्वाहा, इदमृषिभ्यो न मम।

(४) ॐ श्रद्धायै स्वाहा, इदं श्रद्धायै न मम।

(५) ॐ मेधायै स्वाहा, इदं मेधायै न मम।

(६) ॐ सदसस्पतये स्वाहा, इदं सदसस्पतये न मम।

(७) ॐ अनुमतये स्वाहा, इदमनुमतये न मम।

पुनः ब्रह्मा हवनकर्ताका कुशसे स्पर्श करे (**अन्वारब्ध**) और हवनकर्ता हवन करे—

भूरादि नवाहुति—

१-ॐ भूः स्वाहा, इदमग्नये न मम।

२-ॐ भुवः स्वाहा, इदं वायवे न मम।

३-ॐ स्वः स्वाहा, इदं सूर्याय न मम।

४-ॐ त्वं नो अग्ने वरुणस्य विद्वान् देवस्य हेडो अव यासिसीष्ठाः। यजिष्ठो वह्नितमः शोशुचानो विश्वा द्वेषाꣳसि प्र मुमुग्ध्यस्मत्स्वाहा, इदमग्नीवरुणाभ्यां न मम।

५-ॐ स त्वं नो अग्नेऽवमो भवोती नेदिष्ठो अस्या उषसो व्युष्टौ। अव यक्ष्व नो वरुणꣳरराणो वीहि मृडीकꣳ सुहवो न एधि स्वाहा। इदमग्नीवरुणाभ्यां न मम।

६-ॐ अयाश्चाग्नेऽस्यनभिशस्तिपाश्च सत्यमित्वमयाऽअसि। अया नो यज्ञं वहास्यया नो धेहि भेषजꣳ स्वाहा। इदमग्नये ऽयसे न मम।

७-ॐ ये ते शतं वरुण ये सहस्त्रं यज्ञियाः पाशा वितता महान्तः। तेभिर्नो ऽअद्य सवितोत विष्णुर्विश्वे मुञ्चन्तु मरुतः स्वर्काः स्वाहा॥ इदं वरुणाय सवित्रे विष्णवे विश्वेभ्यो देवेभ्यो मरुद्भ्यः स्वर्केभ्यश्च न मम।

८-ॐ उदुत्तमं वरुण पाशमस्मदवाधमं विमध्यमꣳश्रथाय। अथा वयमादित्य व्रते तवानागसोऽअदितये स्याम स्वाहा॥ इदं वरुणायादित्यायादितये न मम।

९-(मौन होकर) **ॐ प्रजापतये स्वाहा, इदं प्रजापतये न मम।**

स्विष्टकृत् आहुति—

इसके बाद ब्रह्माद्वारा कुशसे स्पर्श किये जाते हुए निम्न मन्त्रोंसे घृतद्वारा स्विष्टकृत् आहुति दे—

ॐ अग्नये स्विष्टकृते स्वाहा, इदमग्नये स्विष्टकृते न मम।

संस्त्रवप्राशन—

हवन पूर्ण होनेपर प्रोक्षणीपात्रसे घृत दाहिने हाथमें लेकर यत्किंचित् पान करे। हाथ धो ले। फिर आचमन करे।

मार्जनविधि—

इसके बाद निम्नलिखित मन्त्रद्वारा प्रणीतापात्रके जलसे कुशोंके द्वारा अपने सिरपर मार्जन करे—

ॐ सुमित्रिया न आप ओषधयः सन्तु।

इसके बाद निम्न मन्त्रसे जल दूसरी ओर छोड़े—

ॐ दुर्मित्रियास्तस्मै सन्तु योऽस्मान् द्वेष्टि यं च वयं द्विष्मः।

पवित्रप्रतिपत्ति—

पवित्रकको अग्निमें छोड़ दे।

पूर्णपात्रदान—

पूर्वमें स्थापित पूर्णपात्रमें द्रव्य-दक्षिणा रखकर निम्न संकल्पकर दक्षिणासहित पूर्णपात्र ब्रह्माको प्रदान करे—

ॐ अद्य समावर्तनाङ्गहोमकर्मणि कृताकृतावेक्षणरूपब्रह्म-कर्मप्रतिष्ठार्थमिदं वृषनिष्क्रयद्रव्यसहितं पूर्णपात्रं प्रजापतिदैवतं ....गोत्राय ....शर्मणे ब्रह्मणे भवते सम्प्रददे। कहकर पूर्णपात्र ब्रह्माको दे दे।

ब्रह्मा '**स्वस्ति**' कहकर उस पूर्णपात्रको ग्रहण कर ले।

प्रणीताविमोक—

प्रणीतापात्रको ईशानकोणमें उलटकर रख दे।

मार्जन—

पुनः कुशाद्वारा निम्न मन्त्रसे उलटकर रखे गये प्रणीताके जलसे मार्जन करे—

ॐ आपः शिवाः शिवतमाः शान्ताः शान्ततमास्तास्ते कृण्वन्तु भेषजम्। उपयमन कुशोंको अग्निमें छोड़ दे।

बर्हिहोम—

तदनन्तर पहले बिछाये हुए कुशाओंको जिस क्रमसे बिछाये गये

थे, उसी क्रमसे उठाकर घृतमें भिगोये और निम्न मन्त्रसे स्वाहाका उच्चारणकर अग्निमें डाल दे—

ॐ देवा गातुविदो गातुं वित्त्वा गातुमित। मनसस्पत इमं देव यज्ञꣳ स्वाहा वाते धाः स्वाहा।

कुशमें लगी ब्रह्मग्रन्थिको खोल दे।

परिसमूहन—

इसके बाद ब्रह्मचारी अग्निकुण्डके पश्चिमकी ओर बैठकर घीमें डूबी हुई सूखी समिधाएँ अथवा पाँच शुष्क गोमयपिण्ड लेकर निम्न मन्त्रोंका उच्चारण करता हुआ हवन करे—

१-ॐ अग्ने सुश्रवः सुश्रवसं मा कुरु।

२-ॐ यथा त्वमग्ने सुश्रवः सुश्रवा असि।

३-ॐ एवं माꣳ सुश्रवः सौश्रवसं कुरु।

४-ॐ यथा त्वमग्ने देवानां यज्ञस्य निधिपा ऽअसि।

५-ॐ एवमहं मनुष्याणां वेदस्य निधिपो भूयासम्।

अग्निपर्युक्षण तथा समिदाधान—

इसके बाद प्रदक्षिणक्रमसे ईशानसे उत्तरतक जलसे अग्निका प्रोक्षणकर एक समिधाको घीमें डुबोकर खड़े होकर निम्न मन्त्रको पढ़कर अग्निमें एक आहुति प्रदान करे—

ॐ अग्नये समिधमाहार्षं बृहते जातवेदसे। यथा त्वमग्ने समिधा समिध्यस ऽएवमहमायुषा मेधया वर्चसा प्रजया पशुभि-र्ब्रह्मवर्चसेन समिन्धे जीवपुत्रो ममाचार्यो मेधाव्यहमसान्य-निराकरिष्णुर्यशस्वी तेजस्वी ब्रह्मवर्चस्यान्नादो भूयासꣳस्वाहा।

इसी मन्त्रसे घृताक्त समिधाके द्वारा दो आहुतियाँ और प्रदान करे।

तदनन्तर पूर्वरीतिसे '**अग्नेः सुश्रवः**' आदि पाँच मन्त्रोंद्वारा सूखी समिधाओं अथवा शुष्क गोमयपिण्डसे पाँच आहुतियाँ दे।

पुनः पूर्ववत् जलसे अग्निका प्रोक्षण करे तथा अग्निमें हाथ सेंककर निम्नलिखित प्रत्येक मन्त्रसे मुखपर हाथ फेरे—

ॐ तनूपाऽअग्नेऽसि तन्वं मे पाहि।

ॐ आयुर्दाऽअग्नेऽस्यायुर्मे देहि।

ॐ वर्चोदाऽअग्नेऽसि वर्चो मे देहि।

ॐ अग्ने यन्मे तन्वा ऊनं तन्म ऽ आपृण।

ॐ मेधां मे देवः सविता आदधातु।

ॐ मेधां मे देवी सरस्वती आदधातु।

ॐ मेधामश्विनौ देवावाधत्तां पुष्करस्त्रजौ।

सर्वांगस्पर्श—

इसके बाद निम्न मन्त्रसे ब्रह्मचारी अपने सम्पूर्ण शरीरपर हाथ फेरे—

ॐ अङ्गानि च म ऽ आप्यायन्ताम्।

इसके बाद निम्न मन्त्रोंसे यथानिर्दिष्ट अंगोंका स्पर्श करे—

ॐ वाक् च म ऽ आप्यायताम्—मुखका स्पर्श करे।

ॐ प्राणश्च म ऽ आप्यायताम्—दोनों नासिकारन्ध्रोंका स्पर्श करे।

ॐ चक्षुश्च म ऽ आप्यायताम्—दोनों नेत्रोंका स्पर्श करे।

ॐ श्रोत्रञ्च म ऽ आप्यायताम्—क्रमसे दाहिने और बायें कानका स्पर्श करे।

ॐ यशो बलं च म ऽ आप्यायताम्—दोनों भुजाओंका दाहिनेसे बायेंका और बायेंसे दाहिनेका परस्पर एक साथ स्पर्श करे। तदनन्तर जलका स्पर्श कर ले।

त्र्यायुष्करण—

तत्पश्चात् स्त्रुवासे भस्म लेकर दायें हाथकी अनामिकाके अग्रभागसे

निम्न मन्त्रोंसे बटुकके निर्दिष्ट अंगोंमें भस्म लगाये—

ॐ त्र्यायुषं जमदग्नेः—ललाटमें।

ॐ कश्यपस्य त्र्यायुषम्—ग्रीवामें।

ॐ यद्देवेषु त्र्यायुषम्—दक्षिण बाहुमूलपर।

ॐ तन्नो अस्तु त्र्यायुषम्—हृदयमें।

अग्नि तथा आचार्यका अभिवादन—

तदनन्तर ब्रह्मचारी गोत्र-प्रवरपूर्वक अपना नामोच्चारण करता हुआ अग्नि तथा गुरु आदिको प्रणाम करे।

अग्ने त्वामभिवादये ""गोत्रः ""प्रवरान्वितः ""शर्माहं भोः ३ कहकर अग्निको प्रणाम करे।

बटुक अपने दाहिने हाथसे गुरुके दाहिने चरणका और बायें हाथसे बायें चरणका स्पर्श करते हुए बोले—**भो गुरो त्वामभिवादये ""गोत्रः ""प्रवरान्वितः ""शर्माहं भोः**—आचार्यको प्रणाम करे।

आशीर्वाद—

आचार्य निम्न वाक्य कहकर आशीर्वाद दे—

आयुष्मान् भव सौम्य शर्मन्/वर्मन्/गुप्त।

बटुक अन्य श्रेष्ठजनोंका भी वन्दन करे।

आठ कलशोंके जलसे अभिषेककी विधि*

पूर्व दिशामें दक्षिणोत्तर क्रमसे स्थापित जलपूर्ण, आम्र आदिके पल्लवोंसे युक्त, ताम्र आदिके पात्रवाले आठ कलशोंके चारों ओर पूर्वाग्र कुशा बिछाये, उसपर उत्तरमुख बैठकर दक्षिणसे एक-एक कलशका जल लेकर बटुक अपना अभिसिंचन करे।

प्रथम कलशसे जलका ग्रहण और अभिषेक—

निम्न मन्त्रसे प्रथम कलशसे दक्षिण चुल्लूमें जल ले—

* यहाँसे आगेके कर्म बटुक स्वयं सम्पन्न करे।

ॐ येऽप्स्वन्तरग्नयः प्रविष्टा गोह्य उपगोह्यो मयूखो मनोहाऽस्खलो विरुजस्तनूदूषिरिन्द्रियहा तान् विजहामि यो रोचनस्तमिह गृह्णामि।

तदनन्तर निम्न मन्त्रसे अपने सिरपर अभिषेक करे—

ॐ तेन मामभिषिञ्चामि श्रियै यशसे ब्रह्मणे ब्रह्मवर्चसाय।

द्वितीय कलशसे जलका ग्रहण और अभिषेक—

'**ॐ येऽप्स्वन्तरग्नयः०**' इत्यादि पूर्वोक्त मन्त्रसे जल ग्रहण करे और निम्न मन्त्रसे अभिषेक करे—

ॐ येन श्रियमकृणुतां येनावमृशताꣳ सुराम्। येनाक्ष्यावभ्यषिञ्चतां यद्वां तदश्विना यशः॥

तृतीय कलशसे जलका ग्रहण और अभिषेक—

'**ॐ येऽप्स्वन्तरग्नयः०**' पूर्वोक्त मन्त्रसे जल ग्रहण करे और निम्न मन्त्रसे अभिषेक करे—

ॐ आपो हि ष्ठा मयो भुवस्ता न ऊर्जे दधातन। महे रणाय चक्षसे।

चतुर्थ कलशसे जलका ग्रहण और अभिषेक—

'**ॐ येऽप्स्वन्तरग्नयः०**' इस पूर्वोक्त मन्त्रसे जल ग्रहण करे और निम्न मन्त्रसे अभिषेक करे—

ॐ यो वः शिवतमो रसस्तस्य भाजयतेह नः। उशतीरिव मातरः।

पंचम कलशसे जलका ग्रहण और अभिषेक—

'**ॐ येऽप्स्वन्तरग्नयः**' इस पूर्वोक्त मन्त्रसे जल ग्रहण करे और निम्न मन्त्रसे सिरपर अभिषेक करे—

ॐ तस्मा अरङ्गमाम वो यस्य क्षयाय जिन्वथ। आपो जनयथा च नः।

इसी प्रकार षष्ठ, सप्तम और अष्टम कलशसे '**ॐ**

येऽप्स्वन्तरग्नयः०' इस मन्त्रसे क्रमशः जल लेकर मौन रहकर ही सिरपर अभिषेक करे।

मेखलानिस्सारण—

इसके बाद बटुक निम्न मन्त्र पढ़ता हुआ शिरोमार्गसे मेखलाको निकाले—

ॐ उदुत्तमं वरुण पाशमस्मदवाऽधमं मध्यम ँ श्रथाय। अथा वयमादित्य व्रते तवानागसो अदितये स्याम स्वाहा।

दण्ड और मृगचर्मका परित्याग—

तदनन्तर ब्रह्मचारी अपने पलाश-दण्डको उत्तराग्र भूमिपर रख दे, धारण किये मृगचर्मको मौन होकर उतारकर अन्य कोई वस्त्र उत्तरीयके रूपमें धारण करे और दो बार आचमन कर ले।

सूर्योपस्थान—

इसके बाद दोनों बाहुओंको ऊपर उठाकर निम्न मन्त्रोंसे सूर्यका उपस्थान करे—

ॐ उद्यन् भ्राजभृष्णुरिन्द्रो मरुद्भिरस्थात्प्रातर्यावभिरस्थाद् दशसनिरसि दशसनिं मा कुर्वा विदन् मा गमय।

उद्यन् भ्राजभृष्णुरिन्द्रो मरुद्भिरस्थाद् दिवा यावभिरस्थाच्छत-सनिरसि शतसनिं मा कुर्वा विदन् मा गमय।

उद्यन् भ्राजभृष्णुरिन्द्रो मरुद्भिरस्थात् सायं यावभिरस्थात् सहस्रसनिरसि सहस्रसनिं मा कुर्वा विदन् मा गमय।

दन्तधावन—

इसके बाद ब्रह्मचारी दधि अथवा तिलको दाहिने हाथके मध्यभाग (सोमतीर्थ)-में लेकर उसका सेवनकर शिखाके अतिरिक्त समस्त केश मुण्डन कराकर नखादि कटवाकर* द्वादश अंगुल परिमित

---

* उपनयन-संस्कारमें केशादिका मुण्डन हो जानेसे केवल छुरेसे मुण्डित सिर आदिका स्पर्श करा लेना चाहिये।

औदुम्बर (गूलर)-के काष्ठसे निम्न मन्त्र पढ़कर दन्तधावन करे—

ॐ अन्नाद्याय व्यूहध्वꣳसोमो राजाऽयमागमत्। स मे मुखं प्रमाक्ष्र्यते यशसा च भगेन च॥

नासिका आदिका स्पर्श—

इसके बाद ब्रह्मचारी बारह बार जलसे कुल्लाकर सुगन्धित तेलसे युक्त उबटन आदिसे शरीरोद्वर्तनकर समशीतोष्ण जलसे स्नान करे तथा नूतन वस्त्र आदि धारणकर चन्दन आदिका अनुलेपनकर निम्न मन्त्रोंसे नासिका, नेत्र और श्रोत्रका स्पर्श करे—

ॐ प्राणापानौ मे तर्पय—एक साथ दोनों नासिकाका स्पर्श करे।

ॐ चक्षुर्मे तर्पय—एक साथ दोनों नेत्रोंका स्पर्श करे।

ॐ श्रोत्रं मे तर्पय—एक साथ दोनों कानोंका स्पर्श करे।

पितरोंके निमित्त जलांजलि—

इसके बाद ब्रह्मचारी दोनों हाथोंको धोकर अपसव्य होकर प्राङ्मुख रहते हुए दक्षिण दिशामें भूमिपर निम्न श्रुतिवाक्यसे पितरोंके निमित्त पितृतीर्थसे अवनेजन (जलांजलि) प्रदान करे—

'ॐ पितरः शुन्धध्वम्।'

सविता देवताकी प्रार्थना—

तदनन्तर सव्य होकर आचमन करे, चन्दनसे तिलक लगाकर निम्न मन्त्रसे सविता देवताकी प्रार्थना करे—

ॐ सुचक्षा अहमक्षीभ्यां भूयासꣳ सुवर्चा मुखेन।

सुश्रुत्कर्णाभ्यां भूयासम्।

नूतनवस्त्र-धारण—

इसके बाद स्नातक निम्न मन्त्रसे नया वस्त्र धारण करे—

ॐ परिधास्यै यशोधास्यै दीर्घायुत्वाय जरदष्टिरस्मि।

शतं च जीवामि शरदः पुरूची रायस्पोषमभि संव्यविष्ये।

इसके बाद दो बार आचमन करे।

यज्ञोपवीत-धारण—

धारणसे पूर्व हाथमें जल लेकर निम्न विनियोगमन्त्र बोले—

ॐ यज्ञोपवीतमित्यस्य परमेष्ठी ऋषिः त्रिष्टुप्छन्दो लिङ्गोक्ता देवता यज्ञोपवीतधारणे विनियोगः—यह कहकर जल छोड़े।

इसके बाद स्नातक निम्न मन्त्रका उच्चारण करता हुआ द्वितीय यज्ञोपवीत धारण करे—

ॐ यज्ञोपवीतं परमं पवित्रं प्रजापतेर्यत्सहजं पुरस्तात्।
आयुष्यमग्र्यं प्रतिमुञ्च शुभ्रं यज्ञोपवीतं बलमस्तु तेजः॥

पुनः दो बार आचमन करे।

उत्तरीय वस्त्र-धारण—

इसके बाद ब्रह्मचारी निम्न मन्त्र बोलता हुआ उत्तरीय वस्त्र धारण करे—

ॐ यशसा मा द्यावापृथिवी यशसेन्द्राबृहस्पती। यशो भगश्च माऽविन्दद् यशो मा प्रतिपद्यताम्॥

पुनः दो बार आचमन करे।

अलंकरणादि-धारण—

ब्रह्मचारी विद्याव्रतस्नातकके रूपमें गृहस्थधर्मानुकूल विभिन्न अलंकार धारणकर निम्न मन्त्रसे पुष्पमाला ग्रहण करे—

ॐ या आहरज्जमदग्निः श्रद्धायै मेधायै कामायेन्द्रियाय।
ता अहं प्रतिगृह्णामि यशसा च भगेन च॥

निम्न मन्त्रसे पुष्पमाला धारण करे—

ॐ यद्यशोऽप्सरसामिन्द्रश्चकार विपुलं पृथु। तेन सङ्ग्रथिताः सुमनस आबध्नामि यशो मयि॥

पगड़ी-धारण—

इसके बाद स्नातक निम्न मन्त्रसे सिरपर पगड़ी धारण करे—

ॐ युवा सुवासाः परिवीत आगात्स उ श्रेयान् भवति जायमानः। तं धीरासः कवय उन्नयन्ति स्वाध्यो मनसा देवयन्तः॥

कर्णालंकरणधारण—

निम्न मन्त्रसे पहले दक्षिण कर्णमें पुनः वाम कर्णमें कर्णालंकरण (कुण्डल आदि) धारण करे—

ॐ अलङ्करणमसि भूयोऽलङ्करणं भूयात्।

अंजनधारण *—

निम्न मन्त्रसे क्रमसे दक्षिण और वाम नेत्रमें अंजन (काजल) लगाये—

ॐ वृत्रस्यासि कनीनकश्चक्षुर्दा असि चक्षुर्मे देहि।

दर्पणमें मुखावलोकन—

निम्न मन्त्रसे दर्पणमें मुखको देखे—

'ॐ रोचिष्णुरसि।'

छत्र-धारण—

निम्न मन्त्रसे छत्र (छाता) ग्रहण करे—

ॐ बृहस्पतेश्छदिरसि पाप्मनो मामन्तर्धेहि तेजसो यशसो माऽन्तर्धेहि॥

उपानह (जूता)-धारण—

निम्न मन्त्रसे स्नातक नवीन जूता पहने—

ॐ प्रतिष्ठे स्थो विश्वतो मा पातम्।

दण्डधारण—

निम्न मन्त्रसे नवीन बाँसका दण्ड (छड़ी) धारण करे—

ॐ विश्वाभ्यो मा नाष्ट्राभ्यस्परि पाहि सर्वतः।

---

* लोकाचारके अनुसार सुवासिनी आदिके द्वारा भी काजल धारण कराया जाता है।

आचार्यके लिये गोदान—

इसके बाद स्नातक अपने आचार्यकी विधिवत् पूजाकर उन्हें दक्षिणाके रूपमें द्रव्यादिके अतिरिक्त गौ अथवा तन्निष्क्रयभूत द्रव्य प्रदान करनेके लिये निम्न संकल्प करे—

ॐ अद्य ......गोत्रः ......शर्मा मम स्नातकत्वसिद्धये इदं वररूपेण गोनिष्क्रयद्रव्यमाचार्याय दातुमहमुत्सृज्ये। दक्षिणा दे।

स्नातकके सामान्य नियम—

तदुपरान्त स्नातक आचार्यके मुखसे गृहस्थ जीवनके लिये पालनीय नियमोंको श्रद्धापूर्वक सुने।* पारस्करगृह्यसूत्रके '**स्नातकस्य यमान् वक्ष्यामः**' इस प्रमाणके अनुसार स्नातकके नियमोंका संक्षेपमें कथन किया जा रहा है—

१–नाचने, गाने तथा बजानेका काम न स्वयं करे और न ही दूसरोंद्वारा अनुष्ठित ऐसे कार्योंमें भाग ले।

२–यदि सब कुछ ठीक हो तो रात्रिमें दूसरे गाँवमें न जाय और न अनावश्यक दौड़े।

---

* नृत्यगीतवादित्राणि न कुर्यात् न च गच्छेत्। क्षेमे नक्तं ग्रामान्तरं न गच्छेत्, न च धावेत्। उदपानाऽवेक्षण–वृक्षारोहण–फलप्रपतन–सन्धिसर्पण–विवृतस्नान–विषमलङ्घन–शुक्तवदन–सन्ध्यादित्यप्रेक्षणभैक्षणानि न कुर्यात्। वर्षत्यप्रावृतो व्रजेत् 'ॐअयं मे वज्रः पाप्मानमपहनत्' इति मन्त्रं पठन् गच्छेत्। अप्स्वात्मानं नावेक्षेत। अजातलोम्नीं विपुंसीं षण्ढं च नोपहसेत्। गर्भिणीं विजन्येति ब्रूयात्। सकुलमिति नकुलम्। भगालमिति कपालम्। मणिधनुरितीन्द्रधनुः। गां धयन्तीं परस्मै नाचक्षीत। उर्वरायामनन्तर्हितायां भूमावुत्सर्पंस्तिष्ठन्न मूत्रपूरीषे कुर्यात्। स्वयं प्रशीर्णेन काष्ठेन गुदं प्रमृजीत। विकृतं वासो नाच्छादयीत। दृढव्रतो वधत्रः स्यात्। सर्वतः आत्मानं गोपायेत्। सर्वेषां मित्रमिव स्यात्। तिस्रो रात्रीर्व्रतं चरेत्। अमांसाशी अमृण्मयपायी स्यात्। स्त्रीशूद्रशवकृष्णशकुनिशुनां चादर्शनमसम्भाषा च तैः। शवशूद्रसूतकान्नानि च नाद्यात्। मूत्रपुरीषे ष्ठीवनं चातपे न कुर्यात्। सूर्याच्चात्मानं नान्तर्दधीत। तप्नेनोदकार्थान् कुर्वीत। अवज्योत्य रात्रौ भोजनम्। सत्यवदनमेव वा। (पा०गृ०सू० काण्ड २, कण्डिका ७-८)

३-कुएँमें न झाँके, पेड़पर न चढ़े, कच्चे फल तोड़कर न गिराये, सन्धि-वेलामें यात्रा न करे और जीर्णद्वारसे गमन न करे तथा परस्पर मैत्रीमें भेद उपस्थित न करे, नग्न होकर स्नान न करे, ऊबड़-खाबड़ भूमिको न लाँघे, लज्जाजनक, अमंगलकर तथा निष्ठुर वाक्योंको न बोले, सन्धिवेलामें सूर्यदर्शन न करे, समावर्तनके बाद भिक्षाटन न करे।

४-जलमें अपनी परछाईं न देखे।

५-अपने बछड़ेको दूध पिलाती हुई गायके बारेमें दूसरेसे न कहे।

६-उर्वर भूमि या बंजर भूमिपर खड़े होकर या कूद-कूदकर मल-मूत्रका त्याग न करे।

७-अपवित्र एवं निषिद्ध वस्त्र न पहने।

८-निष्ठापूर्वक अपने व्रतनियमका पालन करे तथा हिंसासे अपनी तथा दूसरोंकी भी रक्षा करे।

९-सर्वतोभावेन अपनी रक्षा करे।

१०-सभीके साथ मित्रवत् व्यवहार करे।

११-स्नातकको समावर्तनसंस्कारसे तीन दिनतक व्रत रखना चाहिये।

१२-मांस न खाये तथा मिट्टीके बर्तनमें जल न पीये।

१३-मरणाशौचसे युक्त व्यक्तियोंका, शूद्रका तथा जननाशौचवाले लोगोंका अन्न नहीं खाना चाहिये।

१४-धूपमें मल-मूत्रका त्याग न करे और न थूके।

१५-रात्रिमें दीपक जलाकर ही भोजन करे, अन्धकारमें भोजन न करे।

१६-सदा सत्य बोले, मिथ्याभाषण न करे।

तदनन्तर स्नातक गुरुके चरणोंमें प्रणामकर '**एतान्नियमान् करिष्यामि**'—इन नियमोंका पालन करूँगा—ऐसा कहे।

पूर्णाहुति[१] —

दक्षिणादान—

इसके बाद स्नातक हाथमें गन्ध-पुष्प-अक्षत-ताम्बूल तथा दक्षिणा लेकर निम्न संकल्पवाक्य बोलकर आचार्यको दक्षिणा दे—

ॐ अद्य कृतानां उपनयनवेदारम्भसमावर्तनकर्मणां[२] साङ्गता-सिद्ध्यर्थं हिरण्यनिष्क्रयभूतं द्रव्यं आचार्याय भवते सम्प्रददे।

इसी प्रकार होता, गायत्री तथा गणेशमन्त्रजापकको भी दक्षिणा प्रदान करे।

ब्राह्मणभोजनका संकल्प—

निम्न संकल्पवाक्य बोलकर ब्राह्मणभोजनका संकल्प करे—

ॐ अद्य कृतानां उपनयनवेदारम्भसमावर्तनकर्मणां साङ्गता-सिद्ध्यर्थं यथासंख्याकान् ब्राह्मणान् भोजयिष्ये। तेभ्यो ताम्बूल-दक्षिणां च दास्ये।

भूयसी दक्षिणाका संकल्प—

इसके बाद भूयसी दक्षिणाका संकल्प करे—

ॐ अद्य कृतानां उपनयनवेदारम्भसमावर्तनकर्मणां साङ्गतासिद्ध्यर्थं तन्मध्ये न्यूनातिरिक्तदोषपरिहारार्थं इमां भूयसी दक्षिणां विभज्य दातुमहमुत्सृज्ये।

तदनन्तर ब्राह्मणोंके माथेमें रोली-अक्षत लगाये।

विसर्जन—

इसके बाद अग्नि तथा आवाहित देवताओंका अक्षत छोड़ते हुए निम्न मन्त्र पढ़कर विसर्जन करे—

---

१. 'विवाहे व्रतबन्धे च शालायां वास्तुकर्मणि। गर्भाधानादिसंस्कारे पूर्णाहुतिं न कारयेत्॥'—इस वचनसे यज्ञोपवीत, विवाह आदिमें पूर्णाहुतिका निषेध किया गया है।

२. यदि समावर्तन उसी समय न किया जाय तो आचार्यदक्षिणा, ब्राह्मणभोजन तथा भूयसी दक्षिणाके संकल्पमेंसे 'समावर्तन' शब्द हटाकर 'कर्मणाम्' की जगह 'कर्मयोः' (उपनयनवेदारम्भकर्मयोः) द्विवचनका प्रयोग करना चाहिये।

यान्तु देवगणाः सर्वे पूजामादाय मामकीम्।
इष्टकार्यसमृद्ध्यर्थं पुनरागमनाय च॥
गच्छ गच्छ सुरश्रेष्ठ स्वस्थाने परमेश्वर।
यत्र ब्रह्मादयो देवास्तत्र गच्छ हुताशन॥

विष्णुस्मरण—

इसके बाद हाथमें पुष्प-अक्षत लेकर भगवान्‌का स्मरण करते हुए समस्त कर्म उन्हें अर्पित करे—

प्रमादात् कुर्वतां कर्म प्रच्यवेताध्वरेषु यत्।
स्मरणादेव तद् विष्णोः सम्पूर्णं स्यादिति श्रुतिः॥
यस्य स्मृत्या च नामोक्त्या तपोयज्ञक्रियादिषु।
न्यूनं सम्पूर्णतां याति सद्यो वन्दे तमच्युतम्॥
यत्पादपङ्कजस्मरणाद् यस्य नामजपादपि।
न्यूनं कर्म भवेत् पूर्णं तं वन्दे साम्बमीश्वरम्॥
कायेन वाचा मनसेन्द्रियैर्वा बुध्यात्मना वा प्रकृतिस्वभावात्।
करोमि यद्यत् सकलं परस्मै नारायणायेति समर्पयामि॥
ॐ विष्णवे नमः। ॐ विष्णवे नमः। ॐ विष्णवे नमः।
ॐ साम्बसदाशिवाय नमः। ॐ साम्बसदाशिवाय नमः।
ॐ साम्बसदाशिवाय नमः।

महानीराजन और तिलककरण—

आचारानुसार भगिनी आदि स्नातकका महानीराजनकर तिलक करें।

विवाहसंस्कार

समावर्तन–संस्कारके अनन्तर विवाह–संस्कार होता है, जो सर्वोपरि महत्त्वका है। विवाहके अनन्तर ही ब्रह्मचर्याश्रम अवस्थाकी पूर्णता होती है और गृहस्थाश्रममें प्रवेश होता है। मनुजीने बताया है कि आयुका द्वितीय भाग अर्थात् २५ से ५० वर्षकी अवस्था विवाहके अनन्तर गृहस्थाश्रममें व्यतीत करनी चाहिये—'**द्वितीयमायुषो भागं कृतदारो गृहे वसेत्**' (मनु० ४। १)। यह गृहस्थाश्रम सभी आश्रमोंका उपकारक है और गृहस्थधर्म विवाह–संस्कारके अनन्तर ही शक्य है। गृहस्थाश्रमकी बहुत महिमा है, इसे तीनों आश्रमोंकी योनि कहा गया है—'**त्रयाणामाश्रमाणां तु गृहस्थो योनिरुच्यते**' (दक्षस्मृति २। ४८), '**चत्वार आश्रमाः प्रोक्ताः सर्वे गार्हस्थ्यमूलकाः।**' कहा गया है कि जिस प्रकार सभी जीव माताके आश्रयसे जीवित रहते हैं, वैसे ही सभी आश्रम गृहस्थाश्रमके आश्रयसे ही जीवित रहते हैं—

यथा मातरमाश्रित्य सर्वे जीवन्ति जन्तवः।
तथा गृहाश्रमं प्राप्य सर्वे जीवन्ति चाश्रमाः॥

(वसिष्ठस्मृति ८। १६)

जिस प्रकार सभी आश्रमोंका मूल गृहस्थाश्रम है, उसी प्रकार गृहस्थाश्रमका मूल है—स्त्री (पत्नी)—'**गृहवासो सुखार्थो हि पत्नीमूलं च तत्सुखम्**' (दक्षस्मृति ४)। गृहिणी होनेसे ही गृहकी गृह संज्ञा है '**न गृहं गृहमित्याहुर्गृहिणी गृहमुच्यते।**' '**गृहस्थः स तु विज्ञेयो गृहे यस्य पतिव्रता।**'

कन्यादानके अधिकारी—

पिता, पितामह, भाई, उस कुलका कोई व्यक्ति अथवा माता—ये क्रमशः पूर्वके अभावमें तदुत्तरवर्ती प्रकृतिस्थ (उन्माद आदि रोगोंसे रहित) होनेपर कन्यादानके अधिकारी हैं—

पिता पितामहो भ्राता सकुल्यो जननी तथा।
कन्याप्रदः पूर्वनाशे प्रकृतिस्थः परः परः॥

(याज्ञ० स्मृति, आ० ६३)

नारदजीने बताया है मातामह (नाना) तथा मामाको भी अधिकार है। किसीके न रहनेपर राजा कन्यादानका अधिकारी होता है—'**यदा तु नैव कश्चित् स्यात् कन्या राजानमाव्रजेत्।**' (वीरमित्रोदय संस्कारप्रकाश)

विवाह—संक्षिप्त विवेचन—

विवाह वर-वधूके मध्य एक पवित्र आध्यात्मिक सम्बन्ध है, जो अग्नि एवं देवताओंके साक्ष्यमें सम्पादित होता है। स्थूल दृष्टिसे एक लौकिक उत्सव दिखायी देनेवाला यह संस्कार जीवनमें सभी प्रकारकी मर्यादाओंकी स्थापना करनेवाला है। सन्तानोत्पत्तिद्वारा पितृ-ऋणसे मुक्ति दिलानेवाला यह संस्कार संयमित ब्रह्मचर्य, सदाचार, अतिथि-सत्कार तथा प्राणिमात्रकी सेवा करते हुए स्वयंके उत्थानमें सहज साधनके रूपमें प्रतिष्ठित है। विवाहका मूल उद्देश्य लौकिक आसक्तिका तिरोभावकर एक अलौकिक आसक्तिके आनन्दको प्रदान करना है। पुरुषार्थचतुष्टयकी सिद्धिमें गार्हस्थ्यधर्मकी विशेष महिमा है। विवाहका प्रयोजन है कि पुरुष एवं स्त्रीके अमर्यादित कामोपभोगको नियन्त्रित करना। कितने ही धार्मिक कृत्य बिना पत्नीके नहीं हो सकते। पत्नी पतिकी अर्धांगिनी है। पति और पत्नी दोनों विवाहके बाद ही पूर्णताको प्राप्त करते हैं। वेदमन्त्रोंसे विवाह शरीर और मनपर विशिष्ट संस्कार उत्पन्न करता है और दोनोंका परस्परका अनुराग अत्यन्त पवित्र और प्रगाढ़ होता जाता है। भारतीय सनातन संस्कृतिमें विवाह एक धार्मिक संस्कार है। धर्माविरुद्ध कामका सेवनकर प्रजोत्पत्ति और गृहस्थ धर्मका पालन—इससे देव-ऋण, पितृ-ऋण तथा ऋषि-ऋण—

तीनोंकी निवृत्ति हो जाती है। एकपत्नीव्रत तथा पातिव्रत—यह भारतीय विवाह-पद्धतिकी पवित्र देन है। विश्वके किसी भी समाजमें ऐसी विचारधारा नहीं है। इसी कारण भारतीय विवाह-प्रक्रिया एक अविच्छिन्न सम्बन्ध प्रदान करती है और यह पवित्र बन्धन उसके पूर्वजन्मका तथा भावी जन्मका भी अभिन्न सम्बन्ध निश्चित करता है। भारतीय विवाहमें सम्बन्ध-विच्छेदकी कल्पना भी नहीं है। पत्नी पतिव्रताधर्मका निर्वाह करती है और पुरुष एकपत्नीव्रतके संकल्पपर स्थिर रहता है। दोनोंके परस्परका अनुराग उत्तरोत्तर दृढ़ होता जाता है। विवाहसे कन्याकी 'भार्या' संज्ञा होती है और पुरुषकी 'पति' संज्ञा होती है। अतः यह दोनोंका संस्कार है। विवाह-संस्कारसे श्रौत-स्मार्तानुष्ठान कर्मोंकी अधिकारसिद्धि और धर्माचरणकी योग्यता प्राप्त होती है।

भारतीय हिन्दू-विवाह-संस्कारमें देवताओं और पितरोंका पूजन करके उनका आशीर्वाद प्राप्त किया जाता है। मातृकाओंकी पूजा एवं वन्दना की जाती है। विवाहके लिये उपस्थित वरको विष्णुस्वरूप मानकर उसे सर्वाधिक पूजनीय कहा गया है। अतएव पहले मधुपर्कसे उसकी पूजा की जाती है। पाद्य, अर्घ्य, आचमनीय, विष्टर, मधुपर्क तथा गोदान—ये उसके सत्कारके अंग हैं। इसके बाद संकल्पपूर्वक कन्यादान होता है, यह महादान कहा गया है। कन्यादाताको राजा वरुणकी उपाधि दी गयी है। वर साक्षात् नारायण है और वधू साक्षात् लक्ष्मी। भगवान्‌को लक्ष्मी देकर जिस पुण्यका अर्जन होता है, वही कन्यादाताको प्राप्त होता है। कन्या-प्रतिग्रहके पश्चात् वर अग्निदेवकी प्रदक्षिणा करके वधूको स्वीकार करता है, फिर वैवाहिक अग्निकी स्थापनापूर्वक होम होता है। इस होममें वैदिक मन्त्रोंद्वारा दाम्पत्य जीवनको सुखमय, सफल तथा धर्म एवं यशसे समुन्नत बनानेके लिये

प्रार्थनाएँ की जाती हैं। वर वधूके सांगुष्ठ दक्षिण हस्तको ग्रहण करके गार्हस्थ्यधर्मको निभानेकी प्रतिज्ञा तथा आजीवन साथ रहकर परस्पर सहयोगका उद्घोष करता है। लाजाहोममें वधू पतिकुल और पितृकुल—दोनोंकी मंगलकामना करती है, गार्हपत्य-अग्निसे पतिके दीर्घजीवनकी प्रार्थना करती है। अश्मारोहणमें पति अपनी पत्नीके अविचल सौभाग्यकी कामना करता है। अग्नि-परिक्रमामें अग्निदेवतासे शुभ आशीर्वादकी याचना की जाती है—उस समय उत्तम पतिव्रताओंके गाथागानकी भी परम्परा है, इससे वधूको स्वधर्म-निर्वाहकी प्रेरणा मिलती है तथा तदनुकूल मनोबल प्राप्त होता है। सप्तपदीमें पति-पत्नीके मांगलिक दृढ़ सख्य-सम्बन्धकी प्रतिष्ठा होती है, इस समय वर-वधू दोनों एक-दूसरेके अनुकूल चलनेकी प्रतिज्ञा करते हैं। ध्रुव-अरुन्धती एवं सप्तर्षिके दर्शनोंसे आजीवन सम्बन्धकी सुदृढ़ताकी तथा पातिव्रतधर्मपालनकी प्रेरणा होती है। इस प्रकार विवाह-संस्कार वर-वधू दोनोंके जीवनको मंगलमय बनाने, धर्माचरण करने और सुयश प्राप्त करानेकी धार्मिक प्रक्रिया है। हिन्दू-विवाह-पद्धति पूर्णतः वैदिक होनेसे धर्ममय है और विवाहकी प्रत्येक क्रिया वैदिक मन्त्रोंसे उपनिबद्ध है। अतः वर्तमानमें प्रचलित बाह्य आडम्बरोंसे विरत होकर वैवाहिक पवित्र कृत्योंका ही पालन होना चाहिये, तभी विवाह-सम्बन्ध अखण्ड सौभाग्यको देनेवाला एवं गृह-परिवारके लिये मंगलमय हो सकेगा। इसे केवल उत्सव न समझकर एक धार्मिक संस्कार समझना चाहिये। वर्तमानमें धार्मिक विधि-विधान गौण होता जा रहा है और बाह्य आडम्बरपर विशेष बल दिया जा रहा है, यह बड़े दुःखकी बात है।

विवाहमें अनुष्ठीयमान अनेक कर्म हैं, कुछ प्रधान हैं तथा कुछ अंगभूत हैं तथा कुछ कुलपरम्पराके आचारसे प्राप्त हैं। कन्याप्रतिग्रह, पाणिग्रहण, लाजाहोम, अश्मारोहण, सप्तपदी तथा जयादिहोम—ये

प्रधान कर्म हैं। मधुपर्क, दिनमें सूर्यावेक्षण, रात्रिमें ध्रुवावेक्षण, हृदयालम्भ, अभिषेक तथा चतुर्थीकर्म—ये अंगभूत कर्म हैं। शाखोच्चार, ग्रन्थिबन्धन, अन्तःपटकरण, सिन्दूरदान इत्यादि आचारप्राप्त कर्म हैं।

वैवाहिक कर्मोंमें प्रयुक्त होनेवाले मन्त्रोंका भाव—

विवाहके कर्मोंमें प्रयुक्त होनेके मन्त्रोंका भाव बड़ा ही उदात्त तथा कल्याणकारी है। प्रारम्भमें मधुपर्क विधिके अनन्तर जब कन्याका पिता वर तथा कन्याके मध्यमें लगाये अन्तःपट (परदे)-को हटाता है और वर तथा कन्यासे तुम परस्पर एक-दूसरेको देखो* कहता है, तब वर कन्याके सम्मुख होकर '**समञ्जन्तु विश्वेदेवाः०**' इस मन्त्रको पढ़ता है, इस मन्त्रके भावमें वरके द्वारा यह कहा गया है—हे कन्ये! हम दोनोंके हृदय तथा मनमें जो भी संकल्प-विकल्प उठें और फिर उनके अनुसार जो हम दोनोंसे व्यवहार हों, उन्हें विश्वेदेव तथा अप्देवता मंगलमय बनायें, हमारे विचार समान हों, हम दोनोंके हृदय एक समान हों, वायुदेवता तथा प्रजापति आदि देवता हम दोनोंके हृदय समान बनायें। हम दोनों हृदय तथा मनसे पूर्णतः एक रहें।

कन्यादानके मन्त्र—

कन्यादानके संकल्पके अनन्तर कन्याका पिता कन्याका दाहिना हाथ वरको समर्पित करता है और उस समय कहता है—

कन्यां कनकसम्पन्नां कनकाभरणैर्युताम्।
दास्यामि विष्णवे तुभ्यं ब्रह्मलोकजिगीषया॥
विश्वम्भरः सर्वभूताः साक्षिण्यः सर्वदेवताः।
इमां कन्यां प्रदास्यामि पितॄणां तारणाय च॥

इन मन्त्रोंमें कहा गया है कि स्वर्णाभूषणोंसे विभूषित तथा

* भारतीय संस्कृतिके अनुसार विवाहमें वर तथा कन्या इस समञ्जन-क्रियासे पहले एक-दूसरेको देखे नहीं रहते हैं, प्रथम बार इसी क्रियामें एक-दूसरेको देखते हैं।

स्वर्णसदृश आभावाली इस पवित्र कन्याको मैं विष्णुरूप आप वरको देता हूँ, इससे मुझे ब्रह्मलोककी प्राप्ति हो। विश्वका भरण-पोषण करनेवाले साक्षात् नारायण, सभी प्राणी तथा सभी देवता इस दान-कर्मके साक्षी हैं, पितरोंके उद्धारके लिये इस कन्याको मैं आपको प्रदान कर रहा हूँ।

उस समय प्रार्थना करते हुए कन्याके पिता वरसे कहते हैं—

गौरीं कन्यामिमां विप्र यथाशक्ति विभूषिताम्।
गोत्राय शर्मणे तुभ्यं दत्तां विप्र समाश्रय॥
कन्या लक्ष्मीः समाख्याता वरो नारायणः स्मृतः।
तस्मात् कन्याप्रदानेन कृष्णो मे प्रीयताम्॥

हे विप्र! यथाशक्ति विभूषित इस गौरीस्वरूपा कन्याको अमुक गोत्र तथा अमुक नामवाले आपको मैंने सौंपा है, आप इसे ग्रहण करें, आश्रय प्रदान करें। कन्याको लक्ष्मी कहा जाता है और वरको नारायण कहा गया है। इसलिये कन्याके दान करनेसे भगवान् कृष्ण मुझपर प्रसन्न हों।

लाजाहोमके मन्त्र—

लाजाहोम कन्याके द्वारा किया जाता है। कन्या अपने भाईद्वारा दिये गये शमीपत्रमिश्रित लाजाओंकी अग्निमें आहुति प्रदान करती है। इसमें तीन मन्त्र प्रयुक्त हैं। प्रथम मन्त्रमें अर्यमा देवसे प्रार्थना है कि वे हम दोनों पति-पत्नीको एक-दूसरेसे अलग न करें। दूसरे मन्त्रमें कन्याद्वारा लाजाकी आहुति प्रदान करते हुए कहा गया है कि मेरा पति दीर्घ आयुवाला हो, आयुष्मान् हो, मेरे पितृकुलके सभी बन्धु-बान्धव अभ्युदयको प्राप्त करें। अन्तिम आहुतिका मन्त्र इस प्रकार है—

‘ॐ इमाँल्लाजानावपाम्यग्नौ समृद्धिकरणं तव।
मम तुभ्यं च संवननं तदग्निरनुमन्यतामियꣳ स्वाहा।’

कन्या पतिको सम्बोधित करते हुए कहती है—हे स्वामिन्! आपकी समृद्धिके लिये मैं इन लाजाओंकी अग्निमें आहुति देती हूँ। इस आहुतिसे मुझ कन्या तथा आप पति दोनोंका परस्पर अनुराग जाग्रत् हो और वह पवित्र अनुराग दृढ़-से-दृढ़तर होता जाय। ये अग्निदेव हमारे इस परस्पर अनुरागका अनुमोदन करें।

पाणिग्रहणके मन्त्र—

पाणिग्रहण विवाहका प्रधान कर्म है। इसी कर्मके द्वारा विवाहको पाणिग्रहण-संस्कार कहा जाता है। इसमें वर वधूके अंगुष्ठसहित दाहिने हाथ (पाणि)-को ग्रहण करता है और उस समय चार मन्त्रोंका पाठ करता है, पहला मन्त्र इस प्रकार है—

‘ॐ गृभ्णामि ते सौभगत्वाय हस्तं मया पत्या जरदष्टिर्यथाऽऽसः।
भगोऽअर्यमा सविता पुरन्धिर्मह्यन्त्वाऽदुर्गार्हपत्याय देवाः।’

इस मन्त्रके भावमें वर कहता है—हे कन्ये! मैं तुम्हारे हस्त (पाणि)-का ग्रहण करता हूँ। इस पाणिग्रहणके द्वारा मेरे साथ रहती हुई तुम दीर्घकालतक आयुष्मती होओ। भगदेवता, अर्यमा तथा सविता—ये तीनों देव तथा देवी लक्ष्मीने तुम्हें गार्हस्थ्यधर्मका निर्वाह करनेके लिये तथा आनन्दप्राप्तिके लिये मुझे प्रदान किया है।

दूसरे मन्त्र **(ॐ अमोऽहमस्मि०)**-में कहा गया है कि हे कन्ये! जिस प्रकार मैं विष्णुरूप हूँ, उसी प्रकार तुम लक्ष्मीरूपा हो। तुम त्रिदेवी (महाकाली-महालक्ष्मी-महासरस्वती)-के रूपमें हो और मैं त्रिदेव (ब्रह्मा-विष्णु-महेश)-रूप हूँ। मैं साम हूँ तुम ऋक् हो, मैं

द्यौ हूँ और तुम पृथिवी हो। तात्पर्य यह है कि हम दोनोंका सदासे अभिन्न सम्बन्ध रहा है।

तीसरे मन्त्र (**तावेव विवहावहै०**)-में कहा गया है कि हम दोनोंका परस्परमें विवाहसम्बन्ध स्थापित हो, हम दोनों संयुक्त होकर पुत्रको धारण करें। हमारी सन्तान-परम्परा उच्छिन्न न हो। हम पुत्र-पौत्रोंकी परम्पराको प्राप्त करें।

चौथे अन्तिम मन्त्र (**ते सन्तु जरदष्टयः०**)-में वर कहता है—तुम्हारे पुत्र दीर्घ आयुवाले हों, हम दोनोंमें परस्पर विशुद्ध प्रीति रहे, हम दोनों उत्तम यशसे सुशोभित रहें, हम दोनोंके मन शुभ संकल्पों, मंगल विचारोंसे सम्पन्न हों। पुत्र-पौत्रोंके साथ हम सौ वर्षोंको देखें, सौ वर्षोंतक निरामय हो जीवित रहें, सौ वर्षोंतक हम मंगलकारी वचनोंको सुनें अर्थात् हम सभी इन्द्रियोंसे निरुपद्रव होकर दीर्घ आयु प्राप्त करें।

सप्तपदीके मन्त्र—

इसी प्रकार सप्तपदीके सात मन्त्रोंमें वधू तथा वरके परस्पर अनुगमनकी प्रतिज्ञा है और अन्तिम मन्त्रमें परस्पर सख्यभावकी दृढ़ताकी सूचना दी गयी है और वर कहता है कि हे सखे! तुम मेरा अनुवर्तन करनेवाली होओ। इस कर्ममें भगवान् विष्णु तुम्हें प्रेरित करें—'**ॐ सखे सप्तपदा भव सा मामनुव्रता भव विष्णुस्त्वा नयतु।**'

हृदयालम्भनके मन्त्र—

हृदयालम्भनमें वर वधूके दाहिने कन्धेके ऊपरसे अपना दाहिना हाथ ले जाकर वधूके हृदयदेशका स्पर्श करता है, उस समय दो

मन्त्रोंका पाठ होता है, जो बड़े ही महत्त्वके हैं। पहला मन्त्र इस प्रकार है—

'ॐ मम व्रते ते हृदयं दधामि मम चित्तमनु चित्तं तेऽ अस्तु। मम वाचमेकमना जुषस्व प्रजापतिष्ट्वा नियुनक्तु मह्यम्।'

वर कन्याको सम्बोधित करते हुए कहता है—हे कन्ये! मैं अपने शास्त्रविहित व्रत आदिमें तुम्हारे मनको स्थापित करता हूँ, मेरे मनके अनुकूल तुम्हारा मन हो। तुम मेरे वचनोंका प्रसन्नतापूर्वक आदर करो। प्रजापति देवता मेरे लिये (मेरी प्रसन्नताके लिये) तुम्हारा संयोग करें।

दूसरा मन्त्र इस प्रकार है—

ॐ सुमङ्गलीरियं वधूरिमाः समेत पश्यत। सौभाग्यमस्यै दत्त्वा याथाऽस्तं विपरेत न॥

भाव है कि हे विवाहदेवता! यह वधू सुमंगली है—मंगलरूपा है, अतः इसे आप मंगलदृष्टिसे देखें। इस वधूको सौभाग्य प्रदान करें इसके गृहस्थको नष्ट न करें।

इसी अवसरपर वरके द्वारा वधूके सीमन्त (माँग)-में सिन्दूरदानकी क्रिया भी सम्पन्न होती है।

इस प्रकार विवाहके मन्त्रोंमें बड़ा ही सुन्दर भाव है, जिसमें वर-वधूके परस्पर अखण्ड अनुराग, सौभाग्यवृद्धि, धर्माचरणकी प्रतिज्ञा, मर्यादित कामसेवनद्वारा सन्तानोत्पत्ति आदिकी मंगलकामना की गयी है। यह विशेषता केवल भारतीय वैदिक विवाहमें ही है, विश्वमें कहीं भी विवाहमें ऐसा अखण्ड अनुरागका भाव दिखायी नहीं देता, ऐसे मन्त्रबल तथा अग्नि एवं देवोंके साक्ष्यमें होनेवाले विवाहसे उत्पन्न सन्तान भी धर्माचरणसे सम्पन्न होती है और पति तथा पत्नी—दोनों कुल अभ्युदयको प्राप्त होते हैं। विवाहमें कन्याका दान होता है, यह

केवल भारत देशके वैदिक धर्ममें ही प्रतिष्ठित है, अन्यत्र ऐसी कल्पना भी लोग नहीं कर सकते। अतः विवाहके रहस्यको समझते हुए इसके पवित्र मूलभावकी रक्षा सबको करनी चाहिये। विवाहसम्बन्ध केवल उत्सव नहीं, बल्कि यह जन्म-जन्मान्तरके अखण्ड सम्बन्धको व्यक्त करनेवाला अविभाज्य तत्त्व है।

कन्याको पतिके गोत्रकी प्राप्ति—

विवाह-संस्कारमें कई कर्म होते हैं। प्रारम्भिक कर्मोंमें वह पिताके गोत्रकी ही रहती है, किंतु जब पाणिग्रहण कर्मके अनन्तर सप्तपदी पूर्ण हो जाती है तब कन्याका अपने पिताका गोत्र नहीं रहता, अपितु वह पतिके गोत्रकी हो जाती है। इसी बातको यमके वचनसे बताया गया है कि उदकदान अथवा वाग्दानकर्मसे वर कन्याका पति नहीं हो जाता, बल्कि पाणिग्रहण-कर्मसे वह अपने गोत्रसे च्युत हो जाती है और सप्तपदीके सात पदोंके अनुक्रमके अनन्तर उसे पतिके गोत्रकी प्राप्ति हो जाती है—

‘नोदकेन न वाचा वा कन्यायाः पतिरुच्यते।
पाणिग्रहणसंस्कारात्पतित्वं सप्तमे पदे॥’
‘पतिगोत्रप्राप्तिरपि सप्तमपदातिक्रमे भवति।’
‘स्वगोत्राद् भ्रश्यते नारी विवाहात्सप्तमे पदे।’

संक्षेपमें स्त्री-पुरुषके गृहस्थाश्रम-सम्बन्धी धर्म—

मनुजीने मनुस्मृतिमें पहले विस्तारपूर्वक स्त्री-पुरुषोंका तथा गृहस्थाश्रमधर्मका निरूपण करनेके अनन्तर दो श्लोकोंमें संक्षेपमें गृहस्थधर्ममें स्त्री-पुरुषका क्या कर्तव्य है, इसे बताते हुए कहा है कि पति-पत्नी दोनोंका जीवनपर्यन्त धर्म, अर्थ तथा कामके विषयमें

व्यभिचार न हो अर्थात् त्रिवर्गके साधनमें पार्थक्य न हो, दोनों साथ–साथ मिलकर अपनी–अपनी मर्यादामें स्थित रहकर शास्त्रबोधित कर्मोंका अनुष्ठान करें—यही संक्षेपमें स्त्री–पुरुषका कर्म जानना चाहिये। अतः विवाह किये हुए स्त्री–पुरुषको ऐसा प्रयत्न करना चाहिये कि वे धर्म–अर्थ तथा कामविषयक कार्योंमें परस्परमें कभी पृथक् न हों—

अन्योन्यस्याव्यभिचारो भवेदामरणान्तिकः।
एष धर्मः समासेन ज्ञेयः स्त्रीपुंसयोः परः॥
तथा नित्यं यतेयातां स्त्रीपुंसौ तु कृतक्रियौ।
यथा नाभिचरेतां तौ वियुक्तावितरेतरम्॥

(मनुस्मृति ९।१०१-१०२)

सद्गृहस्थकी शिक्षामें बताया गया है कि वह शास्त्रमें बतायी गयी विधि–निषेधरूप व्यवस्थाका सम्यक् पालन करे। अपने लिये विहित दैनन्दिन सन्ध्या–वन्दनादि नित्य कर्मोंका समुचित रूपसे पालन करे और सत्पुरुषोंके आचारका पालन करे। पंचमहायज्ञोंद्वारा देवता, ऋषि, पितर, अतिथि तथा समस्त प्राणियोंको सन्तृप्त करे। न्यायोपार्जित द्रव्यद्वारा अर्थका समार्जनकर उसका यथायोग्य विनियोग करे। दीन–दु:खियोंकी सहायता करे। भृत्यवर्ग एवं पोष्यवर्गका पालन करे, इन्द्रियोंकी चपलताका परित्याग करके परम शुचिताको ग्रहण करे। शिष्टाचारका पालन करे। स्वच्छ एवं पवित्र परिधान धारण करे। शौच, सन्तोष, अहिंसा आदि यम–नियमोंका पालन करे। तीर्थोंपर आस्था रखे, अधर्मसे सदा बचता रहे, निषिद्ध आचरणका सर्वथा परित्याग करे, सबके साथ मैत्रीका व्यवहार रखे। अन्त्येष्टि–पर्यन्त सभी संस्कारोंको करे, शास्त्र और देवतामें आस्तिक बुद्धि रखे, माता–पिता,

गुरु आदि श्रेष्ठजनोंमें देवबुद्धि रखे। प्राणिमात्रकी सेवा करे और सबके प्रति सद्भाव रखे। अपने लिये जो प्रतिकूल हो, वैसा दूसरेके लिये भी न करे तथा पति-पत्नी दोनों अपनी मर्यादा तथा स्वधर्ममें सदा प्रतिष्ठित रहें।

किस गृहस्थका जीवन निष्फल है, इसे बताते हुए कहा गया है कि जिस गृहस्थके यहाँ केवल अपने लिये ही भोजन बनाया जाता है, भोगके लिये ही स्त्री-सहवास होता है और शिक्षार्जनका उद्देश्य केवल धन कमाना ही होता है, ऐसे गृहस्थका जीवन निष्फल है—

आत्मार्थं भोजनं यस्य रत्यर्थं यस्य मैथुनम्।
वृत्त्यर्थं यस्य चाधीतं निष्फलं तस्य जीवितम्॥

(कूर्मपु० १९।१८)

विवाहादि संस्कारोंमें अशौचकी सम्भावनापर व्यवस्था—

विस्तृत परिवारोंमें अशौचकी सम्भावनाके कारण विवाह आदिमें विघ्न न हो, इस दृष्टिसे पहले सांकल्पिक नान्दीमुखश्राद्ध करा लेना चाहिये, जिससे विवाहकार्य निर्विघ्न सम्पन्न हो जाय। संस्कारसे कितने दिन पूर्व नान्दीमुख करना चाहिये, इसके लिये निम्न प्रमाणमें बताया गया है कि यज्ञमें इक्कीस दिन, विवाहमें दस दिन, चौल (चूडाकरण)-में तीन दिन तथा उपनयनमें छः दिन पूर्व नान्दीश्राद्ध कर लेनेसे कर्ताको अशौचकी प्रवृत्ति नहीं होगी। अतः विवाहके दस दिन पूर्वतक नान्दीश्राद्ध किया जा सकता है—

एकविंशत्यहर्यज्ञे विवाहे दश वासराः।
त्रिषट् चौलोपनयने नान्दीश्राद्धं विधीयते॥

व्रत, यज्ञ, विवाह, श्राद्ध, होम, अर्चन तथा जपमें प्रारम्भ (कार्यारम्भ) हो जानेपर सूतक नहीं होता और प्रारम्भ न होनेपर सूतक

होता है। यज्ञमें आचार्य आदिके वरणको, व्रत-यज्ञमें संकल्पको, विवाह आदिमें नान्दीमुखको तथा श्राद्धमें पाकनिर्माणको प्रारम्भ (कार्यारम्भ) माना गया है—

व्रतयज्ञविवाहेषु श्राद्धे होमेऽर्चने जपे।
प्रारब्धे सूतकं न स्यात् अनारब्धे तु सूतकम्॥
प्रारम्भो वरणं यज्ञे सङ्कल्पो व्रतसत्रयोः।
नान्दीमुखं विवाहादौ श्राद्धे पाकपरिक्रिया॥

(त्रिस्थलीसेतु सारसंग्रहमें विष्णुपुराणका वचन)

देशाचारकी प्रामाणिकता—

पारस्करगृह्यसूत्रके '**विवाहश्मशानयोर्ग्रामं प्रविशतात्**' तथा '**तस्मात्तयोर्ग्रामः प्रमाणम्**' (पा०गृ०सू० १।८।१२-१३) इस वचनके अनुसार शास्त्रकी कोई स्पष्ट व्यवस्था न रहनेपर अथवा वैकल्पिक व्यवस्था होनेपर विवाहसंस्कार तथा अन्त्येष्टि आदि संस्कारोंमें देशाचारके अनुसार करना चाहिये।

आगे विवाहसंस्कारका प्रयोग दिया जा रहा है—

[१४] विवाहसंस्कार-प्रयोग

वरवरण (तिलक-सगाई)

विवाह-संस्कारमें वर और कन्या दोनोंके संस्कारका विधान है तथा उनके पारस्परिक सम्बन्धकी शुचिता निहित है, जो गृहस्थधर्मकी मूल भित्ति है। विवाहसे पूर्व वरवरण होता है, जिसे लोकभाषामें तिलक या सगाई भी कहते हैं। इसमें मुख्य रूपसे कन्यापक्षद्वारा संकल्पपूर्वक 'वर' का पूजन तथा वरण किया जाता है। कन्याके योग्य वरका चयन करनेके उपरान्त कन्याके भ्राता-पिता, स्वजन आदि वरके घरमें जाकर इस प्रक्रियाको पूर्ण करते हैं।

किसी शुभ दिनमें कन्याके भ्राता,* पिता आदि स्वजनोंके साथ मांगलिक सामग्रियोंको लेकर वरके घरमें जाकर मण्डपमें पश्चिमाभिमुख बैठें और वर पूर्वाभिमुख बैठे।

कन्याके पिता तथा वर दोनों साथ-साथ मन्त्रपूर्वक निम्न रीतिसे पूजन आदि करें—

कन्याके पिता और वर दोनों आचमन, प्राणायाम आदि करनेके उपरान्त हाथमें जल लेकर अपने ऊपर तथा पूजन-सामग्रीपर निम्न मन्त्रसे जल छिड़कें—

ॐ अपवित्रः पवित्रो वा सर्वावस्थां गतोऽपि वा।
यः स्मरेत् पुण्डरीकाक्षं स बाह्याभ्यन्तरः शुचिः॥

मंगल मन्त्रोंका पाठ—

हाथमें अक्षत-पुष्प लेकर निम्न मंगल मन्त्रोंका पाठ करें या श्रवण करें—

ॐ आ नो भद्राः क्रतवो यन्तु विश्वतोऽदब्धासो अपरीतास

---

* धरणिदेवोऽथवा कन्यकासोदरः शुभदिने गीतवाद्यादिभिः संयुतः। वरवृतिं वस्त्रयज्ञोपवीतादिना ध्रुवयुतैर्वह्निपूर्वात्रयैराचरेत्॥ (मु०चि० ६। ११)

उद्भिदः। देवा नो यथा सदमिद् वृधे असन्नप्रायुवो रक्षितारो दिवे दिवे॥ १॥

देवानां भद्रा सुमतिर्ऋजूयतां देवानाꣳ रातिरभि नो निवर्तताम्।
देवानाꣳ सख्यमुपसेदिमा वयं देवा न आयुः प्रतिरन्तु जीवसे॥ २॥

तान्पूर्वया निविदा हूमहे वयं भगं मित्रमदितिं दक्षमस्त्रिधम्।
अर्यमणं वरुणꣳ सोममश्विना सरस्वती नः सुभगा मयस्करत्॥ ३॥

तन्नो वातो मयोभु वातु भेषजं तन्माता पृथिवी तत्पिता द्यौः।
तद् ग्रावाणः सोमसुतो मयोभुवस्तदश्विना शृणुतं धिष्ण्या युवम्॥ ४॥

तमीशानं जगतस्तस्थुषस्पतिं धियञ्जिन्वमवसे हूमहे वयम्।
पूषा नो यथा वेदसामसद् वृधे रक्षिता पायुरदब्धः स्वस्तये॥ ५॥

स्वस्ति न इन्द्रो वृद्धश्रवाः स्वस्ति नः पूषा विश्ववेदाः।
स्वस्ति नस्तार्क्ष्यो अरिष्टनेमिः स्वस्ति नो बृहस्पतिर्दधातु॥ ६॥

पृषदश्वा मरुतः पृश्निमातरः शुभं यावानो विदथेषु जग्मयः।
अग्निजिह्वा मनवः सूरचक्षसो विश्वे नो देवा अवसागमन्निह॥ ७॥

भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम देवा भद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्राः।
स्थिरैरङ्गैस्तुष्टुवाꣳ सस्तनूभिर्व्यशेमहि देवहितं यदायुः॥ ८॥

शतमिन्नु शरदो अन्ति देवा यत्रा नश्चक्रा जरसं तनूनाम्।
पुत्रासो यत्र पितरो भवन्ति मा नो मध्या रीरिषतायुर्गन्तोः॥ ९॥

अदितिर्द्यौरदितिरन्तरिक्षमदितिर्माता स पिता स पुत्रः।
विश्वे देवा अदितिः पञ्च जना अदितिर्जातमदितिर्जनित्वम्॥ १०॥

द्यौः शान्तिरन्तरिक्षꣳ शान्तिः पृथिवी शान्तिरापः शान्तिरोषधयः शान्तिः। वनस्पतयः शान्तिर्विश्वे देवाः शान्तिर्ब्रह्म शान्तिः सर्वꣳ शान्तिः शान्तिरेव शान्तिः सा मा शान्तिरेधि॥ ११॥

यतो यतः समीहसे ततो नो अभयं कुरु। शं नः कुरु

प्रजाभ्योऽभयं नः पशुभ्यः॥ १२॥ सुशान्तिर्भवतु।

श्रीमन्महागणाधिपतये नमः। लक्ष्मीनारायणाभ्यां नमः। उमामहेश्वराभ्यां नमः। वाणीहिरण्यगर्भाभ्यां नमः। शचीपुरन्दराभ्यां नमः। मातापितृचरणकमलेभ्यो नमः। इष्टदेवताभ्यो नमः। कुलदेवताभ्यो नमः। ग्रामदेवताभ्यो नमः। स्थानदेवताभ्यो नमः। वास्तुदेवताभ्यो नमः। सर्वेभ्यो देवेभ्यो नमः। सर्वेभ्यो ब्राह्मणेभ्यो नमः।

विश्वेशं माधवं ढुण्ढिं दण्डपाणिञ्च भैरवम्।
वन्दे काशीं गुहां गङ्गां भवानीं मणिकर्णिकाम्॥
वक्रतुण्ड महाकाय कोटिसूर्यसमप्रभ।
निर्विघ्नं कुरु मे देव सर्वकार्येषु सर्वदा॥
सुमुखश्चैकदन्तश्च कपिलो गजकर्णकः।
लम्बोदरश्च विकटो विघ्ननाशो विनायकः॥
धूम्रकेतुर्गणाध्यक्षो भालचन्द्रो गजाननः।
द्वादशैतानि नामानि यः पठेच्छृणुयादपि॥
विद्यारम्भे विवाहे च प्रवेशे निर्गमे तथा।
संग्रामे संकटे चैव विघ्नस्तस्य न जायते॥
शुक्लाम्बरधरं देवं शशिवर्णं चतुर्भुजम्।
प्रसन्नवदनं ध्यायेत् सर्वविघ्नोपशान्तये॥
अभीप्सितार्थसिद्ध्यर्थं पूजितो यः सुरासुरैः।
सर्वविघ्नहरस्तस्मै गणाधिपतये नमः॥
सर्वमङ्गलमाङ्गल्ये शिवे सर्वार्थसाधिके।
शरण्ये त्र्यम्बके गौरि नारायणि नमोऽस्तु ते॥
सर्वदा सर्वकार्येषु नास्ति तेषाममङ्गलम्।
येषां हृदिस्थो भगवान् मङ्गलायतनं हरिः॥

तदेव लग्नं सुदिनं तदेव ताराबलं चन्द्रबलं तदेव।
विद्याबलं देवबलं तदेव लक्ष्मीपते तेऽङ्घ्रियुगं स्मरामि॥
लाभस्तेषां जयस्तेषां कुतस्तेषां पराजयः।
येषामिन्दीवरश्यामो हृदयस्थो जनार्दनः॥
यत्र योगेश्वरः कृष्णो यत्र पार्थो धनुर्धरः।
तत्र श्रीर्विजयो भूतिर्ध्रुवा नीतिर्मतिर्मम॥
अनन्याश्चिन्तयन्तो मां ये जनाः पर्युपासते।
तेषां नित्याभियुक्तानां योगक्षेमं वहाम्यहम्॥
स्मृतेः सकलकल्याणं भाजनं यत्र जायते।
पुरुषं तमजं नित्यं व्रजामि शरणं हरिम्॥
सर्वेष्वारम्भकार्येषु त्रयस्त्रिभुवनेश्वराः।
देवा दिशन्तु नः सिद्धिं ब्रह्मेशानजनार्दनाः॥

प्रतिज्ञा-संकल्प—

कन्याका भ्राता, पिता अथवा कुलज्येष्ठ हाथमें कुशाक्षत-जल लेकर निम्न संकल्प करे—

ॐ विष्णुर्विष्णुर्विष्णुः श्रीमद्भगवतो महापुरुषस्य विष्णो-राज्ञया प्रवर्तमानस्य ब्रह्मणो द्वितीयपरार्धे श्रीश्वेतवाराहकल्पे वैवस्वतमन्वन्तरे अष्टाविंशतितमे कलियुगे कलिप्रथमचरणे जम्बूद्वीपे भारतवर्षे आर्यावर्तैकदेशे (यदि काशी हो तो **अविमुक्तवाराणसीक्षेत्रे आनन्दवने गौरीमुखे त्रिकण्टकविराजिते भगवत्या उत्तरवाहिन्या भागीरथ्या वामभागे**) **......नगरे/ग्रामे/क्षेत्रे षष्टिसंवत्सराणां मध्ये ......संवत्सरे ......अयने ......ऋतौ ......मासे ......पक्षे ......तिथौ ......नक्षत्रे ......योगे ......करणे ......वासरे ......राशिस्थिते सूर्ये ......राशिस्थिते चन्द्रे शेषेषु ग्रहेषु यथायथाराशिस्थानस्थितेषु सत्सु एवं ग्रहगुणगण-विशिष्टे शुभमुहूर्ते ......गोत्रः ......शर्मा/वर्मा/गुप्तोऽहं ......गोत्रायाः**

""**नाम्न्याः भगिन्याः** (पिता करे तो **कन्यायाः** कहे) **भविष्योद्वाहाङ्गभूतकर्मणि वरपूजनपूर्वकं वरवरणं करिष्ये। तदङ्गत्वेन कलशस्थापनं नवग्रहादीनां स्मरणं पूजनं च करिष्ये। तत्रादौ निर्विघ्नतासिद्ध्यर्थं गणेशाम्बिकयोः पूजनं च करिष्ये।** हाथका संकल्पजल छोड़ दे।

इसी प्रकार वर भी हाथमें कुशाक्षत-जल लेकर निम्न संकल्प करे—

ॐ विष्णुर्विष्णुर्विष्णुः श्रीमद्भगवतो महापुरुषस्य विष्णो-राज्ञया प्रवर्तमानस्य ब्रह्मणो द्वितीयपरार्धे श्रीश्वेतवाराहकल्पे वैवस्वतमन्वन्तरे अष्टाविंशतितमे कलियुगे कलिप्रथमचरणे जम्बूद्वीपे भारतवर्षे आर्यावर्तैकदेशे (यदि काशी हो तो **अविमुक्तवाराणसीक्षेत्रे आनन्दवने गौरीमुखे त्रिकण्टकविराजिते भगवत्या उत्तरवाहिन्या भागीरथ्या वामभागे**) ""**नगरे/ग्रामे/क्षेत्रे षष्टिसंवत्सराणां मध्ये** ""**संवत्सरे** ""**अयने** ""**ऋतौ** ""**मासे** ""**पक्षे** ""**तिथौ** ""**नक्षत्रे** ""**योगे** ""**करणे** ""**वासरे** ""**राशिस्थिते सूर्ये** ""**राशिस्थिते चन्द्रे शेषेषु ग्रहेषु यथायथाराशिस्थानस्थितेषु सत्सु एवं ग्रहगुणगणविशिष्टे शुभमुहूर्ते** ""**गोत्रः** ""**शर्मा/वर्मा/गुप्तोऽहं भविष्योद्वाहाङ्गभूतकर्मणि वरवृत्तिग्रहणं करिष्ये। तदङ्गत्वेन कलशस्थापनं नवग्रहादीनां स्मरणं पूजनं च करिष्ये। तत्रादौ निर्विघ्नतासिद्ध्यर्थं गणेशाम्बिकयोः पूजनं च करिष्ये।**

गणेशाम्बिकादि पूजन—

तदनन्तर यथालब्धोपचारसे दोनों पक्ष गणेशाम्बिकापूजन, कलश तथा नवग्रहोंका पूजन करें।*

* पूजनकी विधि परिशिष्ट पृ०सं० ४१५ में दी गयी है।

वरपूजन

तदनन्तर निम्न रीतिसे वरका पूजन करे—

पादप्रक्षालन—

कन्याका भाई अथवा पिता निम्न मन्त्रसे वरका पादप्रक्षालन करे—

ॐ विराजो दोहोऽसि विराजो दोहमशीय मयि पाद्यायै विराजो दोहः ॥ हाथ धो ले।

तिलक—

निम्न मंगलश्लोकसे वरको तिलक लगाये—

कस्तूरीतिलकं ललाटपटले वक्षःस्थले कौस्तुभं
नासाग्रे वरमौक्तिकं करतलं वेणुः करे कङ्कणम्।
सर्वाङ्गे हरिचन्दनं सुललितं कण्ठे च मुक्तावली
गोपस्त्रीपरिवेष्टितो विजयते गोपालचूडामणिः ॥

अक्षत—

निम्न मन्त्रसे वरको अक्षत लगाये—

ॐ अक्षन्नमीमदन्त ह्यव प्रिया अधूषत।

अस्तोषत स्वभानवो विप्रा नविष्ठया मती योजा न्विन्द्र ते हरी ॥

माल्यार्पण—

निम्न मन्त्रसे वरको माला पहनाये—

ॐ याऽऽआहरज्जमदग्निः श्रद्धायै मेधायै कामायेन्द्रियाय।
ताऽअहं प्रतिगृह्णामि यशसा च भगेन च ॥
ॐ यद्यशोऽप्सरसामिन्द्रश्चकार विपुलं पृथु।
तेन सङ्ग्रथिताः सुमनस आबध्नामि यशो मयि ॥

वरवरणका संकल्प—

कन्याका भ्राता वरके वरणहेतु किसी थालमें यज्ञोपवीत, हरिद्रा,

फल, पुष्प, नारियल आदि तथा वरके वस्त्र रखकर और वरण-द्रव्यके साथ वह थाल* हाथमें लेकर निम्न संकल्प करे—

ॐ अद्य पूर्वोच्चारितग्रहगुणगणविशेषणविशिष्टायां शुभ-पुण्यतिथौ ....गोत्रः ....शर्मा/वर्मा/गुप्तोऽहं ....गोत्रायाः ....नाम्न्याः भगिन्या (कन्यायाः वा) भविष्योद्वाहकर्मणि एभिर्वरणद्रव्यैः अक्षतपुष्पचन्दनताम्बूलनारिकेलहरिद्रादिमाङ्गलिकसूत्रद्रव्यभाजन-वासोभिः ....गोत्रं ....शर्माणं/वर्माणं/गुप्तं वरं कन्याप्रतिग्रहीतृत्वेन त्वामहं वृणे। संकल्पजल छोड़ दे तथा वरणसामग्री वरको दे दे।

वर '**वृतोऽस्मि**'।

ॐ द्यौस्त्वा ददातु पृथिवी त्वा प्रतिगृह्णातु। कहकर सामग्री ग्रहण करे।

तदनन्तर वर निम्न मन्त्र पढ़े अथवा ब्राह्मणद्वारा श्रवण करे—

ॐ व्रतेन दीक्षामाप्नोति दीक्षयाऽऽप्नोति दक्षिणाम्।
दक्षिणा श्रद्धामाप्नोति श्रद्धया सत्यमाप्यते॥

दक्षिणादान—

तदनन्तर कन्याके भाई या पिता तथा वर आचार्यदक्षिणा और भूयसी दक्षिणादानका संकल्प करें—

ॐ कृतस्य वरवृत्तिग्रहणकर्मणः साङ्गतासिद्ध्यर्थं आचार्य-दक्षिणां तन्मध्ये न्यूनातिरिक्तदोषपरिहारार्थं नानानामगोत्रेभ्यो ब्राह्मणेभ्यो यथोत्साहां भूयसीं दक्षिणां च विभज्य दातुमहमुत्सृज्ये।

ब्राह्मण-भोजनसंकल्प—

आचार्यदक्षिणा एवं भूयसीके संकल्पके पश्चात् वरपक्ष ब्राह्मणभोजनका भी संकल्प करे—

ॐ अद्य ....गोत्रः ....शर्मा/वर्मा/गुप्तोऽहं वरवृत्तिग्रहणकर्मणः

---

* राजस्थानके लोकाचारके अनुसार वरको तिलक लगाकर, माला पहनाकर हाथमें नारियलके साथ वरणद्रव्य दिया जाता है।

साङ्गतासिद्ध्यर्थं यथासङ्ख्याकान् ब्राह्मणान् भोजयिष्ये।

विसर्जन—

कन्याका पिता एवं वर हाथमें अक्षत लेकर निम्न मन्त्रसे अक्षत छोड़ते हुए आवाहित देवताओंका विसर्जन करें—

ॐ यान्तु देवगणाः सर्वे पूजामादाय मामकीम्।
इष्टकामसमृद्ध्यर्थं पुनरागमनाय च॥

भगवत्स्मरण—

निम्न मन्त्र पढ़ते हुए समस्त कर्म भगवान्‌को अर्पित करे—

ॐ प्रमादात् कुर्वतां कर्म प्रच्यवेताध्वरेषु यत्।
स्मरणादेव तद्विष्णोः सम्पूर्णं स्यादिति श्रुतिः॥
यस्य स्मृत्या च नामोक्त्या तपोयज्ञक्रियादिषु।
न्यूनं सम्पूर्णतां याति सद्यो वन्दे तमच्युतम्॥

ॐ विष्णवे नमः। ॐ विष्णवे नमः। ॐ विष्णवे नमः।
ॐ साम्बसदाशिवाय नमः। ॐ साम्बसदाशिवाय नमः।
ॐ साम्बसदाशिवाय नमः।

॥ वरवरण पूर्ण हुआ॥

****

मण्डपस्थापन

विवाहके दिन अथवा विवाहके पूर्व किसी श्रेष्ठ दिन गृहके मध्य (आँगन)-में कन्याके हाथसे सोलह, बारह या दस अथवा आठ हाथका (जितना हो सके) एक विवाह-मण्डप बनाना चाहिये। मण्डपके चारों कोणोंमें आग्नेयादि क्रमसे चार स्तम्भोंका रोपण करे और मध्यमें एक स्तम्भका रोपण करे। देशाचारके अनुसार मध्यके स्तम्भके साथ कदलीस्तम्भ इत्यादिका रोपण किया जाता है।

इन्हीं स्तम्भोंमें आग्नेयादिक्रमसे निम्न नाममन्त्रोंद्वारा मण्डपकी

नन्दिनी आदि पाँच मातृकाओंका आवाहन एवं गन्धाक्षत-पुष्पादिद्वारा पूजन करे।

(१) अग्निकोण (पूर्व-दक्षिण)-में—**ॐ नन्दिन्यै नमः। नन्दिनीमावाहयामि, स्थापयामि, पूजयामि।**

(२) नैर्ऋत्यकोण (दक्षिण-पश्चिम)-में—**ॐ नलिन्यै नमः। नलिनीमावाहयामि, स्थापयामि, पूजयामि।**

(३) वायव्यकोण (पश्चिम-उत्तर)-में—**ॐ मैत्रायै नमः। मैत्रामावाहयामि, स्थापयामि, पूजयामि।**

(४) ईशानकोण (उत्तर-पूर्व)-में—**ॐ उमायै नमः। उमामावाहयामि, स्थापयामि, पूजयामि।**

(५) मध्यमें—**ॐ पशुवर्द्धिन्यै नमः। पशुवर्द्धिनीमावाहयामि, स्थापयामि, पूजयामि।**

मण्डपके मध्यमें पूर्व दिशाकी ओर झुकती हुई एक हाथ लम्बी-चौड़ी एक वेदी बना ले। उस हवनवेदीको हल्दी, गुलाल और आटेसे सुशोभित करे।

हल्दात

विवाहके लिये निर्धारित तिथिसे पूर्व तीसरे-छठे और नवें दिनको छोड़कर किसी शुभ दिनमें कन्या तथा वरके घरमें हल्दीहाथ (हल्दात) करनेकी परम्परा है। इस निमित्त यथालब्धोपचारसे गौरी-गणेशका पूजन करके महिलाएँ लोकरीतिके अनुसार इस विधिको पूरा करती हैं।

हरिद्रालेपन तथा कंकणबन्धन (बान)

वर-कन्या अपने-अपने घरमें आचमन, प्राणायाम आदि करके गणेशाम्बिका और अविघ्न कलशका यथालब्धोपचारसे पूजन कर लें। अविघ्न कलशपर (अक्षतपुंजपर) मोदादि षड्विनायकों (मोद, प्रमोद,

सुमुख, दुर्मुख, अविघ्न तथा विघ्नकर्ता)–का भी पूजन करे तथा दीपक प्रज्वलित करे।

तदनन्तर वर और कन्याके कुलपुरोहितद्वारा दूबकी दो पिंजुली दोनों हाथोंमें लेकर उन्हें हल्दी और तेलमें डुबोकर निम्न मन्त्रसे सर्वप्रथम गणेशजीको तदनन्तर कलशपर एक बार हरिद्रा और तेल चढ़ाना चाहिये—

ॐ काण्डात् काण्डात्प्ररोहन्ती परुषः परुषस्परि।
एवा नो दूर्वे प्र तनु सहस्त्रेण शतेन च॥

इसके बाद परिवारके अन्य लोग कुलपरम्पराके अनुसार '**ॐ काण्डात्काण्डात्०**' मन्त्रद्वारा वर तथा कन्याके निम्न रीतिसे हरिद्रा–तेल लगाये।

दूबोंकी दो पिंजुली लेकर हल्दीसहित तेलमें डुबोकर दोनों हाथोंसे पैर, घुटना, कन्धों तथा माथेपर लगायें।

वर तथा कन्याके स्नानके अनन्तर दोनोंके कुलपुरोहित निम्न मन्त्रसे माथेपर रोलीका तिलक लगायें—

युञ्जन्ति ब्रध्नमरुषं चरन्तं परितस्थुषः। रोचन्ते रोचना दिवि॥

निम्न मन्त्रसे अक्षत लगायें—

अक्षन्नमीमदन्त ह्यव प्रिया अधूषत। अस्तोषत स्वभानवो विप्रा नविष्ठया मती योजान्विन्द्र ते हरी॥

कंकणबन्धन—

निम्न मन्त्रसे वरके दाहिने हाथमें तथा कन्याके बायें हाथमें पीले कपड़ेमें राई, कौड़ी, लोहेके छल्लेको नारेमें बाँधकर कंगन बनाकर बाँधे—

यदाबध्नन् दाक्षायणा हिरण्यꣳ शतानीकाय सुमनस्य मानाः।
तन्म आ बध्नामि शतशारदायायुष्मान् जरदष्टिर्यथासम्॥

तत्पश्चात् दक्षिणा, भूयसी दक्षिणा तथा ब्राह्मणभोजनका संकल्प करे।

सङ्कल्प—

कृतैतद् हरिद्रालेपनकर्मणः साङ्गतासिद्ध्यर्थमाचार्याय यथोत्साहां दक्षिणां दातुमहमुत्सृज्ये।

कृतैतद् हरिद्रालेपनकर्मणः साङ्गतासिद्ध्यर्थं तन्मध्ये न्यूना-तिरिक्तदोषपरिहारार्थं नानानामगोत्रेभ्यो ब्राह्मणेभ्यो भूयसीं दक्षिणां विभज्य दातुमहमुत्सृज्ये।

कृतैतद् हरिद्रालेपनकर्मणः साङ्गतासिद्ध्यर्थं यथासंख्याकान् ब्राह्मणान् भोजयिष्ये।

उसके बाद निम्न मन्त्रोंको पढ़कर भगवान् विष्णुका स्मरण करे और कर्म भगवान्को अर्पित करे—

ॐ प्रमादात् कुर्वतां कर्म प्रच्यवेताध्वरेषु यत्।
स्मरणादेव तद्विष्णोः सम्पूर्णं स्यादिति श्रुतिः॥
यस्य स्मृत्या च नामोक्त्या तपोयज्ञक्रियादिषु।
न्यूनं सम्पूर्णतां याति सद्यो वन्दे तमच्युतम्॥

ॐ विष्णवे नमः। ॐ विष्णवे नमः। ॐ विष्णवे नमः।
ॐ साम्बसदाशिवाय नमः। ॐ साम्बसदाशिवाय नमः।
ॐ साम्बसदाशिवाय नमः।

॥ हरिद्रालेपन पूर्ण हुआ॥

****

विवाहपूर्वांगपूजन

वरके पिता और कन्याके पिता अपने–अपने घरमें विवाहके दिन अथवा विवाहके पूर्व दिन आसनपर पूर्वाभिमुख बैठकर आचमन–प्राणायाम आदि करके हाथमें अक्षत–पुष्प लेकर **'आ नो भद्रा०'*** आदि मंगल मन्त्रोंका पाठ करें या श्रवण करें, तदनन्तर कन्या–पिता कन्याके रजोदर्शनादि दोषपरिहारके निमित्त निम्न प्रायश्चित्त संकल्प करे।

प्रायश्चित्तसंकल्प

(क) कन्यापिता—

कन्यापिता अपने दाहिने हाथमें यथाशक्ति द्रव्य, चन्दन, पुष्प, अक्षत, दूर्वा तथा जल लेकर संकल्प करे—

ॐ विष्णुर्विष्णुर्विष्णुः श्रीमद्भगवतो महापुरुषस्य विष्णोराज्ञया प्रवर्तमानस्य अद्य श्रीब्रह्मणो द्वितीयपरार्धे श्रीश्वेतवाराहकल्पे वैवस्वतमन्वन्तरे अष्टाविंशतितमे कलियुगे कलिप्रथमचरणे जम्बूद्वीपे भरतखण्डे भारतवर्षे आर्यावर्तैकदेशान्तर्गते (यदि काशी हो तो **अविमुक्तवाराणसीक्षेत्रे आनन्दवने गौरीमुखे त्रिकण्टकविराजिते भागीरथ्याः पश्चिमे तीरे**) **....स्थाने विक्रमशके बौद्धावतारे ....नाम्नि संवत्सरे ....अयने ....ऋतौ महामाङ्गल्यप्रदमासोत्तमे ....मासे ....पक्षे ....तिथौ ....वासरे ....नक्षत्रे ....योगे ....करणे ....राशिस्थिते चन्द्रे ....राशिस्थिते सूर्ये ....राशिस्थिते देवगुरौ शेषेषु ग्रहेषु यथायथं राशिस्थानस्थितेषु सत्सु एवं ग्रहगुणगणविशेषणविशिष्टायां शुभपुण्यतिथौ ....गोत्रः ....शर्मा/वर्मा/गुप्तोऽहं मम अस्याः ....नाम्न्याः कन्यायाः रजोदर्शनादिदोषपरिहारद्वारा श्रीपरमेश्वर–प्रीत्यर्थं प्रायश्चित्तप्रत्याम्नायभूतं यथाशक्ति गोनिष्क्रयभूतद्रव्यं**

* पृ०–सं० २७७ के अनुसार करें।

''''गोत्राय ''''शर्मणे ब्राह्मणाय भवते सम्प्रददे। कहकर संकल्पजल छोड़ दे और दक्षिणा ब्राह्मणको प्रदान करे।

ब्राह्मण बोले—**ॐ स्वस्ति।**

(ख) वर—

वर भी अतीतसंस्कारजन्यदोषपरिहारके लिये अपने दाहिने हाथमें द्रव्य-जलाक्षत-पुष्प-दूर्वा लेकर प्रायश्चित्तका निम्न संकल्प करे—

ॐ विष्णुर्विष्णुर्विष्णुः श्रीमद्भगवतो महापुरुषस्य विष्णोराज्ञया प्रवर्तमानस्य अद्य श्रीब्रह्मणो द्वितीयपरार्धे श्रीश्वेतवाराहकल्पे वैवस्वतमन्वन्तरे अष्टाविंशतितमे कलियुगे कलिप्रथमचरणे जम्बूद्वीपे भरतखण्डे भारतवर्षे आर्यावर्तैकदेशान्तर्गते (यदि काशी हो तो **अविमुक्तवाराणसीक्षेत्रे आनन्दवने गौरीमुखे त्रिकण्टकविराजिते भागीरथ्याः पश्चिमे तीरे**) **''''स्थाने विक्रमशके बौद्धावतारे ''''नाम्नि संवत्सरे ''''अयने ''''ऋतौ महामाङ्गल्यप्रदमासोत्तमे ''''मासे ''''पक्षे ''''तिथौ ''''वासरे ''''नक्षत्रे ''''योगे ''''करणे ''''राशिस्थिते चन्द्रे ''''राशिस्थिते सूर्ये ''''राशिस्थिते देवगुरौ शेषेषु ग्रहेषु यथायथं राशिस्थानस्थितेषु सत्सु एवं ग्रहगुणगणविशेषणविशिष्टायां शुभपुण्यतिथौ ''''गोत्रः ''''शर्मा/वर्मा/गुप्तोऽहं मम गर्भाधानादि-समावर्तनान्तसंस्काराणामकरणजन्यदोषप्रत्यवायपरिहारद्वारा श्रीपर-मेश्वरप्रीत्यर्थं प्राजापत्यकृच्छ्रप्रत्याम्नायभूतैकगोनिष्क्रयभूतमिदं द्रव्यं ''''गोत्राय ''''शर्मणे ब्राह्मणाय भवते सम्प्रददे।**

संकल्प करके दक्षिणा ब्राह्मणके हाथमें दे और ब्राह्मण बोले—'**ॐ स्वस्ति**'। तदनन्तर पंचांगपूजन करे।*

---

* राजस्थानकी परम्परामें विवाहके समय मण्डपमें पूर्वांगरूपमें गणेशाम्बिका, मातृका और नवग्रहादिका पूजन करनेके अनन्तर विवाहकी प्रक्रिया प्रारम्भ की जाती है।

पंचांगपूजन

विवाहके अंगभूतरूपमें विवाहसे पूर्व किये जानेवाले पंचांग-पूजनका निम्न रीतिसे संकल्प करें—

प्रतिज्ञा-संकल्प—

ॐ विष्णुर्विष्णुर्विष्णुः श्रीमद्भगवतो महापुरुषस्य विष्णोराज्ञया प्रवर्तमानस्य अद्य श्रीब्रह्मणो द्वितीयपरार्धे श्रीश्वेतवाराहकल्पे वैवस्वतमन्वन्तरे अष्टाविंशतितमे कलियुगे कलिप्रथमचरणे जम्बूद्वीपे भरतखण्डे भारतवर्षे आर्यावर्तैकदेशान्तर्गते (यदि काशी हो तो **अविमुक्तवाराणसीक्षेत्रे आनन्दवने गौरीमुखे त्रिकण्टकविराजिते भागीरथ्याः पश्चिमे तीरे**) **....स्थाने विक्रमशके बौद्धावतारे ....नाम्नि संवत्सरे ....अयने ....ऋतौ महामाङ्गल्यप्रदमासोत्तमे ....मासे ....पक्षे ....तिथौ ....वासरे ....नक्षत्रे ....योगे ....करणे ....राशिस्थिते चन्द्रे ....राशिस्थिते सूर्ये ....राशिस्थिते देवगुरौ शेषेषु ग्रहेषु यथायथं राशिस्थानस्थितेषु सत्सु एवं ग्रहगुणगणविशेषणविशिष्टायां शुभपुण्यतिथौ ....गोत्रः ....शर्मा/वर्मा/गुप्तोऽहं स्वकीयपुत्रस्योद्वाहाङ्गभूतं[1]/स्वकीयकन्योद्वाहाङ्गभूतं[2] स्वस्तिपुण्याहवाचनं मातृकापूजनं वसोर्धारापूजनम् आयुष्यमन्त्रजपं साङ्कल्पिकेन विधिना नान्दीश्राद्धं[3] च करिष्ये। तत्रादौ निर्विघ्नतासिद्ध्यर्थं गणेशाम्बिकयोः पूजनं करिष्ये।** हाथका जलाक्षतादि छोड़ दे।

संकल्पके अनन्तर दोनों पक्ष गणेशाम्बिकापूजन, कलश-स्थापन, पुण्याहवाचन, नवग्रहपूजन, मातृकापूजन, वसोर्धारापूजन, आयुष्यमन्त्रजप तथा नान्दीश्राद्ध, अभिषेक आदि कर्म सम्पन्न करें।[4]

---

१. वरके पिता 'स्वकीयपुत्रस्योद्वाहाङ्गभूतम्' बोलें।

२. कन्याके पिता 'स्वकीयकन्यस्योद्वाहाङ्गभूतम्' बोलें।

३. यदि अशौच-निवृत्तिकी दृष्टिसे विवाहके दस दिन पहले नान्दीश्राद्ध कर लिया गया हो तो विवाहांगपूर्वपूजनमें नान्दीमुखश्राद्ध पुनः करनेकी विधि नहीं है।

४. इन्हें सम्पन्न करनेकी विधि परिशिष्ट पृ०-सं० ४१५ में दी गयी है।

लोकाचार

लोकाचारके अनुसार कोहबरमें मातृभाण्डकी स्थापना करनेकी परम्परा है।

मातृभाण्डस्थापन एवं मातृकापूजन—

वर और वधूके अपने-अपने घरोंमें एक कक्षको विवाहकी दृष्टिसे कोहबरके रूपमें निर्धारित कर लिया जाता है, उसी कक्षमें मातृभाण्डकी स्थापना तथा मातृकापूजन आदि कर्म किया जाता है। तदनुसार मिट्टीके चार छिद्रवाले एक चूल्हेपर तण्डुल, गुड़से पूर्ण चार पात्र रखे, उस पाकको अग्निपर पकाये, जिसे बादमें पाँच कुमार या कुमारियोंके साथ वर/वधूको खिलाया जाता है। एक कसोरेमें पान रखकर और उसपर अक्षतपुंजके ऊपर सुपारी रखकर पितरोंका आवाहन करे और दूसरे कसोरेसे उसे ढककर तथा उड़दकी पीठीसे चिपकाकर रख दे। इसी प्रकार दूसरे कसोरेमें पानके ऊपर अक्षतपुंजपर सुपारी रखकर वायु इत्यादि देवताओंका आवाहन करे और उसे दूसरे कसोरेसे ढककर उड़दकी पीठीसे चिपकाकर रख दे और सिन्दूर-ऐपन आदिसे अलंकृत करके गुप्तागार (कोहबर)-में आये और यथास्थान रख दे।

द्वारमातृकापूजन—

सर्वप्रथम गुप्तागारके द्वारके दक्षिणकी तरफ निम्न मन्त्रोंसे अक्षतोंद्वारा तीन द्वारमातृकाओंका आवाहन करे तथा गन्ध-पुष्प आदि उपचारोंसे इनका नाममन्त्रोंद्वारा पूजन करे—

ॐ जयन्त्यै नमः। जयन्तीमावाहयामि, स्थापयामि, पूजयामि।

ॐ मङ्गलायै नमः। मङ्गलामावाहयामि, स्थापयामि, पूजयामि।

ॐ पिङ्गलायै नमः। पिङ्गलामावाहयामि स्थापयामि, पूजयामि।

तदनन्तर निम्न नाममन्त्रोंसे द्वारके बायीं ओर दो मातृकाओंका स्थापन, पूजन करे—

ॐ आनन्दवर्धिन्यै नमः। आनन्दवर्धिनीमावाहयामि, स्थापयामि, पूजयामि।

ॐ महाकाल्यै नमः। महाकालीमावाहयामि, स्थापयामि, पूजयामि।

मातृकास्थापन एवं पूजन*—

द्वारमातृकाओंका पूजन करनेके अनन्तर कोहबरकक्षके भीतर एक दीवार (भित्ति)-पर दक्षिणसे उत्तरकी ओर गोमयकी सत्रह पीढ़िया (गोमयपिण्ड) लगाये। उसीपर क्रमसे गणेशपूर्वक गौर्यादि षोडश मातृकाओंकी निम्न नाममन्त्रोंसे स्थापना करे—

ॐ गणपतये नमः। गणपतिमावाहयामि, स्थापयामि॥ १॥

ॐ गौर्यै नमः। गौरीमावाहयामि, स्थापयामि॥ २॥

ॐ पद्मायै नमः। पद्मामावाहयामि, स्थापयामि॥ ३॥

ॐ शच्यै नमः। शचीमावाहयामि, स्थापयामि॥ ४॥

ॐ मेधायै नमः। मेधामावाहयामि, स्थापयामि॥ ५॥

ॐ सावित्र्यै नमः। सावित्रीमावाहयामि, स्थापयामि॥ ६॥

ॐ विजयायै नमः। विजयामावाहयामि, स्थापयामि॥ ७॥

ॐ जयायै नमः। जयामावाहयामि, स्थापयामि॥ ८॥

ॐ देवसेनायै नमः। देवसेनामावाहयामि, स्थापयामि॥ ९॥

ॐ स्वधायै नमः। स्वधामावाहयामि, स्थापयामि॥ १०॥

ॐ स्वाहायै नमः। स्वाहामावाहयामि, स्थापयामि॥ ११॥

---

* राजस्थानकी परम्परामें कोहबरमें महिलाओंद्वारा दीवारपर मातृका लिखी जाती हैं, जिसे थापा कहते हैं। कोहबरकक्षके भीतर दीवालपर कुलपरम्परानुसार चित्रादिकी रचना तथा पितृदेवों आदिका पूजन महिलाओंद्वारा किया जाता है।

ॐ मातृभ्यो नमः। मातॄः आवाहयामि, स्थापयामि॥ १२॥

ॐ लोकमातृभ्यो नमः। लोकमातॄः आवाहयामि, स्थापयामि॥ १३॥

ॐ धृत्यै नमः। धृतिमावाहयामि, स्थापयामि॥ १४॥

ॐ पुष्ट्यै नमः। पुष्टिमावाहयामि, स्थापयामि॥ १५॥

ॐ तुष्ट्यै नमः। तुष्टिमावाहयामि, स्थापयामि॥ १६॥

ॐ आत्मनः कुलदेवतायै नमः। आत्मनः कुलदेवता-मावाहयामि, स्थापयामि॥ १७॥

इस प्रकार षोडशमातृकाओंकी स्थापनाकर निम्न मन्त्रोंसे अक्षत छोड़ते हुए उनकी प्रतिष्ठा करे—

ॐ मनोजूतिर्जुषतामाज्यस्य बृहस्पतिर्यज्ञमिमं तनोत्वरिष्टं यज्ञꣳ समिमं दधातु। विश्वे देवा स इह मादयन्तामोम्३प्रतिष्ठ॥

तदनन्तर गन्धाक्षतपुष्प आदि उपचारोंसे मातृकाओंका पूजन करे और हाथ जोड़ते हुए कहे—

'अनया पूजया गणपत्यादिषोडशमातरः प्रीयन्तां न मम।'

सप्तघृतमातृका-स्थापन तथा पूजन—

मातृकापूजनके अनन्तर घृतमातृकाओंका पूजन करे। षोडश मातृकाओंके उत्तर भागमें दीवारपर रोरी या सिन्दूरसे सात बिन्दु बनाये।

इसके बाद नीचेवाले सात बिन्दुओंपर घी या दूधसे प्रादेश (अँगूठेसे तर्जनीकी बीचकी दूरी)-मात्र सात धाराएँ निम्नलिखित मन्त्रसे दे—

घृत-धाराकरण—

ॐ वसोः पवित्रमसि शतधारं वसोः पवित्रमसि सहस्रधारम्। देवस्त्वा सविता पुनातु वसोः पवित्रेण शतधारेण सुप्वा॥

'**कामधुक्ष्वः**' कहते हुए गुड़के द्वारा बिन्दुओंकी रेखाओंको मिलाये। तदनन्तर निम्नलिखित वाक्योंका उच्चारण करते हुए प्रत्येक मातृकाका आवाहन और स्थापन करे—

ॐ भूर्भुवः स्वः श्रियै नमः, श्रियमावाहयामि, स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः लक्ष्म्यै नमः, लक्ष्मीमावाहयामि, स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः धृत्यै नमः, धृतिमावाहयामि, स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः मेधायै नमः, मेधामावाहयामि, स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः पुष्ट्यै नमः, पुष्टिमावाहयामि, स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः श्रद्धायै नमः, श्रद्धामावाहयामि, स्थापयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः सरस्वत्यै नमः, सरस्वतीमावाहयामि, स्थापयामि।

प्रतिष्ठा—इस प्रकार आवाहन-स्थापनके बाद '**मनोजूतिः०**' इस मन्त्रसे प्रतिष्ठा करे, तत्पश्चात् '**ॐ भूर्भुवः स्वः सप्तघृतमातृकाभ्यो नमः**' इस नाम-मन्त्रसे यथालब्धोपचार-पूजन करे।

प्रार्थना—तदनन्तर हाथ जोड़कर निम्नलिखित मन्त्र पढ़कर प्रार्थना करे—

ॐ यदङ्गत्वेन भो देव्यः पूजिता विधिमार्गतः।
कुर्वन्तु कार्यमखिलं निर्विघ्नेन क्रतूद्भवम्॥

'**अनया पूजया वसोर्धारादेवताः प्रीयन्ताम् न मम।**' ऐसा उच्चारणकर मण्डलपर अक्षत छोड़ दे।

॥ विवाहपूर्वांगपूजन पूर्ण हुआ॥

****

बारातप्रस्थान

अश्वारोहण—

अश्वारोहणके पहले वर और सहबाला (विनायक-विन्दायक) दोनों मण्डपमें पूर्वाभिमुख बैठें। वरके उपवस्त्र (दुपट्टेके कोने)-में नारियल, द्रव्य, पीला चावल बँधा रहे और मौर (सेहरा) उपवस्त्र इत्यादि मान्यके द्वारा बाँधा जाय।

अश्वारोहणके पूर्व अपने घरमें स्वजनोंकी उपस्थितिमें वर तथा उसके बगलमें सहबाला सुन्दर वस्त्राभूषणोंसे सुसज्जित होकर बैठते हैं। कुलपरम्परानुसार परिवारके जामाताद्वारा वरको कलंगीजामा—पगड़ी धारण करायी जाती है। पुरोहित गणेशाम्बिका आदिका पूजन करते हैं। तदनन्तर कन्यापक्षके लोग वरपक्षके वरिष्ठजनोंको द्रव्यसम्मान (मिलनी) प्रदान करके उन्हें विवाहहेतु आनेका आमन्त्रण प्रदान करते हैं।

उपर्युक्त क्रम अपने लोकाचारके अनुसार सम्पन्न कर लेना चाहिये। तत्पश्चात् महिलाएँ लोकाचारके अनुसार वरको अश्वारोहणके लिये नीराजन आदि करके तैयार करती हैं। तदनन्तर वर मंगलवाद्योंके निनादके साथ अश्वपर सवार होकर कन्यापिताके घरकी ओर यात्रा करे। साथमें वरपक्षके कुटुम्बी, मित्र आदि सम्भ्रान्त जन बारातके रूपमें जाते हैं।

द्वारपूजा *—

बारात द्वारपर आ जाने एवं स्वागतके अनन्तर वरकी द्वारपूजा सम्पन्न की जाती है। कन्याके अभिभावक पश्चिमाभिमुख और वर पूर्वाभिमुख बैठकर आचमन-प्राणायाम करके '**अपवित्रः०**' इस मन्त्रसे अपने-अपने

* द्वारपूजा (वरपूजन एवं कन्यावरण)-की परम्परा उत्तर भारतमें एवं कुछ अन्य प्रदेशोंमें प्रायः प्रचलित है। राजस्थानमें लोकाचारके अनुसार द्वारपूजाकी परम्परा इस रूपमें नहीं है। अश्वारोहणके पूर्व आमन्त्रणके लिये आये हुए कन्यापक्षके वरिष्ठजनोंद्वारा किये गये उपचारोंमें द्वारपूजाका समावेश हो जाता है। प्रायः सुवासिनी महिलाएँ विशेषकर कन्याकी माता बारात आनेपर द्वारपर नीराजन आदिके द्वारा वरका सम्मान करती है, इसके अनन्तर वरमालाका कार्यक्रम सम्पन्न होता है।

ऊपर तथा पूजनसामग्रीपर जलसे प्रोक्षण करें। हाथमें अक्षत-पुष्प लेकर '**आ नो भद्रा०**' इत्यादि मंगलमन्त्रोंका पाठ करें या श्रवण करें। तत्पश्चात् कन्यादान करनेवाला और वर दोनों जलाक्षत-द्रव्य लेकर देश, कालका संकीर्तन करके गणेशपूजन और कलशस्थापन-पूजनका संकल्प करें तथा यथोपलब्ध उपचारोंसे गणेशाम्बिका और कलश-नवग्रह आदिका पूजन करें। तत्पश्चात् कन्यादाता वरका पूजन करे।

वरका पूजन

पादप्रक्षालन—

कन्याके भाई अथवा पिता निम्न मन्त्रसे वरका पादप्रक्षालन करें—

ॐ विराजो दोहोऽसि विराजो दोहमशीय मयि पाद्यायै विराजो दोहः॥

तिलक—

निम्न वैदिक मन्त्रसे अथवा मंगलश्लोकसे वरको तिलक करे—

ॐ युञ्जन्ति ब्रध्नमरुषं चरन्तं परि तस्थुषः। रोचन्ते रोचना दिवि॥

युञ्जन्त्यस्य काम्या हरी विपक्षसा रथे। शोणा धृष्णू नृवाहसा॥

कस्तूरीतिलकं ललाटपटले वक्षःस्थले कौस्तुभं
नासाग्रे वरमौक्तिकं करतलं वेणुः करे कङ्कणम्।
सर्वाङ्गे हरिचन्दनं सुललितं कण्ठे च मुक्तावली
गोपस्त्रीपरिवेष्टितो विजयते गोपालचूडामणिः॥

अक्षत—

निम्न मन्त्रसे वरको अक्षत लगाये—

ॐ अक्षन्नमीमदन्त ह्यव प्रिया अधूषत। अस्तोषत स्वभानवो विप्रा नविष्ठया मती योजा न्विन्द्र ते हरी॥

माल्यार्पण—

निम्न मन्त्रसे वरको माला पहनाये—

ॐ याऽऽआहरज्जमदग्निः श्रद्धायै मेधायै कामायेन्द्रियाय। ताऽअहं प्रतिगृह्णामि यशसा च भगेन च॥

ॐ यद्यशोऽप्सरसामिन्द्रश्चकार विपुलं पृथु।
तेन सङ्ग्रथिताः सुमनस आबध्नामि यशो मयि॥

तदनन्तर दाता वरको प्रदान करनेके लिये कपड़े, अंगुलीयक (अँगूठी), आभूषण, द्रव्य-नारियल और जलाक्षत हाथमें लेकर निम्न संकल्प करे—

ॐ अद्य कृतैतद् वरपूजनकर्मणः साङ्गतासिद्ध्यर्थं तत्सम्पूर्णफलप्राप्त्यर्थं बार्हस्पत्यानि दक्षिणासहितानि इमानि वासांसि अग्निदैवतञ्च इदं सुवर्णाङ्गुलीयकम् ....गोत्राय ....शर्मणे वराय तुभ्यं सम्प्रददे।

दक्षिणासङ्कल्प—

इसके उपरान्त कन्यादाता और वर भूयसी दक्षिणाका संकल्प करें—

ॐ अद्य कृतैतद् वरपूजनकर्मणः साङ्गतासिद्ध्यर्थं तन्मध्ये न्यूनातिरिक्तदोषपरिहारार्थं नानानामगोत्रेभ्यो ब्राह्मणेभ्यो भूयसीं दक्षिणां विभज्य दातुमहमुत्सृज्ये।

विष्णुस्मरण—

इसके बाद निम्न मन्त्रको पढ़ते हुए विष्णुका स्मरण करे—

प्रमादात् कुर्वतां कर्म प्रच्यवेताध्वरेषु यत्।
स्मरणादेव तद्विष्णोः सम्पूर्णं स्यादिति श्रुतिः॥
यस्य स्मृत्या च नामोक्त्या तपोयज्ञक्रियादिषु।
न्यूनं सम्पूर्णतां याति सद्यो वन्दे तमच्युतम्॥

ॐ विष्णवे नमः। ॐ विष्णवे नमः। ॐ विष्णवे नमः।

ॐ साम्बसदाशिवाय नमः। ॐ साम्बसदाशिवाय नमः।

ॐ साम्बसदाशिवाय नमः।

****

कन्यावरण (लोकाचार)

इसके बाद कन्याको मण्डपमें लाकर पूर्वाभिमुख बैठाये और वरके ज्येष्ठ भ्राता पश्चिमाभिमुख बैठकर आचमन–प्राणायाम आदि करके गणेशादि आवाहित देवोंकी पूजा करें।

कन्या भी गणेश, ॐकार, लक्ष्मी तथा कुबेरका निम्न नाममन्त्रोंसे पूजन करे। सर्वप्रथम गणेशका स्मरण करे—

विघ्नेश्वराय वरदाय सुरप्रियाय लम्बोदराय सकलाय जगद्धिताय। नागाननाय श्रुतियज्ञविभूषिताय गौरीसुताय गणनाथ नमो नमस्ते॥

गणेशाय नमः, गणेशमावाहयामि, स्थापयामि, पूजयामि, सर्वार्थे गन्धाक्षतपुष्पाणि समर्पयामि।

ॐकाराय नमः, ॐकारमावाहयामि, स्थापयामि, पूजयामि, सर्वार्थे गन्धाक्षतपुष्पाणि समर्पयामि।

लक्ष्म्यै नमः, लक्ष्मीमावाहयामि, स्थापयामि, पूजयामि, सर्वार्थे गन्धाक्षतपुष्पाणि समर्पयामि।

कुबेराय नमः, कुबेरमावाहयामि, स्थापयामि, पूजयामि, सर्वार्थे गन्धाक्षतपुष्पाणि समर्पयामि।

कन्यानिरीक्षण—

वरका ज्येष्ठ भ्राता कन्यापर जल छोड़े, कुंकुम–अक्षत लगाये, पुष्प छोड़े। इसके बाद कन्याकी अंजलिमें पाँच अंजलि चावल, फल आदि दे।

तागपाट परिधान—

वरका ज्येष्ठ भ्राता कन्याको तागपाट (पट्टसूत्र) गणेश और कलशको स्पर्श कराकर प्रदान करे।

देशाचारके अनुसार कन्याके हाथमें वस्त्र, आभूषण आदि प्रदान किया जाता है।

कन्याको आशीर्वाद प्रदान—

इसके बाद निम्न मन्त्रसे वरका ज्येष्ठ भ्राता कन्याको आशीर्वाद प्रदान करे—

ॐ दीर्घायुस्त ओषधे खनिता यस्मै च त्त्वा खनाम्यहम्। अथो त्त्वं दीर्घायुर्भूत्वा शतवल्शा विरोहतात्॥

कन्याके ऊपर अक्षत-पुष्प छोड़े।

इसके बाद वरका ज्येष्ठ भ्राता भूयसी दक्षिणा देनेके लिये हाथमें अक्षत, पुष्प, जल लेकर निम्न संकल्प करे—

ॐ अद्य....गोत्रः....शर्मा/वर्मा/गुप्तोऽहं....गोत्रस्य....शर्मणः ममानुजस्य विवाहाङ्गभूते कन्यानिरीक्षणे तत्पूजने न्यूनातिरिक्तदोषपरिहारार्थं नानानामगोत्रेभ्यो ब्राह्मणेभ्यो भूयसीं दक्षिणां विभज्य दातुमुत्सृज्ये।

इसके बाद कन्याको गुप्तागारमें भेज दे।

रक्षाविधान

कन्यादाता और वर अपने बायें हाथमें पीली सरसों, चावल, द्रव्य और तीन तारकी मौली लेकर दाहिने हाथसे ढँककर नीचे लिखे मन्त्र बोले—

ॐ गणाधिपं नमस्कृत्य नमस्कृत्य पितामहम्।
विष्णुं रुद्रं श्रियं देवीं वन्दे भक्त्या सरस्वतीम्॥
स्थानाधिपं नमस्कृत्य ग्रहनाथं निशाकरम्।
धरणीगर्भसम्भूतं शशिपुत्रं बृहस्पतिम्॥
दैत्याचार्यं नमस्कृत्य सूर्यपुत्रं महाग्रहम्।
राहुं केतुं नमस्कृत्य यज्ञारम्भे विशेषतः॥
शक्राद्या देवताः सर्वा मुनींश्चैव तपोधनान्।
गर्गं मुनिं नमस्कृत्य नारदं मुनिसत्तमम्॥
वसिष्ठं मुनिशार्दूलं विश्वामित्रं च गोभिलम्।
व्यासं मुनिं नमस्कृत्य सर्वशास्त्रविशारदम्॥

विद्याधिका ये मुनय आचार्याश्च तपोधनाः।
तान् सर्वान् प्रणमाम्येवं यज्ञरक्षाकरान् सदा॥

तदनन्तर नीचे लिखे मन्त्र बोलते हुए दाहिने हाथसे सरसों तथा चावल सब दिशाओंमें छोड़े—

प्राच्यां रक्षतु गोविन्द आग्नेय्यां गरुडध्वजः।
याम्यां रक्षतु वाराहो नारसिंहस्तु नैर्ऋते॥
वारुण्यां केशवो रक्षेद्वायव्यां मधुसूदनः।
उत्तरे श्रीधरो रक्षेदैशान्यां तु गदाधरः॥
ऊर्ध्वं गोवर्धनो रक्षेदधस्ताच्च त्रिविक्रमः।
एवं दिक्षु च मां रक्षेद्वासुदेवो जनार्दनः॥
शङ्खो रक्षेच्च यज्ञाग्रे पृष्ठे खड्गस्तथैव च।
वामपार्श्वे गदा रक्षेद्दक्षिणे तु सुदर्शनः॥
उपेन्द्रः पातु ब्रह्माणमाचार्यं पातु वामनः।
अच्युतः पातु ऋग्वेदं यजुर्वेदमधोक्षजः॥
कृष्णो रक्षतु सामानि ह्यथर्वं माधवस्तथा।
उपविष्टाश्च ये विप्रास्तेऽनिरुद्धेन रक्षिताः॥
यजमानं सपत्नीकं कमलाक्षश्च रक्षतु।
रक्षाहीनं तु यत्स्थानं तत्सर्वं रक्षताद्धरिः॥
यदत्र संस्थितं भूतं स्थानमाश्रित्य सर्वदा।
स्थानं त्यक्त्वा तु तत्सर्वं यत्रस्थं तत्र गच्छतु॥
अपक्रामन्तु भूतानि पिशाचाः सर्वतो दिशम्।
सर्वेषामविरोधेन ब्रह्म (विवाह)-कर्म समारभे॥

गणपत्यादि समस्त देवताओंको मौली चढ़ाकर ब्राह्मणोंके दाहिने हाथमें निम्न मन्त्रसे रक्षाबन्धन करे—

ॐ व्रतेन दीक्षामाप्नोति दीक्षयाऽप्नोति दक्षिणाम्।
दक्षिणा श्रद्धामाप्नोति श्रद्धया सत्यमाप्यते॥

इसके बाद यजमान और वर कुंकुमसे ब्राह्मणोंको तिलक करें—

ॐ युञ्जन्ति ब्रध्नमरुषं चरन्तं परि तस्थुषः। रोचन्ते रोचना दिवि। युञ्जन्त्यस्य काम्या हरी विपक्षसा रथे। शोणा धृष्णू नृवाहसा॥

तदनन्तर निम्न मन्त्रोंसे ब्राह्मणलोग कन्यादाता और वरके दाहिने हाथमें रक्षासूत्र बाँधे—

ॐ यदाबध्नन् दाक्षायणा हिरण्यꣳ शतानीकाय सुमनस्यमानाः। तन्म आ बध्नामि शतशारदायायुष्माञ्जरदष्टि-र्यथासम्॥

ॐ त्वं यविष्ठ दाशुषो नॄँः पाहि शृणुधी गिरः। रक्षा तोकमुत त्मना॥

येन बद्धो बली राजा दानवेन्द्रो महाबलः।
तेन त्वामनुबध्नामि रक्षे मा चल मा चल।
ब्रह्मा विष्णुश्च रुद्रश्च रक्षां कुर्वन्तु ते सदा॥

निम्न मन्त्रसे मस्तकमें कुंकुमसे तिलक करे—

ॐ स्वस्ति न इन्द्रो वृद्धश्रवाः स्वस्ति नः पूषा विश्ववेदाः।
स्वस्ति नस्तार्क्ष्यो अरिष्टनेमिः स्वस्ति नो बृहस्पतिर्दधातु॥

दक्षिणादान—

इसके बाद रक्षाबन्धनकर्मकी सफलताके लिये ब्राह्मणोंको दक्षिणादानका निम्न संकल्प करें—

ॐ अद्य कृतैतद्रक्षाविधानकर्मणः साद्गुण्यार्थं ब्राह्मणेभ्यो मनसोद्दिष्टां दक्षिणां दातुमुत्सृज्ये।

संकल्पजल छोड़ दे और ब्राह्मणोंको दक्षिणा प्रदान करे।

॥ रक्षाविधान पूर्ण हुआ॥

* * * * * * * *

विवाहविधान

वर हाथमें चतुर्मुख दीपक लेकर विवाह-मण्डपमें आये और कन्यादाता दीपक लेकर मण्डपमें रख दे।

वरको तिलककरण—

इसके बाद कन्यादाता वरके ललाटपर दधिसहित रोलीसे तिलक करे।

उपानहत्याग—

विवाहमण्डपमें उपस्थित कन्यादाता हाथमें अक्षत लेकर निम्न मन्त्रोंको पढ़ते हुए वरके जूतेपर छोड़े—

ॐ अथ वरमाह उपानहौ उपमुञ्चतु अग्नौ हविर्देयो घृतकुम्भप्रवेशः। तत्र स्थितो वरहोम्यः दूरेधताद्विसम्भ्रमः तस्माद् वरमाह उपानहौ उपमुञ्चते॥ १॥

ॐ अथ वाराह्याऽ उपानहौ उपमुञ्चते अग्नौ हविर्देया घृतकुम्भ-प्रवेशयाञ्चक्रुस्ततो वराहः सम्बभूव तस्माद्वराहो गावः सञ्जानते ह्ययमेद्यैतदंशमभिसञ्जाते स्वमे वैस्तत्पशूनामेहोतत्प्रतिष्ठन्ति तस्माद् वाराह्य उपानहौ उपमुञ्चते॥ २॥

इसके बाद वरका जूता निकलवाये।

वरके प्रति निवेदन—

आसनके पश्चिम तरफ खड़े हुए वरके प्रति दाता (कन्यापिता) कहे—

ॐ षडर्घ्या भवन्त्याचार्य ऋत्विग् वैवाह्यो राजा प्रियः स्नातक इति प्रतिसंवत्सरानर्हयेयुर्यक्ष्यमाणास्त्वृत्विज आसनमाहार्याह।

पुनः दाता वरसे कहे—

ॐ साधु भवानास्तामर्चयिष्यामो भवन्तम्।

वर कहे—**अर्चय।**

इसके बाद दाता वरका हाथ पकड़कर आदरसे आसन (पीढ़े)-पर बैठाये। स्वयं भी बैठकर आचमन, प्राणायामकर हाथमें जल-अक्षत लेकर संकल्प करे—

ॐ विष्णुर्विष्णुर्विष्णुः श्रीमद्भगवतो महापुरुषस्य विष्णोराज्ञया प्रवर्तमानस्य ब्रह्मणो द्वितीयपरार्धे श्रीश्वेतवाराहकल्पे वैवस्वतमन्वन्तरे अष्टाविंशतितमे कलियुगे कलिप्रथमचरणे जम्बूद्वीपे भरतखण्डे भारतवर्षे आर्यावर्तैकदेशे.....नगरे/ग्रामे/क्षेत्रे (यदि काशी हो तो **अविमुक्तवाराणसीक्षेत्रे आनन्दवने गौरीमुखे त्रिकण्टक-विराजिते).....वैक्रमाब्दे.....संवत्सरे.....मासे.....पक्षे.....तिथौ.....वासरे.....गोत्रः .....शर्मा/वर्मा/गुप्तोऽहं.....गोत्रायाः..... नाम्न्याः कन्यायाः भर्त्रा सह धर्मप्रजोत्पादनगृह्यपरिग्रहधर्माचरणेष्वधिकारसिद्धिद्वारा श्रीपर-मेश्वरप्रीत्यर्थं ब्राह्मविवाहविधिना विवाहाख्यं संस्कारं करिष्ये। तत्र कन्यादानप्रतिग्रहार्थं गृहागतं स्नातकवरं मधुपर्केणार्चयिष्ये।**

विष्टरप्रदान—

कन्यादातासे भिन्न कोई अन्य व्यक्ति तीन बार इस प्रकार कहे—

ॐ विष्टरो विष्टरो विष्टरः *।

तब कन्यादाता कहे—**ॐ विष्टरः प्रतिगृह्यताम्।**

वर कहे—**ॐ विष्टरः प्रतिगृह्णामि।**

यह कहकर वर दाताके हाथोंसे उत्तराग्र विष्टरको ग्रहणकर निम्न मन्त्र पढ़े—

ॐ वर्ष्मोऽस्मि समानानामुद्यतामिव सूर्यः। इमन्तमभितिष्ठामि यो मा कश्चाभिदासति॥

---

* गृह्यपरिशिष्टमें विष्टरका लक्षण कहा गया है—

पञ्चाशता भवेद् ब्रह्मा तदर्धेन तु विष्टरः। ऊर्ध्वकेशो भवेद् ब्रह्मा लम्बकेशस्तु विष्टरः॥ दक्षिणावर्तको ब्रह्मा वामावर्तस्तु विष्टरः॥

अथवा

पञ्चविंशतिदर्भाणां वेण्यग्रे ग्रन्थिभूषिता। विष्टरे सर्वयज्ञेषु लक्षणं परिकीर्तितम्॥

इस मन्त्रसे उत्तरकी तरफ अग्रभाग रखते हुए विष्टरको आसनके ऊपर रखकर वर बैठे।

पाद्यप्रदान—

कन्यादाता एक पात्रमें जल लेकर उसमें लावा, कुंकुम (रोली), चावल, पुष्प, सर्वोषधि डालकर हाथमें ले। इसके बाद कोई अन्य व्यक्ति तीन बार पाद्यका उच्चारण करे—

ॐ पाद्यं पाद्यं पाद्यम्।

पुनः दाता कहे—**ॐ पाद्यं प्रतिगृह्यताम्।**

वर कहे—**ॐ पाद्यं प्रतिगृह्णामि।**

वर यह कहकर दाताके हाथसे पात्रसहित जल लेकर अपनी अंजलीमें लेकर निम्नलिखित मन्त्र पढ़े—

ॐ विराजो दोहोऽसि विराजो दोहमशीय मयि पाद्यायै विराजो दोहः।

यह मन्त्र पढ़ते हुए वर यदि ब्राह्मण हो तो दाहिना पैर पहले धोये, पुनः यही मन्त्र पढ़ता हुआ बायाँ पैर धोये। क्षत्रिय आदि पहले बायाँ तदनन्तर दाहिना पैर धोये।

दाताद्वारा पादप्रक्षालन—

इसके बाद दाता वरका पादप्रक्षालन निम्न मन्त्र बोलते हुए करे। दाता दाहिने हाथसे दाहिना पैर और बायें हाथसे बायाँ पैर धोये।

ॐ विराजो दोहोऽसि विराजो दोहमशीय मयि पाद्यायै विराजो दोहः।

पादप्रक्षालनके बाद हाथ धो ले।

तिलककरण—

इसके बाद दाता वरके माथेमें रोलीसे निम्न मन्त्रसे तिलक करे—

ॐ युञ्जन्ति ब्रध्नमरुषं चरन्तं परि तस्थुषः। रोचन्ते रोचना दिवि॥ युञ्जन्त्यस्य काम्या हरी विपक्षसा रथे। शोणा धृष्णू नृवाहसा॥

अक्षतधारण—

दाता निम्न मन्त्रसे वरके माथेमें अक्षत लगाये—

ॐ अक्षन्नमीमदन्त ह्यव प्रिया अधूषत। अस्तोषत स्वभानवो विप्रा नविष्ठया मती योजा न्विन्द्र ते हरी।

पुष्पमालाधारण—

निम्न मन्त्रसे वरके गलेमें पुष्पमाला पहनाये—

ॐ याऽ आहरज्जमदग्निः श्रद्धायै मेधायै कामायेन्द्रियाय। ताऽअहं प्रतिगृह्णामि यशसा च भगेन च।

ॐ यद्यशोऽप्सरसामिन्द्रश्चकार विपुलं पृथु। तेन सङ्ग्रथिताः सुमनस ऽआबध्नामि यशो मयि॥

पुनः विष्टरदान *—

पूर्वकी भाँति दातासे भिन्न कोई व्यक्ति तीन बार कहे—

ॐ विष्टरो विष्टरो विष्टरः।

पुनः दाता कहे—**ॐ विष्टरः प्रतिगृह्यताम्।**

वर कहे—**ॐ विष्टरं प्रतिगृह्णामि।**

यह कहकर वर दाताके हाथसे उत्तराग्र विष्टरको ग्रहणकर निम्न मन्त्र पढ़े—

ॐ वर्ष्मोऽस्मि समानानामुद्यतामिव सूर्यः। इमन्तमभितिष्ठामि यो मा कश्चाभिदासति॥

---

* पारस्करः—'पादयोरन्यं विष्टर आसीनाय।' विष्टरं ददातीति शेषः। पादयोरित्युत्तरमधस्तादित्यध्याहृत्य योजनीयम्। विष्टरे पूर्वप्रदत्ते आसीनायोपविष्टायार्हणीयाय पादयोश्चरणयोरधस्तादन्यं विष्टरं यजमानः पूर्ववद् ददातीत्यर्थः। स च तं पूर्ववत्प्रतिगृह्य 'वर्ष्मोऽस्मि' इत्यनेन पादयोरधस्तान्निदध्यात्। अत्र हि पूर्वोक्तविष्टरग्रहणेतिकर्त्तव्यता सर्वाप्युनुषज्यते, अविशेषात्। एष पुनरत्र विशेषो यत्पूर्वार्पितविष्टरस्यासने धारणम्, एतस्य तु पादयोरधस्तात्करणमिति तदेतज्ज्ञापनार्थं पादयोरित्यभिधानम्। (संस्कारदीपक)

इस मन्त्रसे उत्तरकी ओर अग्रभाग रखते हुए विष्टरको दोनों पैरोंके नीचे रखे।

अर्घ्य-प्रदान—

इसके बाद दूब, अक्षत, पुष्प, चन्दनमिश्रित जलको अर्घ्यपात्रमें लेकर दातासे भिन्न कोई व्यक्ति निम्नलिखित मन्त्र पढ़े—

ॐ अर्घोऽर्घोऽर्घः।

दाता कहे—**ॐ अर्घः प्रतिगृह्यताम्।**

वर कहे—**ॐ अर्घं प्रतिगृह्णामि।**

यह कहकर दाताके हाथसे अर्घ ग्रहणकर अर्घपात्रको प्रणामकर नीचे लिखा मन्त्र पढ़े—

ॐ आपः स्थ युष्माभिः सर्वान् कामानवाप्नवानि।

पुनः अर्घको सिरमें लगाये और निम्न मन्त्र पढ़ता हुआ अर्घके जलको ईशानकोणमें छोड़ दे—

ॐ समुद्रं वः प्रहिणोमि स्वां योनिमभिगच्छत। अरिष्टास्माकं वीरा मा परासेचि मत्पयः॥

आचमनीय जलप्रदान—

कन्यादातासे भिन्न कोई व्यक्ति आचमनके लिये कमण्डलु आदि पात्रमें शुद्ध जल ग्रहणकर निम्नलिखित वाक्य उच्चारण करे—

ॐ आचमनीयमाचमनीयमाचनीयम्।

दाता कहे—**ॐ आचमनीयं प्रतिगृह्यताम्।**

वर कहे—**ॐ आचमनीयं प्रतिगृह्णामि॥**

दाताके हाथसे आचमनीय जल लेकर वर निम्न मन्त्र बोले—

ॐ आमागन्यशसा सꣳसृज वर्चसा। तं मा कुरु प्रियं प्रजानामधिपतिं पशूनामरिष्टिं तनूनाम्॥

इस मन्त्रसे एक बार आचमन करे। पुनः दो बार बिना मन्त्र-

पाठके आचमन करे और हाथ धो ले।

मधुपर्कप्रदानविधि*—

इसके बाद कन्यादाता कांस्यके पात्रमें दही, शहद और घृत ग्रहणकर उसे दूसरे कांस्यके पात्रसे ढककर दोनों हाथोंमें ले, दातासे कोई अन्य व्यक्ति निम्न वाक्य बोले—

ॐ मधुपर्को मधुपर्को मधुपर्कः।

दाता बोले—**ॐ मधुपर्कः प्रतिगृह्यताम्।**

वर कहे—**ॐ मधुपर्कं प्रतिगृह्णामि।**

वर दाताके हाथमें रखे हुए कांस्यपात्रके ढक्कनको हटाकर देखे और निम्न मन्त्र पढ़े—

ॐ मित्रस्य त्वा चक्षुषा प्रतीक्षे।

इसके बाद निम्न मन्त्र पढ़कर मधुपर्कको वर दाहिने हाथमें ग्रहण करे—

ॐ देवस्य त्वा सवितुः प्रसवेऽश्विनोर्बाहुभ्यां पूष्णो हस्ताभ्यां मधुपर्कं प्रतिगृह्णामि।

वर मधुपर्कको ग्रहणकर बायें हाथमें लेकर दाहिने हाथकी अनामिका (जिसके मूलमें अँगूठा लगा रहे)-से निम्नलिखित मन्त्र पढ़ते हुए आलोडन करे—

ॐ नमः श्यावास्यायान्नशने यत्तऽ आविद्धं तत्ते निष्कृन्तामि।

उपर्युक्त मन्त्रसे अनामिका अंगुलीके मूलमें अँगूठा लगाकर उसी

---

* संशोधितं दधि मधु कांस्यपात्रे स्थितं घृतम्। कांस्येनान्येन संछन्नं मधुपर्कमितीर्यते॥

मधुपर्कमें दधि आदिका प्रमाण—

(क) सर्पिश्च पलमेकं तु द्विपलं मधु कीर्तितम्।
पलमेकं दधि प्रोक्तं मधुपर्कविधौ बुधैः॥

(ख) आज्यमेकपलं ग्राह्यं दधि त्रिपलमेव च।
मधु त्वेकपलं ग्राह्यं मधुपर्कः स उच्यते॥

अनामिकासे तीन बार प्रदक्षिण क्रमसे मधुपर्कको घुमाकर अनामिका और अँगूठेसे मधुपर्कमेंसे थोड़ा-सा भूमिपर छोड़े, फिर घुमाकर भूमिपर छोड़नेका क्रम तीन बार करे। इसके बाद वर निम्न मन्त्र बोलकर तीन बार मधुपर्कका प्राशन (भक्षण) करे—

ॐ यन्मधुनो मधव्यं परमꣳ रूपमन्नाद्यम् तेनाहं मधुनो मधव्येन परमेण रूपेणान्नाद्येन परमो मधव्योऽन्नादोऽसानि॥

शेष मधुपर्कको पूर्व दिशामें असंचर देश (जहाँ कोई आता-जाता न हो)-में रखवा दे।

इसके बाद तीन बार आचमन करे और हाथ धो ले।

अंगोंका स्पर्श—

निम्न मन्त्र बोलते हुए वर अपने अंगोंका स्पर्श करे—

ॐ वाङ्मऽआस्येऽस्तु—तर्जनी, मध्यमा तथा अनामिकाके अग्रभागसे मुखका स्पर्श करे।

ॐ नसोर्मे प्राणोऽस्तु—तर्जनी और अँगूठेसे नाकका स्पर्श करे।

ॐ अक्ष्णोर्मे चक्षुरस्तु—अनामिका और अँगूठेसे नेत्रोंका स्पर्श करे।

ॐ कर्णयोर्मे श्रोत्रमस्तु—मध्यमा तथा अँगूठेसे कानोंका स्पर्श करे।

ॐ बाह्वोर्मे बलमस्तु—दाहिने हाथकी अंगुलियोंके अग्रभागसे दोनों बाहुओंका स्पर्श करे।

ॐ ऊर्वोर्मे ओजोऽस्तु—दोनों हाथोंसे दोनों जंघाओंका स्पर्श करे।

ॐ अरिष्टानि मेऽङ्गानि तनूस्तन्वा मे सह सन्तु—दोनों हाथोंसे सिरसे लेकर पैरतक सभी अंगोंका स्पर्श करे। तदनन्तर

आचमन करे।

गौस्तुति—

कन्यादाता वरके साथ एक कुशा या दूर्वा पकड़े। दातासे अन्य कोई व्यक्ति तीन बार उच्चारण करे—**ॐ गौर्गौर्गौः।**

वर निम्न मन्त्र पढ़े—

ॐ माता रुद्राणां दुहिता वसूनाᳬ स्वसादित्यानाममृतस्य नाभिः। प्र नु वोचं चिकितुषे जनाय मा गामनागामदितिं वधिष्ट॥ मम चाऽमुकशर्मणो यजमानस्योभयोः पाप्मा हतः॥

‘**ॐ उत्सृजत तृणान्यत्तु**’ यह ऊँचे स्वरसे कहकर दाताके हाथसे कुशा लेकर ईशानकोणमें छोड़ दे।

आचार—

गोदानका संकल्प करनेका आचार है—

ॐ अद्य मधुपर्कोपयोगिनो गोरुत्सर्गकर्मणः साद्‌गुण्यार्थे गोनिष्क्रयीभूतमिदं (गोतृप्त्यर्थं तृणनिष्क्रयद्रव्यं) द्रव्यं ....गोत्राय ....शर्मणे ब्राह्मणाय दातुमुत्सृज्ये।

ॐ स्वस्ति—ब्राह्मण कहे।

अग्निस्थापन

इसके बाद वर हाथमें जल-अक्षत लेकर अग्निस्थापनके लिये निम्न संकल्प करे—

ॐ अद्य ....गोत्रोत्पन्नः ....शर्मा/वर्मा/गुप्तोऽहं धर्मार्थकाम-सिद्धिद्वारा श्रीपरमेश्वरप्रीतये ब्राह्मविवाहविधिना अस्मिन् विवाह-कर्मणि पञ्चभूसंस्कारपूर्वकं योजकनामाग्निस्थापनं करिष्ये। संकल्पजल छोड़ दे।

पंचभूसंस्कार—

एक हाथकी चतुरस्त्र (चौकोर) वेदी बनाकर कुशाओंसे वेदीका

परिसमूहन (परिमार्जन) करे और उन कुशाओंको ईशानकोणमें छोड़ दे। गायके गोबर तथा जलसे वेदीको लीपे। स्रुवाके मूलसे दक्षिणसे उत्तर तरफ तीन रेखा करे। उसी क्रमसे अनामिका-अंगुष्ठ मिलाकर रेखाओंपरसे मिट्टी उठाये और ईशानमें त्याग दे। पुनः वेदीपर जल छिड़के।

कॉंसेकी थालीमें रखी हुई और दूसरी कॉंसेकी थालीसे ढँकी हुई सुहागिन स्त्रीद्वारा लायी गयी अग्निको वर अपने सामने रखे और उस अग्निसे थोड़ा क्रव्याद अंश निकालकर नैर्ऋत्यकोणमें रख दे।

पुनः निम्न मन्त्र पढ़ते हुए योजक नामक उस अग्निका वेदीपर स्थापन करे—

ॐ अग्निं दूतं पुरो दधे हव्यवाहमुप ब्रुवे। देवाँ२ आ सादयादिह।

इसके बाद अग्निकी रक्षाके लिये कुछ समिधा छोड़ दे। जिस पात्रमें अग्नि लायी गयी है, उसमें जल, अक्षत और द्रव्य छोड़ दे।

संकल्प—

इसके बाद वर दारपाणिग्रहणका संकल्प करे—

ॐ अद्य ....गोत्रः ....शर्मा/वर्मा/गुप्तोऽहं अस्मिन् पुण्याहे धर्मार्थकामप्रजासन्तत्यर्थं दारपरिग्रहणं करिष्ये। हाथका संकल्पजल छोड़ दे।

कन्याका आनयन—

महिलाएँ कौतुकागार (कोहबर)-से हाथमें मंगलद्रव्य ली हुई कन्याको मण्डपमें लायें और आसनपर पूर्वाभिमुख बैठायें।

वस्त्रचतुष्टयप्रदान—

कन्यादाता वरको शुद्ध चार वस्त्र निम्न संकल्पपूर्वक प्रदान करे—

ॐ अद्य ....गोत्रोत्पन्नोऽहं मम सकलकामनासिद्धये कन्यादानकर्मणः पूर्वाङ्गत्वेन एतद् वस्त्रचतुष्टयं....गोत्राय....शर्मणे/

वर्मणे/गुप्ताय वराय भवते सम्प्रददे।

यह कहकर वरके हाथमें चारों अहत[1] वस्त्र[2] दे दे।

वर कहे—**स्वस्ति।**

इसके बाद वर उसमें दो वस्त्र कन्याको दे और दो स्वयंके लिये रखे।

कन्यापूजन—

कन्यादाता कन्याका गन्धाक्षतसे पूजन करे तथा तिलक लगाये। तदनन्तर कन्या वरद्वारा प्राप्त दो वस्त्रोंको आचारानुसार निम्न मन्त्रसे धारण करे—

ॐ जरां गच्छ परिधित्स्व वासो भवाऽकृष्टीनामभिशस्तिपावा। शतं च जीव शरदः सुवर्चा रयिं च पुत्राननु संव्ययस्वाऽऽयुष्मतीदं परिधत्स्व वासः॥

निम्न मन्त्रसे कन्या उत्तरीय वस्त्र धारण करे—

ॐ या अकृन्तन्नवयं या अतन्वत। याश्च देवीस्तन्तूनभितो ततन्थ। तास्त्वा देवीर्जरसे संव्ययस्वाऽऽयुष्मतीदं परिधत्स्व वासः॥

वरका वस्त्रधारण—

वर निम्न मन्त्रसे आचारानुसार स्वयं वस्त्र धारण करे और आचमन करे—

ॐ परिधास्यै यशोधास्यै दीर्घायुत्वाय जरदष्टिरस्मि।
शतं च जीवामि शरदः पुरूची रायस्पोषमभिसंव्ययिष्ये।

यज्ञोपवीतधारण—

इसके बाद आचारानुसार निम्न मन्त्रसे वर यज्ञोपवीत धारण करे और आचमन करे—

---

१. (क) सदशं नूतनं वस्त्रं मञ्जिष्ठादिसु रञ्जितम्। अहतं तद्विजानीयादित्युक्तं पूर्वसूरिभिः॥
(ख) ईषद्धौतं नवं श्वेतं सदशं यन्न धारितम्। अहतं तद्विजानीयात् सर्वकर्मसु पावनम्॥
सदशं 'किनारीदार' इति भाषायाम्।

२. आच्छाद्य रक्तवासोभ्यां कन्यां शुक्लवासोभ्यां वरम्। (स्मृतितत्त्व)

ॐ यज्ञोपवीतं परमं पवित्रं प्रजापतेर्यत्सहजं पुरस्तात्। आयुष्यमग्र्यं प्रतिमुञ्च शुभ्रं यज्ञोपवीतं बलमस्तु तेजः॥

निम्न मन्त्रसे वर उत्तरीय वस्त्र धारण करे—

ॐ यशसा मा द्यावापृथिवी यशसेन्द्राबृहस्पती। यशो भगश्च माऽविदद्यशो मा प्रतिपद्यताम्॥

इसके बाद वर और कन्या दोनों दो बार आचमन* करें।

सम्मुखीकरण—

इसके बाद कन्यादाता वर और कन्याको परस्पर सम्मुख करे। अर्थात् परस्पर एक-दूसरेका निरीक्षण करें। उस समय वर कन्याको देखता हुआ निम्न मन्त्रका पाठ करे—

ॐ समञ्जन्तु विश्वेदेवाः समापो हृदयानि नौ। सं मातरिश्वा सं धाता समुदेष्ट्री दधातु नौ॥

लोकाचारसे वर-कन्या ताम्बूल ग्रहण करें।

ग्रन्थिबन्धन—

आचारानुसार कन्यादाता अपनी पत्नीके वस्त्रके साथ ग्रन्थिबन्धन विप्रद्वारा कराये। तत्पश्चात् कन्यादाता द्रव्य, फूल, फल, अक्षतादि लेकर कन्याके वस्त्रमें रखकर वरके वस्त्रसे ग्रन्थिबन्धन कर दे।

शाखोच्चार या गोत्रोच्चार—

गोत्रोच्चारका क्रम यह है कि पहले वरपक्षके ब्राह्मण वेदमन्त्रको पढ़ें, इसके बाद मंगल श्लोक फिर प्रशस्तिपूर्वक शाखोच्चार करें। इसी क्रमसे कन्यापक्षके ब्राह्मण भी शाखोच्चार करें। वंश, गोत्र, प्रवर तथा सापिण्ड्यके निर्णयके लिये वर एवं कन्याका क्रमसे तीन-तीन पुरुषोंका तीन-तीन बार गोत्रोंका उच्चारण ब्राह्मणद्वारा किया जाता है।

---

* स्नात्वा पीत्वा क्षुते सुप्ते भुक्त्वा रथ्योपसर्पणे। आचान्तः पुनराचामेद्वासो विपरिधाय च॥ इति याज्ञवल्क्यस्मृतेः। स्त्रियास्तु नाचमनं किंतु दक्षिणकर्णस्पर्शः इति संस्काररत्नमालायाम्। शिष्टास्तु कर्मस्थ एवं नाचामेद् दक्षिणं श्रवणं स्पृशेत्। इति सर्वत्र श्रवणमेव स्पृशन्ति।

वरपक्षीय प्रथम शाखोच्चार

पठनीय वेदमन्त्र—

ॐ गणानान्त्वा गणपतिꣳ हवामहे प्रियाणान्त्वा प्रियपतिꣳ हवामहे निधीनान्त्वा निधिपतिꣳ हवामहे वसो मम। आहमजानि गर्भधमा त्वमजासि गर्भधम्॥

मंगलश्लोक—

गौरीनन्दनगौरवर्णवदनः शृङ्गारलम्बोदरः
सिन्दूरार्चितदिग्गजेन्द्रवदनः पादौ रणन्नूपुरौ।
कर्णौ लम्बविलम्बिगण्डविलसत्कण्ठे च मुक्तावली
श्रीविघ्नेश्वरविघ्नभञ्जनकरो देयात्सदा मङ्गलम्॥

गोत्रोच्चार—

अस्यां रात्रौ (अस्मिन् दिवसे वा) अस्मिन् मङ्गलमण्डपाभ्यन्तरे स्वस्तिश्रीमद्विविधविद्याविचारचातुरीविनिर्जितसकलवादिवृन्दोपरि-विराजमान-पदपदार्थ-साहित्यरचनामृतायमान-काव्यकौतुक-चमत्कारपरिणतनिसर्गसुन्दर-सहजानुभावगुणनिकरगुम्फितयशः सुरभीकृत-मङ्गलमण्डपस्य स्वस्तिश्रीमतः शुक्लयजुर्वेदान्तर्गत-वाजसनेयिमाध्यन्दिनीयशाखाध्येतुः कात्यायनसूत्रस्य"" गोत्रस्य ""प्रवरस्य ""शर्मणः/वर्मणः/गुप्तस्य प्रपौत्रः स्वस्तिश्रीमतः शुक्लयजुर्वेदान्तर्गत वाजसनेयिमाध्यन्दिनीयशाखाध्येतुः कात्यायन-सूत्रस्य ""गोत्रस्य ""प्रवरस्य ""शर्मणः/वर्मणः/गुप्तस्य पौत्रः, स्वस्तिश्रीमतः शुक्लयजुर्वेदान्तर्गतवाजसनेयिमाध्यन्दिनीयशाखा-ध्येतुः कात्यायनसूत्रस्य ""गोत्रस्य ""प्रवरस्य ""शर्मणः/वर्मणः/गुप्तस्य पुत्रः प्रयतपाणिः शरणं प्रपद्ये, स्वस्तिसंवादेषूभयोर्वृद्धिः वरकन्ययोर्मङ्गलमास्ताम् भूयास्ताम्, वरश्चिरञ्जीवी भवतात्, कन्या च सावित्री भूयात्॥

कन्यापक्षीय प्रथम शाखोच्चार

पठनीय वेदमन्त्र—

ॐ पुनस्त्वाऽऽदित्या रुद्रा वसवः समिन्धतां पुनर्ब्रह्माणो वसुनीथ यज्ञैः। घृतेन त्वं तन्वं वर्धयस्व सत्याः सन्तु यजमानस्य कामाः॥

मंगलश्लोक—

ईशानो गिरिशो मृडः पशुपतिः शूली शिवः शङ्करो
भूतेशः प्रमथाधिपः स्मरहरो मृत्युञ्जयो धूर्जटिः।
श्रीकण्ठो वृषभध्वजो हरभवो गङ्गाधरस्त्र्यम्बकः
श्रीरुद्रः सुरवृन्दवन्दितपदः कुर्यात् सदा मङ्गलम्॥

शाखोच्चार—

अस्यां रात्रौ (अस्मिन् दिवसे वा) अस्मिन् मङ्गलमण्डपाभ्यन्तरे स्वस्तिश्रीमद्विविधविद्यालङ्कारशरद्विमलरोहिणीरमणीयोदारसुन्दर-दामोदरमकरन्दवृन्दशेखरप्रचण्डखण्डमण्डलपूर्णपुरीन्दुनन्दनचरण-कमलभक्तितदुपरि महानुभावसकलविद्याविनीतनिजकुलकमल-कलिकाप्रकाशनैक-भास्करसदाचारसच्चरित्रसत्कुलसत्प्रतिष्ठाश्रेष्ठ-विशिष्टवरिष्ठस्य स्वस्तिश्रीमतः शुक्लयजुर्वेदान्तर्गतवाजसनेयि-माध्यन्दिनीयशाखाध्येतुः कात्यायनसूत्रस्य ''''गोत्रस्य ''''प्रवरस्य ''''शर्मणः/वर्मणः/गुप्तस्य प्रपौत्री, शुक्लयजुर्वेदान्तर्गतवाजसनेयि-माध्यन्दिनीयशाखाध्येतुः कात्यायनसूत्रस्य ''''गोत्रस्य ''''प्रवरस्य ''''शर्मणः/वर्मणः/गुप्तस्य पौत्री, शुक्लयजुर्वेदान्तर्गतवाजसनेयि-माध्यन्दिनीयशाखाध्येतुः कात्यायनसूत्रस्य ''''गोत्रस्य ''''प्रवरस्य ''''शर्मणः/वर्मणः/गुप्तस्य पुत्रीयम्, प्रयतपाणिः शरणं प्रपद्ये, स्वस्तिसंवादेषूभयोर्वृद्धिः, वरकन्ययोर्मङ्गलमास्ताम्, वरश्चिरञ्जीवी भवतात्, कन्या च सावित्री भूयात्॥

वरपक्षीय द्वितीय गोत्रोच्चार

पठनीय वेदमन्त्र—

यथेमां वाचं कल्याणीमावदानि जनेभ्यः। ब्रह्मराजन्याभ्याँ शूद्राय चार्याय च स्वाय चारणाय च। प्रियो देवानां दक्षिणायै दातुरिह भूयासमयं मे कामः समृध्यतामुप मादो नमतु॥

मंगलश्लोक—

कौपीनं परिधाय पन्नगपतेः गौरीपतिः श्रीपते-
रभ्यर्णं समुपागते कमलया सार्धं स्थितमस्यासने।
आयाते गरुडेऽथ पन्नगपतौ त्रासाद्बहिर्निर्गते
शम्भुं वीक्ष्य दिगम्बरं जलभुवः स्मेरं शिवं पातु वः॥

शाखोच्चार—

अस्यां रात्रौ (अस्मिन् दिवसे वा) अस्मिन् मंगलमण्डपाभ्यन्तरे स्वस्तिश्रीमन्नन्दनन्दनचरणकमलभक्तिविद्याविनीतनिजकुलकमल-कलिकाप्रकाशनैकभास्करसदाचारसच्चरितसत्कुलसत्प्रतिष्ठा-गरिष्ठस्य स्वस्तिश्रीमतः शुक्लयजुर्वेदान्तर्गतवाजसनेयिमाध्य-न्दिनीयशाखाध्येतुः कात्यायनसूत्रस्य ....गोत्रस्य ....शर्मणः/वर्मणः/गुप्तस्य प्रपौत्रः, शुक्लयजुर्वेदान्तर्गतवाजसनेयिमाध्यन्दिनीय-शाखाध्येतुः कात्यायनसूत्रस्य ....गोत्रस्य ....प्रवरस्य ....शर्मणः/वर्मणः/गुप्तस्य पौत्रः, शुक्लयजुर्वेदान्तर्गतवाजसनेयिमाध्यन्दिनीय-शाखाध्येतुः कात्यायनसूत्रस्य ....गोत्रस्य ....प्रवरस्य ....शर्मणः/वर्मणः/गुप्तस्य पुत्रः प्रयतपाणिः शरणं प्रपद्ये, स्वस्तिसंवादेषूभयो-र्वृद्धिः वरकन्ययोर्मङ्गलमास्तां भूयास्ताम्, वरश्चिरञ्जीवी भवतात्, कन्या च सावित्री भूयात्।

कन्यापक्षीय द्वितीय शाखोच्चार

पठनीय वेदमन्त्र—

आयुष्यं वर्चस्यꣳ रायस्पोषमौद्भिदम्।
इदꣳ हिरण्यं वर्चस्वज्जैत्रायाविशतादु माम्॥

मंगलश्लोक—

कौसल्याविशदालवालजनितः सीतालतालिङ्गितः
सिक्तः पंक्तिरथेन सोदरमहाशाखादिभिर्वर्धितः।
रक्षस्तीव्रनिदाघपाटनपटुश्छायाश्रितानन्दकृद्
युष्माकं स विभूतयेऽस्तु भगवान् श्रीरामकल्पद्रुमः॥

शाखोच्चार—

अस्यां रात्रौ (अस्मिन् दिवसे वा) अस्मिन् मङ्गलमण्डपाभ्यन्तरे स्वस्तिश्रीमतः शुक्लयजुर्वेदान्तर्गतवाजसनेयिमाध्यन्दिनीयशाखा-ध्येतुः कात्यायनसूत्रस्य ....गोत्रस्य ....प्रवरस्य ....शर्मणः/वर्मणः/गुप्तस्य प्रपौत्री, शुक्लयजुर्वेदान्तर्गतवाजसनेयिमाध्यन्दिनीयशाखा-ध्येतुः कात्यायनसूत्रस्य ....गोत्रस्य ....प्रवरस्य ....शर्मणः/वर्मणः/गुप्तस्य पौत्री, शुक्लयजुर्वेदान्तर्गतवाजसनेयिमाध्यन्दिनीयशाखा-ध्येतुः कात्यायनसूत्रस्य ....गोत्रस्य ....प्रवरस्य ....शर्मणः/वर्मणः/गुप्तस्य पुत्री प्रयतपाणिः शरणं प्रपद्ये, स्वस्तिसंवादेषूभयोर्वृद्धिः वरकन्ययोर्मङ्गलमास्तां भूयास्ताम्, वरश्चिरञ्जीवी भवतात्, कन्या च सावित्री भूयात्।

वरपक्षीय तृतीय शाखोच्चार

पठनीय वेदमन्त्र—

यज्जाग्रतो दूरमुदैति दैवं तदु सुप्तस्य तथैवैति।
दूरङ्गमं ज्योतिषां ज्योतिरेकं तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु॥

मंगलश्लोक—

देवक्यां यस्य सूतिस्त्रिजगति विदिता रुक्मिणी धर्मपत्नी
पुत्राः प्रद्युम्नमुख्याः सुरनरजयिनो वाहनः पक्षिराजः।
वृन्दारण्यं विहारो व्रजपुरवनिता वल्लभा राधिकाद्या-
श्चक्रं विख्यातमस्त्रं स जयति जगतां स्वस्तये नन्दसूनुः॥

शाखोच्चार—

अस्यां रात्रौ (अस्मिन् दिवसे वा) अस्मिन् मङ्गलमण्डपाभ्यन्तरे स्वस्तिश्रीमतः शुक्लयजुर्वेदान्तर्गतवाजसनेयिमाध्यन्दिनीयशाखा-ध्येतुः कात्यायनसूत्रस्य ····गोत्रस्य ····प्रवरस्य ····शर्मणः/वर्मणः/गुप्तस्य प्रपौत्रः शुक्लयजुर्वेदान्तर्गतवाजसनेयिमाध्यन्दिनीयशाखाध्येतुः कात्यायनसूत्रस्य ····गोत्रस्य ····प्रवरस्य ····शर्मणः/वर्मणः/गुप्तस्य पौत्रः, शुक्लयजुर्वेदान्तर्गतवाजसनेयिमाध्यन्दिनीयशाखाध्येतुः कात्यायनसूत्रस्य ····गोत्रस्य ····प्रवरस्य ····शर्मणः पुत्रः प्रयतपाणिः शरणं प्रपद्ये, स्वस्तिसंवादेषूभयोर्वृद्धिः वरकन्ययोर्मङ्गलमास्तां भूयास्ताम्, वरश्चिरञ्जीवी भवतात्, कन्या च सावित्री भूयात्।

कन्यापक्षीय तृतीय शाखोच्चार

पठनीय वेदमन्त्र—

ब्रह्म जज्ञानं प्रथमं पुरस्ताद्वि सीमतः सुरुचो वेन आवः।
स बुध्न्या उपमा अस्य विष्ठाः सतश्च योनिमसतश्च वि वः॥

मंगलश्लोक—

अंगुल्या कः कपाटं प्रहरति कुटिले माधवः किं वसन्तो
नो चक्री किं कुलालो नहि धरणिधरः किं द्विजिह्वः फणीन्द्रः।
नाहं घोराहिमर्दीकिमुत खगपतिर्नो हरिः किं कपीन्द्रः
चेत्थं राधावचोभिः प्रहसितवदनः पातु वश्चक्रपाणिः॥

शाखोच्चार—

अस्यां रात्रौ (अस्मिन् दिवसे वा) अस्मिन् मङ्गलमण्डपाभ्यन्तरे श्रीमतः शुक्लयजुर्वेदान्तर्गतवाजसनेयिमाध्यन्दिनीयशाखाध्येतुः कात्यायनसूत्रस्य .....गोत्रस्य .....प्रवरस्य .....शर्मणः/वर्मणः/गुप्तस्य प्रपौत्री, शुक्लयजुर्वेदान्तर्गतवाजसनेयिमाध्यन्दिनीयशाखाध्येतुः कात्यायनसूत्रस्य .....गोत्रस्य .....प्रवरस्य .....शर्मणः/वर्मणः/गुप्तस्य पौत्री, शुक्लयजुर्वेदान्तर्गतवाजसनेयिमाध्यन्दिनीयशाखाध्येतुः कात्यायनसूत्रस्य .....गोत्रस्य .....प्रवरस्य .....शर्मणः/वर्मणः/गुप्तस्य पुत्री प्रयतपाणिः शरणं प्रपद्ये, स्वस्तिसंवादेषूभयोर्वृद्धिः वरकन्ययोर्मङ्गलमास्तां भूयास्ताम्, वरश्चिरञ्जीवी भवतात्, कन्या च सावित्री भूयात्।

कन्यादानविधि

कन्यादान करनेवाला अपने दक्षिण भागमें पत्नीको बैठाकर ग्रन्थिबन्धन युक्त होकर आचमन, प्राणायामकर कन्याको पश्चिमाभिमुख बैठा ले और हाथमें पुष्प-जलाक्षत लेकर प्रार्थनापूर्वक कन्यादानका निम्न प्रतिज्ञा-संकल्प करे—

प्रार्थना—

दाताऽहं वरुणो राजा द्रव्यमादित्यदैवतम्।
वरोऽसौ विष्णुरूपेण प्रतिगृह्णात्वयं विधिः॥

प्रतिज्ञासंकल्प—

ॐ विष्णुर्विष्णुर्विष्णुः श्रीमद्भगवतो महापुरुषस्य विष्णो-राज्ञया प्रवर्तमानस्य ब्रह्मणो द्वितीयपरार्द्धे श्रीश्वेतवाराहकल्पे वैवस्वतमन्वन्तरे अष्टाविंशतितमे कलियुगे कलिप्रथमचरणे जम्बूद्वीपे भरतखण्डे भारतवर्षे आर्यावर्तैकदेशे .....नगरे/ग्रामे/क्षेत्रे (यदि काशी हो तो **अविमुक्तवाराणसीक्षेत्रे आनन्दवने गौरीमुखे त्रिकण्टक-**

विराजिते भगवत्या उत्तरवाहिन्या भागीरथ्या वामभागे) .....वैक्रमाब्दे .....संवत्सरे श्रीसूर्ये .....अयने .....ऋतौ .....मासे .....पक्षे .....तिथौ .....वासरे .....नक्षत्रे .....राशिस्थिते सूर्ये .....राशिस्थिते चन्द्रे .....राशिस्थिते देवगुरौ शेषेषु ग्रहेषु यथायथं राशिस्थितेषु सत्सु एवं ग्रहगण-गुणविशेषणविशिष्टायां शुभपुण्यतिथौ .....गोत्रः .....शर्मा/वर्मा/गुप्तः सपत्नीकोऽहं मम समस्तपितॄणां निरतिशयानन्दब्रह्मलोका-प्त्यादिकन्यादानकल्पोक्तफलप्राप्तये अनेन वरेण अस्यां कन्यायाम् उत्पादयिष्यमाणसन्तत्या दशपूर्वान् दशापरान् पुरुषानात्मानं च पवित्रीकर्तुं श्रीलक्ष्मीनारायणप्रीतये ब्राह्मविवाहविधिना कन्यादानं करिष्ये। हाथका संकल्पजल छोड़ दे।

प्रार्थना—

इसके बाद कन्यादाता कन्याका स्पर्श करते हुए वरसे निम्नलिखित प्रार्थना करे—

कन्यां कनकसम्पन्नां कनकाभरणैर्युताम्।
दास्यामि विष्णवे तुभ्यं ब्रह्मलोकजिगीषया॥
विश्वम्भरः सर्वभूताः साक्षिण्यः सर्वदेवताः।
इमां कन्यां प्रदास्यामि पितॄणां तारणाय च॥

कन्यादानका प्रधान संकल्प—

वरके दाहिने हाथपर कन्याका दाहिना हाथ रखकर कन्यादाता सपत्नीक एक शंखमें जल, दूर्वा, अक्षत, पूगीफल, पुष्प, चन्दन, तुलसी और स्वर्ण लेकर कन्याके दाहिने अँगूठेके पास अपना हाथ ले जाय और कन्याका भाई जलपात्र (गड़ुआ)-से जलकी धारा नीचे रखे हुए कांस्य-पात्रमें छोड़ता रहे। उस समय दाता कन्यादानका निम्न संकल्प करे—

ॐ विष्णुर्विष्णुर्विष्णुः श्रीमद्भगवतो महापुरुषस्य विष्णो-राज्ञया प्रवर्तमानस्य ब्रह्मणो द्वितीयपरार्द्धे श्रीश्वेतवाराहकल्पे

वैवस्वतमन्वन्तरे अष्टाविंशतितमे कलियुगे कलिप्रथमचरणे जम्बूद्वीपे भरतखण्डे भारतवर्षे आर्यावर्तैकदेशे''''नगरे/ग्रामे/क्षेत्रे (यदि काशी हो तो **अविमुक्तवाराणसीक्षेत्रे आनन्दवने गौरीमुखे त्रिकण्टक-विराजिते भगवत्या उत्तरवाहिन्या भागीरथ्या वामभागे)''''वैक्रमाब्दे ''''संवत्सरे श्रीसूर्ये ''''अयने ''''ऋतौ ''''मासे ''''पक्षे ''''तिथौ ''''वासरे ''''नक्षत्रे ''''राशिस्थिते सूर्ये ''''राशिस्थिते चन्द्रे ''''राशिस्थिते देवगुरौ शेषेषु ग्रहेषु यथायथं राशिस्थितेषु सत्सु एवं ग्रहगुणगणविशेषणविशिष्टायां शुभपुण्यतिथौ ''''गोत्रः ''''शर्मा/वर्मा/गुप्तः सपत्नीकोऽहं मम समस्तपितॄणां निरतिशयसानन्द-ब्रह्मलोकावाप्त्यादिकन्यादानकल्पोक्तफलावाप्तये अनेन वरेण अस्यां कन्यायामुत्पादयिष्यमाणसन्तत्या दशपूर्वान् दशापरान् पुरुषानात्मानं च पवित्रीकर्तुं श्रीलक्ष्मीनारायणप्रीतये ''''गोत्रस्य ''''प्रवरस्य शुक्लयजुर्वेदान्तर्गतवाजसनेयिमाध्यन्दिनीयशाखाध्यायिनः ''''शर्मणः/वर्मणः/गुप्तस्य प्रपौत्राय, ''''शर्मणः/वर्मणः/गुप्तस्य पौत्राय, ''''शर्मणः/वर्मणः/गुप्तस्य पुत्राय आयुष्मते कन्यार्थिने ''''गोत्राय ''''प्रवराय ''''शर्मणे/वर्मणे/गुप्ताय वराय, [कन्यापक्षे तु] ''''गोत्रस्य ''''शर्मणः/वर्मणः/गुप्तस्य प्रपौत्रीम्, ''''गोत्रस्य ''''शर्मणः/वर्मणः/गुप्तस्य पौत्रीम्, ''''गोत्रस्य ''''शर्मणः/वर्मणः/गुप्तस्य पुत्रीम् ''''गोत्रोत्पन्नां ''''नाम्नीमिमां कन्यां श्रीरूपिणीं वरार्थिनीं यथाशक्त्यलंकृतां गन्धाद्यर्चितां वस्त्रयुगच्छन्नां सोपस्करां प्रजापतिदैवतां शतगुणीकृतज्योतिष्टोमातिरात्रसमफलप्राप्तिकामः प्रजोत्पादनार्थं (सहधर्माचरणाय) ''''गोत्राय ''''शर्मणे/वर्मणे/गुप्ताय विष्णुरूपिणे वराय पत्नीत्वेन तुभ्यमहं सम्प्रददे।**

यह कहते हुए कन्याके हाथको वरके हाथमें प्रदान करे और वर उसे ग्रहण कर ले।

वर कहे—**ॐ स्वस्ति। ॐ द्यौस्त्वा ददातु पृथिवी त्वा प्रतिगृह्णातु।**

इसके बाद कन्यादाता वरसे कहे—

ॐ यस्त्वया धर्मश्चरितव्यः सोऽनया सह।
धर्मे चार्थे च कामे च त्वयेयं नातिचरितव्या॥

वर कहे—**नातिचरामि।**

कोऽदात् कस्माऽअदात् कामोऽदात् कामायादात्।
कामो दाता कामः प्रतिग्रहीता कामैतत्ते॥

इसी क्रमसे कन्याप्रदाता और वर अपने-अपने वाक्योंको तीन बार कहें।

प्रार्थना—

इसके बाद कन्यादाता हाथमें पुष्प-अक्षत लेकर वरसे निम्नलिखित प्रार्थना करे—

गौरीं कन्यामिमां विप्र यथाशक्ति विभूषिताम्।
गोत्राय शर्मणे तुभ्यं दत्ता विप्र समाश्रय॥
कन्ये ममाग्रतो भूयाः कन्ये मे देवि पार्श्वयोः।
कन्ये मे पृष्ठतो भूयाः त्वद्दानान्मोक्षमाप्नुयात्॥
मम वंशकुले जाता यावद् वर्षाणि पालिता
तुभ्यं वर मया दत्ता पुत्रपौत्रप्रवर्धिनी॥

कन्यादानसांगता—

कन्यादाता निम्न संकल्पपूर्वक सुवर्ण दक्षिणा और गो-मिथुन अथवा निष्क्रयद्रव्य वरको दे।

ॐ अद्य कृतैतत्कन्यादानकर्मणः साङ्गतासिद्ध्यर्थम् इदं सुवर्णदक्षिणाद्रव्यं गोमिथुनं च ....गोत्राय ....शर्मणे/वर्मणे/गुप्ताय वराय तुभ्यमहं सम्प्रददे।

वर कहे—‘**ॐ स्वस्ति**’।

गौप्रार्थना—

इसके बाद हाथमें अक्षत-पुष्प लेकर गौकी प्रार्थना करे—

यज्ञसाधनभूता या विश्वस्याघौघनाशिनी।
विश्वरूपधरो देवः प्रीयतामनया गवा॥

भूयसीदक्षिणाका संकल्प—

इसके बाद कन्यादाता निम्न मन्त्र बोलकर भूयसीदक्षिणाका संकल्प करे—

ॐ अद्य कृतस्य कन्यादानकर्मणः साङ्गतासिद्ध्यर्थं तन्मध्ये न्यूनातिरिक्तदोषपरिहारार्थं यथोत्साहां भूयसीदक्षिणां विभज्य नानानामगोत्रेभ्यो ब्राह्मणेभ्यो दातुमहमुत्सृजे।

इसके बाद कन्यापितासे प्रदान की हुई कन्याको वर ग्रहणकर निम्न मन्त्रसे कन्याका नाम उच्चारण करता हुआ उसे अग्निवेदीके समीप ले जाय—

ॐ यदैषि मनसा दूरं दिशोऽनु पवमानो वा।
हिरण्यपर्णो वैकर्णः स त्वा मन्मनसां करोतु।
श्री अमुकी देवीति।

दृढ़पुरुषस्थापन—

वेदीकी दक्षिण दिशामें जलसे पूर्ण कलश एक दृढ़ मनुष्यके कन्धेपर रखे। वह मनुष्य कन्धेपर रखकर चुपचाप तबतक खड़ा रहे, जबतक कि अभिषेक न हो जाय।

परस्पर निरीक्षण—

इसके बाद कन्याका पिता कहे—**परस्परं समीक्षेथाम्।**

वर निम्न मन्त्रोंका पाठ करे और वधूको देखे—

ॐ अघोरचक्षुरपतिघ्न्येधि शिवा पशुभ्यः सुमनाः सुवर्चाः।

वीरसूर्देवकामा स्योना शन्नो भव द्विपदे शं चतुष्पदे॥ १॥

सोमः प्रथमो विविदे गन्धर्वो विविद उत्तरः। तृतीयोऽग्निष्टे पतिस्तुरीयस्ते मनुष्यजाः॥ २॥

सोमोऽददद् गन्धर्वाय गन्धर्वोऽददग्नये। रयिं च पुत्राँश्चादादग्निर्मह्यमथो इमाम्॥ ३॥

सा नः पूषा शिवतमामैरय सा न ऊरू उशती विहर। यस्यामुशन्तः प्रहराम शेपं यस्यामु कामा बहवो निविष्ट्यै॥ ४॥

इस तरह वर और कन्या एक-दूसरेको देखें।

इसके बाद वर-कन्या दोनों अग्निकी तीन प्रदक्षिणा[1] कर अग्निके पश्चिम तरफ कुशके आसनपर अथवा चटाईपर वर अपने[2] दक्षिण भागमें वधूको बिठाकर स्वयं बैठे और निम्न संकल्पकर कन्याग्रहण-दोषनिवृत्तिके निमित्त गोदान करे—

संकल्प—

ॐ अद्य ""गोत्रः ""शर्मा/वर्मा/गुप्तोऽहं कन्याग्रहणदोष-निवृत्त्यर्थं शुभफलप्राप्त्यर्थं च इदं गोनिष्क्रयीभूतं द्रव्यं रजतं चन्द्रदैवतं यथानामगोत्राय ब्राह्मणाय दातुमुत्सृज्ये॥

द्रव्य ब्राह्मणको दे दे। ब्राह्मण '**ॐ स्वस्ति**' बोले।

विवाहहोम

आचार्यवरण—

इसके बाद वर हवनमें आचार्यकर्म करनेके लिये आचार्यका वरण

---

१. यहाँ अग्निकी तीन परिक्रमा करनेमें प्रमाण यह है कि तीन परिक्रमा तो बिना किसी मन्त्र पाठके चुपचाप कराना चाहिये। शेष चार आगे लाजाहोमके समय करायी जायेगी। ऐसे सब मिलकर अग्निकी सात परिक्रमा होती हैं।

२. सीमन्ते च विवाहे च तथा चातुर्थ्यकर्मणि। मखे दाने व्रते श्राद्धे पत्नी दक्षिणतो भवेत्॥
सम्प्रदाने भवेत् कन्या घृतहोमे सुमङ्गली। वामभागे भवेद्भार्या पत्नी चातुर्थ्यकर्मणि॥
व्रतबन्धे विवाहे च चतुर्थी सह भोजने। व्रतदाने मखे श्राद्धे पत्नी तिष्ठति दक्षिणे॥
सर्वेषु धर्मकार्येषु पत्नी दक्षिणतः शुभा। अभिषेके विप्रपादक्षालने चैव वामतः॥

करे। हाथमें वरणसामग्री एवं जल–अक्षत लेकर निम्न संकल्प–वाक्य बोले—

ॐ अद्य कर्तव्यविवाहहोमकर्मणि आचार्यकर्मकर्तुम् एभिर्वरणद्रव्यैः.....गोत्रं.....शर्माणं ब्राह्मणम् आचार्यत्वेन भवन्तमहं वृणे। आचार्यके हाथमें वरणसामग्री दे।

आचार्य कहे—**स्वस्ति, वृतोऽस्मि।**

आचार्यकी प्रार्थना—

वर निम्न मन्त्र बोलकर आचार्यसे प्रार्थना करे—

आचार्यस्तु यथा स्वर्गे शक्रादीनां बृहस्पतिः।
तथा त्वं मम यज्ञेऽस्मिन्नाचार्यो भव सुव्रत॥

ब्रह्मवरण—

इसके बाद हाथमें वरणसामग्री और जल–अक्षत लेकर ब्रह्माके वरणके लिये निम्न संकल्पवाक्य बोले—

ॐ अद्य कर्तव्यविवाहहोमकर्मणि कृताऽकृताऽवेक्षणरूप-ब्रह्मकर्मकर्तुम् एभिर्वरणद्रव्यैः .....गोत्रं .....शर्माणं ब्राह्मणं ब्रह्मत्वेन भवन्तमहं वृणे।

ब्रह्माके हाथमें वरणसामग्री प्रदान करे।

ब्रह्मा कहे—**वृतोऽस्मि।**

ब्रह्माकी प्रार्थना—

हाथमें पुष्प–अक्षत लेकर ब्रह्मासे प्रार्थना करे—

यथा चतुर्मुखो ब्रह्मा सर्वलोकपितामहः।
तथा त्वं मम यज्ञेऽस्मिन् ब्रह्मा भव द्विजोत्तम॥
ॐ व्रतेन दीक्षामाप्नोति दीक्षयाप्नोति दक्षिणाम्।
दक्षिणा श्रद्धामाप्नोति श्रद्धया सत्यमाप्यते॥

कुशकण्डिका—

पूर्वनिर्मित पंचभूसंस्कारसे सम्पन्न वेदीपर हवनके लिये कुशकण्डिका

करे। **[कुशकण्डिकाकी विधि पृ० सं० ५६ में दी गयी है, तदनुसार सम्पन्न करे।]**

पात्रासादन—

विवाहमें हवनसम्बन्धी सभी सामग्रियोंके अतिरिक्त अन्य उपयोगी विशेष विवाह-सामग्री-सम्भारको भी यथास्थान स्थापित करना चाहिये। यथा—

शमीके पत्ते मिले हुए धानका लावा, दृढ़ पत्थर, कुमारीका भ्राता, शूर्प, दृढ़ पुरुष, आलेपन द्रव्य आदि।

हवनविधान

हवनसे पूर्व अग्निका ध्यान तथा गन्धाक्षतसे उसकी पूजा कर ले। दाहिना घुटना जमीनमें टिकाकर स्रुवामें घृत लेकर निम्न मन्त्रोंसे आहुतियाँ प्रदान करे तथा उस समय ब्रह्मा कुशासे हवनकर्ताका स्पर्श किये रहे। (ब्रह्मणान्वारब्ध)

होम करते समय स्रुवेमें बचा हुआ घी प्रोक्षणीपात्रमें डालते जाना चाहिये। सर्वप्रथम आघाराज्यसम्बन्धी चार आहुतियाँ दे।

आघाराज्यहोम—

ॐ प्रजापतये (यह मनसे कहे) **स्वाहा, इदं प्रजापतये न मम॥ १॥**

ॐ इन्द्राय स्वाहा, इदमिन्द्राय न मम॥ २॥

ये आघारसंज्ञक होम हैं।

ॐ अग्नये स्वाहा, इदमग्नये न मम॥ १॥

ॐ सोमाय स्वाहा, इदं सोमाय न मम॥ २॥

ये दोनों आहुतियाँ आज्यभागसंज्ञक हैं।

महाव्याहृतिहोम—

ॐ भूः स्वाहा, इदमग्नये न मम॥ १॥

ॐ भुवः स्वाहा, इदं वायवे न मम॥ २॥

ॐ स्वः स्वाहा, इदं सूर्याय न मम॥ ३॥

इन तीन आहुतियोंकी महाव्याहृति संज्ञा है।

सर्वप्रायश्चित्तहोम—

ॐ त्वं नो अग्ने वरुणस्य विद्वान् देवस्य हेडो अव यासिसीष्ठाः। यजिष्ठो वह्नितमः शोशुचानो विश्वा द्वेषाꣳसि प्र मुमुग्ध्यस्मत् स्वाहा॥

इदमग्नीवरुणाभ्यां न मम॥ १॥

ॐ स त्वं नो अग्नेऽवमो भवोती नेदिष्ठो अस्या उषसो व्युष्टौ। अव यक्ष्व नो वरुणꣳ रराणो वीहि मृडीकꣳ सुहवो न एधि स्वाहा॥

इदमग्नीवरुणाभ्यां न मम॥ २॥

ॐ अयाश्चाग्नेऽस्यनभिशस्तिपाश्च सत्यमित्वमया असि। अया नो यज्ञं वहास्यया नो धेहि भेषजꣳ स्वाहा॥

इदमग्नयेऽयसे न मम॥ ३॥

ॐ ये ते शतं वरुण ये सहस्त्रं यज्ञिया: पाशा वितता महान्तः। तेभिर्नो ऽअद्य सवितोत विष्णुर्विश्वे मुञ्चन्तु मरुतः स्वर्काः स्वाहा॥

इदं वरुणाय सवित्रे विष्णवे विश्वेभ्यो देवेभ्यो मरुद्भ्यः स्वर्केभ्यश्च न मम॥ ४॥

ॐ उदुत्तमं वरुण पाशमस्मदवाधमं वि मध्यमꣳ श्रथाय। अथा वयमादित्य व्रते तवानागसो अदितये स्याम स्वाहा॥

इदं वरुणायादित्यायादितये न मम॥ ५॥

ये पाँच आहुतियाँ प्रायश्चित्तसंज्ञक हैं।

राष्ट्रभृत्-होम—

इसके बाद ब्रह्मासे अन्वारब्धके विना ही निम्नलिखित मन्त्रोंसे बारह राष्ट्रभृत् हवन करे—

ॐ ऋताषाडृतधामाऽग्निर्गन्धर्वः स न इदं ब्रह्मक्षत्रं पातु तस्मै स्वाहा वाट्।

इदमृतासाहे ऋतधाम्नेऽग्नये गन्धर्वाय न मम॥ १॥

ॐ ऋताषाडृतधामाऽग्निर्गन्धर्वस्तस्यौषधयोऽप्सरसो मुदो नाम ताभ्यः स्वाहा।

इदमोषधीभ्योऽप्सरोभ्यो मुद्भ्यो न मम॥ २॥

ॐ स ꣳ हितो विश्वसामा सूर्यो गन्धर्वः स न इदं ब्रह्मक्षत्रं पातु तस्मै स्वाहा वाट्।

इदं स ꣳ हिताय विश्वसाम्ने सूर्याय गन्धर्वाय न मम॥ ३॥

ॐ स ꣳ हितो विश्वसामा सूर्यो गन्धर्वस्तस्य मरीचयोऽप्सरस आयुवो नाम ताभ्यः स्वाहा।

इदं मरीचिभ्योऽप्सरोभ्य आयुभ्यो न मम॥ ४॥

ॐ सुषुम्णः सूर्यरश्मिश्चन्द्रमा गन्धर्वः स न इदं ब्रह्मक्षत्रं पातु तस्मै स्वाहा वाट्।

इदं सुषुम्णाय सूर्यरश्मये चन्द्रमसे गन्धर्वाय न मम॥ ५॥

ॐ सुषुम्णः सूर्यरश्मिश्चन्द्रमा गन्धर्वस्तस्य नक्षत्राण्यप्सरसो भेकुरयो नाम ताभ्यः स्वाहा।

इदं नक्षत्रेभ्योऽप्सरोभ्यो भेकुरिभ्यो न मम॥ ६॥

ॐ इषिरो विश्वव्यचा वातो गन्धर्वः स न इदं ब्रह्मक्षत्रं पातु तस्मै स्वाहा वाट्।

इदमिषिराय विश्वव्यचसे वाताय गन्धर्वाय न मम॥ ७॥

ॐ इषिरो विश्वव्यचा वातो गन्धर्वस्तस्यापोऽप्सरस ऊर्जो नाम ताभ्यः स्वाहा।

इदमद्भ्योऽप्सरोभ्य ऊरभ्यो न मम॥ ८॥

ॐ भुज्युः सुपर्णो यज्ञो गन्धर्वः स न इदं ब्रह्मक्षत्रं पातु तस्मै स्वाहा वाट्।

इदं भुज्यवे सुपर्णाय यज्ञाय गन्धर्वाय न मम॥ ९॥

ॐ भुज्युः सुपर्णो यज्ञो गन्धर्वस्तस्य दक्षिणा अप्सरसस्तावा नाम ताभ्यः स्वाहा।

इदं दक्षिणाभ्योऽप्सरोभ्यस्तावाभ्यो न मम॥ १०॥

ॐ प्रजापतिर्विश्वकर्मा मनो गन्धर्वः स न इदं ब्रह्मक्षत्रं पातु तस्मै स्वाहा वाट्।

इदं प्रजापतये विश्वकर्मणे मनसे गन्धर्वाय न मम॥ ११॥

ॐ प्रजापतिर्विश्वकर्मा मनोगन्धर्वस्तस्य ऋक्सामान्यप्सरस एष्टयो नाम ताभ्यः स्वाहा।

इदमृक्सामभ्योऽप्सरोभ्य एष्टिभ्यो न मम॥ १२॥

जयासंज्ञक होम—

इसके बाद निम्नलिखित तेरह मन्त्रोंसे आहुति प्रदान करे—

ॐ चित्तं च स्वाहा, इदं चित्ताय न मम॥ १॥

ॐ चित्तिश्च स्वाहा, इदं चित्त्यै न मम॥ २॥

ॐ आकूतं च स्वाहा, इदमाकूताय न मम॥ ३॥

ॐ आकूतिश्च स्वाहा, इदमाकूत्यै न मम॥ ४॥

ॐ विज्ञातश्च स्वाहा, इदं विज्ञाताय न मम॥ ५॥

ॐ विज्ञातिश्च स्वाहा, इदं विज्ञातये न मम॥ ६॥

ॐ मनश्च स्वाहा, इदं मनसे न मम॥ ७॥

ॐ शक्वरीश्च स्वाहा, इदं शक्वरीभ्यो न मम॥ ८॥

ॐ दर्शश्च स्वाहा, इदं दर्शाय न मम॥ ९॥

ॐ पौर्णमासं च स्वाहा, इदं पौर्णमासाय न मम॥ १०॥

ॐ बृहच्च स्वाहा, इदं बृहते न मम॥ ११॥

ॐ रथन्तरं च स्वाहा, इदं रथन्तराय न मम॥ १२॥

ॐ प्रजापतिर्जयानिन्द्राय वृष्णे प्रायच्छदुग्रः पृतना जयेषु।

तस्मै विशः समनमन्त सर्वाः स उग्रः स इहव्यो बभूव स्वाहा। इदं प्रजापतये न मम॥ १३॥

इसके बाद प्रणीताके जलका स्पर्श करे और अपने ऊपर छिड़के। उसके लिये मन्त्र बोले—

यथा बाणप्रहाराणां कवचं भवति वारणम्।
तथा देवोपघातानां शान्तिर्भवति वारिणा॥

अभ्यातान होम—

इसके बाद निम्नलिखित अट्ठारह मन्त्रोंसे अभ्यातानसंज्ञक होम करे।

ॐ अग्निर्भूतानामधिपतिः स मावत्वस्मिन् ब्रह्मण्यस्मिन् क्षत्रेऽस्यामाशिष्यस्यां पुरोधायामस्मिन् कर्मण्यस्यां देवहूत्याᳬ स्वाहा, इदमग्नये भूतानामधिपतये न मम॥ १॥

ॐ इन्द्रो ज्येष्ठानामधिपतिः स माऽवत्वस्मिन् ब्रह्मण्यस्मिन् क्षत्रेऽस्यामाशिष्यस्यां पुरोधायामस्मिन् कर्मण्यस्यां देवहूत्याᳬ स्वाहा, इदमिन्द्राय ज्येष्ठानामधिपतये न मम॥ २॥

ॐ यमः पृथिव्या अधिपतिः स मावत्वस्मिन् ब्रह्मण्यस्मिन् क्षत्रेऽस्यामाशिष्यस्यां पुरोधायामस्मिन् कर्मण्यस्यां देवहूत्याᳬ स्वाहा। इदं यमाय पृथिव्या अधिपतये न मम*॥ ३॥

यहाँ पुनः प्रणीताके जलका स्पर्श करे तथा **यथा बाणप्रहाराणां** इत्यादि मन्त्रसे अपने ऊपर जल छिड़कें।

ॐ वायुरन्तरिक्षस्याधिपतिः स मावत्वस्मिन् ब्रह्मण्यस्मिन् क्षत्रेऽस्यामाशिष्यस्यां पुरोधायामस्मिन् कर्मण्यस्यां देवहूत्याᳬ स्वाहा। इदं वायवेऽन्तरिक्षस्याधिपतये न मम॥ ४॥

---

* इस मन्त्रकी आहुतिके अनन्तर स्रुवाके अवशिष्ट अंशका त्याग प्रोक्षणीमें न कर किसी अन्य पात्रमें करना चाहिये। जैसा कि कहा है—यमाय दक्षिणे त्याग ऐशान्यां रौद्र एव च। दक्षिणाग्नेययोर्मध्ये पितृत्यागो विधीयते। एष त्यागोऽन्यपात्रे स्यात् प्रोक्षणीष्वन्य एव हि॥

ॐ सूर्यो दिवोऽधिपतिः स मावत्वस्मिन् ब्रह्मण्यस्मिन् क्षत्रेऽस्यामाशिष्यस्यां पुरोधायामस्मिन् कर्मण्यस्यां देवहूत्याᳫं स्वाहा। इदं सूर्याय दिवोऽधिपतये न मम॥ ५॥

ॐ चन्द्रमा नक्षत्राणामधिपतिः स मावत्वस्मिन् ब्रह्मण्यस्मिन् क्षत्रेऽस्यामाशिष्यस्यां पुरोधायामस्मिन् कर्मण्यस्यां देवहूत्याᳫं स्वाहा। इदं चन्द्रमसे नक्षत्राणामधिपतये न मम॥ ६॥

ॐ बृहस्पतिर्ब्रह्मणोऽधिपतिः स मावत्वस्मिन् ब्रह्मण्यस्मिन् क्षत्रेऽस्यामाशिष्यस्यां पुरोधायामस्मिन् कर्मण्यस्यां देवहूत्याᳫं स्वाहा। इदं बृहस्पतये ब्रह्मणोऽधिपतये न मम॥ ७॥

ॐ मित्रः सत्यानामधिपतिः स मावत्वस्मिन् ब्रह्मण्यस्मिन् क्षत्रेऽस्यामाशिष्यस्यां पुरोधायामस्मिन् कर्मण्यस्यां देवहूत्याᳫं स्वाहा। इदं मित्राय सत्यानामधिपतये न मम॥ ८॥

ॐ वरुणोऽपामधिपतिः स मावत्वस्मिन् ब्रह्मण्यस्मिन् क्षत्रेऽस्यामाशिष्यस्यां पुरोधायामस्मिन् कर्मण्यस्यां देवहूत्याᳫं स्वाहा। इदं वरुणायापामधिपतये न मम॥ ९॥

ॐ समुद्रः स्त्रोत्यानामधिपतिः स मावत्वस्मिन् ब्रह्मण्यस्मिन् क्षत्रेऽस्यामाशिष्यस्यां पुरोधायामस्मिन् कर्मण्यस्यां देवहूत्याᳫं स्वाहा। इदं समुद्राय स्त्रोत्यानामधिपतये न मम॥ १०॥

ॐ अन्नᳫं साम्राज्यानामधिपतिः स मावत्वस्मिन् ब्रह्मण्यस्मिन् क्षत्रेऽस्यामाशिष्यस्यां पुरोधायामस्मिन् कर्मण्यस्यां देवहूत्याᳫं स्वाहा॥ इदमन्नाय साम्राज्यानामधिपतये न मम॥ ११॥

ॐ सोम ओषधीनामधिपतिः स मावत्वस्मिन् ब्रह्मण्यस्मिन् क्षत्रेऽस्यामाशिष्यस्यां पुरोधायामस्मिन् कर्मण्यस्यां देवहूत्याᳫं स्वाहा। इदं सोमायौषधीनामधिपतये न मम॥ १२॥

ॐ सविता प्रसवानामधिपतिः स मावत्वस्मिन् ब्रह्मण्यस्मिन् क्षत्रेऽस्यामाशिष्यस्यां पुरोधायामस्मिन् कर्मण्यस्यां देवहूत्याᳫं स्वाहा। इदं सवित्रे प्रसवानामधिपतये न मम॥ १३॥

ॐ रुद्रः पशूनामधिपतिः स मावत्वस्मिन् ब्रह्मण्यस्मिन् क्षत्रेऽस्यामशिष्यस्यां पुरोधायामस्मिन् कर्मण्यस्यां देवहूत्याᳬ स्वाहा। इदं रुद्राय पशूनामधिपतये न मम॥ १४॥

इसके बाद प्रणीताके जलसे दाहिने हाथकी पाँचों अंगुलियोंको प्रक्षालित करे।

ॐ त्वष्टा रूपाणामधिपतिः स मावत्वस्मिन् ब्रह्मण्यस्मिन् क्षत्रेऽस्यामाशिष्यस्यां पुरोधायामस्मिन् कर्मण्यस्यां देवहूत्याᳬ स्वाहा। इदं त्वष्ट्रे रूपाणामधिपतये न मम॥ १५॥

ॐ विष्णुः पर्वतानामधिपतिः स मावत्वस्मिन् ब्रह्मण्यस्मिन् क्षत्रेऽस्यामाशिष्यस्यां पुरोधायामस्मिन् कर्मण्यस्यां देवहूत्याᳬ स्वाहा। इदं विष्णवे पर्वतानामधिपतये न मम॥ १६॥

ॐ मरुतो गणानामधिपतयस्ते मावन्त्वस्मिन् ब्रह्मण्यस्मिन् क्षत्रेऽस्यामाशिष्यस्यां पुरोधायामस्मिन् कर्मण्यस्यां देवहूत्याᳬ स्वाहा। इदं मरुद्भ्यो गणानामधिपतिभ्यो न मम॥ १७॥

ॐ पितरः पितामहाः परेऽवरे ततास्ततामहाः। इह मावन्त्वस्मिन् ब्रह्मण्यस्मिन् क्षत्रेऽस्यामाशिष्यस्यां पुरोधायामस्मिन् कर्मण्यस्यां देवहूत्याᳬ स्वाहा। इदं पितृभ्यः पितामहेभ्यः परेभ्योऽवरेभ्यस्ततेभ्य-स्ततामहेभ्यो न मम॥ १८॥

पुनः प्रणीताके जलसे दाहिने हाथकी अंगुलियोंको प्रक्षालित करे।

आज्यहोम—

निम्नलिखित पाँच मन्त्रोंसे घीकी पाँच आहुति दे—

ॐ अग्निरैतु प्रथमो देवतानाᳪ सोऽस्यै प्रजां मुञ्चतु मृत्युपाशात्। तदयᳪ राजा वरुणोऽनुमन्यतां यथेयᳪ स्त्री पौत्रमघन्नरोदात्स्वाहा॥ इदमग्नये न मम॥ १॥

ॐ इमामग्निस्त्रायतां गार्हपत्यः प्रजामस्यै नयतु दीर्घमायुः।

अशून्योपस्था जीवतामस्तु माता पौत्रमानन्दमभिविबुध्यतामियꣳ स्वाहा। इदमग्नये न मम॥ २॥

ॐ स्वस्ति नो अग्ने दिव आ पृथिव्या विश्वानि धेह्ययथा यजत्र। यदस्यां महि दिवि जातं प्रशस्तं तदस्मासु द्रविणं धेहि चित्रꣳ स्वाहा। इदमग्नये न मम॥ ३॥

ॐ सुगं नु पन्थां प्रदिशन्न एहि ज्योतिष्मध्ये ह्यजरन्न आयुः। अपैतु मृत्युरमृतन्न आगाद्वैवस्वतो नो अभयं कृणोतु स्वाहा। इदं वैवस्वताय न मम॥ ४॥

पुनः प्रणीताके जलसे दाहिने हाथकी पाँचों अंगुलियोंका प्रक्षालन करे।

अन्तःपट हवन[1]—

वर-वधू और अग्निके बीचमें कपड़ा तानकर आगे कहे गये मन्त्रको मनमें उच्चारणकर होता आहुति दे। अर्थात् यह आहुति मृत्युदेवताके लिये है, इसको वर-कन्या न देखने पायें, इसलिये अग्नि और वर-कन्याके बीचमें कपड़ा ताननेका विधान है।

मन्त्र—

ॐ परं मृत्यो ऽअनुपरे हि पन्थां यस्ते ऽ अन्य इतरो देवयानात्। चक्षुष्मते शृण्वते ब्रवीमि मा नः प्रजाꣳ रीरिषो मोत वीरान् स्वाहा। इदं मृत्यवे न मम॥ ५॥

तदनन्तर अन्तःपट हटाकर **'यथा बाणप्रहाराणां०-'** मन्त्रसे प्रणीताके जलका स्पर्श करे।[2]

लाजाहोम[3]—

पूर्वोक्त होम करनेके पश्चात् लाजाहोमका विधान है। इसका क्रम

---

१. मृत्योर्होमन्तु यः कुर्यादन्तर्धानं विना वरः। अशुभं जायते तस्य दम्पत्योरल्पजीवनम्॥

२. राजस्थानकी परम्परामें इस समय वरपक्षीय और कन्यापक्षीय पुरोहित क्रमसे शाखोच्चार करते हैं तथा चँवरीरोपण करते हैं।

३. भृष्टव्रीहिर्भवेल्लाजाः शमीपालाशमिश्रिताः। ताभिर्होमं वधूः कुर्यात्पतिभ्रातृसहाऽग्रया॥

यह है कि वधूको आगे करके वर पूर्वमुख खड़ा हो, वरकी अंजलिपर वधूकी अंजलि रखे। इस समय वधूका भ्राता घृत लगे हुए शमीपत्र, पलाशमिश्रित धानका लावा (खील)-को एक शूर्प (सूप)-में रख दे, फिर उन खीलोंके चार भाग करे। उनमेंसे एक-एक भागको अलग-अलग अंजलिसे कन्याकी अंजलिमें डाले। कन्या अपनी अंजलिमें प्राप्त खीलोंसे तीन बार आहुति दे।

निम्न मन्त्रसे अंजलिमें रखे लावामेंसे तृतीयांश लावा अग्निमें हवन कर दे—

ॐ अर्यमणं देवं कन्याऽऽग्निमयक्षत। स नो अर्यमा देवः प्रेतो मुञ्चतु मा पतेः स्वाहा, इदमर्यम्णे न मम॥ १॥

निम्न मन्त्रसे अंजलिमें बचे लावासे आधा लावा होम करे—

ॐ इयं नार्युपब्रूते लाजानावपन्तिका। आयुष्मानस्तु मे पतिरेधन्तां ज्ञातयो मम स्वाहा॥ इदमग्नये न मम॥ २॥

निम्न मन्त्रसे अंजलिमें स्थित सम्पूर्ण लावाका होम कर दे—

ॐ इमाँल्लाजानावपाम्यग्नौ समृद्धिकरणं तव। मम तुभ्यं च संवननं तदग्निरनुमन्यतामियꣳ स्वाहा॥ इदमग्नये न मम॥ ३॥

इस प्रकार प्रथम भागकी तीन आहुतियाँ पूर्ण होती हैं।

सांगुष्ठहस्तग्रहण—

इसके अनन्तर वर वधूका अंगुष्ठसहित दाहिना हाथ पकड़कर निम्नलिखित मन्त्रोंको पढ़े—

ॐ गृभ्णामि ते सौभगत्वाय हस्तं मया पत्या जरदष्टिर्यथासः। भगो ऽअर्यमा सविता पुरन्धिर्मह्यन्त्वाऽदुर्गार्हपत्याय देवाः॥ १॥

ॐ अमोऽहमस्मि सा त्वꣳ सा त्वमस्यमोऽहम्। सा माहमस्मि ऋक् त्वं द्यौरहं पृथिवी त्वम्॥ २॥

ॐ तावेवि विवहावहै सह रेतो दधावहै। प्रजां प्रजनयावहै पुत्रान् विन्दावहै बहून्॥ ३॥

ॐ ते सन्तु जरदष्टयः सं प्रियौ रोचिष्णू सुमनस्यमानौ। पश्येम शरदः शतं जीवेम शरदः शतꣳ शृणुयाम शरदः शतम्॥ ४॥

अश्मारोहण—

इसके बाद अग्निके उत्तर पूर्वमुख बैठी हुई वधूका पहलेसे रखे हुए पत्थरपर वर दाहिना पैर रखवाये[१] और निम्नलिखित मन्त्र पढ़े—

ॐ आरोहेममश्मानमश्मेव त्वꣳ स्थिरा भव।
अभितिष्ठ पृतन्यतोऽवबाधस्व पृतनायतः॥

गाथागान—

वधूके पत्थरपर पैर रखे रहनेपर ही वर निम्नलिखित गाथा[२] का गान करे—

ॐ सरस्वति प्रेदमव सुभगे वाजिनीवती।
यां त्वा विश्वस्य भूतस्य प्रजायामस्याग्रतः।
यस्यां भूतꣳ समभवद्यस्यां विश्वमिदं जगत्।
तामद्य गाथां गास्यामि या स्त्रीणामुत्तमं यशः॥

---

१. वर अपने बाँयें हाथसे वधूके दाहिने पैरको शिलापर मन्त्रोच्चारणपूर्वक रखवाये।
वरस्तु वामहस्तेन वधूपादं च दक्षिणम्। शिलामारोहयेत्प्राज्ञो मन्त्रोच्चारणपूर्वकम्॥
कन्या दोनों पैर शिलापर न रखे, ऐसा करनेसे शक्तिरूपी शिला (शिल) और शिवरूप शिलापति (लोढा)-के रुष्ट होनेसे कन्या विधवा होती है।
शक्तिरूपा शिला प्रोक्ता शिवरूपः शिलापतिः। तत्राङ्गुष्ठद्वयस्पर्शात्कन्या तु विधवा भवेत्॥

२. गाथागान—
राघवेन्द्रे यथा सीता विनता कश्यपे यथा। पावके च यथा स्वाहा तथा त्वं मयि भर्तरि॥
अनिरुद्धे यथैवोषा दमयन्ती नले यथा। अरुन्धती वसिष्ठे च तथा त्वं मयि भर्तरि॥
सुदक्षिणा दिलीपे तु वसुदेवे च देवकी। लोपामुद्रा यथाऽगस्त्ये तथा त्वं मयि भर्तरि॥
शन्तनौ च यथा गङ्गा सुभद्रा च यथार्जुने। धृतराष्ट्रे च गान्धारी तथा त्वं मयि भर्तरि॥
गौतमे च यथाऽहल्या द्रौपदी पाण्डवेषु च। यथा बालिनि तारा च तथा त्वं मयि भर्तरि॥
मन्दोदरी रावणे च रामे यद्वत्तु जानकी। पाण्डुराजे यथा कुन्ती तथा त्वं मयि भर्तरि॥
अत्रौ यथाऽनसूया च जमदग्नौ च रेणुका। श्रीकृष्णे रुक्मिणी यद्वत्तथा त्वं मयि भर्तरि॥
शम्बरे तपनी यद्वद् दुष्यन्ते च शकुन्तला। मेरुदेवी यथा नाभौ तथा त्वं मयि भर्तरि॥
रेवती बलभद्रे च साम्बे च लक्ष्मणा यथा। रुक्मिसुता कृष्णपुत्रे तथा त्वं मयि भर्तरि॥
जानकी च यथा रामे उर्मिला लक्ष्मणे यथा। कुशे कुमुद्वती यद्वत् तथा त्वं मयि भर्तरि॥

तदनन्तर आगे वधू एवं पीछे वर होकर एक साथ प्रणीता, ब्रह्मा तथा अग्निकी एक प्रदक्षिणा करें। उस समय निम्न मन्त्र पढ़ें—

ॐ तुभ्यमग्रे पर्यवहन् सूर्यां वहतु ना सह।
पुनः पतिभ्यो जायां दाऽग्ने प्रजया सह॥

इसके बाद अग्निके पश्चिम खड़े होकर पूर्वके समान द्वितीय तथा तृतीय भागसे तीन-तीन बार लाजाहोम, अँगूठेके साथ हस्तग्रहण, अश्मा-रोहण, गाथागान और अग्निकी प्रदक्षिणा करें और यह सब दो बार और करें, इस प्रकार तीन बार करनेसे नौ लाजाहुति, तीन बार हस्तग्रहण, तीन बार अश्मारोहण और तीन बार गाथागान हो जाता है।

अवशिष्ट लाजाहोम—

सूपमें खीलोंका जो चौथा भाग बचा रहता है, कन्याके भ्राताद्वारा सूपके कोणकी तरफसे कन्याकी अंजलिमें दिये हुए उस बचे हुए लावासे कन्या (वधू) निम्न मन्त्र बोलकर एक बारमें सम्पूर्ण हवन करे—

ॐ भगाय स्वाहा, इदं भगाय न मम।

चौथी परिक्रमा—

तदनन्तर आगे वर पीछे वधू होकर चौथी परिक्रमा करे।

प्राजापत्य हवन—

पुनः बैठकर ब्रह्मासे अन्वारब्ध होकर घीसे निम्न मन्त्र बोलकर हवन करे तथा स्रुवमें बचे हुए घीको प्रोक्षणीपात्रमें छोड़े—

ॐ प्रजापतये स्वाहा, इदं प्रजापतये न मम॥

सप्तपदी

प्राजापत्य होमके अनन्तर अग्निके उत्तरकी ओर ऐपनसे उत्तरोत्तर सात मण्डल बनाये या लावाका सात पुंज रखकर वर वधूको सप्तपदका क्रमण कराये अर्थात् वधूका दाहिना पैर अपने दाहिने हाथसे

उस मण्डलपर रखवाये। प्रथम मण्डलपर पैर रखवानेपर वर कहे—

ॐ एकमिषे विष्णुस्त्वा नयतु॥ १॥

हे सखे! पहले मण्डलमें तुम अपना दाहिना पग रखो, इससे तुम्हारे मनोभिलषित फलोंको भगवान् विष्णु तुम्हें प्रदान करेंगे।

इस प्रकार वरके प्रोत्साहित वचनको सुनकर वधू अपने आनन्दको प्रकट करती हुई प्रथम मण्डलमें पैर रखते ही नम्र प्रार्थनारूप प्रतिज्ञा करके कहती है—

धनं धान्यं च मिष्टान्नं व्यञ्जनाद्यं च यद् गृहे।
मदधीनं हि कर्तव्यं वधूराद्ये पदेऽब्रवीत्॥

अर्थात् धन, धान्य, अन्नादि मधुर व्यञ्जन आदि जो आपके घरमें हैं, वे सब आप मेरे अधीन करें, ताकि उन पदार्थोंसे मैं सास-श्वसुर, अतिथि, परिजन, सेवकादिकी यथार्थ सेवा कर सकूँ।

पुनः वर कहता है—

ॐ द्वे ऊर्जे विष्णुस्त्वा नयतु॥ २॥

हे सखे! दूसरे मण्डलमें तुम दाहिना पग रखो, इससे तुम्हारे शरीरादिमें भगवान् विष्णु सुन्दर बल उत्पन्न करेंगे।

इस प्रकार वरके द्वारा आनन्दित की गयी वधू अपने आदरको प्रकट करती हुई वरसे दूसरी प्रार्थना करती है—

कुटुम्बं रक्षयिष्यामि ते सदा मञ्जुभाषिणी।
दुःखे धीरा सुखे हृष्टा द्वितीये साऽब्रवीद्वरम्॥

मैं आपके कुटुम्बको पुष्ट करती हुई उसका पालन करूँगी। सदा मीठे वचन बोलनेवाली रहूँगी। कभी कटु वचन नहीं बोलूँगी। यदि कोई दुःख आ पड़े, तो उसमें धैर्य धारण करके रहूँगी अर्थात् आपके सुखमें सुखी और दुःखमें दुखी रहूँगी।

यह सुनकर वर तृतीय पद क्रमण करनेके लिये कहता है—

ॐ त्रीणि रायस्पोषाय विष्णुस्त्वा नयतु॥ ३॥

हे सखे! तीसरे मण्डलमें तुम अपना पग रखो, इससे भगवान् विष्णु विशेष रूपसे तुम्हारे धनकी वृद्धि करेंगे।

यह सुनकर वधू तीसरी प्रार्थना करती है—

पतिभक्तिरता नित्यं क्रीडिष्यामि त्वया सह।
त्वदन्यं न नरं मंस्ये तृतीये साऽब्रवीदिदम्॥

पतिपरायणा होकर मैं सदा तुम्हारे साथ विहार करूँगी। अन्य किसी पुरुषका मनसे भी चिन्तन नहीं करूँगी।

वधूकी इस प्रकार प्रार्थना सुननेके बाद वर पुनः चौथा पद क्रमण कराते हुए कहता है—

ॐ चत्वारि मायोभवाय विष्णुस्त्वा नयतु॥ ४॥

हे सखे! चौथे मण्डलमें तुम दाहिना पग रखो, इससे भगवान् विष्णु तुम्हारे लिये सभी सुखोंको उत्पन्न करेंगे।

इसपर वधू वरसे चौथी प्रार्थना करती है—

लालयामि च केशान्तं गन्धमाल्यानुलेपनैः।
काञ्चनैर्भूषणैस्तुभ्यं तुरीये साऽब्रवीद्वरम्॥

मैं आपके चरणोंसे लेकर सिरके केशोंपर्यन्त सर्वांगकी सेवा गन्ध, माल्य, अनुलेपन और सुवर्णादि आभूषणोंसे श्रृंगार करती हुई सदा ही आपसे स्नेह करती रहूँगी।

वधूकी इस चौथी प्रार्थनाको सुनकर वर पुनः कहता है—

ॐ पञ्च पशुभ्यो विष्णुस्त्वा नयतु॥ ५॥

हे सखे! पाँचवें मण्डलमें तुम अपना दाहिना पग रखो, इससे भगवान् विष्णु तुम्हारे गौ आदि पशुओंकी वृद्धि करेंगे।

वरके इस वाक्यको सुनकर अपने आनन्दको प्रकट करती हुई वधू वरसे पाँचवीं प्रार्थना करती है—

सखीपरिवृता नित्यं गौर्याराधनतत्परा।
त्वयि भक्ता भविष्यामि पञ्चमे साऽब्रवीद्वरम्॥

मैं आपकी मंगलकामनाके लिये अपनी सखियोंके सहित गौरीकी आराधनामें तत्पर रहती हुई आपमें ही भक्ति-भाव करती रहूँगी।

यह सुनकर वर पुनः कहता है—

ॐ षड् ऋतुभ्यो विष्णुस्त्वा नयतु॥ ६ ॥

हे सखे! छठे मण्डलमें तुम अपना पग रखो, इससे भगवान् विष्णु तुमको ऋतुओंका उत्तम समय प्राप्त करायेंगे।

यह सुनकर कन्या वरसे यह प्रार्थना करती है—

यज्ञे होमे च दानादौ भवेयं तव वामतः।
यत्र त्वं तत्र तिष्ठामि पदे षष्ठेऽब्रवीद्वरम्॥

यज्ञ, होम, दानादिकोंके देनेमें आप जहाँ रहेंगे, वहीं मैं आपकी सेवामें स्थित रहूँगी।

सातवें मण्डलमें पैरके रखनेपर वर वधूसे यह कहता है—

ॐ सखे सप्तपदा भव सा मामनुव्रता भव विष्णुस्त्वा नयतु॥ ७॥

हे सखे! सातवें मण्डलमें तुम अपना पग रखो, इस पग रखनेमें तुम पृथिवी आदि सातों लोकोंका सुख भोगनेवाली और सदा हमारी आज्ञाकारिणी रहो। तुम्हें भगवान् विष्णु सातों लोकोंके सुखभोग प्रदान करें और हमारेमें ही प्रीति रखनेवाली पतिव्रता बना दें।

इस प्रकार वरसे प्रोत्साहित की गयी वधू अपने आनन्दको प्रकट करती हुई वरसे सातवाँ वचन यह कहती है—

सर्वेऽत्र साक्षिणो देवा मनोभावप्रबोधिनः।
वञ्चनं न करिष्यामि सप्तमे सा पदेऽब्रवीत्॥

मेरी इन प्रतिज्ञाओंमें अन्तर्यामी देवगण साक्षी रहें, मैं कभी आपकी वंचना नहीं करूँगी।

इन सात मण्डलोंमें क्रमसे वधूके दक्षिण पाद रखनेसे सातकी गणना होती है, वामपादकी नहीं। यही सप्तपदी है। इस सप्तपदीसे कन्यामें दारात्वभाव निश्चित हो जाता है।

सप्तपदीके श्लोक

कन्या और वरके द्वारा कहे जानेवाले अन्य श्लोक भी उपलब्ध होते हैं। उन्हें यहाँ दिया जा रहा है। कन्याके पक्षके पुरोहित तथा वरपक्षके पुरोहितद्वारा इन्हें सुनाना चाहिये। कन्याके सात वाक्य हैं।

कन्याके सात वचन—

तीर्थव्रतोद्यापनयज्ञदानं मया सह त्वं यदि कान्त कुर्याः।
वामाङ्गमायामि तदा त्वदीयं जगाद वाक्यं प्रथमं कुमारी॥ १॥

कन्या कहती है कि हे कान्त! तीर्थ, व्रत, उद्यापन, यज्ञ, दान आदि सभी धर्मकार्य आप मेरे साथ करें तो मैं आपकी वामांगी बनूँगी, यह कन्याका पहला वचन है॥ १॥

हव्यप्रदानैरमरान् पितॄंश्च कव्यप्रदानैर्यदि पूजयेथाः।
वामाङ्गमायामि तदा त्वदीयं जगाद कन्या वचनं द्वितीयम्॥ २॥

यदि आप हविष्यान्न देकर देवताओंकी, कव्य देकर पितरोंकी पूजा करें, तो मैं आपके वामांगमें आऊँगी, यह कन्याका दूसरा वचन है॥ २॥

कुटुम्बरक्षाभरणं यदि त्वं कुर्याः पशूनां परिपालनं च।
वामाङ्गमायामि तदा त्वदीयं जगाद कन्या वचनं तृतीयम्॥ ३॥

यदि आप परिवारकी रक्षा और पशुओंका पालन करें तो मैं आपके वामांगमें आऊँगी, यह कन्याका तृतीय वचन है॥ ३॥

आयं व्ययं धान्यधनादिकानां दृष्ट्वा निवेशं प्रगृहं विदध्याः।
वामाङ्गमायामि तदा त्वदीयं जगाद कन्या वचनं चतुर्थम्॥ ४॥

यदि आप आय-व्यय और धान्यको भरकर गृहस्थीको सम्हालें,

तो मैं आपके वामांगमें आऊँगी, यह कन्याका चतुर्थ वचन है॥ ४॥

देवालयारामतडागकूपवापी विदध्या यदि पूजयेथाः।
वामाङ्गमायामि तदा त्वदीयं जगाद कन्या वचनं च पञ्चमम्॥ ५॥

यदि आप देवालय, बाग, कूप, तडाग, बावली आदि बनवाकर पूजा करें तो मैं आपके वामांगमें आऊँगी, यह कन्याका पंचम वाक्य है॥ ५॥

देशान्तरे वा स्वपुरान्तरे वा यदा विदध्याः क्रयविक्रये त्वम्।
वामाङ्गमायामि तदा त्वदीयं जगाद कन्या वचनं च षष्ठम्॥ ६॥

यदि आप अपने नगरमें अथवा किसी अन्य शहरमें जाकर वाणिज्य-व्यवसाय करें तो मैं आपके वामांगमें आऊँगी, यह कन्याका षष्ठ वाक्य है॥ ६॥

न सेवनीया परिकीयजाया त्वया भवे भाविनिकामिनीश्च।
वामाङ्गमायामि तदा त्वदीयं जगाद कन्यावचनं च सप्तमम्॥ ७॥

यदि आप किसी परायी स्त्रीका स्पर्श न करें, क्योंकि मैं आपके मनको लुभानेवाली कामिनीके रूपमें हूँ। तब मैं आपके वामांगमें आऊँगी, यह कन्याका सप्तम वाक्य है।

वरके कथनीय पाँच वचन—

कन्याके उपर्युक्त सात वचन कहनेपर वर भी पाँच वचन कहता है। जो निम्नलिखित हैं—

क्रीडाशरीरसंस्कारसमाजोत्सवदर्शनम्।
हास्यं परगृहे यानं त्यजेत् प्रोषितभर्तृका॥ १॥

जबतक मैं घर पर रहूँ, तबतक तुम क्रीडा, आमोद-प्रमोद करो, शरीरमें उबटन, तेल लगाकर चोटी गूँथो, सामाजिक उत्सवोंमें जाओ, हँसी-मजाक करो, दूसरेके घर सखी-सहेलीसे मिलने जाओ, परंतु जब मैं घरपर न रहूँ, परदेसमें रहूँ, तब इन सभी व्यवहारोंको छोड़ देना चाहिये॥ १॥

विष्णुर्वैश्वानरः साक्षी ब्राह्मणज्ञातिबान्धवाः।
पञ्चमं ध्रुवमालोक्य ससाक्षित्वं ममागताः॥ २॥

विष्णु, अग्नि, ब्राह्मण, स्वजातीय भाई-बन्धु और पाँचवें ध्रुव (ध्रुवतारा)—ये सभी मेरे साक्षी हैं॥ २॥

तव चित्त मम चित्ते वाचा वाच्यं न लोपयेत्।
व्रते मे सर्वदा देयं हृदयस्थं वरानने॥ ३॥

हे सुमुखि! हमारे चित्तके अनुकूल तुम्हें अपना चित्त रखना चाहिये। अपनी वाणीसे मेरे वचनोंका उल्लंघन नहीं करना चाहिये। जो कुछ मैं कहूँ, उसको सदा अपने हृदयमें रखना चाहिये। इस प्रकार तुम्हें मेरे पातिव्रत्यका पालन करना चाहिये॥ ३॥

मम तुष्टिश्च कर्तव्या बन्धूनां भक्तिरादरात्।
ममाज्ञा परिपाल्यैषा पातिव्रतपरायणे॥ ४॥

मुझे जिस प्रकार सन्तोष हो, वही कार्य तुम्हें करना चाहिये। हमारे भाई-बन्धुओंके प्रति आदरके साथ भक्ति-भाव रखना चाहिये। हे पातिव्रतधर्मका पालन करनेवाली! मेरी इस आज्ञाका पालन करना होगा॥ ४॥

विना पत्नीं कथं धर्म आश्रमाणां प्रवर्तते।
तस्मात्त्वं मम विश्वस्ता भव वामाङ्गगामिनि॥ ५॥

बिना पत्नीके गृहस्थ धर्मका पालन नहीं हो सकता, अतः तुम मेरे विश्वासका पात्र बनो। अब तुम मेरी वामांगी बनो अर्थात् मेरी पत्नी बनो॥ ५॥

एक महत्त्वपूर्ण वचन—

कन्याके सप्तपदीके वचनके उपरान्त वर एक वचन कहता है, जो अत्यन्त महत्त्वपूर्ण एवं मननीय है। वर कहता है—

मदीयचित्तानुगतञ्च चित्तं सदा मदाज्ञापरिपालनं च।
पतिव्रताधर्मपरायणा त्वं कुर्याः सदा सर्वमिदं प्रयत्नम्॥

मेरे चित्तके अनुसार तुम्हारा चित्त होना चाहिये। तुम्हें मेरी आज्ञाका सदा पालन करना चाहिये। पातिव्रतका पालन करती हुई धर्मपरायण बनो, यह तुम्हें प्रयत्नपूर्वक करना चाहिये।

जलाभिषेक—

तदनन्तर अग्निके पश्चिम बैठकर दृढ़ पुरुषके कन्धेपर रखे हुए घड़ेसे आम्रपल्लवद्वारा जल लेकर वर वधूके मस्तकपर निम्न मन्त्रसे जल छिड़के—

ॐ आपः शिवाः शिवतमाः शान्ताः शान्ततमास्तास्ते कृण्वन्तु भेषजम्॥

पुनः कुम्भसे जल लेकर निम्न मन्त्रसे अपने ऊपर जल छिड़के।

ॐ आपो हि ष्ठा मयोभुवस्ता न ऊर्जे दधातन। महे रणाय चक्षसे॥ १ ॥

ॐ यो वः शिवतमो रसस्तस्य भाजयतेह नः। उशतीरिव मातरः॥ २ ॥

ॐ तस्माऽअरङ्गमाम वो यस्य क्षयाय जिन्वथ। आपो जनयथा च नः॥ ३ ॥

सूर्यदर्शन—

यदि दिनका विवाह हो तो वर वधूसे कहे कि तुम सूर्यको देखो, क्योंकि यह तुम्हारे विवाहका साक्षी है—**सूर्यमुदीक्षस्व।** तदनन्तर वर-वधू दोनों सूर्यके अभिमुख खड़े होकर निम्न मन्त्रको पढ़ते हुए हाथमें पुष्प लेकर सूर्यका दर्शन करें—

ॐ तच्चक्षुर्देवहितं पुरस्ताच्छुक्रमुच्चरत्। पश्येम शरदः शतं

जीवेम शरदः शत ँ शृणुयाम शरदः शतं प्र ब्रवाम शरदः शतमदीनाः स्याम शरदः शतं भूयश्च शरदः शतात्॥

और पुष्प छोड़ दें।

ध्रुवदर्शन—

यदि सूर्य अस्त हो गया हो तो रात्रिके विवाहमें वर वधूसे कहे— **ध्रुवमुदीक्षस्व।**

वधू कहे—**ध्रुवं पश्यामि।**

तदनन्तर वर भी ध्रुवको देखते हुए निम्न मन्त्र पढ़े—

ॐ ध्रुवमसि ध्रुवं त्वा पश्यामि ध्रुवैधि पोष्ये मयि। मह्यं त्वाऽदात् बृहस्पतिर्मया पत्या प्रजावती सञ्जीव शरदः शतम्॥

यहाँ वधूको ध्रुव चाहे दिखता न भी हो, परंतु यही कहे कि मैं ध्रुवको देखती हूँ अर्थात् मनसे ध्रुवका ध्यान करती हूँ।

हृदयालम्भन—

इसके बाद वर वधूके दाहिने कन्धेपरसे हाथ ले जाकर वधूके हृदयका स्पर्श करता हुआ निम्न मन्त्रका उच्चारण करे—

ॐ मम व्रते ते हृदयं दधामि मम चित्तमनु चित्तं तेऽ अस्तु। मम वाचमेकमना जुषस्व। प्रजापतिष्ट्वा नियुनक्तु मह्यम्॥

सुमंगली (सिन्दूरदान)—

आचार है कि वरका पिता पुरोहितको दक्षिणा देकर उनसे सिन्दूर ग्रहणकर कुलदेवताके लिये उसमेंसे सिन्दूर निकाले और '**कुलदेवेभ्यो नमः**' कहकर समर्पित करे, इसके बाद वर सिन्दूर लेकर गणेशजीको चढ़ाकर अनामिका अँगुलीका अग्रभाग वधूकी माँगमें रखकर अभिमन्त्रण करे और अनामिका अँगुलीसे वधूके माँगमें सिन्दूर छोड़े। उस समय पठनीय मन्त्र है—

ॐ सुमङ्गलीरियं वधूरिमाᳲ समेत पश्यत। सौभाग्यमस्यै दत्त्वा

याथाऽस्तं विपरेत न॥

सिन्दूरकरण (माँग बहोरन)—

इसके बाद वधूको वरके बाँयी ओर बैठाये[१] और सौभाग्यवती स्त्रियाँ फिरसे अच्छी तरह वधूके माँगमें सिन्दूर पहिरावें।[२] इसीको '**सिन्दूर बहोरन**' या '**माँग बहोरन**' कहते हैं।

ग्रन्थिबन्धन—

इसके बाद पुरोहित वधूके उत्तरीयमें फल, अक्षत, पुष्प, द्रव्य आदि बाँधकर वरके उत्तरीयसे ग्रन्थिबन्धन करे।

गुप्तागारगमन—

तदनन्तर वर और वधू गुप्तागार (कोहबर)-में जायँ, वहाँ आसनपर बैठें तथा वर निम्न मन्त्र पढ़े—

ॐ इह गावो निषीदन्त्विहाश्वा ऽ इह पूरुषाः। इहो सहस्त्रदक्षिणो यज्ञऽ इह पूषा निषीदतु॥

स्विष्टकृत्‌हवन—

वर-वधू पुनः मण्डपमें आयें और स्विष्टकृत् आहुति अग्निमें प्रदान करें। यह आहुति ब्रह्मासे सम्बन्ध रखकर की जाती है।

ॐ अग्नये स्विष्टकृते स्वाहा, इदमग्नये स्विष्टकृते न मम।

संस्त्रवप्राशन—

प्रोक्षणीमें छोड़े गये घृतका प्राशनकर आचमन करे, हाथ धो ले।

मार्जन—

पवित्रीको लेकर निम्न मन्त्रसे प्रणीताके जलसे सिरपर मार्जन करे—

---

१. वामे सिन्दूरदाने च वामे चैव द्विरागमे। वामभागे च शय्यायां नामकर्म तथैव च॥
शान्तिकेषु च सर्वेषु प्रतिष्ठोद्यापनादिषु। वामे ह्युपविशेत् पत्नी व्याघ्राय वचनं यथा॥

२. पतिपुत्रान्विता भव्याश्चतस्त्रः सुभगाः स्त्रियः। सौभाग्यमस्यै दद्युस्ता मङ्गलाचारपूर्वकम्॥
पतिपुत्रवती नारी सुरूपगुणशालिनी। अविच्छिन्नप्रजा साध्वी सदया सा सुमङ्गली॥

ॐ सुमित्रिया न आप ओषधयः सन्तु।

निम्न मन्त्रसे जल नीचे छोड़े—

ॐ दुर्मित्रियास्तस्मै सन्तु योऽस्मान्द्वेष्टि यंच वयं द्विष्मः।

पवित्रप्रतिपत्ति—

इसके बाद उस पवित्रीको अग्निमें छोड़ दे।

पूर्णपात्रदान—

ब्रह्माको देनेके लिये निम्न संकल्पवाक्यसे पूर्णपात्र-दानका संकल्प करे—

ॐ अद्य कृतैतद्विवाहहोमकर्मणि कृताऽकृतावेक्षणरूपकर्म-प्रतिष्ठार्थम् इदं पूर्णपात्रं सदक्षिणाकं प्रजापतिदैवतं ""गोत्राय ""शर्मणे ब्राह्मणाय भवते सम्प्रददे।

ब्रह्मा उसे लेकर कहे—**स्वस्ति।**

प्रणीताविमोक—

तदनन्तर अग्निके पश्चिम या ईशानकोणमें प्रणीतापात्रको उलटकर रख दे।

मार्जन—

इसके बाद उपयमन कुशाद्वारा उलटकर रखे गये प्रणीताके जलसे निम्न मन्त्रसे मार्जन करे—

ॐ आपः शिवाः शिवतमाः शान्ताः शान्ततमास्तास्ते कृण्वन्तु भेषजम्।

उपयमन कुशोंको अग्निमें छोड़ दे।

बर्हिहोम—

इसके बाद जिस क्रमसे कुशकण्डिकाके समय कुशाएँ रखी गयी थीं, उसी क्रमसे उठाकर घीमें भिगोकर निम्न मन्त्रसे अग्निमें छोड़ दे—

ॐ देवा गातुविदो गातुं वित्त्वा गातुमित। मनसस्पत इमं देव यज्ञꣳ स्वाहा वाते धाः॥ स्वाहा।

त्र्यायुष्करण—

होमकी भस्मको स्रुवेसे उठाकर दाहिने हाथकी अनामिकासे निम्न मन्त्रोंका उच्चारणकर भस्म लगाये—

ॐ त्र्यायुषं जमदग्नेः—ललाटमें भस्म लगाये।

ॐ कश्यपस्य त्र्यायुषम्—ग्रीवामें लगाये।

यद्देवेषु त्र्यायुषम्—दाहिने कन्धेपर लगाये।

तन्नो अस्तु त्र्यायुषम्—हृदयमें भस्म लगाये।

अभिषेक—

इसके बाद आचार्य स्थापित दृढ़ पुरुषके कलशके जलसे दूर्वा-कुश अथवा पंचपल्लवसे निम्न मन्त्रोंद्वारा वर-वधूका अभिषेक करे—

ॐ देवस्य त्वा सवितुः प्रसवेऽश्विनोर्बाहुभ्यां पूष्णो हस्ताभ्याम्। सरस्वत्यै वाचो यन्तुर्यन्त्रिये दधामि बृहस्पतेष्ट्वा साम्राज्येनाभिषिञ्चाम्यसौ॥ १॥

ॐ देवस्य त्वा सवितुः प्रसवेऽश्विनोर्बाहुभ्यां पूष्णो हस्ताभ्याम्। सरस्वत्यै वाचो यन्तुर्यन्त्रेणाग्नेः साम्राज्येनाभिषिञ्चामि॥ २॥

ॐ देवस्य त्वा सवितुः प्रसवेऽश्विनोर्बाहुभ्यां पूष्णो हस्ताभ्याम्। अश्विनोर्भैषज्येन तेजसे ब्रह्मवर्चसायाभि षिञ्चामि सरस्वत्यै भैषज्येन वीर्यायान्नाद्यायाभिषिञ्चामीन्द्रस्येन्द्रियेण बलाय श्रियै यशसेऽभि षिञ्चामि॥ ३॥

गणाधिपो भानुशशी धरासुतो बुधो गुरुर्भार्गवसूर्यनन्दनौ।
राहुश्च केतुप्रभृतिर्नवग्रहाः कुर्वन्तु वः पूर्णमनोरथं सदा॥ १॥
उपेन्द्र इन्द्रो वरुणो हुताशनो धर्मो यमो वायुहरिश्चतुर्भुजः।
गन्धर्वयक्षोरगसिद्धचारणाः कुर्वन्तु वः पूर्णमनोरथं सदा॥ २॥
नलो दधीचिः सगरः पुरूरवाः शाकुन्तलेयो भरतो धनञ्जयः।
रामत्रयं वैन्यबलिर्युधिष्ठिरः कुर्वन्तु वः पूर्णमनोरथं सदा॥ ३॥

मनुर्मरीचिर्भृगुदक्षनारदाः पराशरो व्यासवसिष्ठभार्गवाः।
वाल्मीकिकुम्भोद्भवगर्गगौतमाः कुर्वन्तु वः पूर्णमनोरथं सदा॥ ४॥
रम्भा शची सत्यवती च देवकी गौरी च लक्ष्मीरदितिश्च रुक्मिणी।
कूर्मो गजेन्द्रः सचराचरा धरा कुर्वन्तु वः पूर्णमनोरथं सदा॥ ५॥
गङ्गा च क्षिप्रा यमुना सरस्वती गोदावरी वेत्रवती च नर्मदा।
सा चन्द्रभागा वरुणा असी नदी कुर्वन्तु वः पूर्णमनोरथं सदा॥ ६॥
तुङ्गप्रभासो गुरुचक्रपुष्करं गयाविमुक्तो बदरी बटेश्वरः।
केदारपम्पाशरनैमिषारकं कुर्वन्तु वः पूर्णमनोरथं सदा॥ ७॥
शङ्खश्च दूर्वा सितपत्रचामरं मणिः प्रदीपो वररत्नकाञ्चनम्।
सम्पूर्णकुम्भैः सहितो हुताशनः कुर्वन्तु वः पूर्णमनोरथं सदा॥ ८॥
प्रयाणकाले यदि वा सुमङ्गले प्रभातकाले च नृपाभिषेचने।
धर्मार्थकामाय नरस्य भाषितं व्यासेन सम्प्रोक्तमनोरथं सदा॥ ९॥

दूर्वाक्षतारोपण—

अन्य स्त्री-पुरुष पुष्प या लावा हाथमें लेकर आचार्यके द्वारा कहे जाते हुए मन्त्रोंके अन्तमें आशीर्वाद वचनपूर्वक वधू और वरके ऊपर पुष्प या लावा छोड़ें।

इसके बाद आचार्य वर-वधूको तिलक लगाये। देशाचारसे नीराजन करे और वरके पिता आदि वधूकी गोद भरें।

गणेशादि आवाहित देवोंका पूजन—

वर-वधू संकल्पपूर्वक संक्षेपमें गणेश आदि आवाहित देवताओंकी पूजा करें।

आचार्यदक्षिणा—

इसके बाद आचार्यको दक्षिणा देनेके लिये निम्न संकल्पवाक्य बोले—

ॐ अद्य कृतैतद्विवाहकर्मणः साङ्गतासिद्ध्यर्थं आचार्याय मनसोद्दिष्टां दक्षिणां दातुमहमुत्सज्ये।

ब्राह्मणभोजनसंकल्प—

ब्राह्मणभोजन करानेके लिये संकल्प करे।

ॐ अद्य कृतस्य विवाहकर्मणः साङ्गतासिद्ध्यर्थं यथासंख्याकान् ब्राह्मणान् भोजयिष्ये।

भूयसी दक्षिणा—

इसके बाद भूयसी दक्षिणाका संकल्प करे—

ॐ अद्य कृतैतद्विवाहकर्मणः साङ्गतासिद्ध्यर्थं तन्मध्ये न्यूनातिरिक्तदोषपरिहारार्थं नानानामगोत्रेभ्यो ब्राह्मणेभ्यो भूयसीं दक्षिणां विभज्य दातुमहमुत्सृज्ये।

विष्णुस्मरण—

इसके अनन्तर वर हाथमें अक्षत-पुष्प लेकर आवाहित देवताओंका विसर्जनकर निम्न मन्त्रसे विष्णुका स्मरण करे—

प्रमादात् कुर्वतां कर्म प्रच्यवेताध्वरेषु यत्।
स्मरणादेव तद्विष्णोः सम्पूर्णं स्यादिति श्रुतिः॥
यस्य स्मृत्या च नामोक्त्या तपोयज्ञक्रियादिषु।
न्यूनं सम्पूर्णतां याति सद्यो वन्दे तमच्युतम्॥
ॐ विष्णवे नमः, ॐ विष्णवे नमः, ॐ विष्णवे नमः।

****

वर-वधूके तीन रात पालनीय नियम—

१-विवाहके बाद तीन दिनतक क्षार तथा लवणरहित भोजन करें।*

२-भूमिपर शयन करें।

३-एक साथ शयन न करें।

॥ विवाहप्रयोग पूर्ण हुआ॥

---

* गोक्षीरं गोघृतं चैव धान्यं मुद्गास्तिला यवाः। अक्षारलवणा ह्येते क्षाराश्चान्ये प्रकीर्तिताः॥

चतुर्थीकर्म

विवाहके अनन्तर चतुर्थी-होमकर्म आवश्यक कर्म बताया गया है, जो विवाहसंस्कारका महत्त्वपूर्ण अंग है। चतुर्थीकर्मके प्रयोजनमें बताया गया है कि कन्याके देहमें चौरासी दोष होते हैं, उन दोषोंकी निवृत्तिके लिये प्रायश्चित्तस्वरूप चतुर्थीकर्म किया जाता है—

चतुरशीति दोषाणि कन्यादेहे तु यानि वै।
प्रायश्चित्तकरं तेषां चतुर्थी कर्म ह्याचरेत्॥

(मार्कण्डेय)

चतुर्थीकर्मसे सोम, गन्धर्व तथा अग्निद्वारा कन्याभुक्त दोषका परिहार हो जाता है। हारीतऋषिने बताया है कि जो कन्या चतुर्थी-कर्म करती है, वह सदा सुखी रहती है, धनधान्यकी वृद्धि करनेवाली होती है और पुत्र-पौत्रकी समृद्धि देनेवाली होती है। शास्त्रमें यह भी बताया गया है कि चतुर्थीकर्म न करनेसे वन्ध्यात्व और वैधव्य दोष आता है। चतुर्थीकर्मसे पूर्व उसका पूर्ण भार्यात्व भी नहीं होता है। कहा भी गया है कि जबतक विवाह नहीं होता है, उसकी कन्या संज्ञा होती है, कन्यादानके अनन्तर वह वधू कहलाती है, पाणिग्रहण होनेपर पत्नी होती है और चतुर्थीकर्म होनेपर भार्या कहलाती है—

अप्रदानात् भवेत्कन्या प्रदानानन्तरं वधूः।
पाणिग्रहे तु पत्नी स्याद् भार्या चातुर्थिकर्मणि॥

विवाह निवृत्त होनेपर चौथे दिन रात्रिमें पतिके देह, गोत्र और सूतकमें स्त्रीकी एकता हो जाती है—

विवाहे चैव निवृत्ते चतुर्थेऽहनि रात्रिषु।
एकत्वमागता भर्तुः पिण्डे गोत्रे च सूतके॥

(भवदेवभट्टधृत मनु)

चतुर्थी होमके मन्त्रोंसे त्वचा, मांस, हृदय और इन्द्रियोंके द्वारा पत्नीका पतिसे संयोग होता है, इसीसे वह पतिगोत्रा हो जाती है—

चतुर्थीहोममन्त्रेण त्वङ्मांसहृदयेन्द्रियैः।
भर्त्रा संयुज्यते पत्नी तद्गोत्रा तेन सा भवेत्॥

(बृहस्पति)

अतः विवाह दिनसे चौथे दिन रात्रिमें अर्धरात्रि बीत जानेपर यह कर्म करना चाहिये अथवा अशक्त होनेपर अपकर्षण करके विवाहके अनन्तर उसी दिन रात्रिमें उसी विवाहाग्निमें विना कुशकण्डिका किये यह कर्म किया जा सकता है।

चतुर्थीकर्म-प्रयोग

वर-वधू मंगल स्नान करके पवित्र वस्त्र धारणकर पूर्वाभिमुख हो आसनपर बैठ जायँ। वधूको अपने दक्षिण भागमें बैठा ले। आचमन, प्राणायाम आदि करके गणेशादि देवोंका स्मरणकर हाथमें कुशाक्षत-जल लेकर निम्न प्रतिज्ञा-संकल्प करे—

ॐ अद्य अस्या मम पत्न्याः सोमगन्धर्वाग्न्युपभुक्तत्व-दोषपरिहारद्वारा श्रीपरमेश्वरप्रीत्यर्थं विवाहाङ्गभूतं चतुर्थीहोमं करिष्ये।

कहकर संकल्प-जल छोड़ दे।

एक वेदीका निर्माणकर उसके पंचभूसंस्कार कर ले तथा शिखि नामक अग्नि स्थापितकर यथाविधि कुशकण्डिका सम्पादित करे। चरु (खीर)-का पाक बना ले। ब्रह्मा-आचार्यका वरणकर अग्निके दक्षिण तरफ ब्रह्माको बैठाकर उत्तरकी ओर एक जलपात्रका स्थापन करे, तदनन्तर निम्न मन्त्रोंसे घीसे हवन करे, आहुतिके अनन्तर स्रुवमें बचे घीको प्रोक्षणीपात्रमें छोड़ता जाय।

आघाराज्यहोम

ॐ प्रजापतये (यह मनसे ही कहे) **स्वाहा, इदं प्रजापतये न मम।**

ॐ इन्द्राय स्वाहा, इदमिन्द्राय न मम।

ॐ अग्नये स्वाहा, इदमग्नये न मम।

ॐ सोमाय स्वाहा, इदं सोमाय न मम।

प्रधान-होम

घीसे निम्न पाँच आहुतियाँ दे। आहुतियोंको देनेके बाद स्रुवमें बचा हुआ घी उत्तर दिशा में स्थापित जलपात्रमें छोड़े, प्रोक्षणीपात्रमें नहीं—

ॐ अग्ने प्रायश्चित्ते त्वं देवानां प्रायश्चित्तिरसि ब्राह्मणस्त्वा नाथकाम उपधावामि यास्यै पतिघ्नी तनूस्तामस्यै नाशय स्वाहा। इदमग्नये न मम॥ १॥

ॐ वायो प्रायश्चित्ते त्वं देवानां प्रायश्चित्तिरसि ब्राह्मणस्त्वा नाथकाम उपधावामि यास्यै प्रजाघ्नी तनूस्तामस्यै नाशय स्वाहा। इदं वायवे न मम॥ २॥

ॐ सूर्य प्रायश्चित्ते त्वं देवानां प्रायश्चित्तिरसि ब्राह्मणस्त्वा नाथकाम उपधावामि यास्यै पशुघ्नी तनूस्तामस्यै नाशय स्वाहा। इदं सूर्याय न मम॥ ३॥

ॐ चन्द्र प्रायश्चित्ते त्वं देवानां प्रायश्चित्तिरसि ब्राह्मणस्त्वा नाथकाम उपधावामि यास्यै गृहघ्नी तनूस्तामस्यै नाशय स्वाहा। इदं चन्द्राय न मम॥ ४॥

ॐ गन्धर्व प्रायश्चित्ते त्वं देवानां प्रायश्चित्तिरसि ब्राह्मणस्त्वा नाथकाम उपधावामि यास्यै यशोघ्नी तनूस्तामस्यै नाशय स्वाहा, इदं गन्धर्वाय न मम॥ ५॥

इसके बाद स्थालीपाक चरु (खीर) से हवन करे, खीरमें थोड़ा घी छोड़ दे—

ॐ प्रजापतये स्वाहा, इदं प्रजापतये न मम, यह मनसे कहे। बचा चरु एवं घी जलपात्रमें छोड़े।

इसके बाद घी और स्थालीपाक (चरु)-से स्विष्टकृत् हवन करे—

ॐ अग्नये स्विष्टकृते स्वाहा, इदमग्नये स्विष्टकृते न मम।

नवाहुति

पुनः घीसे हवन करे, प्रत्येक आहुतिसे बचा घी प्रोक्षणीपात्रमें छोड़ता जाय—

ॐ भूः स्वाहा, इदमग्नये न मम।

ॐ भुवः स्वाहा, इदं वायवे न मम।

ॐ स्वः स्वाहा, इदं सूर्याय न मम।

ॐ त्वं नो अग्ने वरुणस्य विद्वान् देवस्य हेडो अव यासिसीष्ठाः। यजिष्ठो वह्नितमः शोशुचानो विश्वा द्वेषाꣳसि प्र मुमुग्ध्यस्मत्स्वाहा॥

इदमग्नीवरुणाभ्यां न मम॥ १॥

ॐ स त्वं नो अग्नेऽवमो भवोती नेदिष्ठो अस्या उषसो व्युष्टौ। अव यक्ष्व नो वरुणꣳरराणो वीहि मृडीकꣳ सुहवो न एधि स्वाहा॥

इदमग्नीवरुणाभ्यां न मम॥ २॥

ॐ अयाश्चाग्नेऽस्यनभिशस्तिपाश्च सत्यमित्वमया असि। अया नो यज्ञं वहास्ययया नो धेहि भेषजꣳ स्वाहा॥

इदमग्नये ऽयसे न मम॥ ३॥

ॐ ये ते शतं वरुण ये सहस्रं यज्ञियाः पाशा वितता महान्तः। तेभिर्नो ऽअद्य सवितोत विष्णुर्विश्वे मुञ्चन्तु मरुतः स्वर्काः स्वाहा॥

इदं वरुणाय सवित्रे विष्णवे विश्वेभ्यो देवेभ्यो मरुद्भ्यः स्वर्केभ्यश्च न मम॥ ४॥

ॐ उदुत्तमं वरुण पाशमस्मदवाधमं वि मध्यमꣳ श्रथाय। अथा वयमादित्य व्रते तवानागसोऽअदितये स्याम स्वाहा॥

इदं वरुणायादित्यायादितये न मम॥ ५॥

ये प्रायश्चित्तसंज्ञक हवन हैं।

ॐ प्रजापतये (यह मनमें कहे) **स्वाहा, इदं प्रजापतये न मम।**

यह प्राजापत्यसंज्ञक हवन है।

संस्रवप्राशन—

इसके बाद प्रोक्षणीपात्रमें पड़े घीका प्राशनकर आचमन करे, फिर हाथ धो ले।

मार्जन—

पवित्रीसे प्रणीताके जलसे निम्न मन्त्र पढ़ते हुए मार्जन करे—

ॐ सुमित्रिया न आप ओषधयः सन्तु।

पवित्रीको अग्निमें छोड़ दे।

पूर्णपात्रदान—

इसके बाद ब्रह्माको पूर्णपात्रदान करनेके लिये हाथमें जल-अक्षत लेकर निम्न संकल्प करे—

ॐ अस्यां रात्रौ कृतैतच्चतुर्थीहोमकर्मणि कृताकृतावेक्षणरूप-ब्रह्मकर्मप्रतिष्ठार्थमिदं सदक्षिणाकं पूर्णपात्रं प्रजापतिदैवतम् ....गोत्राय....शर्मणे ब्राह्मणाय दक्षिणात्वेन तुभ्यमहं सम्प्रददे।

ब्रह्माको दक्षिणासहित पूर्णपात्र दे।

ब्रह्मा कहे—**स्वस्ति।**

प्रणीताविमोक—

ईशानकोणमें प्रणीतापात्रको उलट दे और उपयमन कुशोंको अग्निमें छोड़ दे।

बर्हिहोम—

इसके बाद जिस क्रमसे कुश बिछाये गये थे, उसी क्रमसे उठाकर घीसे भिगोकर हाथसे ही निम्न मन्त्रसे अग्निमें हवन कर दे—

ॐ देवा गातुविदो गातु वित्त्वा गातुमित। मनसस्पत इमं देव यज्ञँ स्वाहा वाते धाः स्वाहा॥

कुशमें लगी ब्रह्मग्रन्थि खोल दे।

अभिषेक—

इसके बाद वरुण कलशसे किसी पात्रमें जल देकर आम्रपल्लवसे वर वधूके सिरपर निम्न मन्त्रसे अभिषेक करे—

ॐ या ते पतिघ्नी प्रजाघ्नी पशुघ्नी गृहघ्नी यशोघ्नी निन्दिता तनूः। जारघ्नीं ततऽ एनां करोमि। सा जीर्य त्वं मया सह श्री अमुकि देवि।

स्थालीपाक (चरु-खीरका) प्राशन—

तदनन्तर निम्न चार मन्त्रोंद्वारा वर वधूको स्थालीपाक (चरु—खीर)-का प्राशन कराये—

ॐ प्राणैस्ते प्राणान् सन्दधामि।

ॐ अस्थिभिस्तेऽअस्थीनि सन्दधामि।

ॐ माᳬसैर्माᳬसानि सन्दधामि।

ॐ त्वचा ते त्वचं सन्दधामि।

हृदयस्पर्श—

इसके बाद वधूके हृदयका स्पर्शकर वर निम्न मन्त्र पढ़े—

ॐ यत्ते सुसीमे हृदयं दिवि चन्द्रमसि श्रितम्।
वेदाहं तन्मां तद्विद्यात् पश्येम शरदः शतं जीवेम शरदः शतꣳ शृणुयाम शरदः शतम्॥

कंकणमोक्षण—

इसके बाद वर निम्न मन्त्रसे वधूके हाथमें बँधे कंकणको खोलकर माताको दे दे—

कङ्कणं मोचयाम्यद्य रक्षोघ्नं रक्षणं मम।
मयि रक्षां स्थिरां कृत्वा स्वस्थानं गच्छ कङ्कण॥

ग्रन्थिविमोक—

इसके बाद वर वधूके बँधे हुए ग्रन्थि (गाँठ)-को खोल दे।

त्र्यायुष्करण—

स्त्रुवासे भस्म लेकर दाहिने हाथकी अनामिकासे निम्न मन्त्रोंसे भस्म लगाये—

ॐ त्र्यायुषं जमदग्नेः—ललाटमें भस्म लगाये।
ॐ कश्यपस्य त्र्यायुषम्—ग्रीवामें भस्म लगाये।
ॐ यद्देवेषु त्र्यायुषम्—दक्षिण कन्धेपर भस्म लगाये।
ॐ तन्नोऽस्तु त्र्यायुषम्—हृदयमें भस्म लगाये।

दक्षिणादान—

निम्न संकल्पका उच्चारणकर आचार्यको दक्षिणा प्रदान करे—

ॐ अद्य कृतैतच्चतुर्थीकर्मसाङ्गतासिद्ध्यर्थं गोनिष्क्रयभूतां दक्षिणां ......गोत्राय ......शर्मणे आचार्याय तुभ्यमहं सम्प्रददे।

ब्राह्मणभोजनका संकल्प—

निम्न संकल्पवाक्य बोलकर ब्राह्मणभोजन करानेका संकल्प करे—

ॐ अद्य कृतस्य चतुर्थीकर्मणः साङ्गतासिद्ध्यर्थं यथा-संख्याकान् ब्राह्मणान् भोजयिष्ये।

भूयसी दक्षिणा—

ॐ अद्य कृतैतच्चतुर्थीकर्मसाङ्गतासिद्ध्यर्थं न्यूनाऽतिरिक्तदोष-परिहारार्थं भूयसीं दक्षिणां विभज्य नानानामगोत्रेभ्यो ब्राह्मणेभ्यो सम्प्रददे।

विष्णुस्मरण—

तदनन्तर निम्न मन्त्रको पढ़ते हुए भगवान् विष्णुका स्मरण करे और समस्त कर्म उन्हें निवेदित करे—

प्रमादात् कुर्वतां कर्म प्रच्यवेताध्वरेषु यत्।
स्मरणादेव तद्विष्णोः सम्पूर्णं स्यादिति श्रुतिः॥
यस्य स्मृत्या च नामोक्त्या तपोयज्ञक्रियादिषु।
न्यूनं सम्पूर्णतां याति सद्यो वन्दे तमच्युतम्॥
ॐ विष्णवे नमः, ॐ विष्णवे नमः, ॐ विष्णवे नमः॥

॥ चतुर्थीकर्म पूर्ण हुआ॥

ग्रहपूजादानसङ्कल्प

सूर्यपूजादानसङ्कल्प—

वर हाथमें जलाक्षत तथा सूर्यपूजादानकी वस्तुएँ[1] लेकर सूर्यजनितदोषकी निवृत्तिके लिये निम्न संकल्प करे—

मम अद्य करिष्यमाणविवाहसंस्कारकर्मणि जन्मराशेः सकाशान्नामराशेः सकाशाद्वा अमुकानिष्टस्थानस्थितश्रीसूर्यजनितदोषपरिहारपूर्वकशुभफलप्राप्त्यर्थमायुरारोग्यार्थं श्रीसूर्यनारायणप्रीत्यर्थं च इमानि यथाशक्ति दानोपकरणानि .....गोत्राय .....शर्मणे ब्राह्मणाय तुभ्यमहं सम्प्रददे।

—ऐसा संकल्पकर संकल्पजल तथा दानकी वस्तुएँ ब्राह्मणके हाथ में दे दे।

ब्राह्मण बोले—'**ॐ स्वस्ति।**'

दानकी प्रतिष्ठाके लिये जलाक्षत तथा दक्षिणा लेकर पुनः निम्न संकल्प करे—

अद्य कृतैतत् श्रीसूर्यदानप्रतिष्ठासिद्ध्यर्थमिदं द्रव्यं रजतं चन्द्रदैवतं .....गोत्राय .....शर्मणे ब्राह्मणाय दातुमहमुत्सृज्ये।

—ऐसा बोलकर दक्षिणा ब्राह्मणको दे दे।

ब्राह्मण बोले—'**ॐ स्वस्ति।**'

गुरुपूजादानसङ्कल्प—

कन्यादाता पिता हाथमें जलाक्षत तथा गुरुपूजादानकी वस्तुएँ[2]

---

१. **सूर्यपूजादानसामग्री—**लालवस्त्र, गुड़, सुवर्ण, ताम्रकलश, माणिक्य (लाल रत्न), गेहूँ, रक्तपुष्प, रक्तचन्दन, मसूरकी दाल, धेनुका मूल्य तथा दानप्रतिष्ठाहेतु द्रव्य।
कौसुम्भवस्त्रं गुडहेमताम्रं माणिक्यगोधूमसुवर्णपद्मम्। सवत्सगोदानमितिप्रणीतं दुष्टाय सूर्याय मसूरिका च॥ (संस्कारभास्कर)

२. **गुरुपूजादानसामग्री—**अश्वका मूल्य, सुवर्ण, मधु, पीतवस्त्र, चनेकी दाल, सैंधवनमक, पीतपुष्प, मिश्री, हलदी तथा दानप्रतिष्ठाहेतु द्रव्य।

अश्वं सुवर्णं मधुपीतवस्त्रं सपीतधान्यं लवणं सपुष्पम्। सशर्करं तद्रजनीप्रयुक्तं दुष्टोपशान्त्यै गुरवे प्रणीतम्॥ (संस्कारभास्कर)

लेकर गुरुजनितदोषकी निवृत्तिके लिये निम्न संकल्प करे—

मम अस्याः कन्यायाः करिष्यमाणविवाहसंस्कारकर्मणि जन्मराशेः सकाशान्नामराशेः सकाशाद्वा अमुकानिष्टस्थानस्थित-श्रीगुरुजनितदोषनिवृत्तिपूर्वकशुभफलप्राप्त्यर्थं सौभाग्यायुरारोग्यार्थं श्रीगुरुप्रीत्यर्थमिदं यथाशक्ति दानोपकरणं ⋯⋯गोत्राय ⋯⋯शर्मणे ब्राह्मणाय तुभ्यमहं सम्प्रददे।

—ऐसा संकल्पकर संकल्पजल तथा दानकी वस्तुएँ ब्राह्मणके हाथ में दे दे।

ब्राह्मण बोले—'**ॐ स्वस्ति।**'

दानकी प्रतिष्ठाके लिये जलाक्षत तथा दक्षिणा लेकर पुनः निम्न संकल्प करे—

अद्य कृतैतत् श्रीगुरुदानप्रतिष्ठासिद्ध्यर्थमिदं द्रव्यं रजतं चन्द्रदैवतं ⋯⋯गोत्राय ⋯⋯शर्मणे ब्राह्मणाय दातुमहमुत्सृज्ये।

—ऐसा बोलकर दक्षिणा ब्राह्मणको दे दे।

ब्राह्मण बोले—'**ॐ स्वस्ति।**'

चन्द्रपूजादानसङ्कल्प—

कन्यादाता पिता और वर हाथमें जलाक्षत तथा चन्द्रपूजादानकी वस्तुएँ* लेकर चन्द्रजनितदोषकी निवृत्तिके लिये निम्न संकल्प करे—

मम अस्याः कन्यायाः (वर करे तो **मम** बोले) **करिष्यमाण-विवाहकर्मणि जन्मराशेः सकाशाच्चतुर्थाद्यनिष्टस्थानस्थितचन्द्रेण सूचितं सूचयिष्यमाणं च यत्सर्वारिष्टं तद्विनाशार्थं सर्वदा तृतीयैकादशशुभस्थानस्थितवदुत्तमफलप्राप्त्यर्थमायुरारोग्यार्थं**

---

* **चन्द्रपूजादानसामग्री**—सफेद वस्त्र, शंख, मोती, सुवर्ण, चाँदीकी मूर्ति, दधि, घृतकलश, चावल तथा दानप्रतिष्ठाहेतु द्रव्य। घृतकलशं सितवस्त्रं दधिशङ्खं मौक्तिकं सुवर्णं च। रजतं च प्रदद्याच्चन्द्रारिष्टोपशान्तये त्वरितम्॥ (संस्कारभास्कर)

श्रीचन्द्रदेवप्रीत्यर्थमिदं यथाशक्ति दानोपकरणं ....गोत्राय ....शर्मणे ब्राह्मणाय तुभ्यमहं सम्प्रददे।

—ऐसा संकल्पकर संकल्पजल तथा दानकी वस्तुएँ ब्राह्मणके हाथ में दे दे।

ब्राह्मण बोले—'**ॐ स्वस्ति।**'

दानकी प्रतिष्ठाके लिये जलाक्षत तथा दक्षिणा लेकर पुनः निम्न संकल्प करे—

अद्य कृतैतत् श्रीचन्द्रदानप्रतिष्ठासिद्ध्यर्थमिदं द्रव्यं रजतं चन्द्रदैवतं ....गोत्राय ....शर्मणे ब्राह्मणाय दातुमहमुत्सृज्ये।

—ऐसा बोलकर दक्षिणा ब्राह्मणको दे दे।

ब्राह्मण बोले—'**ॐ स्वस्ति।**'

भाषाशाखोच्चार

प्रथम शाखोच्चार

श्रीगणनायक सुमर कर मन में बारंबार।
सीता राम विवाह का वरणूं शाखोच्चार॥ १ ॥
पुरा जनक मिथिलेश ने यह प्रण किया कठोर।
सीता वरणूं मैं उसे जो शिव धनु दे तोर॥ २ ॥
यह प्रण कर भूपाल ने रचा स्वयंवर फेर।
भूपों को न्यौता दिया तनिक करी ना देर॥ ३ ॥
विश्वामित्र के साथ फिर आये श्रीरघुनाथ।
जिनके लक्ष्मणलालजी अनुजभ्रात थे साथ॥ ४ ॥
और भी आये बहुत से मिलकर भूप अनेक।
खातिर कीनी जनक ने कमी रखी ना नेक॥ ५ ॥
क्षत्री धनुष उठावते मिलकर बारंबार।
पर वह हिलता तक नहीं गये भूप सब हार॥ ६ ॥
देख नृपों की यह दशा क्रुद्ध भए मिथिलेश।
बोले जाना क्षत्री अब रहे न भूपर शेष॥ ७ ॥
प्रण करता मैं ना कभी जो यह लेता जान।
भू पर भूप रहा नहीं कोई भी बलवान्॥ ८ ॥
रामचन्द्र उठे तभी सुन यह वचन कठोर।
उठा धनुष टंकोर कर भू पर गेरा तोर॥ ९ ॥
धनु के टूटत ही भई तहँ पर जय जयकार।
तभी सिया ने राम के जयमाला दी डार॥ १० ॥
दशरथ नृप को फिर तभी नौता दिया भिजाय।
पुनः सजाकर जान को वे भी पहुँचे आय॥ ११ ॥

पुर में पहुँची जब सुनी शुभ बरात भूपाल।
खातिर कीनी बहुत-सी सभी हुए खुशहाल॥ १२॥
घोड़े पर चढ़ कर चले दूल्हा बन रघुनाथ।
पीछे जान सुहावनी चारों भाई साथ॥ १३॥
बहुविधि बाजा बज रहे भेरी ढोल मृदंग।
नृत्य करत तहँ अप्सरा सब के चित्त उमंग॥ १४॥
तोरण चटकी राम ने किया आरता फेर।
विप्रों को दी दक्षिणा कीनी बहुत बखेर॥ १५॥
शतानन्द आये तभी वेदी रची अनूप।
नारी मंगल गावतीं बैठे सजकर भूप॥ १६॥
मण्डप रत्नों से जड़ा सुन्दर बन्दनवार।
कनक कलश पूरित धरे महिमा बड़ी अपार॥ १७॥
विप्र वेद तहं पढ़त हैं शुद्ध ध्यान के साथ।
विष्टर आदिक दे रहे जनक राम के हाथ॥ १८॥
कियो फेर मिथिलेश ने सादर कन्या दान।
लियो राम हर्षाय के सुनियो चतुर सुजान॥ १९॥
दान घनेरा फिर दिया धेनू रत्न अपार।
विप्रों को दी दक्षिणा कीनी जय जयकार॥ २०॥
हुआ राम का जिस तरह मिथिला मांहि विवाह।
उसी तरह होवे यहाँ सब के मन उत्साह॥ २१॥
विश्वम्भर को सुमिर कर कीना शाखोच्चार।
भूल चूक कवियो मेरी लेना आप सुधार॥ २२॥

॥ नारनौलनिवासी हरनारायणकृत भाषाशाखोच्चार॥

****

द्वितीय शाखोच्चार

गजमुख प्रथम मनाय कै गुरुपद पंकज ध्याय।
सकल सभा चित दे सुनो भाषा रची बनाय॥ १ ॥
रामचन्द्र सीतापति, राधा नंदकुँवार।
सावित्री ब्रह्मापति, रच्यो सकल संसार॥ २ ॥
कौसल्या दशरथपती, इन्द्राणी इन्द्राज।
ईश्वर परणी गौरज्या, दमयन्ती नलराज॥ ३ ॥
वसिष्ठ ब्याहि अरुंधती, अर्जुन द्रौपदि साथ।
चन्द्रभार्या रोहिणी, ऋद्धि-सिद्धि गणनाथ॥ ४ ॥
शम्भू पारवतीपति, लक्ष्मीपति भगवान्।
जिन ध्याये आनंदघणा, सुमिरो सबइ सुजान॥ ५ ॥
नांव जो इतना पत्नी को, सुन्दर पुरुष सुजान।
सुन्दर देखत सकल मिल, अपने अपने स्थान॥ ६ ॥
गावत मंगलचार मिल, ध्यावत श्रीगोपाल।
जिन ध्याये सुख पाइये, वर कन्या रिछपाल॥ ७ ॥
पीछे वरणूँ विवाह को, रुक्मण भये आनन्द।
आये कृष्ण बरात ले बाजैं भेरिमृदंग॥ ८ ॥
घुरत नगारा ढोल सब, मधुर गीत औ चंग।
रंग ढोल अति शब्द से, बजे शंख उपशंख॥ ९ ॥
गजमाथे श्रीरजत की, नोशत अंबर झूल।
अंबाडी मोतियन जड़ी रही फूल सी फूल॥ १० ॥
तापै दुलहौ अति सुघड़, पहने उज्ज्वल चीर।
शीश मुकुट हीरे जड़े, भले बने यदुवीर॥ ११ ॥

सज्जन के द्वारे खड़े, मोतियन चौक पुराय।
कियो आरती शुभ घड़ी तोरण लियो छुवाय॥ १२ ॥
सिंहासन बैठे साँवरे, राधा नन्दकुँवार।
मानो उगतो शरद चन्द, सोलह कला सँवार॥ १३ ॥
गणपति की पूजा करी, ब्रह्मा वेद पढ़न्त।
कीन्हीं आज्ञा निजन कूं, ज्ञानवन्त धनवन्त॥ १४ ॥
तिलक जो कियो ललाट पर अक्षत धरे बनाय।
दयी दक्षिणा द्विजन कूं लयी सबी मन भाय॥ १५ ॥
दे अशीश ब्राह्मण चले, सुखी रहो यजमान।
इहँ बिधि कन्यादान दे, भोत कियो सनमान॥ १६ ॥
करी कृपा हरनाथजी जादू रची बनाय।
या जोड़ी अविचल सदा, दुलहिन दूलोराय॥ १७ ॥
इतीक मेरी उक्ति है, शाखा कही बनाय।
व्रजनँद सुत की बीनती, सुन लीज्यो रघुराय॥ १८ ॥

****

तृतीय शाखोच्चार

गणपति गौरीपुत्र को, सुमिरूँ बारंबार।
देवी विष्णू शम्भु को, सुमिरूँ सृष्टिकर्तार॥ १ ॥
पाँच देव को ध्याय के, शाखा कहूँ बनाय।
राधाकृष्ण के ब्याह की, सुनियो चित्त लगाय॥ २ ॥
जो सुनके सुख होयगो, सबही के मनमाहिं।
दुःख मिटै संकट कटै, सकल पाप मिटि जाँहि॥ ३ ॥
एक समय वृषभानुजा, मन में बहुत बिचारि।
वर ढूँढ़न नापित कही, ढूँढ़ै कृष्ण मुरारि॥ ४ ॥

समय देख के ब्याह का, शुभ दिन वार विचार।
लग्न लिखायो शुभ घड़ी, कीन्हो मंगलचार॥ ५ ॥
लग्न लेय नापित चल्यो, घर दीन्यो वसुदेव।
झोरी डार्‌यो कृष्ण की सबही कीन्हो नेव॥ ६ ॥
ब्याह दिवस आयो जभी सजकर चली बरात।
हस्ती घोड़े रथ सजे, मारग नहीं समात॥ ७ ॥
नर नारी देखैं सभी मन में हर्ष उठाय।
सो छवि कृष्णबरात की, हमसैं कही न जाय॥ ८ ॥
गिरिधारी चौरी चढ़े, पण्डित लिये बुलाय।
बहुत भाँति बेदी रची मन्त्र पढ़ै चितलाय॥ ९ ॥
दुलहन रानी राधिका, वर भये नन्दकुमार।
नारि देवैं सीठने, हो रहे मंगलचार॥ १० ॥
नारि कहै इक कृष्ण से, अति अचरज की बात।
कैसे बारी उमर में, गिरी उठायो हाथ॥ ११ ॥
छन्द कहावें कामिनी, वारि वारि दें दान।
कृष्णचन्द्र मुख से कहैं, नारि करें सनमान॥ १२ ॥
श्रीराधा परणाय के, विनय करी वृषभान।
नन्दराय तुम हो बड़े मोहिं दास कर मान॥ १३ ॥
ऐसे बिनती करि घनी, दीन्हे दान अघाय।
हस्ती घोड़े रथ सभी, दीन्हें बहुत सजाय॥ १४ ॥
बहुत दास दासी दिये, गहिने वस्त्र सजाय।
विरषभान के दान की, गिनती कही न जाय॥ १५ ॥
होय बिदा घर को चले, बड़े खुशी नँदराय।
सब सुन्दर बाजे बजे ध्वजा फरकती जाय॥ १६ ॥

शाखा कृष्ण के ब्याह की, सुने जु चित्त लगाय।
दुब्ध्या मन की बीसरे, सकल काम हो जाय॥ १७॥
इतीक मेरी उक्ति है, शाखा कही बनाय।
चिरंजीव यह वरवधू, सुनो गोत्र चितलाय॥ १८॥

****

चतुर्थ शाखोच्चार

जलज सुवन सुतरिपुजनक, ता सुत को चित धार।
अज सुत सुत के विवाह को, वरणो शाखोच्चार॥ १ ॥
अवधपुरी अति पावनी, सरयू गंगा तीर।
भक्तन के सुख देन कूँ, प्रगटे श्रीरघुबीर॥ २ ॥
विश्वामित्र महामुनी, जाचे कौसलराज।
रघुवर लक्ष्मण संग लिये, यज्ञ सुधारण काज॥ ३ ॥
रचो स्वयम्बर जनकजी, करन धनुष को भंग।
कौशिक मिथिलापुर गये, दोनों भाई संग॥ ४ ॥
खबर भई तब जनक को, आये विश्वामित्र।
बहु प्रकार सनमान करि, आसन दिये विचित्र॥ ५ ॥
बोले बन्दीजन तभी, सुनो भूप दे कान।
सो सीता को परणसी, जो तोड़े धनुबान॥ ६ ॥
तमक उठे तब मूढ़ जन, कुल के देव मनाय।
धनुष टरो नहीं धरणि से, बैठे तेज गमाय॥ ७ ॥
जनक वचन तीखे कहे, लक्ष्मण कीनो कोप।
भरी सभा के बीच में, प्रण कीनो पग रोप॥ ८ ॥
गुरु की आज्ञा पाय के, तब उठे रघुबीर।
धनुष तोड़ टुकड़ा किया, सूर्यवंश रणधीर॥ ९ ॥

जनक सुता हरषित भई, पुष्पमाल लेइ हाथ।
गल डाली रघुनाथ के सब सखियों के साथ॥ १० ॥
परशुराम आये तभी, मन में क्रोध अपार।
विनय करी अवतार लखि, धनुष बाण दिये डार॥ ११ ॥
खबर करी अवधेश को, आये जान बनाय।
नाना वाहन पालकी, शोभा कही न जाय॥ १२ ॥
सामेले जब आईया, जनक सहित परिवार।
तोरण बेग छवाईयां, कामण गावे नार॥ १३ ॥
गणपति की पूजा करी, मोतियन चौक पुराय।
वस्त्र ग्रंथी बन्धन कियो, सीता को बुलवाय॥ १४ ॥
हथलेवो जोड़ो जब, सुर मुनी वेद पढंत।
ब्रह्मादिक अरु वसिष्ठजी, विधि से हवन करन्त॥ १५ ॥
कुलगुरु शाखा पढ़ रहे, हो रही जय जयकार।
चारूं भाई परणीया, जनक राय के द्वार॥ १६ ॥
हथलेवो छुट्यो जब, दीने रतन अपार।
सीताजी के दान को, को कवि वरणे पार॥ १७ ॥
दशरथ अति हर्षित भये, अवधपुरी में आय।
माता कीनो आरतो, सुवरण थाल सजाय॥ १८ ॥
शहर राजगढ़ गौड़ द्विज, कौशिक गोत्र सुखखान।
रूलीराम की बीनती, सुनयों कृपानिधान॥ १९ ॥

॥ रूलीरामकृत शाखोच्चार ॥

****

वंशगोत्रोच्चारण *

कन्यापक्षका पुरोहित पढ़े—

श्रीमन्त यशवन्त पुण्यं पवित्रं यजमानसा।
रामप्रतापजी **परपौत्रीं** वांसलस्य **गोत्रीम्॥ १॥**
श्रीमन्त यशवन्त पुण्यं पवित्रं यजमानसा।
द्वारकाप्रसादजी परपौत्रीं वांसलस्य गोत्रीम्॥ २॥
श्रीमन्त यशवन्त पुण्यं पवित्रं यजमानसा।
चेतरामजी परपौत्रीं वांसलस्य गोत्रीम्॥ ३॥
रामचन्द्रजी पौत्रीं सीतारामजी पुत्री।
वरकन्या चिरंजीव जोड़ी अमर॥ ४॥

वरपक्षका पुरोहित पढ़े—

साहनपति श्री साहजी, साहन के शिर छत्र।
सांवलरामजी **परपौत्र हैं,** गर्ग **है जिनका गोत्र॥**
साहनपति श्री साहजी, साहन के शिर छत्र।
श्रीकिसनजी परपौत्र हैं, गर्ग है जिनका गोत्र॥
साहनपति श्रीसाहजी, साहन के शिर छत्र।
मथुरादासजी परपौत्र हैं, गर्ग है जिनका गोत्र॥
गोविन्दप्रसादजी पौत्र जगदीशप्रसादजी पुत्र।
वरकन्या चिरंजीव जोड़ी अमर॥

---

* वंशगोत्रोच्चारणमें नाम तथा गोत्र कल्पित दिये गये हैं, उच्चारणके समय इनमें यथोचित परिवर्तन कर लेना चाहिये।

[१५] (क) विवाहाग्निपरिग्रहसंस्कार

विवाह-संस्कारमें लाजाहोम आदिकी क्रियाएँ जिस अग्निमें सम्पन्न की जाती हैं, वह अग्नि आवसथ्याग्नि, गृह्याग्नि, स्मार्ताग्नि, वैवाहिकाग्नि तथा औपासनाग्नि नामसे कही जाती है। विवाहके अनन्तर जब वर-वधू अपने घर आने लगते हैं, तब उस स्थापित अग्निको घर लाकर यथाविधि स्थापित करके उसमें प्रतिदिन अपनी कुलपरम्परानुसार सायं-प्रातः हवन करनेका विधान है। गृहस्थके लिये दो प्रकारके शास्त्रीय कर्मोंको करनेकी विधि है—१-श्रौतकर्म, २-स्मार्तकर्म। पंचमहायज्ञ आदि पाकयज्ञ-सम्बन्धी* जो कर्म हैं, वे स्मार्तकर्म हैं, इनके लिये जो पाक (भोजन) आदिका निर्माण होता है, वह इसी स्थापित अग्निमें सम्पादित होता है। गृहस्थके लिये नित्य होमकी विधि है, वह भी इसी अग्निमें होता है। यह अग्नि कभी बुझनी नहीं चाहिये। अतः इसकी प्रयत्नपूर्वक रक्षा की जाती है। मनुस्मृतिमें बताया गया है कि गृहाश्रमीको चाहिये कि वह विवाहके समय लायी गयी तथा घरमें प्रतिष्ठित अग्निमें विधिपूर्वक गृहस्थकर्म (प्रातः-सायं हवन आदि कर्म), पंचमहायज्ञ, बलिवैश्वदेव और प्रतिदिनकी रसोई करे—

वैवाहिकेऽग्नौ कुर्वीत गृह्यं कर्म यथाविधि।
पञ्चयज्ञविधानं च पक्तिं चान्वाहिकीं गृही॥
वैश्वदेवस्य सिद्धस्य गृह्येऽग्नौ विधिपूर्वकम्।
आभ्यः कुर्याद् देवताभ्यो ब्राह्मणो होममन्वहम्॥

(मनुस्मृति ३। ६७, ८४)

---

* अष्टकाश्राद्ध, पार्वणश्राद्ध, श्रावणी-उपाकर्म, आग्रहायणी, चैत्री, आश्वयुजी एवं औपासनहोम—ये सात कर्म सात पाकयज्ञसंस्थाएँ कहलाती हैं। पारस्करगृह्यसूत्रमें इनके अनुष्ठानकी विधि विस्तारसे निरूपित है।

इसी बातको याज्ञवल्क्यस्मृति (आचा० ९७)-में इस प्रकार बताया गया है—

'कर्म स्मार्तं विवाहाग्नौ कुर्वीत प्रत्यहं गृही'

****

(ख) त्रेताग्निसंग्रहसंस्कार

विवाहाग्निसंस्कारमें बताया गया है कि गृहस्थको श्रौत तथा स्मार्त दो कर्मोंका सम्पादन करना पड़ता है। स्मार्तकर्मोंका सम्पादन विवाहाग्निमें सम्पादित होता है और श्रौतकर्मोंका सम्पादन त्रेताग्निमें होता है—

स्मार्तं वैवाहिके वह्नौ श्रौतं वैतानिकाग्निषु।

(व्यासस्मृति २। १६)

विवाहाग्नि (गृह्याग्नि)-के अतिरिक्त तीन अग्नियाँ और होती हैं, जो दक्षिणाग्नि, गार्हपत्य तथा आहवनीय नामसे कही जाती हैं, इन तीनों अग्नियोंका जो सामूहिक नाम है, उसे त्रेताग्नि, श्रौताग्नि अथवा वैतानाग्नि कहा जाता है। गृहस्थके लिये यह विधि है कि वह सभी श्रौत कर्मोंको त्रेताग्निमें सम्पादित करे, विवाहाग्निमें नहीं। इन तीन अग्नियोंकी स्थापना, उनकी प्रतिष्ठा, रक्षा तथा उनका हवनकर्म त्रेताग्निसंग्रहसंस्कार कहलाता है। प्राचीन भारतीय सनातन-परम्परामें यज्ञोंका सम्पादन मुख्य रूपसे होता रहा है। वैदिक यज्ञोंके अनेक भेद वहाँ बताये गये हैं, किंतु मुख्य रूपसे इनका समाहार तीन प्रकारकी यज्ञसंस्थाओं—१-पाकयज्ञसंस्था, २-हविर्यज्ञसंस्था, ३-सोमयज्ञसंस्थाके अन्तर्गत हो जाता है। एक-एक संस्थामें पुनः सात-सात यज्ञ सम्मिलित हैं। पाकयज्ञसम्बन्धी यज्ञों (१-अष्टकाश्राद्ध, २-पार्वणश्राद्ध, ३-श्रावणी-उपाकर्म, ४-आग्रहायणी, ५-चैत्री, ६-आश्वयुजी, ७-

औपासनहोम)-का अनुष्ठान विवाहाग्निमें होता है और हविर्यज्ञ तथा सोमयज्ञसंस्थाके कर्म त्रेताग्निमें सम्पन्न होते हैं। हविर्यज्ञसंस्थाके जो सात प्रधान यज्ञ हैं, वे इस प्रकार हैं—१-अग्न्याधेय (अग्निहोत्र), २-दर्शपौर्णमास, ३-आग्रहायण, ४-चातुर्मास्य, ५-निरूढपशुबन्ध, ६-सौत्रामणियाग तथा ७-पिण्डपितृयज्ञ। सोमयज्ञसंस्थाके मुख्य सात भेदोंके नाम इस प्रकार हैं—१-अग्निष्टोम, २-अत्यग्निष्टोम, ३-उक्थ्य, ४-षोडशी, ५-वाजपेय, ६-अतिरात्र और ७-आप्तोर्याम।

इन प्रधान यज्ञोंके भी अनेक भेदोपभेद हैं, जिनका गृह्यसूत्र तथा ब्राह्मणग्रन्थोंमें वर्णन प्राप्त होता है। इन सब यज्ञादिकोंको अपनी धर्मपत्नीके साथ सम्पादित करनेकी विधि है।

विशेष—

वर्तमानमें विवाहाग्निपरिग्रह तथा त्रेताग्निसंग्रह—ये दोनों संस्कार प्रायः लुप्त हो गये हैं।

अन्त्येष्टिसंस्कार

अन्त्येष्टिसंस्कारका सामान्य परिचय

जीवकी सद्गतिके उद्देश्यसे मरणासन्न-अवस्थामें किया जानेवाला दानादि कृत्य तथा मृत्युके तत्काल बादका दाहादि कर्म और षट्पिण्डदान—अन्त्येष्टि संस्कार कहलाता है। अन्त्येष्टि शब्द अन्त्य और इष्टि—इन दो पदोंके योगसे बना है। अन्त्यका अर्थ है अन्तिम और इष्टिका सामान्य अर्थ है यज्ञ। सामान्य रूपसे मृत्युके अनन्तर किया जानेवाला संस्कार अन्त्येष्टिसंस्कार कहलाता है। पहला संस्कार है—आधान अर्थात् गर्भाधान और अन्तिम संस्कार है—अन्त्येष्टि। इसीको अन्त्यकर्म, और्ध्वदैहिक संस्कार, पितृमेध तथा पिण्डपितृयज्ञ भी कहा गया है। मनुस्मृतिने '**निषेकादिश्मशानान्तो०**' (२।१६) इस वचनमें आदिम संस्कार निषेक (गर्भाधान) तथा अन्तिम संस्कार श्मशान (अन्त्येष्टि) बताया है। महर्षि याज्ञवल्क्यजीने भी यही बात कही है कि द्विजोंके गर्भाधानसे लेकर श्मशानतकके संस्कार मन्त्रपूर्वक करने चाहिये—'**ब्रह्मक्षत्रियविट्शूद्रा वर्णास्त्वाद्यास्त्रयो द्विजाः। निषेकाद्याः श्मशानान्तास्तेषां वै मन्त्रतः क्रियाः॥**' (१।२।१०) यह संस्कार भी शरीरके माध्यमसे ही होता है। संस्कृत अग्निसे शरीरके दाहसे उसके आत्माकी परलोकमें सद्गति होती है।

अन्त्येष्टि संस्कार मुख्यतः दो रूपोंमें सम्पन्न होता है। पहला पक्ष मरणासन्न-अवस्थाका है और दूसरा पक्ष मृत्युके अनन्तर अस्थिसंचयनतक किया जानेवाला कर्म है। जन्मकी समाप्ति मरणमें होती है, इसीलिये मृतकका संस्कार यथाविधि अवश्यकरणीय है।

मरणासन्नावस्थाके दान—

जीवनके अन्तिम कालमें गोदान, सुवर्णदान, भूमिदान, तिलदान आदिका विशेष महत्त्व है। मरणासन्न व्यक्तिके हाथसे ये दान सम्पन्न

कराने चाहिये, यदि यह सम्भव न हो तो उत्तराधिकारी या प्रतिनिधि इस कार्यको सम्पन्न कर सकते हैं। महाभारतमें बताया गया है कि ये दस दानादि पापी मनुष्यको भी तार देते हैं—'**हिरण्यदानं गोदानं पृथिवीदानमेव च। एतानि वै पवित्राणि तारयन्त्यपि दुष्कृतम्॥**' (महा० अनु० ५९।५)। गरुडपुराणने बताया है कि ये दान परलोकमें जीवको सुख पहुँचाते हैं—'**महादानेषु दत्तेषु गतस्तत्र सुखी भवेत्।**' (ग०पु० प्रेतखण्ड १९।३)। प्रत्येक दान अत्यन्त पवित्र करनेवाला है—'**एकैकं पावनं स्मृतम्**' (ग०पु० प्रेतखण्ड ४।३९)। ये दान गयाश्राद्धसे भी बढ़कर माने गये हैं। यदि ये दान नहीं दिये गये तो प्राणीको बहुत कष्टसे यममार्गमें यात्रा करनी पड़ती है—'**और्ध्वदैहिकदानादि यैर्न दत्तानि काश्यप। महाकष्टेन ते यान्ति तस्माद् देयानि शक्तितः॥**' (ग०पु०, प्रेतखण्ड १९।१३)

पंचधेनुदान—

शास्त्रोंमें मरणासन्न व्यक्तिके द्वारा अन्तिम समयमें गोदान करने तथा पंचधेनुदान करनेका विशेष महत्त्व है। पाँच गौओंके नाम इस प्रकार हैं—

(१) ऋणापनोदधेनु—देव-ऋण, पितृ-ऋण तथा मनुष्य-ऋण एवं अन्य ऋणोंसे उऋण होनेके लिये ऋणापनोदधेनुका दान किया जाता है।

(२) पापापनोदधेनु—ज्ञात-अज्ञात पापोंसे छुटकारा पानेके लिये पापापनोदधेनुका दान किया जाता है।

(३) उत्क्रान्तिधेनु—अन्तिम समयमें प्राणोत्सर्गमें अत्यधिक कष्टकी अनुभूति होती है, सुखपूर्वक प्राण निकले, इसके लिये उत्क्रान्तिधेनुका दान होता है।

(४) वैतरणीधेनु—यममार्गमें स्थित घोर वैतरणी नदीको बिना

कष्टके पार करनेके लिये वैतरणीधेनुका दान दिया जाता है।

(५) मोक्षधेनु—मोक्षप्राप्तिके लिये मोक्षधेनुका दान किया जाता है।

वैतरणी नदी—

गरुडपुराणादि शास्त्रोंमें वर्णन आया है कि जीव मृत्युके अनन्तर यातनामय देह प्राप्तकर यमदूतोंद्वारा यमलोकमें ले जाया जाता है। यमलोकका मार्ग अति भयावह तथा कष्टकर है। पापी जीव बड़े कष्टसे वहाँ जाता है। वह हा पुत्र! हा पौत्र!—इस प्रकार पुत्र-पौत्रोंको पुकारते हुए, हाय-हाय इस प्रकार विलाप करते हुए पश्चात्तापकी ज्वालासे जलता रहता है। उस समय वह विचार करता है कि महान् पुण्यके सम्बन्धसे मनुष्यजन्म प्राप्त होता है, उसे पाकर मैंने धर्माचरण नहीं किया, दान नहीं दिया, तपस्या नहीं की, भगवान्‌का भजन नहीं किया, उसीका फल आज मुझे मिल रहा है, जीवकी आत्मा उससे कहती है—हे जीव! तुमने जीवनमें सत्पुरुषोंकी सेवा नहीं की, कभी दूसरेका उपकार नहीं किया, गौओं और ब्राह्मणोंकी सेवा नहीं की, वेदों और शास्त्रोंके वचनोंको प्रमाण नहीं माना, मनमाना आचरण किया, इसलिये तुमने जो दुष्कर्म किया, उसीका फल अब भोगो। इस प्रकार अत्यन्त दुखी हुए जीवको आगे यममार्गमें घोर वैतरणी नदी मिलती है। वह देखनेपर ही अत्यन्त दुःखदायिनी तथा भय उत्पन्न करनेवाली है, वह सौ योजन चौड़ी है। पीब, मवाद तथा मांस एवं रक्तसे भरी है। उसके तटपर हड्डियोंका ढेर लगा रहता है, उसमें भयंकर हिंसक जीव-जन्तु रहते हैं। वज्रके समान तीक्ष्ण चोंचवाले बड़े-बड़े गीधों एवं कौओंसे वह घिरी रहती है। उसके प्रवाहमें गिरे हुए पापी रोते-चिल्लाते रहते हैं, पर उस समय उनकी सहायता करनेवाला कोई नहीं रहता है।

शास्त्रोंने यह विधान किया है कि यदि प्राणी वैतरणी गौका दान

कर लेता है तो वह गौ उसे वहाँ मिलती है और जीव उसकी पूँछ पकड़कर आसानीसे भयंकर वैतरणी नदीको पार कर लेता है। वैतरणी गोदानमें गोमातासे इसी प्रकारकी प्रार्थना की गयी है कि हे गोमाता! यमद्वारके महापथमें वैतरणी नदीको पार करनेके लिये आप वहाँपर मुझे मिलना, आपको नमस्कार है—

धेनुके मां प्रतीक्षस्व यमद्वारमहापथे।
उत्तारणार्थं देवेशि वैतरण्यै नमोऽस्तु ते॥

वैतरणीधेनुदान—

वैतरणीधेनुदानकी विशेष प्रक्रिया है।*

वैतरणी नदीका निर्माण—

वैतरणी गोदानमें वैतरणी नदी बनाकर गौकी पूँछ पकड़कर उसे पार किया जाता है। उसके लिये किसी शुद्ध पवित्र स्थानपर लम्बा गड्ढा खोदकर अथवा मिट्टीकी बाड़ बनाकर उसमें पानी भरकर वैतरणी नदीका आकार बनाना चाहिये। इक्षुदण्ड (गन्ने)-के टुकड़े काटकर एक नाव बनानी चाहिये और उसमें हेममय यज्ञपुरुष, कपास तथा लौहदण्ड रखना चाहिये। नदी पश्चिमसे पूर्वकी ओर बहनेवाली होनी चाहिये और पार करनेवाला उत्तरसे दक्षिणकी ओर जाय। आगे गाय होनी चाहिये। उसकी पूँछमें कलावा (मौली)-से नाव बँधी होनी चाहिये और पूजित गायकी पूँछ तथा नावको पकड़े हुए पार करनेवालेको उसके पीछे होना चाहिये। गौको उस नदीको पार कराये और उसके सहारे स्वयं भी पार हो जाय। बादमें गौ ब्राह्मणको दानमें दे दे।

इस प्रकार मरणासन्नावस्थाके दानादि कृत्य करनेके अनन्तर दाहकर्ता क्षौर एवं स्नान करके शवका संस्कार करे और अर्थी बनवा

* वैतरणी गोदानकी विधि गीताप्रेससे प्रकाशित अन्त्यकर्मश्राद्धप्रकाश में दी गयी है।

ले। तदनन्तर मृत्युस्थानसे अस्थिसंचयनतकके लिये पिण्डदान करनेके लिये जौके आटे आदिसे छः पिण्डोंको बना ले और उन-उन स्थानोंपर पिण्डदान करे। पहला पिण्डदान जिस स्थानपर मृत्यु हुई हो, वहाँपर किया जाता है। दूसरा पिण्डदान घरके दरवाजेके स्थानपर, तीसरा श्मशानमार्गके चौराहेपर, चौथा विश्रामस्थानपर, पाँचवाँ काष्ठचयन (चितास्थान)-पर तथा छठा पिण्ड दाहस्थानपर दिया जाता है। पिण्डदानके अनन्तर चितास्थलीको साफ कर देना चाहिये। अन्तमें स्नानकर प्रेतके उद्देश्यसे तिलतोयांजलि प्रदान करे। श्मशानसे वापस लौट आये। गृहद्वारपर अग्नि आदिका स्पर्श करके घरमें प्रवेश करे।

जीवके उद्देश्यसे दस दिनतक घटदान तथा दीपदान करे और दशगात्रके दस पिण्डोंको प्रदान करे, इससे यातनामय देहका निर्माण होता है। आगे एकादशाह तथा सपिण्डीकरणके श्राद्ध आदि करे। वर्षके अनन्तर वार्षिक श्राद्ध तथा महालयमें मृत्युतिथिपर पार्वण श्राद्ध करे। जीवकी सद्गतिके लिये गयाश्राद्ध आदिका भी विधान है।

पंचक मृत्यु—

धनिष्ठार्ध, शतभिषा, पूर्वाभाद्रपद, उत्तराभाद्रपद और रेवती—इन पाँच नक्षत्रोंको पंचक कहा जाता है। पंचक नक्षत्रोंमें मृत्यु होनेपर कुशोंकी पाँच प्रतिमा (पुत्तल) बनाकर शवके साथ ही इनका भी दाह किया जाता है। विशेष बात यह है कि यदि मृत्यु पंचकके पूर्व हो गयी हो और दाह पंचकमें होना हो तो पुत्तलोंका विधान करे। पंचकशान्तिकी आवश्यकता नहीं रहती। इसके विपरीत यदि पंचकमें मृत्यु हो और दाह पंचकके बाद हो तो केवल शान्तिकर्म करे, पुत्तलदाहकी आवश्यकता नहीं। यदि मृत्यु भी पंचकमें हो और दाह भी पंचकमें हो तो पुत्तलदाह तथा शान्ति—दोनों कर्म करे।

[१६] अन्त्येष्टिसंस्कार-प्रयोग

देहत्यागके पहलेके कृत्य

प्राणोत्सर्गसे पूर्व यदि सम्भव हो तो मरणासन्न व्यक्तिको गंगा आदि पुण्यतोया नदियोंके पावन तटपर ले जाय। यदि यह सम्भव न हो तो घरपर ही पोलरहित नीचेकी भूमिपर गोबर-मिट्टी तथा गंगाजलसे भूमिको शुद्धकर दक्षिणाग्र कुश बिछा दे तथा तिल और कुश बिखेर दे। मरणासन्न व्यक्तिको गंगाजल या पवित्र जल छिड़ककर मार्जन करा दे तथा उत्तर या पूर्वकी ओर सिर करके भूमिपर लिटा दे।* सिरपर तुलसीदल रख दे। ऊँची जगहपर शालग्रामशिलाको स्थापित कर दे। घीका दीपक जला दे। भगवान्‌के नामका निरन्तर उद्घोष होता रहे। यदि मरणासन्न व्यक्ति समर्थ हो तो उसीके हाथोंसे भगवान्‌की पूजा करा दे अथवा उसके पारिवारिकजन पूजा करें।

मुखमें शालग्रामका चरणामृत डालता रहे। बीच-बीचमें तुलसीदल मिलाकर गंगाजल भी डालता रहे। इससे उस प्राणीके सम्पूर्ण पाप नष्ट होते हैं और वह वैकुण्ठलोकको प्राप्त करता है। उपनिषद्, गीता, भागवत, रामायण आदिका पाठ होता रहे। किसी व्रत आदिका उद्यापन न हो सका हो तो उसे भी कर लेना चाहिये।

मरणासन्न व्यक्तिकी सद्गतिके लिये दशमहादान-अष्टमहादान तथा गोदान करनेका विधान है। यदि ये पहले न किये जा सके हों तो इस समय कर लेना चाहिये। शीघ्रतामें यदि प्रत्यक्ष वस्तुएँ उपलब्ध न हों तो अपनी शक्तिके अनुसार निष्क्रय-द्रव्यका उन वस्तुओंके निमित्त संकल्पकर ब्राह्मणको दे दे।

---

* दर्भाण्यादौ समास्तीर्य दक्षिणाग्रान्विकीर्य च॥
तिलान् गोमयलिप्तायां भूमौ तत्र निवेशयेत्॥ प्रागुदक् शिरसं वापि····।
(गरुडपुराण, प्रेतखण्ड ३२। ८६—८८)

मरणासन्न व्यक्तिके द्वारा अन्तिम समयमें गोदान करनेका विशेष महत्त्व है। यदि प्रत्यक्ष गोदान करनेमें असमर्थ हो तो संकल्पपूर्वक गोनिष्क्रयद्रव्यका दान करना चाहिये। शास्त्रोंमें पंचधेनु (ऋणधेनु, पापापनोदधेनु, उत्क्रान्तिधेनु, वैतरणीधेनु तथा मोक्षधेनु)-के दानकी व्यवस्था है। पंचधेनुका दान प्रत्यक्ष गौके द्वारा करना चाहिये। यदि कोई व्यक्ति पाँचों प्रत्यक्ष गोदान करनेमें असमर्थ हो तो पाँचोंके प्रतिनिधिके रूपमें एक प्रत्यक्ष गौका दान* करना चाहिये अथवा निष्क्रय-द्रव्य देना चाहिये।

गोदानका संकल्प

यदि प्रत्यक्ष गौ देना हो तो सर्वप्रथम उसकी पूजा कर ले। यदि निष्क्रयद्रव्य देना हो तो गौका मानसिक पूजन करे तथा निम्न मन्त्रसे प्रार्थना करे—

नमो गोभ्यः श्रीमतीभ्यः सौरभेयीभ्य एव च।
नमो ब्रह्मसुताभ्यश्च पवित्राभ्यो नमो नमः॥

तदनन्तर त्रिकुश, तिल, जल, पुष्प और दक्षिणा लेकर (यदि निष्क्रयद्रव्यसे करना हो तो वह द्रव्य भी साथमें ले ले) गोदानका निम्न संकल्प करे—

ॐ विष्णुर्विष्णुर्विष्णुः नमः परमात्मने पुरुषोत्तमाय ॐ तत्सत् अद्यैतस्य अचिन्त्यशक्तेर्महाविष्णोराज्ञया जगत्सृष्टिकर्मणि प्रवर्तमानस्य परार्धद्वयजीविनो ब्रह्मणो द्वितीयपरार्धे श्रीश्वेतवाराहकल्पे वैवस्वतमन्वन्तरे अष्टाविंशतितमे कलियुगे कलिप्रथमचरणे बौद्धावतारे भूर्लोके जम्बूद्वीपे भारतवर्षे भरतखण्डे आर्यावर्तैक-देशान्तर्गते प्रजापतिक्षेत्रे ......स्थाने (काशीमें करना हो तो **अविमुक्तवाराणसीक्षेत्रे गौरीमुखे त्रिकण्टकविराजिते महाश्मशाने**

* जो लोग प्रत्यक्ष गोदान तथा पंचधेनुदान करना चाहें, वे गीताप्रेससे प्रकाशित अन्त्यकर्म-श्राद्धप्रकाशमें दी गयी विधिके अनुसार कर सकते हैं।

आनन्दवने भगवत्या उत्तरवाहिन्या भागीरथ्या गङ्गायाः पश्चिमे भागे) बौद्धावतारे ....संवत्सरे ....अयने ....ऋतौ ....मासे ....पक्षे ....तिथौ ....वासरे ....योगे ....राशिस्थिते सूर्ये ....राशिस्थिते देवगुरौ ....राशिस्थिते चन्द्रे शेषेषु भौमादिग्रहेषु यथा यथाराशिस्थितेषु सत्सु एवं ग्रहगुणविशेषणविशिष्टायां शुभपुण्यतिथौ ....गोत्रः ....शर्मा/वर्मा/गुप्तोऽहम् [यदि प्रतिनिधि करे तो '**अहम्**' के स्थानपर **....गोत्रस्य (....गोत्रायाः) प्रतिनिधिभूतोऽहम्**—इतना बोले] **शास्त्रोक्तफलप्राप्त्यर्थं भगवत्प्रीत्यर्थं च स्वर्णशृङ्गीं रौप्यखुरां ताम्रपृष्ठीं कांस्योपदोहनां वस्त्राच्छन्नां यथाशक्त्यलङ्कृतां सुपूजितां सोपस्करां सवत्सां रुद्रदैवतामिमां गां** [यदि गौका निष्क्रय-द्रव्य देना हो तो '**गां**' के स्थानपर **गोनिष्क्रयभूतद्रव्यदक्षिणाम्**—इतना बोले] **....गोत्राय सुपूजिताय ....शर्मणे ब्राह्मणाय भवते सम्प्रददे,** (प्रतिनिधि करे तो **सम्प्रददामि** बोले।) **न मम।** संकल्पजल छोड़ दे और गाय अथवा निष्क्रयद्रव्यको ब्राह्मणको दे दे।

दान लेकर ब्राह्मण बोले—**ॐ स्वस्ति।**

पंचधेनुदानके निष्क्रयका संकल्प

हाथमें त्रिकुश, अक्षत, जल तथा पाँच धेनुओंके निमित्त निष्क्रयद्रव्य लेकर निम्न संकल्प करे—

ॐ विष्णुर्विष्णुर्विष्णुः अद्य यथोक्तगुणविशिष्टतिथ्यादौ ....गोत्रः ....शर्मा/ वर्मा/गुप्तोऽहम् [यदि प्रतिनिधि करे तो '**अहम्**'के स्थानपर **....गोत्रस्य (....गोत्रायाः) प्रतिनिधिभूतोऽहं तदुद्देश्येन**—इतना कहे] **ऐहिकामुष्मिकानेकजन्मार्जितसमस्तपापक्षयपूर्वक-देवर्षिपितृमनुष्यादिऋणापनोदनार्थं ज्ञाताज्ञातमनोवाक्कायकृत-सकलपापक्षयार्थं प्राणप्रयाणकाले ससुखं प्राणोत्क्रमणार्थं यममार्गस्थितां महाघोरां शतयोजनविस्तीर्णां वैतरणीं सुखेन संतरणार्थं**

भगवत्प्रसादात् मोक्षप्राप्तये श्रीमहाविष्णुप्रीत्यर्थं ऋणापनोदधेनु-पापापनोदधेनूत्क्रान्तिधेनुवैतरणीधेनुमोक्षधेनूनां रुद्रदैवतानां निष्क्रयभूतं द्रव्यं ""गोत्राय ब्राह्मणाय भवते सम्प्रददे (सम्प्रददामि)। कहकर संकल्पजल तथा निष्क्रयद्रव्य ब्राह्मणको दे दे।

और्ध्वदैहिक दान

और्ध्वदैहिक दानोंमें दस[1] महादान और आठ[2] महादान—इन दानोंका विशेष महत्त्व है। यहाँपर एकतन्त्रसे दोनोंका संकल्प अलग-अलग दिया जा रहा है।

दशमहादानका संकल्प—

मरणासन्न व्यक्तिके लिये समयाभावमें एक साथ दस वस्तुओं (सवत्सा गौ, भूमि, तिल, स्वर्ण, घृत, वस्त्र, धान्य, गुड़, चाँदी तथा लवण)-के महादानका संकल्प यहाँ दिया जा रहा है। प्रत्यक्ष वस्तुके न रहनेपर उसका निष्क्रय-द्रव्य रखकर संकल्प करना चाहिये।

दायें हाथमें त्रिकुश, जल, अक्षत, पुष्प तथा यथाशक्ति दक्षिणा-द्रव्य लेकर दानका संकल्प करे[3]—

ॐ विष्णुर्विष्णुर्विष्णुः अद्य यथोक्तगुणविशिष्टतिथ्यादौ ""गोत्रः ""शर्मा/वर्मा/गुप्तोऽहम् (यदि प्रतिनिधि करे तो **'अहम्'**

---

१. गोभूतिलहिरण्याज्यं वासो धान्यं गुडानि च। रौप्यं लवणमित्याहुर्दशदानान्यनुक्रमात्॥
(निर्णयसिन्धुमें मदनरत्नका वचन)

२. सवत्सा नयी गाय, भूमि, तिल, स्वर्ण, घृत, वस्त्र, धान्य, गुड़, चाँदी तथा लवण—इन दस वस्तुओंका दान महादान कहलाता है।
तिलं लौहं हिरण्यञ्च कार्पासं लवणं तथा। सप्तधान्यं क्षितिर्गाव एकैकं पावनं स्मृतम्॥
(ग०पु०२।४।३९)
तिल, लोहा, स्वर्ण, कपास, लवण, सप्तधान्य, भूमि तथा गाय—इन आठ वस्तुओंका दान अष्टमहादान कहलाता है।

३. जिस वस्तुका निष्क्रय दिया जाय, उसके लिये संकल्पमें इस प्रकार कहना चाहिये। यथा—**'रुद्रदैवतं गोनिष्क्रयद्रव्यम्।'**

के स्थानपर ''''**गोत्रस्य ''''शर्मणः/वर्मणः/गुप्तस्य प्रतिनिधिभूतोऽहं तदुद्देश्येन** इतना जोड़ ले) **शास्त्रोक्तफलप्राप्तिद्वारा श्रीपरमेश्वरप्रीत्यर्थं दशमहादानान्तर्गतरुद्रदैवत्यां गाम्/गोनिष्क्रयद्रव्यम्, विष्णुदैवत्यां भूमिम्/भूमिनिष्क्रयद्रव्यम्, प्रजापतिदैवतं तिलम्/तिलनिष्क्रयद्रव्यम्, अग्निदैवतं स्वर्णम्/स्वर्णनिष्क्रयद्रव्यम्, मृत्युञ्जयदैवतं घृतम्/घृतनिष्क्रयद्रव्यम्, बृहस्पतिदैवतं वस्त्रम्/वस्त्रनिष्क्रयद्रव्यम्, प्रजापतिदैवतं धान्यम्/धान्यनिष्क्रयद्रव्यम्, सोमदैवतं गुडम्/गुडनिष्क्रयद्रव्यम्, चन्द्रदैवतं रजतम्/रजतनिष्क्रयद्रव्यम्, सोमदैवतं लवणम्/लवणनिष्क्रयद्रव्यम् एतानि दशवस्तूनि ''''गोत्राय ''''शर्मणे ब्राह्मणाय भवते सम्प्रददे।** (प्रतिनिधि करे तो '**सम्प्रददामि**' बोले।) संकल्पका जल छोड़ दे और दानकी सामग्री ब्राह्मणको दे दे।

दान लेकर ब्राह्मण बोले—'**ॐ स्वस्ति।**'

अष्टमहादानका संकल्प—

तिल, लोहा, स्वर्ण, कपास, लवण एवं सप्तधान्य (जौ, धान, तिल, कँगनी, मूँग, चना तथा साँवा), भूमि और गौ—इन आठों वस्तुओंको यथास्थान रखकर एक साथ दान करनेका संकल्प करे। प्रत्यक्ष वस्तुके न होनेपर उनका निष्क्रय-द्रव्य रखकर भी संकल्प कर सकते हैं।

दायें हाथमें त्रिकुश, जल, अक्षत तथा दक्षिणाद्रव्य लेकर दानका संकल्प* करे—

ॐ विष्णुर्विष्णुर्विष्णुः अद्य यथोक्तगुणविशिष्टतिथ्यादौ ''''गोत्रः ''''शर्मा/वर्मा/गुप्तोऽहम् [यदि प्रतिनिधि करे तो '**अहम्**' के स्थानपर ''''**गोत्रस्य (''''गोत्रायाः) प्रतिनिधिभूतोऽहं तदुद्देश्येन**— इतना कहे] **शास्त्रोक्तफलप्राप्तिद्वारा श्रीपरमेश्वरप्रीत्यर्थं श्रीविष्णु-लोकप्राप्त्यर्थं च प्रजापतिदैवतं तिलम्/तिलनिष्क्रयद्रव्यम्, महाभैरव-**

---

* जिस वस्तुका निष्क्रय दिया जाय, उसके लिये संकल्पमें इस प्रकार कहना चाहिये। जैसे तिलके लिये—'**प्रजापतिदैवतं तिलनिष्क्रयद्रव्यम्**'।

दैवतं लौहम्/लौहनिष्क्रयद्रव्यम्, अग्निदैवतं स्वर्णम्/स्वर्णनिष्क्रय-द्रव्यम्, वनस्पतिदैवतं कार्पासम्/कार्पासनिष्क्रयद्रव्यम्, सोमदैवतं लवणम्/लवणनिष्क्रयद्रव्यम्, प्रजापतिदैवतं सप्तधान्यम्/सप्तधान्य-निष्क्रयद्रव्यम्, विष्णुदैवतां भूमिम्/भूमिनिष्क्रयद्रव्यम्, रुद्रदैवतां गाम्/गोनिष्क्रयद्रव्यम् एतानि अष्टवस्तूनि .....गोत्राय .....शर्मणे ब्राह्मणाय (बहुत ब्राह्मण हों तो **गोत्रेभ्यः शर्मभ्यो ब्राह्मणेभ्यो विभज्य) सम्प्रददे (सम्प्रददामि)।** संकल्पजल छोड़ दे और दक्षिणासहित दानकी सामग्री ब्राह्मणको दे दे।

दान लेकर ब्राह्मण बोले—'**ॐ स्वस्ति।**'

देहत्यागके बादके कृत्य

क्षौर तथा स्नान—

त्रिकुश, तिल और जल लेकर स्वयं बाल बनवाने और स्नानके लिये संकल्प करे—

प्रतिज्ञा-संकल्प—

ॐ विष्णुर्विष्णुर्विष्णुः नमः परमात्मने पुरुषोत्तमाय ॐ तत्सत् अद्यैतस्य विष्णोराज्ञया प्रवर्तमानस्य ब्रह्मणो द्वितीयपरार्धे श्रीश्वेतवाराहकल्पे वैवस्वतमन्वन्तरे अष्टाविंशतितमे कलियुगे कलिप्रथमचरणे बौद्धावतारे भूर्लोके जम्बूद्वीपे भारतवर्षे भरतखण्डे .....क्षेत्रे (यदि काशी हो तो **अविमुक्तवाराणसीक्षेत्रे आनन्दवने गौरीमुखे त्रिकण्टकविराजिते महाश्मशाने भगवत्या उत्तरवाहिन्या भागीरथ्या गङ्गाया वामभागे) .....संवत्सरे उत्तरायणे/दक्षिणायने .....ऋतौ .....मासे .....पक्षे .....तिथौ .....वासरे .....गोत्रः .....शर्मा/वर्मा/ गुप्तोऽहम् .....गोत्रस्य (.....गोत्रायाः) .....प्रेतस्य (.....प्रेतायाः) और्ध्वदैहिकसंस्कारयोग्यतासम्पादनार्थं क्षौरपूर्वकं स्नानकर्म करिष्ये।**

—ऐसा संकल्पकर दक्षिणाभिमुख बैठकर क्षौरकर्म कराये।[1] फिर स्नानकर नये वस्त्र और उपवस्त्र धारण करे।

शवका संस्कार—

इस तरह पवित्र होकर मृत प्राणीके पास आये। शवका सिरहाना उत्तर अथवा पूर्वकी ओर करनेका वचन है, किंतु परम्परासे उत्तरकी ओर सिरहाना करना प्रशस्त है।[2] स्नान करानेके लिये नये घड़ेमें जल भरकर उसमें गंगादि तीर्थजलोंकी भावना करे।

इसी जलसे शवको स्नान कराये। नये वस्त्रोंसे अंगोंको पोंछकर गोघृतका लेप करे। नया वस्त्र (कौपीन) पहना दे। द्विज हो तो नया यज्ञोपवीत भी पहना दे। चन्दन लगा दे। फूल और तुलसीकी माला पहना दे। कर्पूर, अगर, कस्तूरी आदि सुगन्धित द्रव्योंसे सारे शरीरमें लेप कर दे। मुख, दोनों आँखों, दोनों नासाछिद्रों, दोनों कानोंमें सोना डाल दे। सुवर्णके अभावमें घीकी बूँद डाल दे। कपड़ेसे पैरकी अंगुलियोंसे लेकर सिरतक सारे शरीरको अच्छी तरह ढँक दे। तलवा खुला रखे। इस तरह शवको अलंकृतकर अर्थीपर कुश या कुशासन बिछाकर उत्तरकी ओर सिर करके लिटा दे। मूँजकी नयी रस्सीके साथ मौली या कच्चे सूतकी रस्सीसे अच्छी तरह बाँध दे। ऊपरसे रामनामी

---

१. राजस्थान आदि कुछ स्थानोंमें देशाचारके अनुसार जिन कुटुम्बीजनोंके पिता मर चुके हैं तथा जो मृत व्यक्तिसे अवस्थामें छोटे हैं, उनका भी मुण्डन करनेकी परम्परा है।

२. 'प्राक् शिरसं उदक् शिरसं वा भूमौ निवेशयेत्।' (पारस्करगृह्यसूत्रमें हरिहरभाष्य)
'ततो नीत्वा श्मशानेषु स्थापयेदुत्तरामुखम्।' (गरुडपुराण)
एक वचन यह भी है कि '**दक्षिणशिरसं कृत्वा सचैलं तु शवं तथा**'। इसमें शवको दक्षिणकी ओर सिर करके लिटानेको लिखा गया है। यह नियम सामवेदियोंके लिये है। अन्य लोगोंको तो उत्तरकी ओर ही सिर रखना चाहिये और उत्तान ही लिटाना चाहिये— **सामेतरेषामुत्तरशिरस्त्वम्।** (श्राद्धतत्त्व)

चद्दर या सफेद चद्दर ओढ़ा दे। पुष्पमालाओंसे अलंकृत कर दे।[१]

षट्पिण्डदान

अर्थीकी दाहिनी तरफ दक्षिणकी ओर मुँहकर बैठ जाय। शिखा बाँध ले। अपसव्य होकर तिल और घीको जौके आटेमें मिलाकर छः[२] पिण्ड बनाये। प्रारम्भसे लेकर श्मशानतकके लिये छः पिण्ड बनाये जाते हैं। जौके आटेके अभावमें चावल आदिके आटेसे भी पिण्डदान किया जा सकता है। थोड़ा जौका आटा आदि बचा ले।

१. शवनिमित्तक पहला पिण्डदान

दायें हाथमें त्रिकुश, तिल और जल लेकर शवनिमित्तक प्रथम पिण्डके दानका मृति (मृत्यु)-स्थानपर प्रतिज्ञा-संकल्प करे—

प्रतिज्ञा-संकल्प—

अद्य ....गोत्रः ....शर्मा/वर्मा/गुप्तोऽहम् ....गोत्रस्य (स्त्री हो तो **........गोत्रायाः** बोले) **........प्रेतस्य** (स्त्री हो तो **........प्रेतायाः** बोले) **प्रेतत्वनिवृत्तिपूर्वकशास्त्रोक्तफलप्राप्त्यर्थं भूम्यधिदेवतातुष्ट्यर्थं च मृतिस्थाने शवनिमित्तकं पिण्डदानं करिष्ये।** इस तरह संकल्प बोलकर संकल्प-जल गिरा दे।

(क) अवनेजन—

पुनः जलसे भूमिको सींच दे। इसके बाद जल, तिल, चन्दन और

१.वृद्ध व्यक्तियोंके शववाहन (अर्थी)-को लोकाचारानुसार झण्डी आदिसे वैकुण्ठीके रूपमें सजाना चाहिये तथा शंख, घड़ियाल, घंटा आदि वाद्यसामग्रियोंके द्वारा भगवन्नाम-संकीर्तनके साथ शवयात्रा करनी चाहिये।

२.'**मृतस्योत्क्रान्तिसमयात् षट्पिण्डान् क्रमशो ददेत्**'—पिण्डदानके छः स्थान इस प्रकार हैं—१-मृतस्थान, २-द्वारदेश, ३-चत्वर (चौराहा), ४- विश्रामस्थान, ५-काष्ठचयन तथा ६-अस्थिसंचयन। (१)मृतस्थानमें पिण्ड देनेसे भूम्यधिष्ठातृदेवता संतुष्ट होते हैं। (२) द्वारदेशमें पिण्डदानसे गृहवास्त्वधिष्ठातृदेवता प्रसन्न होते हैं। (३) चौराहेपर पिण्डदानसे शवपर कोई उपद्रव नहीं होता। (४) विश्रामस्थानमें और (५) काष्ठ-चयनके पिण्डदानसे राक्षस, पिशाच आदि प्राणी हवनीय देहको अपवित्र नहीं करते तथा (६) अस्थिसंचयननिमित्तक पिण्डदानसे दाहजन्य पीड़ा शान्त हो जाती है।

श्वेत पुष्प लेकर अवनेजनका संकल्प करे—

अद्य ……गोत्र (स्त्री हो तो **……गोत्रे**) **……प्रेत** (स्त्री हो तो **……प्रेते**) **मृतिस्थाने शवनिमित्तकपिण्डस्थाने अत्रावनेनिक्ष्व ते मया दीयते, तवोपतिष्ठताम्।**

इस तरह संकल्पकर **पितृतीर्थ** (अँगूठे और तर्जनीके मूल)-से प्रोक्षित भूमिपर जल गिरा दे तथा वहाँपर दक्षिणाग्र तीन कुश बिछा दे।

(ख) पिण्डदानका संकल्प—

त्रिकुश, तिल, जल और पिण्ड लेकर (बायें हाथसे दाहिने हाथका स्पर्श करते हुए) पिण्डदानका संकल्प करे—

अद्य ……गोत्र (……गोत्रे) ……प्रेत (……प्रेते) मृतिस्थाने शवनिमित्तक एष पिण्डस्ते मया दीयते, तवोपतिष्ठताम्। ऐसा संकल्पकर कुशोंके बीचमें पितृतीर्थसे पिण्डको रख दे।

हाथमें तीर्थ

(ग) प्रत्यवनेजन*—

अवनेजनपात्रमें जल, तिल, सफेद चन्दन, सफेद फूल छोड़कर (यदि उसमें जल अवशिष्ट हो तो छोड़ना आवश्यक नहीं) इसे दायें हाथमें रख ले। पुनः त्रिकुश, तिल, जल लेकर प्रत्यवनेजनका संकल्प करे—
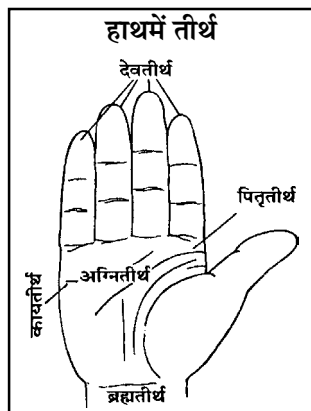
अद्य ……गोत्र (……गोत्रे) ……प्रेत (……प्रेते) मृतिस्थाने शवनिमित्तकपिण्डोपरि अत्र प्रत्यवनेनिक्ष्व ते मया दीयते, तवोपतिष्ठताम्।

* पिण्डके ऊपर जो जल दिया जाता है, उसे 'प्रत्यवनेजन' कहा जाता है।

इस तरह संकल्प बोलकर पिण्डपर जल छोड़ दे और पुनः पिण्डको उठाकर अर्थीपर (शवके पास) रख दे।

तदनन्तर सव्य होकर भगवान्‌से प्रार्थना करे—

अनादिनिधनो देवः शङ्खचक्रगदाधरः।
अक्षय्यः पुण्डरीकाक्ष प्रेतमोक्षप्रदो भव॥

भगवान्‌का नामोच्चारण करते हुए सबके साथ शवको उठाकर घरके बाहरी दरवाजेपर उतारकर उत्तरकी ओर सिर करके रख दे।

२. पान्थनिमित्तक दूसरा पिण्डदान

अपसव्य होकर द्वारपर दक्षिणाभिमुख बैठ जाय। दाहिने हाथमें त्रिकुश, तिल, जल लेकर दूसरे पिण्डदानका प्रतिज्ञा-संकल्प करे—

प्रतिज्ञा-संकल्प—

अद्य ....गोत्रः ....शर्मा/वर्मा/गुप्तोऽहम् ....गोत्रस्य (....गोत्रायाः) ....प्रेतस्य (....प्रेतायाः) प्रेतत्वनिवृत्तिपूर्वकशास्त्रोक्त-फलप्राप्त्यर्थं गृहवास्त्वधिदेवतातुष्ट्यर्थं निर्गमद्वारे पान्थनिमित्तकं पिण्डदानं करिष्ये। (बोलकर जल गिरा दे।)

(क) अवनेजन—

द्वार-भूमिका प्रोक्षण कर दे। जल, तिल, सफेद चन्दन, सफेद फूल लेकर अवनेजनका संकल्प करे—

अद्य ....गोत्र (....गोत्रे) ....प्रेत (....प्रेते) निर्गमद्वारे पान्थनिमित्तकपिण्डस्थाने अत्रावनेनिक्ष्व ते मया दीयते, तवोपतिष्ठताम्।

—ऐसा संकल्पकर प्रोक्षित भूमिपर पितृतीर्थसे आधा जल गिरा दे। वहाँपर दक्षिणाग्र तीन कुश बिछा दे।

(ख) पिण्डदानका संकल्प—

दाहिने हाथमें त्रिकुश, तिल, जल और पिण्डको लेकर (बायें

हाथसे दाहिने हाथका स्पर्श करते हुए) पिण्डदानका संकल्प करे—

अद्य ....गोत्र (....गोत्रे) ....प्रेत (....प्रेते) निर्गमद्वारे पान्थनिमित्तक एष पिण्डस्ते मया दीयते, तवोपतिष्ठताम्। ऐसा बोलकर कुशोंके बीचमें पितृतीर्थसे पिण्ड रख दे।

(ग) प्रत्यवनेजन—

अवनेजनपात्रमें जल, तिल, श्वेत चन्दन, श्वेत पुष्प छोड़कर पात्रको दायें हाथमें रख ले। फिर त्रिकुश, जल, तिल लेकर प्रत्यवनेजनका संकल्प करे—

अद्य ....गोत्र (....गोत्रे) ....प्रेत (....प्रेते) निर्गमद्वारे पान्थनिमित्तकपिण्डोपरि अत्र प्रत्यवनेनिक्ष्व ते मया दीयते, तवोपतिष्ठताम्। बोलकर पिण्डके ऊपर प्रत्यवनेजन-जल डाल दे।

इसके बाद पिण्डको अर्थीपर (शवके पास) रखकर सव्य होकर निम्न मन्त्रसे भगवान्‌की प्रार्थना करे—

अनादिनिधनो देवः शङ्खचक्रगदाधरः।
अक्षय्यः पुण्डरीकाक्ष प्रेतमोक्षप्रदो भव॥

शवयात्रा—

आत्मीयजनोंके साथ जोरसे भगवन्नाम (**'राम नाम सत्य है'**, **'हरि बोल'** आदि)-का उच्चारण करते हुए शवको कन्धोंपर उठा ले। जो बड़े हैं, उन्हें आगेकर और छोटी उम्रवालोंको पीछेकर यात्रा प्रारम्भ कर दे।

३. खेचरनिमित्तक तीसरा पिण्डदान

चौराहा आनेपर पवित्र स्थानमें शवको कन्धोंसे उतारकर उत्तरकी ओर सिर करके रख दे।

क्रियाकर्ता अपसव्य हो जाय और दक्षिणकी ओर मुखकर बैठ जाय। दायें हाथमें त्रिकुश, तिल और जल लेकर तीसरे पिण्डदानका

प्रतिज्ञा-संकल्प करे—

प्रतिज्ञा-संकल्प—

अद्य ....गोत्रः ....शर्मा/वर्मा/गुप्तोऽहम् ....गोत्रस्य (....गोत्रायाः) ....प्रेतस्य (....प्रेतायाः) प्रेतत्वनिवृत्तिपूर्वकशास्त्रोक्त-फलप्राप्त्यर्थम् उपघातकभूतापसारणार्थं चतुष्पथे खेचरनिमित्तकं पिण्डदानं करिष्ये। ऐसा बोलकर जल भूमिपर छोड़ दे।

(क) अवनेजन—

श्राद्धकर्ता जलसे भूमिका प्रोक्षण कर ले। अवनेजनपात्रमें जल, तिल, सफेद चन्दन और सफेद फूल छोड़कर इसे दायें हाथमें रख ले। पुनः बायें हाथसे इसमें त्रिकुश, तिल तथा जल लेकर निम्न संकल्प करे—

अद्य ....गोत्र (....गोत्रे) ....प्रेत (....प्रेते) चतुष्पथे खेचरनिमित्तकपिण्डस्थाने अत्रावनेनिक्ष्व ते मया दीयते, तवोपतिष्ठताम्। ऐसा बोलकर प्रोक्षित भूमिपर जल गिरा दे। वहाँ दक्षिणाग्र तीन कुश बिछा दे।

(ख) पिण्डदानका संकल्प—

पुनः त्रिकुश, तिल, जल और पिण्डको दायें हाथमें लेकर (बायें हाथसे दाहिने हाथका स्पर्श करते हुए) पिण्डदानका संकल्प करे—

अद्य ....गोत्र (....गोत्रे) ....प्रेत (....प्रेते) चतुष्पथे खेचरनिमित्तक एष पिण्डस्ते मया दीयते, तवोपतिष्ठताम्। — ऐसा बोलकर कुशोंके मध्य पिण्डको पितृतीर्थसे रख दे।

(ग) प्रत्यवनेजन—

अवनेजनपात्रमें जल, तिल, सफेद चन्दन, सफेद फूल छोड़कर पात्रको दाहिने हाथमें रख ले। फिर बायें हाथसे त्रिकुश, जल, तिल लेकर निम्नलिखित संकल्प करे—

अद्य ....गोत्र (....गोत्रे) ....प्रेत (....प्रेते) चतुष्पथे खेचरनिमित्तकपिण्डोपरि अत्र प्रत्यवनेनिक्ष्व ते मया दीयते, तवोपतिष्ठताम्। —ऐसा बोलकर पिण्डपर पितृतीर्थसे जल चढ़ा दे।

इसके बाद पिण्डको अर्थीपर रखकर सव्य हो जाय और निम्न मन्त्रसे भगवान्‌से प्रार्थना करे—

अनादिनिधनो देवः शङ्खचक्रगदाधरः।
अक्षय्यः पुण्डरीकाक्ष प्रेतमोक्षप्रदो भव॥

भगवान्‌के नामका उच्चारण करते हुए शवको उठा ले और चल दे।

४. भूतनिमित्तक चौथा पिण्डदान

विश्रामस्थानपर पहुँचकर शवको कन्धोंसे उतारकर रख दे।

क्रियाकर्ता दक्षिणकी ओर मुँह करके अपसव्य हो बैठ जाय। दायें हाथमें त्रिकुश, तिल और जल लेकर चौथे पिण्डदानका प्रतिज्ञा-संकल्प करे—

प्रतिज्ञा-संकल्प—

अद्य ....गोत्रः ....शर्मा/वर्मा/गुप्तोऽहम् ....गोत्रस्य (....गोत्रायाः) ....प्रेतस्य (....प्रेतायाः) प्रेतत्वनिवृत्तिपूर्वकशास्त्रोक्तफलप्राप्त्यर्थं देहस्याहवनीययोग्यताभावसम्पादकयक्षराक्षसपिशाचादितुष्ट्यर्थं विश्रामस्थाने भूतनिमित्तकं पिण्डदानं करिष्ये।—ऐसा बोलकर संकल्प-जल भूमिपर छोड़ दे।

(क) अवनेजन—

भूमिको जलसे सींच दे। अवनेजनपात्रमें जल, तिल, सफेद चन्दन, सफेद फूल डालकर दाहिने हाथमें रख ले। बायें हाथसे इसमें त्रिकुश, तिल, जल रखकर अवनेजनका संकल्प करे—

अद्य ....गोत्र (....गोत्रे) ....प्रेत (....प्रेते) विश्रामस्थाने

भूतनिमित्तकपिण्डस्थाने अत्रावनेनिक्ष्व ते मया दीयते, तवोपतिष्ठताम्।

—ऐसा बोलकर प्रोक्षित भूमिपर अवनेजन जल छोड़ दे और वहाँपर दक्षिणाग्र तीन कुश बिछा दे।

(ख) पिण्डदानका संकल्प—

इसके बाद त्रिकुश, तिल, जल और पिण्ड लेकर बायें हाथसे दाहिने हाथका स्पर्श करते हुए पिण्डदानका संकल्प करे—

अद्य ....गोत्र (....गोत्रे) ....प्रेत (....प्रेते) देहस्याहवनीय-योग्यताभावसम्पादकयक्षराक्षसपिशाचादितुष्ट्यर्थं भूतनिमित्तक एष पिण्डस्ते मया दीयते, तवोपतिष्ठताम्। —ऐसा बोलकर कुशोंके बीचमें पिण्डको पितृतीर्थसे रख दे।

(ग) प्रत्यवनेजन—

अवनेजनपात्रमें जल अवशिष्ट हो तो जल न डाले। अन्यथा तिल, जल, सफेद चन्दन, सफेद फूल डालकर इस पात्रको अपने दाहिने हाथमें रख ले। फिर बायें हाथसे त्रिकुश, तिल, जल लेकर संकल्प करे—

अद्य ....गोत्र (....गोत्रे) ....प्रेत (....प्रेते) विश्रामस्थाने भूतनिमित्तकपिण्डोपरि अत्र प्रत्यवनेनिक्ष्व ते मया दीयते, तवोपतिष्ठताम्। —ऐसा संकल्प बोलकर पिण्डपर पितृतीर्थसे जल छोड़ दे।

इसके बाद पिण्डको अर्थीपर रखकर सव्य हो जाय और निम्न मन्त्रसे भगवान्‌की प्रार्थना करे—

अनादिनिधनो देवः शङ्खचक्रगदाधरः।
अक्षय्यः पुण्डरीकाक्ष प्रेतमोक्षप्रदो भव॥

भगवान्‌के नामोंका उच्चारण करते हुए शवको उठाकर श्मशान पहुँचाये। यदि गंगा आदि नदी हो तो शवको डुबाकर स्नान कराये और उत्तरकी ओर सिरकर शवको भूमिपर उत्तान देह रख दे।

५. साधकनिमित्तक पाँचवाँ पिण्डदान

चिताभूमिका संस्कार—

जहाँ कूड़ा, केश आदि न हो, ऐसे स्थानको झाड़कर गोबर, मिट्टीसे लीप दे तथा भूमिकी प्रार्थना करे—

अपसर्पन्तु ते प्रेता ये केचिदिह पूर्वजाः॥

भूमिपर कुश बिछा दे। उसपर स्वयं या सगोत्रियोंके द्वारा चिता बनवाये, जो उत्तरसे दक्षिणतक लगभग चार हाथ लम्बी हो। चितामें तुलसी, चन्दन, बेल, पीपल, आम, गूलर, बरगद, शमी आदि यज्ञीय काष्ठ भी डाले। द्विजेतरोंसे चिता न बनवाये। इस चितापर शवको लिटा दे।* मृतकके सभी अंगोंपर तुलसीकी सूखी लकड़ी रख दे। शवके सर्वांगपर घृतका लेप करे। चन्दन एवं यज्ञीय काष्ठ आदिको शवपर रखे। नेत्र, मुख आदिपर कर्पूर रख दे। शवके ऊपर ओढ़ाये गये चद्दरका कोना फाड़कर उस चद्दरको श्मशानके अधिपतिको दे दे। शवपर कपड़ा रहने दिया जाय, नग्न दाह न करे।

चिताके दक्षिण भागमें अपसव्य होकर दक्षिणकी ओर मुँहकर बैठ जाय। दायें हाथमें त्रिकुश, तिल और जल लेकर चितानिमित्तक पाँचवें पिण्डदानकी प्रतिज्ञा करे—

---

* (क) भूप्रदेशे शुचौ देशे पश्चाच्चित्यादिलक्षणे। तत्रोत्तानं निपात्यैनं दक्षिणाशिरसं मुखे॥ (छन्दोगपरिशिष्टमें कात्यायनका मत)

चितामें शवको दक्षिण सिर करके उत्तानदेह रख दे।

(ख) आदिपुराणके इस वचन—'**अधोमुखो दक्षिणादिक् चरणस्तु पुमानिति। स्वगोत्रजैः गृहीत्वा तु चितामारोप्यते शवः॥ उत्तानदेहा नारी तु सपिण्डैरपि बन्धुभिः।**'— के अनुसार पुरुषको उत्तरकी तरफ सिर तथा अधोमुख (नीचेकी तरफ मुख करके) चितापर स्थापित करना चाहिये तथा स्त्रीको उत्तर सिर तथा उत्तानदेह करके रखना चाहिये। शुद्धितत्त्वादि ग्रन्थोंमें ऐसी ही व्यवस्था है।

पारस्करगृह्यसूत्रके '**विवाहश्मशानयोर्ग्रामं प्रविशतात्**' इस वचनसे देशाचारके अनुसार करना चाहिये।

प्रतिज्ञा-संकल्प—

अद्य ....गोत्रः ....शर्मा/वर्मा/गुप्तोऽहम् ....गोत्रस्य (....गोत्रायाः) ....प्रेतस्य (....प्रेतायाः) प्रेतत्वनिवृत्तिपूर्वक-शास्त्रोक्तफलप्राप्त्यर्थं चितायां शवहस्ते साधकनिमित्तकं पिण्डदानं करिष्ये।—ऐसा बोलकर संकल्प-जल छोड़ दे।

(क) अवनेजन—

भूमिको सींच दे। नये अवनेजनपात्रमें जल, तिल, सफेद चन्दन, सफेद फूल छोड़कर दायें हाथमें रख ले। त्रिकुश, जल और तिल लेकर अवनेजनका संकल्प करे—

अद्य ....गोत्र (....गोत्रे) ....प्रेत (....प्रेते) चितायां साधक-निमित्तकपिण्डस्थाने अत्रावनेनिक्ष्व ते मया दीयते, तवोपतिष्ठताम्।

—ऐसा बोलकर प्रोक्षित भूमिपर पितृतीर्थसे अवनेजनजल गिरा दे। वहाँपर दक्षिणाग्र तीन कुश बिछा दे।

(ख) पिण्डदानका संकल्प—दायें हाथमें त्रिकुश, तिल, जल और पिण्ड लेकर बायें हाथसे दाहिने हाथका स्पर्श करते हुए संकल्प करे—

अद्य ....गोत्र (....गोत्रे) ....प्रेत (....प्रेते) प्रेतत्वनिवृत्तिपूर्वक-शास्त्रोक्तफलप्राप्त्यर्थं चितायां साधकनिमित्तक एष पिण्डस्ते मया दीयते, तवोपतिष्ठताम्।—ऐसा बोलकर कुशोंके मध्य पितृतीर्थसे पिण्ड रख दे।

(ग) प्रत्यवनेजन—

अवनेजनपात्रमें यदि जल अवशिष्ट न हो तो जल, तिल, सफेद चन्दन, सफेद फूल डालकर दायें हाथमें रख ले, पुनः बायें हाथसे जल, तिल, त्रिकुश लेकर प्रत्यवनेजनका संकल्प करे—

अद्य ....गोत्र (....गोत्रे) ....प्रेत (....प्रेते) चितायां साधक-निमित्तकपिण्डोपरि अत्र प्रत्यवनेनिक्ष्व ते मया दीयते, तवोपतिष्ठताम्। संकल्पका जल पितृतीर्थसे पिण्डपर डाल दे।

फिर पिण्डको उठाकर शवके हाथमें रख दे। इसके बाद सव्य होकर भगवान्‌की प्रार्थना करे—

अनादिनिधनो देवः शङ्खचक्रगदाधरः।
अक्षय्यः पुण्डरीकाक्ष प्रेतमोक्षप्रदो भव॥

क्रव्याद अग्निकी पूजा—

चिताके दाहिनी ओर वेदीपर अथवा किसी पात्रमें क्रव्याद अग्नि[1]की स्थापना निम्न मन्त्रसे करे—

क्रव्यादनामानमग्निं प्रतिष्ठापयामि।

पूजन—

'**क्रव्यादाग्नये नमः**' इस मन्त्रसे गन्धाक्षत-पुष्पादिसे अग्निकी संक्षिप्त पूजा करे।

प्रार्थना—

निम्न मन्त्रसे अग्निकी प्रार्थना करे—

त्वं भूतकृज्जगद्योने त्वं लोकपरिपालकः।
उक्तः संहारकस्तस्मादेनं स्वर्गं मृतं नय॥

शवदाह[2] (सिरकी ओर अग्नि-ज्वालन)—

इसके बाद अपसव्य हो जाय। चितापर जल छिड़क दे। फिर

---

१. कर्पूर अथवा घीकी बत्तीसे स्वतः अग्नि तैयार कर लेनी चाहिये। अन्य किसीसे अग्नि नहीं लेनी चाहिये।

चाण्डालाग्निरमेध्याग्निः सूतिकाग्निश्च कर्हिचित्। पतिताग्निश्चिताग्निश्च न शिष्टग्रहणोचितः॥ (निर्णयसिन्धुमें देवलका वचन)

अर्थात् चाण्डालकी अग्नि, अमेध्याग्नि (अपवित्र अग्नि), सूतिकाग्नि, पतिताग्नि और चिताग्निको शिष्ट लोग कभी भी ग्रहण न करें।

२. **पंचकमें मरनेपर शवदाह**—धनिष्ठार्द्ध, शतभिषा, पूर्वाभाद्रपद, उत्तराभाद्रपद और

इस क्रव्याद अग्निको सरपत आदिपर रखकर निम्नलिखित मन्त्रोंको पढ़ते हुए चिताकी तीन या एक परिक्रमाकर सिरकी ओर आग

रेवती—इन पाँचों नक्षत्रोंको 'पंचक' कहा जाता है। यदि कोई पंचकमें मर जाता है तो वह वंशजोंको भी मार डालता है। त्रिपुष्कर और भरणी नक्षत्रसे भी यही अनर्थ प्राप्त होता है—

धनिष्ठापञ्चके जीवो मृतो यदि कथञ्चन। त्रिपुष्करे याम्यभे वा कुलजान् मारयेद् ध्रुवम्॥
तत्रानिष्टविनाशार्थं विधानं समुदीर्यते। दर्भाणां प्रतिमाः कार्याः पञ्चोर्णासूत्रवेष्टिताः॥
यवपिष्टेनानुलिप्तास्ताभिः सह शवं दहेत्। प्रेतवाहः प्रेतसखः प्रेतपः प्रेतभूमिपः॥
प्रेतहर्ता पञ्चमस्तु नामान्येतानि च क्रमात्। सूतकान्ते ततः पुत्रः कुर्याच्छान्तिकपौष्टिकम्॥

(ब्रह्मपुराण)

ऐसी स्थितिमें अनिष्टके निवारणके लिये कुशोंकी पाँच प्रतिमा (पुत्तल) बनाकर सूत्रसे वेष्टितकर जौके आटेकी पीठीसे उसका लेपनकर उन प्रतिमाओंके साथ शवका दाह करे। पुत्तलोंके नाम क्रमशः इस प्रकार हैं—प्रेतवाह, प्रेतसखा, प्रेतप, प्रेतभूमिप तथा प्रेतहर्ता।

पुत्तलदाहका संकल्प—अद्य ....शर्मा/वर्मा/गुप्तोऽहम् ....गोत्रस्य (....गोत्रायाः) ....प्रेतस्य (....प्रेतायाः) धनिष्ठादिपञ्चकजनितवंशानिष्टपरिहारार्थं पञ्चकविधिं करिष्ये।

ऐसा संकल्पकर पाँचों पुत्तलोंका पूजन करे—

पुत्तलपूजन—प्रेतवाहाय नमः, प्रेतसखाय नमः, प्रेतपाय नमः, प्रेतभूमिपाय नमः, प्रेतहर्त्रे नमः। इमानि गन्धाक्षतपुष्पधूपदीपादीनि वस्तूनि युष्मभ्यं मया दीयन्ते युष्माकमुपतिष्ठन्ताम्।

—ऐसा बोलकर पाँचों प्रेतोंको गन्ध, अक्षत, पुष्प, धूप तथा दीप आदि वस्तुएँ प्रदानकर उनका पूजन करे।

पूजनके बाद प्रेतवाह नामक पहले पुतलेको शवके सिरपर, दूसरेको नेत्रोंपर, तीसरेको बायीं कोखपर, चौथेको नाभिपर और पाँचवेंको पैरोंपर रखकर ऊपर लिखे नाममन्त्रोंसे क्रमपूर्वक पाँचोंपर घीकी आहुति दे। जैसे—**(१) प्रेतवाहाय स्वाहा, (२) प्रेतसखाय स्वाहा, (३) प्रेतपाय स्वाहा, (४) प्रेतभूमिपाय स्वाहा** और **(५) प्रेतहर्त्रे स्वाहा।**

इसके बाद शवका दाह करे।

निर्णयसिन्धु और धर्मसिन्धुके आधारपर विशेष बात यह बतायी गयी है कि यदि मृत्यु पंचकके पूर्व हो गयी हो और दाह पंचकमें होना हो तो पुत्तलोंका विधान करे तब शान्तिकी आवश्यकता नहीं रहती। इसके विपरीत कहीं पंचकमें मृत्यु हो

प्रज्वलित करे[1]—

कृत्वा तु दुष्कृतं कर्म जानता वाऽप्यजानता।
मृत्युकालवशं प्राप्तं नरं पञ्चत्वमागतम्॥
धर्माधर्मसमायुक्तं लोभमोहसमावृतम्।
दहेयं सर्वगात्राणि दिव्यान् लोकान् स गच्छतु॥

(वाराहपुराण, निर्णयसिन्धु)

असौ स्वर्गाय लोकाय स्वाहा।

कपालक्रिया—

जब शव आधा जल जाय, तब कपालक्रिया करे। बाँससे शवके सिरपर चोट पहुँचानी चाहिये (यतियोंकी श्रीफलसे कपालक्रिया करनी चाहिये) और उसपर घृत डाल देना चाहिये। तदनन्तर उच्च स्वरसे रोना चाहिये।

संसारकी नश्वरताका प्रतिपादन—

इसके बाद सम्बन्धीजन घास आदिपर बैठ जायँ और संसारकी नश्वरताका प्रतिपादन करें। स्वयं श्मशान ही संसारसे वैराग्य उत्पन्न कर देता है। वैराग्यके बाद भगवान् और उनकी आज्ञाके रूप कर्तव्यके पालनकी ओर दृष्टि अवश्य जानी चाहिये।

चितामें सात समिधाएँ डालना[2]—

एक-एक बित्तेकी सात यज्ञीय लकड़ियाँ लेकर दाहकर्ता शवकी सात प्रदक्षिणा करे। प्रत्येक प्रदक्षिणाके अन्तमें **'क्रव्यादाय नमस्तुभ्यम्'** मन्त्रसे एक-एक समिधा चितामें डालता जाय।

और दाह पंचकके बाद हुआ हो तो शान्तिकर्म करे। 'नक्षत्रान्तरे मृतस्य पञ्चके दाहप्राप्तौ पुत्तलविधिरेव न शान्तिकम्। पञ्चकमृतस्याश्विन्यां दाहप्राप्तौ शान्तिकमेव न पुत्तलविधिः।'(धर्मसिन्धुमें उ० परि० ३)—यदि मृत्यु भी पंचकमें हुई हो और दाह भी पंचकमें हो तो पुत्तलदाह तथा शान्ति—दोनों कर्म करे।

१. शिरःस्थाने प्रदापयेत्। (वाराहपुराण)

२. गच्छेत् प्रदक्षिणाः सप्त समिद्भिः सप्तभिः सह॥ (आदि०)

दाहसे अवशिष्ट अंशको जलमें डालना—

अन्तमें शवका किंचित् भाग अर्थात् कपोत-परिमाण (कबूतरके बराबरतक) जलमें डाल देना चाहिये, पूरा जलाना मना है।*

६. अस्थिसंचयननिमित्तक छठा पिण्डदान

शास्त्रका वचन है—

अपरेद्युस्तृतीये वा दाहानन्तरमेव वा।

(अन्त्यकर्मदीपक)

इसका अभिप्राय है कि दूसरे दिन, तीसरे दिन अथवा दाहके बाद तत्काल चिता शान्तकर अपसव्य दक्षिणाभिमुख होकर दायें हाथमें त्रिकुश, तिल, जल लेकर छठे पिण्डदानका इस प्रकार संकल्प करे—

प्रतिज्ञा-संकल्प—

अद्य ……गोत्रः ……शर्मा/वर्मा/गुप्तोऽहम् ……गोत्रस्य (……गोत्रायाः) ……प्रेतस्य (……प्रेतायाः) अस्थिसंचयननिमित्तक-पिण्डदानं करिष्ये—ऐसा बोलकर संकल्प-जल चिताभूमिपर छोड़ दे।

(क) अवनेजन—

संकल्पकर भूमिको सींच दे। अवनेजनपात्र (दोने)-में जल, तिल, सफेद चन्दन और सफेद फूल छोड़कर इसे दायें हाथमें रख ले। पुनः त्रिकुश, तिल, जल लेकर संकल्प करे—

अद्य ……गोत्र (……गोत्रे) ……प्रेत (……प्रेते) अस्थिसंचयन-निमित्तकपिण्डस्थाने अत्रावनेनिक्ष्व ते मया दीयते, तवोपतिष्ठताम्। बोलकर प्रोक्षित भूमिपर अवनेजन जल गिरा दे। भूमिपर दक्षिणाग्र त्रिकुश बिछा दे।

(ख) पिण्डदानका संकल्प—

दायें हाथमें त्रिकुश, तिल, जल और पिण्ड लेकर बायें हाथसे

---

* निःशेषस्तु न दग्धव्यः शेषं किञ्चित् त्यजेत् ततः।

दाहिने हाथका स्पर्श करते हुए संकल्प करे—

अद्य ....गोत्र (....गोत्रे) ....प्रेत (....प्रेते) शास्त्रोक्तफलप्राप्त्यर्थम् अस्थिसंचयननिमित्तक एष पिण्डस्ते मया दीयते, तवोपतिष्ठताम्। ऐसा संकल्प बोलकर पितृतीर्थसे कुशोंके मध्य पिण्डको रख दे।

(ग) प्रत्यवनेजन—

अवनेजनपात्रमें (जल अवशिष्ट न हो तब) तिल, जल, सफेद चन्दन, सफेद फूल डालकर दायें हाथमें रख ले और प्रत्यवनेजन-संकल्प करे। संकल्पके समय बायें हाथको दायें हाथके नीचे रख ले।

अद्य ....गोत्र (....गोत्रे) ....प्रेत (....प्रेते) अस्थिसंचयन-निमित्तकपिण्डोपरि अत्र प्रत्यवनेनिक्ष्व ते मया दीयते, तवो-पतिष्ठताम्। —ऐसा बोलकर इस जलको पितृतीर्थसे पिण्डपर गिरा दे एवं पिण्डको नदी आदिके जलमें डाल दे।

प्रार्थना—

सव्य होकर निम्न मन्त्रसे भगवान्‌की प्रार्थना करे—

अनादिनिधनो देवः शङ्खचक्रगदाधरः।
अक्षय्यः पुण्डरीकाक्ष प्रेतमोक्षप्रदो भव॥

बलिप्रदान—

पिण्डसे जो अन्न बचा लिया गया था। उसीको हाथमें लेकर श्मशानवासी देवोंको निम्न मन्त्रोंको पढ़कर बलि प्रदान करे—

येऽस्मिन् श्मशाने देवाः स्युर्भगवन्तः सनातनाः।
तेऽस्मत् सकाशाद् गृह्णीयुर्बलिमष्टाङ्गमक्षयम्॥
प्रेतस्यास्य शुभाँल्लोकान् प्रयच्छन्तु च शाश्वतान्।
अस्माकमायुरारोग्यं सुखं च दत्त मे चिरम्॥

श्मशानवासिभ्यो देवेभ्यो नमः। सर्वस्वीयभागं सदीपं बलिं गृह्णन्तु।

—ऐसा कहकर दीपकके साथ अन्न-बलि प्रदान करे।

अस्थिसंचयन*

चिताके शान्त हो जानेपर गायका दूध डालकर हड्डियोंको तर कर दे। मौन होकर पलाशकी दो लकड़ियोंसे कोयला आदि हटाकर हड्डियोंको अलग कर ले। सबसे पहले सिरकी हड्डियोंको अलग करे और कनिष्ठिकासे चुने। अन्तमें पैरकी हड्डियोंको एकत्र करे। कुश बिछाकर उसके ऊपर रेशम या तीसीके रेशोंसे बना वस्त्र बिछा दे। इसी वस्त्रपर हड्डियोंको रखता जाय। इन्हें पंचगव्यसे सींचकर स्वर्ण, मधु, घी, तिल डाल दे। पुनः सुगन्धित जलसे तर कर दे और सर्वौषधि मिलाकर बाँधकर मिट्टीके बर्तनमें रख दे। इसके बाद दक्षिण दिशाको देखकर '**नमोऽस्तु धर्माय**' कहकर जलमें प्रवेश करे, फिर '**स मे प्रीतो भवतु**' कहकर पात्रको जलमें डाल दे। जलसे निकलकर सूर्यका दर्शन करे और ब्राह्मणोंको यथाशक्ति दान दे।

दस दिनोंके भीतर गंगामें अस्थिप्रक्षेप करनेसे मरनेवालेको वही फल प्राप्त होता है, जो गंगामें (गंगातटपर) मरनेसे होता है। यदि किसी सुदूर तीर्थमें अस्थिप्रक्षेप करना हो तो अस्थिकलशको वृक्षपर लटका देना चाहिये और दस दिनोंके भीतर तीर्थमें प्रक्षेप कर देना चाहिये।

यदि भूमिमें गाड़ना हो तो दक्षिणसे उत्तरकी ओर प्रादेशमात्र (अँगूठे और तर्जनीके बीचकी दूरी) लम्बा और चार अंगुलका चौड़ा गड्ढा खोदकर उसमें कुश बिछाकर उसपर हल्दीके रंगसे रँगा वस्त्र बिछाकर हड्डियोंको रख दे। फिर गायके घीसे तरकर सुवासित जलसे सींचे और सर्वौषधि मिलाकर गाड़ दे।

घटस्फोट—

इसके बाद चिताके भस्म, अंगार आदि सभी वस्तुओंको जलमें

* जहाँ गंगाके किनारे दाह-संस्कार किया जाय, वहाँ अस्थियोंको तत्काल गंगामें प्रवाहित करनेकी परम्परा है। अस्थिसंचयनकी आवश्यकता नहीं रहती।

बहा दे। इस तरह चिता-स्थलीको साफ कर दे। अन्तमें कोई व्यक्ति क्रियाकर्ताके कन्धेपर जलसे भरा घड़ा रख दे और क्रियाकर्ता पीछेकी ओर न देखते हुए '**एवं कदापि माऽभूत्**' कहकर घड़ेको पीछे गिरा दे।

स्नान—

इसके बाद सब लोग कर्ता तथा बच्चोंको आगेकर दूसरे घाटपर जाकर जलको बायीं ओर घुमाकर मौन होकर स्नान करें।

तिलोदकदान—

स्नानके बाद अपसव्यकी स्थितिमें ही सभी लोग दक्षिणकी ओर मुँहकर तिलांजलि दें। त्रिकुश, तिल, जल लेकर संकल्प बोलें—

संकल्प—

अद्य ....गोत्र (....गोत्रे) ....प्रेत (....प्रेते) चितादाहजनित-तापतृषोपशमनाय एष तिलतोयाञ्जलिस्ते मया दीयते, तवोपतिष्ठताम्। ऐसा संकल्पकर तिलांजलि दे।

चौदह पीढ़ीतकके बन्धु-बान्धवोंको दस दिनतक प्रतिदिन वृद्धि-क्रमसे अर्थात् पहले दिन एक, दूसरे दिन दो तथा तीसरे दिन तीन—इस प्रकार अंजलिसंख्या बढ़ाते हुए तिलतोयांजलियाँ देनी चाहिये।

जो लोग बाहर रहते हों और मृत्युके कुछ दिन बाद उन्हें मृत्युका समाचार प्राप्त हो तो समाचार मिलनेके दिन पूर्व दिनोंकी तिलतोयांजलियोंके साथ तिलांजलियाँ देनी चाहिये। तत्पश्चात् वृद्धिक्रमसे दसवें दिनतक तिलतोयांजलियाँ देनी चाहिये। यदि कोई मृत्युके दस दिनोंके अन्दर तिलतोयांजलि न दे सके तो वह दसवें दिन सभी दिनोंके लिये गिनकर एक संकल्पसे सभी (पचपन) तिलतोयांजलियाँ दे दे। तिलतोयांजलिदानके पृथक्-पृथक् संकल्प इस प्रकार हैं—

(क) एक अंजलिदानका संकल्प—

अपसव्य दक्षिणाभिमुख होकर त्रिकुश, तिल, जल लेकर निम्न संकल्प बोले—

अद्य ....गोत्र (....गोत्रे) ....प्रेत (....प्रेते) चितादाहजनित-तापतृषोपशमनाय एष तिलतोयाञ्जलिस्ते मया दीयते, तवोपतिष्ठताम्। एक तिलतोयांजलि दे।

(ख) दो अंजलिदानका संकल्प—

अपसव्य दक्षिणाभिमुख होकर त्रिकुश, तिल, जल लेकर निम्न संकल्प बोले—

अद्य ....गोत्र (....गोत्रे) ....प्रेत (....प्रेते) चितादाहजनित-तापतृषोपशमनाय इमौ तिलतोयाञ्जली ते मया दीयेते, तवोपतिष्ठेताम्। दो तिलतोयांजलियाँ दे।

(ग) तीन या अधिक तिलतोयांजलियोंका संकल्प—

अपसव्य दक्षिणाभिमुख होकर त्रिकुश, तिल, जल लेकर निम्न संकल्प बोले—

अद्य ....गोत्र (....गोत्रे) ....प्रेत (....प्रेते) चितादाहजनित-तापतृषोपशमनाय इमे तिलतोयाञ्जलयः ते मया दीयन्ते, तवोपतिष्ठन्ताम्। तीन या अधिक तिलतोयांजलियाँ दे।

तत्त्वोपदेश—दाहकर्ता जलसे निकलकर दो सूखे वस्त्र पहन ले। गीले वस्त्रको एक बार निचोड़कर उत्तरकी ओरसे प्रारम्भकर दक्षिणकी ओरतक सूखनेके लिये फैला दे। पुनः सभी लोग एक जगह बैठ जायँ और प्रियजनके वियोगसे उत्पन्न शोकको इतिहास आदि सुनाकर दूर करें।

श्मशानसे लौटनेके बादके कृत्य—

इसके बाद बच्चोंको आगे करके सभी शवयात्री घरकी ओर बढ़ें।

पीछे न देखें। दरवाजेपर आकर थोड़ी देर रुक जायँ। वहाँ नीमकी पत्तियाँ चबायें। आचमन करें। जल, गोबर, तेल, मिर्च, पीली सरसों और अग्निका स्पर्श करें। फिर पत्थरपर पैर रखकर घरमें प्रवेश करें। कुछ देर बैठकर भगवान्‌का चिन्तन करें और मृतात्माकी शान्तिकी कामना करें।

मृत व्यक्तिके हितार्थ कृत्य

दीपदान—

जिस दिन मृत्यु हुई है, उस दिनसे आरम्भकर मृतात्माके हितके लिये मृतिस्थान अथवा द्वारपर दस दिनतक प्रदोषकालमें निम्न मन्त्रसे मिट्टीके पात्रमें तिलके तेलका दीप जलाना चाहिये।

अन्धकारे महाघोरे रविर्यत्र न दृश्यते।
तत्रोपकरणार्थाय दीपोऽयं दीयते मया॥

दीपकको धान्यपर दक्षिणाभिमुख रख दे। मृत्युके दिनसे अथवा दूसरे दिनसे दस दिनतक प्रेतके निमित्त पीपलके वृक्षपर घटबन्धन तथा दूधजलदानकी प्रक्रिया करे।

वर्धापन (वर्षगाँठ—जन्मोत्सव)

मनुष्यका जीवन दीर्घायु एवं सुखमय हो, इसके लिये भारतीय शास्त्रोंमें प्रत्येक वर्ष जन्मतिथिको वर्धापन-संस्कार सम्पन्न करनेका विधान किया गया है। इसे जन्मोत्सवसंस्कार, अब्दपूर्तिकृत्य, मार्कण्डेय-पूजन तथा वर्षगाँठ आदि नामोंसे भी कहा गया है।

प्रथम वर्ष व्यतीत होनेके उपरान्त प्रत्येक वर्ष (जन्ममासमें पड़नेवाली) जन्मतिथि*को दीप प्रज्वलितकर जन्मोत्सव मनाया जाता है। शिशुका जन्मोत्सव उसके पिता प्रतिनिधिके रूपमें करें और बड़े होनेपर उसे स्वयं करना चाहिये। महिलाएँ भी इसी प्रकार अपना वर्धापन मना सकती हैं।

इस दिन सर्वप्रथम शरीरमें तिलका उबटन लगाकर तिलमिश्रित जलसे स्नान करना चाहिये। तदनन्तर नूतन वस्त्र धारणकर दीप प्रज्वलितकर कुलदेवता, जन्म-नक्षत्र, माता-पिता, दीर्घजीवी मार्कण्डेय, सप्त चिरजीवियों एवं षष्ठी देवी आदिका अक्षतपुंजोंपर आवाहन करके उनकी पूजा होती है। और दीर्घायुष्य तथा कल्याण मंगलके लिये उनसे प्रार्थना की जाती है।

कर्मकी पूर्णतापर बालककी रक्षाके लिये प्रतिष्ठित रक्षापोटलिका (अथवा रक्षासूत्र) भी उसे बाँधा जाता है।

जन्मदिनपर माता-पिता, वृद्धजनों एवं अपनी आयुसे बड़े लोगोंका अभिवादन करके उनसे आशीर्वाद ग्रहण किया जाता है।

वर्धापन-संस्कारके दिन निम्नलिखित नियमोंका अनुपालन किया

---

* जन्मे मरणे ग्राह्या तिथिर्तात्कालिकी मता:। अर्थात् जन्मके समय विक्रम संवत्सरके अनुसार जो तिथि हो, उसी तिथिपर वर्षगाँठका उत्सव मनाना चाहिये, अँगरेजी कैलेण्डरकी तारीखके अनुसार वर्षगाँठ मनाना उचित नहीं है।

जाना चाहिये*—

१–नखों एवं केशोंको नहीं कटवाना चाहिये। दाढ़ी नहीं बनानी चाहिये।

२–स्त्रीसंसर्ग (मैथुन) और अधिक भागदौड़ नहीं करनी चाहिये।

३–आमिषभक्षण (सामिष भोजन) नहीं करना चाहिये।

४–व्यर्थ कलह एवं हिंसा नहीं करनी चाहिये।

५–गरम जलसे स्नान नहीं करना चाहिये।

६–बड़ोंको प्रणाम करना चाहिये।

वर्तमानमें चल पड़ी केक काटकर 'हैप्पी बर्थडे टू यू' कहनेकी प्रणाली पाश्चात्य–अनुकरणका प्रभाव है—यह विडम्बना ही है। इससे सर्वथा बचते हुए भारतीय सनातन आराधना–पद्धतिका ही आश्रय ग्रहण करना चाहिये। इसका विवरण आगे दिया जा रहा है, परंतु पूरी प्रक्रिया करनेमें जिन्हें असुविधा हो अथवा जो समर्थ न हों, उन्हें मन्दिरमें भगवद्दर्शन, दीपप्रज्वलन तथा सदाशिव एवं भगवान् विष्णु आदि अपने इष्टदेवकी यथासाध्य पूजा–प्रार्थना करते हुए भूदेवों (ब्राह्मणों) तथा दरिद्रनारायणके लिये यथाशक्ति अन्नदानादि कृत्य सम्पन्न करना चाहिये। साथ ही बन्धुबान्धवों एवं मित्रोंसहित प्रसाद पाना चाहिये।

आगे इस संस्कारकी प्रयोगविधि दी जा रही है—

---

* खण्डनं नखकेशानां मैथुनाध्वगमौ तथा। आमिषं कलहं हिंसां वर्षवृद्धौ विवर्जयेत्॥
मृते जन्मनि संक्रान्तौ श्राद्धे जन्मदिने तथा। अस्पृश्यस्पर्शने चैव न स्नायादुष्णवारिणा॥
(धर्मसिन्धु परि० ३)

वर्धापनप्रयोगविधि

वर्धापनके दिन जलमें तिलका तेल अथवा तिल डालकर स्नान करे। स्नानके अनन्तर पवित्र वस्त्रों (धोती-उत्तरीय)-को धारणकर अपने आसनपर पूर्वाभिमुख बैठ जाय। दीपक प्रज्वलित कर ले। सभी पूजन-सामग्रियोंको यथास्थान रख ले। आचमन-प्राणायाम आदि करके निम्न रीतिसे रक्षापोटलिकाका निर्माण करे।

रक्षापोटलिकानिर्माण—

पीले अथवा लाल वस्त्रकी पट्टिकामें निम्बपत्र, गुग्गुल, पीली सरसों, दूर्वा, गोरोचन, कच्ची हल्दीकी गाँठ आदि मंगलद्रव्योंको रखकर गाँठ लगाकर पोटली बना ले और अक्षत छोड़ते हुए निम्न मन्त्र पढ़कर उसकी प्रतिष्ठा कर ले। पोटलिका बनाना सम्भव न हो तो रक्षासूत्र* (कलावा—मौली)-को प्रतिष्ठित कर ले।

ॐ एतं ते देव सवितर्यज्ञं प्राहुर्बृहस्पतये ब्रह्मणे।
तेन यज्ञमव तेन यज्ञपतिं तेन मामव॥

'**ॐ भूर्भुवः स्वः पोटलिके सुप्रतिष्ठिता वरदा भव**' प्रतिष्ठित पोटलिकाको गणेशजीके पास रख दे और अन्तमें ब्राह्मणद्वारा दाहिने हाथमें बँधवाये।

पूजनसंकल्प—

दाहिने हाथमें कुश, अक्षत, जल लेकर निम्न संकल्प करे—

ॐ विष्णुर्विष्णुर्विष्णुः श्रीमद्भगवतो महापुरुषस्य विष्णो-

---

* बालकका जितने वर्षमें प्रवेश हो रहा हो, रक्षासूत्रमें अथवा पोटलिकामें उतनी गाँठें लगानेका देशाचार है। जैसे कोई बालक पाँचवें वर्षमें प्रविष्ट हो रहा हो तो रक्षासूत्र बाँधते समय पाँच गाँठें लगायी जाती हैं और पाँचवीं वर्षगाँठ कहा जाता है। इसी तात्पर्यसे इस संस्कारको वर्षगाँठ भी कहते हैं।

राज्ञया प्रवर्तमानस्य ब्रह्मणो द्वितीयपरार्धे श्रीश्वेतवाराहकल्पे वैवस्वतमन्वन्तरे अष्टाविंशतितमे कलियुगे कलिप्रथमचरणे जम्बूद्वीपे भारतवर्षे आर्यावर्तैकदेशे (यदि काशी हो तो **अविमुक्तवाराणसीक्षेत्रे आनन्दवने गौरीमुखे त्रिकण्टकविराजिते महाश्मशाने भगवत्या उत्तरवाहिन्या भागीरथ्या वामभागे) ""नगरे/ग्रामे/क्षेत्रे षष्टि-संवत्सराणां मध्ये ""संवत्सरे ""अयने ""ऋतौ ""मासे ""पक्षे ""तिथौ ""नक्षत्रे ""योगे ""करणे ""वासरे ""राशिस्थिते सूर्ये ""राशिस्थिते चन्द्रे शेषेषु ग्रहेषु यथायथाराशिस्थानस्थितेषु सत्सु एवं ग्रहगुणगणविशिष्टे शुभमुहूर्ते ""गोत्रः ""शर्मा/वर्मा/गुप्तोऽहं मदीयजन्मदिने* दीर्घायुष्यकामो दध्यक्षतपुञ्जेषु मार्कण्डेयादीनां पूजनं करिष्ये। तत्रादौ निर्विघ्नतासिध्यर्थं गणपतिपूजनं च करिष्ये।** हाथका संकल्पजल छोड़ दे।

तदनन्तर स्वस्तिपाठ करके संक्षेपमें गणेश-गौरीका स्मरण-पूजन करके गौरी, पद्मा आदि मातृकाओं तथा घृतमातृकाओंका पूजन करे और घृतसे वसोर्धारा प्रदान करे, कलशकी स्थापना करे एवं ग्रहोंकी प्रार्थना करे।

देवताओंकी स्थापना—

सर्वप्रथम एक पात्र (कटोरी आदि)-में दही तथा अक्षत मिलाकर रख ले और उसीसे अपने सम्मुख रखी किसी ताम्रस्थाली अथवा काष्ठपीठपर बिछाये गये श्वेत वस्त्रके ऊपर उत्तरवृद्धिक्रमसे अर्थात् दक्षिणसे उत्तरकी ओर निम्न रीतिसे (संख्याओंके स्थानपर) क्रमशः

* बालकके उपनयनसे पूर्व पिता प्रतिनिधिरूपमें बालकको पासमें बैठाकर यह संस्कार करे। तब संकल्पमें 'मदीय' के स्थानपर 'मम बालकस्य' ऐसा कहे। उपनयनके अनन्तर स्वयं करे।

देवताओंकी स्थापना एवं पूजा करे*—

देवमण्डल

पूर्व

उत्तर | **दक्षिण**

४५	४४	४३	४२	४१	४०	३९	३८	३७
३६	३५	३४	३३	३२	३१	३०	२९	२८
२७	२६	२५	२४	२३	२२	२१	२०	१९
१८	१७	१६	१५	१४	१३	१२	११	१०
९	८	७	६	५	४	३	२	१
१६	१५	१४	१३	१२	११	१०	९	
८	७	६	५	४	३	२	१	

पश्चिम

देवताओंका आवाहन तथा स्थापन—

प्रथम पंक्ति—

१–हाथमें दही–अक्षत लेकर **ॐ भूर्भुवः स्वः कुलदेवते इहागच्छ पूजार्थं त्वामावाहयामि।** ऐसा कहकर कुलदेवताका आवाहन करे और **इह तिष्ठ** कहकर चित्रमें अंकित प्रथम स्थानपर अक्षतपुंज रखे।

इसी प्रकार निम्न वचनोंको कहते हुए चित्रमें बनी हुई संख्या (स्थान)–पर अक्षतपुंज रखता जाय।

२–ॐ भूर्भुवः स्वः स्वनक्षत्रेश इहागच्छ पूजार्थं त्वामावाहयामि। इह तिष्ठ।

३–ॐ भूर्भुवः स्वः प्रकृतिपुरुषात्मकमातापितरौ इहागच्छतम् पूजार्थं युवामावाहयामि। इह तिष्ठतम्।

* विस्तृत देवमण्डल न बना सकनेपर सुविधाकी दृष्टिसे किसी दोनेमें, सकोरेमें अथवा किसी पात्रमें उपर्युक्त देवसमूहका यथालब्धोपचारसे आवाहन, पूजन कर लेना चाहिये।

४-ॐ भूर्भुवः स्वः प्रजापते इहागच्छ पूजार्थं त्वामावाहयामि। इह तिष्ठ।

५-ॐ भूर्भुवः स्वः भानो इहागच्छ पूजार्थं त्वामावाहयामि। इह तिष्ठ।

६-ॐ भूर्भुवः स्वः विघ्नेश इहागच्छ पूजार्थं त्वामावाहयामि। इह तिष्ठ।

७-ॐ भूर्भुवः स्वः मार्कण्डेय इहागच्छ पूजार्थं त्वामावाहयामि। इह तिष्ठ।

८-ॐ भूर्भुवः स्वः बले इहागच्छ पूजार्थं त्वामावाहयामि। इह तिष्ठ।

द्वितीय पंक्ति—

९-ॐ भूर्भुवः स्वः व्यास इहागच्छ पूजार्थं त्वामावाहयामि। इह तिष्ठ।

१०-ॐ भूर्भुवः स्वः जामदग्न्य इहागच्छ पूजार्थं त्वामावाहयामि। इह तिष्ठ।

११-ॐ भूर्भुवः स्वः अश्वत्थामन् इहागच्छ पूजार्थं त्वामावाहयामि। इह तिष्ठ।

१२-ॐ भूर्भुवः स्वः कृपाचार्य इहागच्छ पूजार्थं त्वामावाहयामि। इह तिष्ठ।

१३-ॐ भूर्भुवः स्वः प्रह्लाद इहागच्छ पूजार्थं त्वामावाहयामि। इह तिष्ठ।

१४-ॐ भूर्भुवः स्वः हनुमन् इहागच्छ पूजार्थं त्वामावाहयामि। इह तिष्ठ।

१५-ॐ भूर्भुवः स्वः विभीषण इहागच्छ पूजार्थं त्वामावाहयामि। इह तिष्ठ।

१६–ॐ भूर्भुवः स्वः षष्ठीदेवि इहागच्छ पूजार्थं त्वामावाहयामि। इह तिष्ठ।

तृतीय पंक्ति—

१–ॐ भूर्भुवः स्वः गुरव इहागच्छत पूजार्थं युष्मानावाहयामि। इह तिष्ठत।

२–ॐ भूर्भुवः स्वः देवता इहागच्छत पूजार्थं युष्मानावाहयामि। इह तिष्ठत।

३–ॐ भूर्भुवः स्वः अग्ने इहागच्छ पूजार्थं त्वामावाहयामि। इह तिष्ठ।

४–ॐ भूर्भुवः स्वः विप्राः इहागच्छत पूजार्थं युष्मानावाहयामि। इह तिष्ठत।

५–ॐ भूर्भुवः स्वः पितर इहागच्छत पूजार्थं युष्मानावाहयामि। इह तिष्ठत।

६–ॐ भूर्भुवः स्वः पञ्चभूतानि इहागच्छत पूजार्थं युष्मानावाहयामि। इह तिष्ठत।

७–ॐ भूर्भुवः स्वः नवग्रहा इहागच्छत पूजार्थं युष्मानावाहयामि। इह तिष्ठत।

८–ॐ भूर्भुवः स्वः काल इहागच्छ पूजार्थं त्वामावाहयामि। इह तिष्ठ।

९–ॐ भूर्भुवः स्वः कलियुग इहागच्छ पूजार्थं त्वामावाहयामि। इह तिष्ठ।

चतुर्थ पंक्ति—

१०–ॐ भूर्भुवः स्वः सम्वत्सर इहागच्छ पूजार्थं त्वामावाहयामि। इह तिष्ठ।

११–ॐ भूर्भुवः स्वः मास इहागच्छ पूजार्थं त्वामावाहयामि। इह तिष्ठ।

१२–ॐ भूर्भुवः स्वः पक्ष इहागच्छ पूजार्थं त्वामावाहयामि। इह तिष्ठ।

१३–ॐ भूर्भुवः स्वः जन्मतिथे इहागच्छ पूजार्थं त्वामावाहयामि। इह तिष्ठ।

१४–ॐ भूर्भुवः स्वः जन्मनक्षत्र इहागच्छ पूजार्थं त्वामावाहयामि। इह तिष्ठ।

१५–ॐ भूर्भुवः स्वः जन्मराशे इहागच्छ पूजार्थं त्वामावाहयामि। इह तिष्ठ।

१६–ॐ भूर्भुवः स्वः शिवे इहागच्छ पूजार्थं त्वामावाहयामि। इह तिष्ठ।

१७–ॐ भूर्भुवः स्वः सम्भूते इहागच्छ पूजार्थं त्वामावाहयामि। इह तिष्ठ।

१८–ॐ भूर्भुवः स्वः प्रीते इहागच्छ पूजार्थं त्वामावाहयामि। इह तिष्ठ।

पंचम पंक्ति—

१९–ॐ भूर्भुवः स्वः सन्नते इहागच्छ पूजार्थं त्वामावाहयामि। इह तिष्ठ।

२०–ॐ भूर्भुवः स्वः अनसूये इहागच्छ पूजार्थं त्वामावाहयामि। इह तिष्ठ।

२१–ॐ भूर्भुवः स्वः क्षमे इहागच्छ पूजार्थं त्वामावाहयामि। इह तिष्ठ।

२२–ॐ भूर्भुवः स्वः विघ्नवति इहागच्छ पूजार्थं त्वामावाहयामि। इह तिष्ठ।

२३–ॐ भूर्भुवः स्वः भद्रे इहागच्छ पूजार्थं त्वामावाहयामि। इह तिष्ठ।

२४–ॐ भूर्भुवः स्वः इन्द्र इहागच्छ पूजार्थं त्वामावाहयामि। इह तिष्ठ।

२५–ॐ भूर्भुवः स्वः अग्ने इहागच्छ पूजार्थं त्वामावाहयामि। इह तिष्ठ।

२६–ॐ भूर्भुवः स्वः यम इहागच्छ पूजार्थं त्वामावाहयामि। इह तिष्ठ।

२७–ॐ भूर्भुवः स्वः निर्ऋते इहागच्छ पूजार्थं त्वामावाहयामि। इह तिष्ठ।

षष्ठ पंक्ति—

२८–ॐ भूर्भुवः स्वः वरुण इहागच्छ पूजार्थं त्वामावाहयामि। इह तिष्ठ।

२९–ॐ भूर्भुवः स्वः वायो इहागच्छ पूजार्थं त्वामावाहयामि। इह तिष्ठ।

३०–ॐ भूर्भुवः स्वः धनद इहागच्छ पूजार्थं त्वामावाहयामि। इह तिष्ठ।

३१–ॐ भूर्भुवः स्वः ईशान इहागच्छ पूजार्थं त्वामावाहयामि। इह तिष्ठ।

३२–ॐ भूर्भुवः स्वः अनन्त इहागच्छ पूजार्थं त्वामावाहयामि। इह तिष्ठ।

३३–ॐ भूर्भुवः स्वः ब्रह्मन् इहागच्छ पूजार्थं त्वामावाहयामि। इह तिष्ठ।

३४–ॐ भूर्भुवः स्वः कार्तिकेय इहागच्छ पूजार्थं त्वामावाहयामि। इह तिष्ठ।

३५–ॐ भूर्भुवः स्वः जन्मदेवते इहागच्छ पूजार्थं त्वामावाहयामि। इह तिष्ठ।

३६–ॐ भूर्भुवः स्वः स्थानदेवते इहागच्छ पूजार्थं त्वामावाहयामि। इह तिष्ठ।

सप्तम पंक्ति—

३७–ॐ भूर्भुवः स्वः प्रत्यक्षदेवते इहागच्छ पूजार्थं त्वामावाहयामि। इह तिष्ठ।

३८–ॐ भूर्भुवः स्वः वासुदेव इहागच्छ पूजार्थं त्वामावाहयामि। इह तिष्ठ।

३९–ॐ भूर्भुवः स्वः क्षेत्रपाल इहागच्छ पूजार्थं त्वामावाहयामि। इह तिष्ठ।

४०–ॐ भूर्भुवः स्वः पृथिवि इहागच्छ पूजार्थं त्वामावाहयामि। इह तिष्ठ।

४१–ॐ भूर्भुवः स्वः आप इहागच्छत पूजार्थं युष्मानावाहयामि। इह तिष्ठत।

४२–ॐ भूर्भुवः स्वः तेजः इहागच्छ पूजार्थं त्वामावाहयामि। इह तिष्ठ।

४३–ॐ भूर्भुवः स्वः वायो इहागच्छ पूजार्थं त्वामावाहयामि। इह तिष्ठ।

४४–ॐ भूर्भुवः स्वः आकाश इहागच्छ पूजार्थं त्वामावाहयामि। इह तिष्ठ।

४५–ॐ भूर्भुवः स्वः ब्राह्मण इहागच्छ पूजार्थं त्वामावाहयामि। इह तिष्ठ।

प्रतिष्ठा—

इस प्रकार आवाहन तथा स्थापन करनेके अनन्तर निम्न मन्त्रसे अक्षत छोड़ते हुए देवमण्डलकी प्रतिष्ठा करे—

ॐ एतं ते देव सवितर्यज्ञं प्राहुर्बृहस्पतये ब्रह्मणे।
तेन यज्ञमव तेन यज्ञपतिं तेन मामव॥

ॐ भूर्भुवः स्वः कुलदेवतादिदेवताः गुर्वादिकदेवताश्च इहागच्छन्तु इह तिष्ठन्तु सुप्रतिष्ठिता वरदा भवन्तु।

पूजन—

तदनन्तर इन सभी आवाहित देवताओंका यथाशक्ति पृथक्-पृथक् नाममन्त्रसे षोडशोपचार, पंचोपचार अथवा संक्षेप करना हो तो निम्न मन्त्रसे एकतन्त्रसे गन्धाक्षतपुष्पसे पूजन कर लेवें—

सर्वेभ्यो आवाहितदेवेभ्यो नमः सर्वोपचारार्थे गन्धाक्षतपुष्पाणि समर्पयामि, नमस्करोमि।

नवग्रहोंको पुष्पांजलि—

निम्न मन्त्रसे नवग्रहोंको पुष्पांजलि प्रदान करे—

ब्रह्मामुरारिस्त्रिपुरान्तकारी भानुः शशी भूमिसुतो बुधश्च।
गुरुश्च शुक्रः शनिराहुकेतवः सर्वे ग्रहाः शान्तिकरा भवन्तु॥

पुष्पांजलि और प्रार्थना

सप्तचिरजीवीप्रार्थना—

निम्न मन्त्रोंसे सप्त चिरजीवियोंको पुष्पांजलि प्रदानकर प्रार्थना करे—

अश्वत्थामा बलिर्व्यासो हनूमाँश्च विभीषणः।
कृपः परशुरामश्च सप्तैते चिरजीविनः॥
सप्तैताँश्च स्मरेन्नित्यं मार्कण्डेयमथाष्टमम्।
जीवेद्वर्षशतं साग्रमपमृत्युविवर्जितः॥

मार्कण्डेयपुष्पांजलि—

चिरजीवी मार्कण्डेयजीको तिल-गुड़मिश्रित दूध एक पात्रमें रखकर निवेदित करे और निम्न मन्त्रसे पुष्प अर्पित करे—

आयुष्प्रद महाभाग सोमवंशसमुद्भव।
महातपो मुनिश्रेष्ठ मार्कण्डेय नमोऽस्तु ते॥

मार्कण्डेयजीकी प्रार्थना—

हाथ जोड़कर प्रार्थना करे—

मार्कण्डेय महाभाग सप्तकल्पान्तजीवन।
आयुरारोग्यसिद्ध्यर्थमस्माकं वरदो भव॥
चिरजीवी यथा त्वं भो भविष्यामि तथा मुने।
रूपवान्वित्तवाँश्चैव श्रिया युक्तश्च सर्वदा॥
मार्कण्डेय नमस्तेऽस्तु सप्तकल्पान्तजीवन।
आयुरारोग्यसिद्ध्यर्थं प्रसीद भगवन्मुने॥
चिरजीवी यथा त्वं तु मुनीनां प्रवर द्विज।
कुरुष्व मुनिशार्दूल तथा मां चिरजीविनम्॥

षष्ठीप्रार्थना—

हाथ जोड़कर देवी षष्ठीकी प्रार्थना करे—

जय देवि जगन्मातर्जगदानन्दकारिणि।
प्रसीद मम कल्याणि महाषष्ठि नमोऽस्तु ते॥
रूपं देहि यशो देहि भगं भगवति देहि मे।
पुत्रान् देहि धनं देहि सर्वान् कामाँश्च देहि मे॥
त्रैलोक्ये यानि भूतानि स्थावराणि चराणि च।
ब्रह्माविष्णुशिवैः सार्धं रक्षां कुर्वन्तु तानि मे॥

[इसके अनन्तर कुछ पद्धतियोंमें हवनका भी विधान दिया है, वर्धापन कर्ममें हवन अनिवार्य न होनेपर भी जो लोग करना चाहें, वे किसी

स्थण्डिल अथवा ताम्रकुण्डमें अथवा वेदी बनाकर उसके पंच-भूसंस्कार[१] करके उसमें अग्नि स्थापित कर ले। तदनन्तर कुशकण्डिका-विधान[२] सम्पन्नकर उसी अग्निमें आवाहित एवं पूजित देवताओंके नाममन्त्रोंसे घीमिले तिलोंके द्वारा पृथक्-पृथक् एक-एक आहुति प्रदान करे। हवनके अन्तमें मार्जन, संस्रवप्राशन, प्रणीताविमोक आदि कर्म कर ले।[३]

हवनके अनन्तर सर्वभूतोंके निमित्त बलि देनेका भी विधान है, इसके लिये किसी मिट्टीके सकोरे अथवा दोनेमें दूध या पायस (खीर) रखकर उसे वेदीके पास रख ले और '**सर्वभूतेभ्यो नमः**' कहकर सभी भूतोंके निमित्त एकतन्त्रसे भूतबलि निवेदित करे।]

तिलगुड़मिश्रित दुग्धका पान—

तदनन्तर निम्न मन्त्रसे मार्कण्डेयजीको निवेदित दुग्धको पाँच बार थोड़ा-थोड़ा अंजलिमें लेकर पान करे—

सतिलं गुडसम्मिश्रमञ्जल्यर्धमितं पयः।
मार्कण्डेयाद्वरं लब्ध्वा पिबाम्यायुर्विवृद्धये॥

मुख-हाथ धो ले, आचमनकर ब्राह्मणों, माता-पिता तथा अन्य बड़े जनोंको प्रणाम करे।

पोटलिकाबन्धन—

ब्राह्मण पूर्वमें गणेशजीके पास रखी पोटलिकाको अथवा रक्षासूत्रको बालकके दाहिने हाथमें निम्न मन्त्रसे बाँधे—

येन बद्धो बली राजा दानवेन्द्रो महाबलः।
तेन त्वां प्रतिबध्नामि रक्षे मा चल मा चल॥

दक्षिणादान—

दक्षिणादानका निम्न संकल्प करे—

ॐ विष्णुर्विष्णुर्विष्णुः श्रीमद्भगवतो महापुरुषस्य विष्णो-राज्ञया प्रवर्तमानस्य ब्रह्मणो द्वितीयपरार्धे श्रीश्वेतवाराहकल्पे

१-३. पच-भूसंस्कार तथा कुशकण्डिका आदि की विधि पृ० ५४ से ६३ तक दी गयी है।

वैवस्वतमन्वन्तरे अष्टाविंशतितमे कलियुगे कलिप्रथमचरणे जम्बूद्वीपे भारतवर्षे आर्यावर्तैकदेशे (यदि काशी हो तो **अविमुक्तवाराणसीक्षेत्रे आनन्दवने गौरीमुखे त्रिकण्टकविराजिते महाश्मशाने भगवत्या उत्तरवाहिन्या भागीरथ्या वामभागे**) **.....नगरे/ग्रामे/क्षेत्रे षष्टिसंवत्सराणां मध्ये .....संवत्सरे .....अयने .....ऋतौ .....मासे .....पक्षे .....तिथौ .....नक्षत्रे .....योगे .....करणे .....वासरे .....राशिस्थिते सूर्ये .....राशिस्थिते चन्द्रे शेषेषु ग्रहेषु यथायथाराशिस्थानस्थितेषु सत्सु एवं ग्रहगुणगणविशिष्टे शुभमुहूर्ते .....गोत्रः .....शर्मा/वर्मा/गुप्तोऽहं आयुरारोग्याभिवृद्धये कृतायाः पूजायाः साद्गुण्यार्थे इमां दक्षिणां ब्राह्मणेभ्यश्च विभज्य दास्ये।**

हाथका संकल्पजल छोड़ दे, ब्राह्मणोंको दक्षिणा दे।

तदनन्तर ब्राह्मणोंद्वारा तिलक-आशीर्वाद प्राप्तकर आवाहित देवताओंका निम्न मन्त्रसे विसर्जन करे—

यान्तु देवगणाः सर्वे पूजामादाय मामकीम्।
इष्टकामप्रसिध्यर्थं पुनरागमनाय च॥

अक्षतपुंजोंको किसी नदी, जलाशय या किसी वृक्षके मूलमें छोड़ दे और समस्त कर्म निम्न मन्त्रोंको पढ़ता हुआ भगवान्‌को निवेदित करे—

प्रमादात् कुर्वतां कर्म प्रच्यवेताध्वरेषु यत्।
स्मरणादेव तद्विष्णोः सम्पूर्णं स्यादिति श्रुतिः॥
यस्य स्मृत्या च नामोक्त्या तपोयज्ञक्रियादिषु।
न्यूनं सम्पूर्णतां याति सद्यो वन्दे तमच्युतम्॥
यत्पादपङ्कजस्मरणात् यस्य नामजपादपि।
न्यूनं कर्म भवेत् पूर्णं तं वन्दे साम्बमीश्वरम्॥

ॐ विष्णवे नमः। ॐ विष्णवे नमः। ॐ विष्णवे नमः।
ॐ साम्बसदाशिवाय नमः। ॐ साम्बसदाशिवाय नमः।
ॐ साम्बसदाशिवाय नमः।

परिशिष्ट

[क] पंचांगपूजन–प्रयोग

स्वस्त्ययन एवं शान्तिपाठ

ॐ आ नो भद्राः क्रतवो यन्तु विश्वतोऽदब्धासो अपरीतास उद्भिदः। देवा नो यथा सदमिद् वृधे असन्नप्रायुवो रक्षितारो दिवे दिवे॥ देवानां भद्रा सुमतिर्ऋजूयतां देवानाᳬं रातिरभि नो निवर्तताम्। देवानाᳬं सख्यमुपसेदिमा वयं देवा न आयुः प्रतिरन्तु जीवसे॥ तान्पूर्वया निविदा हूमहे वयं भगं मित्रमदितिं दक्षमस्त्रिधम्। अर्यमणं वरुणᳬं सोममश्विना सरस्वती नः सुभगा मयस्करत्॥ तन्नो वातो मयोभु वातु भेषजं तन्माता पृथिवी तत्पिता द्यौः। तद् ग्रावाणः सोमसुतो मयोभुवस्तदश्विना शृणुतं धिष्ण्या युवम्॥ तमीशानं जगतस्तस्थुषस्पतिं धियञ्जिन्वमवसे हूमहे वयम्। पूषा नो यथा वेदसामसद् वृधे रक्षिता पायुरदब्धः स्वस्तये॥ स्वस्ति न इन्द्रो वृद्धश्रवाः स्वस्ति नः पूषा विश्ववेदाः। स्वस्ति नस्तार्क्ष्यो अरिष्टनेमिः स्वस्ति नो बृहस्पतिर्दधातु॥ पृषदश्वा मरुतः पृश्निमातरः शुभं यावानो विदथेषु जग्मयः। अग्निजिह्वा मनवः सूरचक्षसो विश्वे नो देवा अवसागमन्निह॥ भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम देवा भद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्राः। स्थिरैरङ्गैस्तुष्टुवाᳬं सस्तनूभिर्व्यशेमहि देवहितं यदायुः॥ शतमिन्नु शरदो अन्ति देवा यत्रा नश्चक्रा जरसं तनूनाम्।

पुत्रासो यत्र पितरो भवन्ति मा नो मध्या रीरिषतायुर्गन्तोः॥ अदितिर्द्यौरदितिरन्तरिक्षमदितिर्माता स पिता स पुत्रः। विश्वे देवा अदितिः पञ्च जना अदितिर्जातमदितिर्जनित्वम्॥ (शु० य० २५। १४—२३) द्यौः शान्तिरन्तरिक्षᳬं शान्तिः पृथिवी शान्तिरापः

शान्तिरोषधयः शान्तिः। वनस्पतयः शान्तिर्विश्वे देवाः शान्तिर्ब्रह्म शान्तिः सर्वꣳशान्तिः शान्तिरेव शान्तिः सा मा शान्तिरेधि॥ (शु० य० ३६। १७) यतो यतः समीहसे ततो नो अभयं कुरु। शं नः कुरु प्रजाभ्योऽभयं नः पशुभ्यः॥ सुशान्तिर्भवतु॥ (शु० य० ३६। २२)

श्रीमन्महागणाधिपतये नमः। लक्ष्मीनारायणाभ्यां नमः। उमा-महेश्वराभ्यां नमः। वाणीहिरण्यगर्भाभ्यां नमः। शचीपुरन्दराभ्यां नमः। मातापितृचरणकमलेभ्यो नमः। इष्टदेवताभ्यो नमः। कुलदेवताभ्यो नमः। ग्रामदेवताभ्यो नमः। वास्तुदेवताभ्यो नमः। स्थानदेवताभ्यो नमः। सर्वेभ्यो देवेभ्यो नमः। सर्वेभ्यो ब्राह्मणेभ्यो नमः। ॐ सिद्धिबुद्धिसहिताय श्रीमन्महागणाधिपतये नमः।

सुमुखश्चैकदन्तश्च कपिलो गजकर्णकः।
लम्बोदरश्च विकटो विघ्ननाशो विनायकः॥
धूम्रकेतुर्गणाध्यक्षो भालचन्द्रो गजाननः।
द्वादशैतानि नामानि यः पठेच्छृणुयादपि॥
विद्यारम्भे विवाहे च प्रवेशे निर्गमे तथा।
सङ्ग्रामे संकटे चैव विघ्नस्तस्य न जायते॥
शुक्लाम्बरधरं देवं शशिवर्णं चतुर्भुजम्।
प्रसन्नवदनं ध्यायेत् सर्वविघ्नोपशान्तये॥
अभीप्सितार्थसिद्ध्यर्थं पूजितो यः सुरासुरैः।
सर्वविघ्नहरस्तस्मै गणाधिपतये नमः॥
सर्वमङ्गलमाङ्गल्ये! शिवे! सर्वार्थसाधिके।
शरण्ये त्र्यम्बके! गौरि नारायणि नमोऽस्तु ते॥

सर्वदा सर्वकार्येषु नास्ति तेषाममङ्गलम्।
येषां हृदिस्थो भगवान् मङ्गलायतनं हरिः॥
तदेव लग्नं सुदिनं तदेव ताराबलं चन्द्रबलं तदेव।
विद्याबलं देवबलं तदेव लक्ष्मीपते तेऽङ्घ्रियुगं स्मरामि॥
लाभस्तेषां जयस्तेषां कुतस्तेषां पराजयः।
येषामिन्दीवरश्यामो हृदयस्थो जनार्दनः॥
यत्र योगेश्वरः कृष्णो यत्र पार्थो धनुर्धरः।
तत्र श्रीर्विजयो भूतिर्ध्रुवा नीतिर्मतिर्मम॥
अनन्याश्चिन्तयन्तो मां ये जनाः पर्युपासते।
तेषां नित्याभियुक्तानां योगक्षेमं वहाम्यहम्॥
स्मृतेः सकलकल्याणं भाजनं यत्र जायते।
पुरुषं तमजं नित्यं व्रजामि शरणं हरिम्॥
सर्वेष्वारम्भकार्येषु त्रयस्त्रिभुवनेश्वराः।
देवा दिशन्तु नः सिद्धिं ब्रह्मेशानजनार्दनाः॥
विश्वेशं माधवं ढुण्ढिं दण्डपाणिं च भैरवम्।
वन्दे काशीं गुहां गङ्गां भवानीं मणिकर्णिकाम्॥
वक्रतुण्ड महाकाय कोटिसूर्यसमप्रभ।
निर्विघ्नं कुरु मे देव सर्वकार्येषु सर्वदा॥
ॐ गणेशाम्बिकाभ्यां नमः॥

गणेशाम्बिकापूजन

(पूजामें जो वस्तु विद्यमान न हो, उसके लिये '**मनसा परिकल्प्य समर्पयामि**' कहे। जैसे, आभूषणके लिये '**आभूषणं मनसा परिकल्प्य समर्पयामि**'।)

हाथमें अक्षत लेकर ध्यान करे—

भगवान् गणेशका ध्यान—

गजाननं भूतगणादिसेवितं कपित्थजम्बूफलचारुभक्षणम्।
उमासुतं शोकविनाशकारकं नमामि विघ्नेश्वरपादपङ्कजम्॥

भगवती गौरीका ध्यान—

नमो देव्यै महादेव्यै शिवायै सततं नमः।
नमः प्रकृत्यै भद्रायै नियताः प्रणताः स्म ताम्॥
श्रीगणेशाम्बिकाभ्यां नमः, ध्यानं समर्पयामि।

भगवान् गणेशका आवाहन—

ॐ गणानां त्वा गणपतिꣳहवामहे प्रियाणां त्वा प्रियपतिꣳहवामहे निधीनां त्वा निधिपतिꣳहवामहे वसो मम। आहमजानि गर्भधमा त्वमजासि गर्भधम्॥ (यजुर्वेद २३। १९)

एह्येहि हेरम्ब महेशपुत्र समस्तविघ्नौघविनाशदक्ष।
माङ्गल्यपूजाप्रथमप्रधान गृहाण पूजां भगवन् नमस्ते॥

ॐ भूर्भुवः स्वः सिद्धिबुद्धिसहिताय गणपतये नमः, गणपतिमावाहयामि, स्थापयामि, पूजयामि च।

हाथके अक्षत गणेशजीपर चढ़ा दे। फिर अक्षत लेकर गणेशजीकी दाहिनी ओर गौरीजीका आवाहन करे।

भगवती गौरीका आवाहन—

ॐ अम्बे अम्बिकेऽम्बालिके न मा नयति कश्चन।
ससस्त्यश्वकः सुभद्रिकां काम्पीलवासिनीम्॥

(शु० य० २३। १८)

हेमाद्रितनयां देवीं वरदां शङ्करप्रियाम्।
लम्बोदरस्य जननीं गौरीमावाहयाम्यहम्॥

ॐ भूर्भुवः स्वः गौर्यै नमः, गौरीमावाहयामि, स्थापयामि, पूजयामि च।

प्रतिष्ठा—

ॐ मनो जूतिर्जुषतामाज्यस्य बृहस्पतिर्यज्ञमिमं तनोत्वरिष्टं यज्ञꣳसमिमं दधातु। विश्वे देवास इह मादयन्तामो३ म्प्रतिष्ठ॥ (यजुर्वेद २। १३)

अस्यै प्राणाः प्रतिष्ठन्तु अस्यै प्राणाः क्षरन्तु च।
अस्यै देवत्वमर्चायै मामहेति च कश्चन॥
गणेशाम्बिके! सुप्रतिष्ठिते वरदे भवेताम्।

प्रतिष्ठापूर्वकम् आसनार्थे अक्षतान् समर्पयामि गणेशाम्बिकाभ्यां नमः। (आसनके लिये अक्षत समर्पित करे)।

पाद्य, अर्घ्य, आचमनीय, स्नानीय, पुनराचमनीय } **ॐ देवस्य त्वा सवितुः प्रसवेऽश्विनो-र्बाहुभ्यां पूष्णो हस्ताभ्याम्।** (यजु० १।१०)

एतानि पाद्यार्घ्याचमनीयस्नानीयपुनराचमनीयानि समर्पयामि गणेशाम्बिकाभ्यां नमः। (इतना कहकर जल चढ़ा दे)।

दुग्धस्नान—

ॐ पयः पृथिव्यां पय ओषधीषु पयो दिव्यन्तरिक्षे पयो धाः। पयस्वतीः प्रदिशः सन्तु मह्यम्॥ (यजुर्वेद १८। ३६)

कामधेनुसमुद्भूतं सर्वेषां जीवनं परम्।
पावनं यज्ञहेतुश्च पयः स्नानार्थमर्पितम्॥

ॐ भूर्भुवः स्वः गणेशाम्बिकाभ्यां नमः, पयःस्नानं समर्पयामि। (दूधसे स्नान कराये)।

दधिस्नान—

ॐ दधिक्राव्णो अकारिषं जिष्णोरश्वस्य वाजिनः।
सुरभि नो मुखा करत्प्र ण आयू꣡ꣳषि तारिषत्॥

(यजु० २३। ३२)

पयसस्तु समुद्भूतं मधुराम्लं शशिप्रभम्।
दध्यानीतं मया देव स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम्॥

ॐ भूर्भुवः स्वः गणेशाम्बिकाभ्यां नमः, दधिस्नानं समर्पयामि। (दधिसे स्नान कराये)।

घृतस्नान—

ॐ घृतं मिमिक्षे घृतमस्य योनिर्घृते श्रितो घृतम्वस्य धाम। अनुष्वधमा वह मादयस्व स्वाहाकृतं वृषभ वक्षि हव्यम्॥

(यजु० १७। ८८)

नवनीतसमुत्पन्नं सर्वसंतोषकारकम्॥
घृतं तुभ्यं प्रदास्यामि स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम्॥

ॐ भूर्भुवः स्वः गणेशाम्बिकाभ्यां नमः, घृतस्नानं समर्पयामि॥ (घृतसे स्नान कराये)।

मधुस्नान—

ॐ मधु वाता ऋतायते मधु क्षरन्ति सिन्धवः। माध्वीर्नः सन्त्वोषधीः॥ मधु नक्तमुतोषसो मधुमत्पार्थिव꣡ꣳरजः। मधु द्यौरस्तु नः पिता॥

(यजु० १३। २७-२८)

पुष्परेणुसमुद्भूतं सुस्वादु मधुरं मधु।
तेजः पुष्टिकरं दिव्यं स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम्॥

ॐ भूर्भुवः स्वः गणेशाम्बिकाभ्यां नमः, मधुस्नानं समर्पयामि। (मधुसे स्नान कराये।)

शर्करास्नान—

ॐ अपाꣳ रसमुद्वयसꣳ सूर्ये सन्तꣳ समाहितम्। अपा ꣳ रसस्य यो रसस्तं वो गृह्णाम्युत्तममुपयामगृहीतोऽसीन्द्राय त्वा जुष्टं गृह्णाम्येष ते योनिरिन्द्राय त्वा जुष्टतमम्॥ (यजु० ९।३)

इक्षुरससमुद्भूतां शर्करां पुष्टिदां शुभाम्।
मलापहारिकां दिव्यां स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम्॥

ॐ भूर्भुवः स्वः गणेशाम्बिकाभ्यां नमः, शर्करास्नानं समर्पयामि। (शर्करासे स्नान कराये)।

पञ्चामृतस्नान—

ॐ पञ्च नद्यः सरस्वतीमपि यन्ति सस्रोतसः।
सरस्वती तु पञ्चधा सो देशेऽभवत्सरित्॥

(यजु० ३४।११)

पञ्चामृतं मयानीतं पयो दधि घृतं मधु।
शर्करया समायुक्तं स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम्॥

ॐ भूर्भुवः स्वः गणेशाम्बिकाभ्यां नमः, पञ्चामृतस्नानं समर्पयामि। (पञ्चामृतसे स्नान कराये।)

गन्धोदकस्नान—

ॐ अꣳ शुना ते अꣳ शुः पृच्यतां परुषा परुः।
गन्धस्ते सोममवतु मदाय रसो अच्युतः॥

(यजु० २०।२७)

मलयाचलसम्भूतचन्दनेन विनिःसृतम्।
इदं गन्धोदकस्नानं कुङ्कुमाक्तं च गृह्यताम्॥

ॐ भूर्भुवः स्वः गणेशाम्बिकाभ्यां नमः, गन्धोदकस्नानं समर्पयामि। (गन्धोदकसे स्नान कराये।)

शुद्धोदकस्नान—

ॐ शुद्धवालः सर्वशुद्धवालो मणिवालस्त आश्विनाः श्येतः श्येताक्षोऽरुणस्ते रुद्राय पशुपतये कर्णा यामा अवलिप्ता रौद्रा नभोरूपाः पार्जन्याः॥

(यजु० २४। ३)

गङ्गा च यमुना चैव गोदावरी सरस्वती।
नर्मदा सिन्धुकावेरी स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम्॥

ॐ भूर्भुवः स्वः गणेशाम्बिकाभ्यां नमः, शुद्धोदकस्नानं समर्पयामि। (शुद्ध जलसे स्नान कराये।)

आचमन—

शुद्धोदकस्नानान्ते आचमनीयं जलं समर्पयामि। (आचमनके लिये जल दे।)

वस्त्र—

ॐ युवा सुवासाः परिवीत आगात् स उ श्रेयान् भवति जायमानः।
तं धीरासः कवय उन्नयन्ति स्वाध्यो३ मनसा देवयन्तः॥

(ऋक्० ३। ८। ४)

शीतवातोष्णसंत्राणं लज्जाया रक्षणं परम्।
देहालङ्करणं वस्त्रमतः शान्तिं प्रयच्छ मे॥

ॐ भूर्भुवः स्वः गणेशाम्बिकाभ्यां नमः, वस्त्रं समर्पयामि। (वस्त्र समर्पित करे।)

आचमन—

वस्त्रान्ते आचमनीयं जलं समर्पयामि। (आचमनके लिये जल दे।)

उपवस्त्र—

ॐ सुजातो ज्योतिषा सह शर्म वरूथमाऽसदत्स्वः। वासो अग्ने विश्वरूपꣳ सं व्ययस्व विभावसो॥ (यजु० ११। ४०)

यस्याभावेन शास्त्रोक्तं कर्म किञ्चिन्न सिध्यति।
उपवस्त्रं प्रयच्छामि सर्वकर्मोपकारकम्॥

ॐ भूर्भुवः स्वः गणेशाम्बिकाभ्यां नमः, उपवस्त्रं (उपवस्त्राभावे रक्तसूत्रं समर्पयामि)। (उपवस्त्र समर्पित करे।)

आचमन—

उपवस्त्रान्ते आचमनीयं जलं समर्पयामि। (आचमनके लिये जल दे।)

यज्ञोपवीत—

ॐ यज्ञोपवीतं परमं पवित्रं प्रजापतेर्यत्सहजं पुरस्तात्।
आयुष्यमग्र्यं प्रतिमुञ्च शुभ्रं यज्ञोपवीतं बलमस्तु तेजः॥
यज्ञोपवीतमसि यज्ञस्य त्वा यज्ञोपवीतेनोपनह्यामि।
नवभिस्तन्तुभिर्युक्तं त्रिगुणं देवतामयम्।
उपवीतं मया दत्तं गृहाण परमेश्वर॥

ॐ भूर्भुवः स्वः गणेशाम्बिकाभ्यां नमः, यज्ञोपवीतं समर्पयामि। (यज्ञोपवीत समर्पित करे।)

आचमन—

यज्ञोपवीतान्ते आचमनीयं जलं समर्पयामि। (आचमनके लिये जल दे।)

चन्दन—

ॐ त्वां गन्धर्वा अखनँस्त्वामिन्द्रस्त्वां बृहस्पतिः।
त्वामोषधे सोमो राजा विद्वान् यक्ष्मादमुच्यत॥

(यजु० १२। ९८)

श्रीखण्डं चन्दनं दिव्यं गन्धाढ्यं सुमनोहरम्।
विलेपनं सुरश्रेष्ठ! चन्दनं प्रतिगृह्यताम्॥

ॐ भूर्भुवः स्वः गणेशाम्बिकाभ्यां नमः, चन्दनानुलेपनं समर्पयामि। (चन्दन अर्पित करे।)

अक्षत—

ॐ अक्षन्नमीमदन्त ह्यव प्रिया अधूषत। अस्तोषत स्वभानवो विप्रा नविष्ठया मती योजा न्विन्द्र ते हरी॥ (यजु० ३। ५१)

अक्षताश्च सुरश्रेष्ठ कुङ्कुमाक्ताः सुशोभिताः।
मया निवेदिता भक्त्या गृहाण परमेश्वर॥

ॐ भूर्भुवः स्वः गणेशाम्बिकाभ्यां नमः, अक्षतान् समर्पयामि। (अक्षत चढ़ाये।)

पुष्पमाला—

ॐ ओषधीः प्रति मोदध्वं पुष्पवतीः प्रसूवरीः।
अश्वा इव सजित्वरीर्वीरुधः पारयिष्णवः॥

(यजु० १२। ७७)

माल्यादीनि सुगन्धीनि मालत्यादीनि वै प्रभो।
मयाहृतानि पुष्पाणि पूजार्थं प्रतिगृह्यताम्॥

ॐ भूर्भुवः स्वः गणेशाम्बिकाभ्यां नमः, पुष्पमालां समर्पयामि। (पुष्पमाला समर्पित करे।)

दूर्वा—

ॐ काण्डात्काण्डात्प्ररोहन्ती परुषः परुषस्परि।
एवा नो दूर्वे प्र तनु सहस्रेण शतेन च॥

(यजु० १३। २०)

दूर्वाङ्कुरान् सुहरितानमृतान् मङ्गलप्रदान्।
आनीतांस्तव पूजार्थं गृहाण गणनायक॥

ॐ भूर्भुवः स्वः गणेशाम्बिकाभ्यां नमः, दूर्वाङ्कुरान् समर्पयामि। (दूर्वाङ्कुर चढ़ाये।)

सिन्दूर—

ॐ सिन्धोरिव प्राध्वने शूघनासो वातप्रमियः पतयन्ति यह्वाः।
घृतस्य धारा अरुषो न वाजी काष्ठा भिन्दन्नूर्मिभिः पिन्वमानः॥

(यजु० १७। ९५)

सिन्दूरं शोभनं रक्तं सौभाग्यं सुखवर्धनम्।
शुभदं कामदं चैव सिन्दूरं प्रतिगृह्यताम्॥

ॐ भूर्भुवः स्वः गणेशाम्बिकाभ्यां नमः, सिन्दूरं समर्पयामि। (सिन्दूर अर्पित करे।)

अबीर-गुलाल आदि नाना परिमल द्रव्य | **ॐ अहिरिव भोगैः पर्येति बाहुं ज्याया हेतिं परिबाधमानः। हस्तघ्नो विश्वा वयुनानि विद्वान् पुमान् पुमाँ् सं परि पातु विश्वतः॥**

(यजु० २९। ५१)

अबीरं च गुलालं च हरिद्रादिसमन्वितम्।
नाना परिमलं द्रव्यं गृहाण परमेश्वर॥

ॐ भूर्भुवः स्वः गणेशाम्बिकाभ्यां नमः, नानापरिमलद्रव्याणि

समर्पयामि। (अबीर आदि चढ़ाये।)

सुगन्धिद्रव्य—

ॐ अहिरिव .... विश्वतः॥
दिव्यगन्धसमायुक्तं महापरिमलाद्भुतम्।
गन्धद्रव्यमिदं भक्त्या दत्तं वै परिगृह्यताम्॥

ॐ भूर्भुवः स्वः गणेशाम्बिकाभ्यां नमः, सुगन्धिद्रव्यं समर्पयामि। (सुगन्धित द्रव्य अर्पण करे।)

धूप—

ॐ धूरसि धूर्व धूर्वन्तं धूर्व तं योऽस्मान् धूर्वति तं धूर्व यं वयं धूर्वामः। देवानामसि वह्नितमꣳसस्नितमं पप्रितमं जुष्टतमं देवहूतमम्॥

(यजु० १। ८)

वनस्पतिरसोद्भूतो गन्धाढ्यो गन्ध उत्तमः।
आघ्रेयः सर्वदेवानां धूपोऽयं प्रतिगृह्यताम्॥

ॐ भूर्भुवः स्वः गणेशाम्बिकाभ्यां नमः, धूपमाघ्रापयामि। (धूप दिखाये।)

दीप—

ॐ अग्निर्ज्योतिर्ज्योतिरग्निः स्वाहा सूर्यो ज्योतिर्ज्योतिः सूर्यः स्वाहा। अग्निर्वर्चो ज्योतिर्वर्चः स्वाहा सूर्यो वर्चो ज्योतिर्वर्चः स्वाहा॥ ज्योतिः सूर्यः सूर्यो ज्योतिः स्वाहा॥ (यजु० ३। ९)

साज्यं च वर्तिसंयुक्तं वह्निना योजितं मया।
दीपं गृहाण देवेश त्रैलोक्यतिमिरापहम्॥
भक्त्या दीपं प्रयच्छामि देवाय परमात्मने।
त्राहि मां निरयाद् घोराद् दीपज्योतिर्नमोऽस्तु ते॥

ॐ भूर्भुवः स्वः गणेशाम्बिकाभ्यां नमः, दीपं दर्शयामि। (दीप दिखाये।)

हस्तप्रक्षालन—

‘ॐ हृषीकेशाय नमः’ कहकर हाथ धो ले।

नैवेद्य—

नैवेद्यको प्रोक्षितकर गन्ध-पुष्पसे आच्छादित करे। तदनन्तर जलसे चतुष्कोण घेरा लगाकर भगवान्‌के आगे रखे।

ॐ नाभ्या आसीदन्तरिक्षꣳशीर्ष्णो द्यौः समवर्तत।
पद्‌भ्यां भूमिर्दिशः श्रोत्रात्तथा लोकाँ२ अकल्पयन्॥

(यजु० ३१। १३)

ॐ अमृतोपस्तरणमसि स्वाहा।

ॐ प्राणाय स्वाहा। ॐ अपानाय स्वाहा। ॐ समानाय स्वाहा। ॐ उदानाय स्वाहा। ॐ व्यानाय स्वाहा। ॐ अमृतापिधानमसि स्वाहा।

शर्कराखण्डखाद्यानि दधिक्षीरघृतानि च।
आहारं भक्ष्यभोज्यं च नैवेद्यं प्रतिगृह्यताम्॥

ॐ भूर्भुवः स्वः गणेशाम्बिकाभ्यां नमः, नैवेद्यं निवेदयामि। (नैवेद्य निवेदित करे।)

नैवेद्यान्ते आचमनीयं जलं समर्पयामि। (जल समर्पित करे।)

ऋतुफल—

ॐ याः फलिनीर्या अफला अपुष्पा याश्च पुष्पिणीः।
बृहस्पतिप्रसूतास्ता नो मुञ्चन्त्वꣳ हसः॥

(यजु० १२। ८९)

इदं फलं मया देव स्थापितं पुरतस्तव।
तेन मे सफलावाप्तिर्भवेज्जन्मनि जन्मनि॥

ॐ भूर्भुवः स्वः गणेशाम्बिकाभ्यां नमः, ऋतुफलानि समर्पयामि। (ऋतुफल अर्पित करे।)

फलान्ते आचमनीयं जलं समर्पयामि। (आचमनीय जल अर्पित करे।)

उत्तरापोऽशन—

उत्तरापोऽशनार्थे जलं समर्पयामि। गणेशाम्बिकाभ्यां नमः। (जल दे।)

करोद्वर्तन—

ॐ अꣳ शुना ते अꣳ शुः पृच्यतां परुषा परुः।
गन्धस्ते सोममवतु मदाय रसो अच्युतः॥

(यजु० २०। २७)

चन्दनं मलयोद्भूतं कस्तूर्यादिसमन्वितम्।
करोद्वर्तनकं देव गृहाण परमेश्वर॥

ॐ भूर्भुवः स्वः गणेशाम्बिकाभ्यां नमः, करोद्वर्तनकं चन्दनं समर्पयामि। (मलयचन्दन समर्पित करे।)

ताम्बूल—

ॐ यत्पुरुषेण हविषा देवा यज्ञमतन्वत।
वसन्तोऽस्यासीदाज्यं ग्रीष्म इध्मः शरद्धविः॥

(यजु० ३१। १४)

पूगीफलं महद्दिव्यं नागवल्लीदलैर्युतम्।
एलादिचूर्णसंयुक्तं ताम्बूलं प्रतिगृह्यताम्॥

ॐ भूर्भुवः स्वः गणेशाम्बिकाभ्यां नमः, मुखवासार्थम् एलालवंगपूगीफलसहितं ताम्बूलं समर्पयामि। (इलायची,

लौंग-सुपारीके साथ ताम्बूल अर्पित करे।)

दक्षिणा—

ॐ हिरण्यगर्भः समवर्तताग्रे भूतस्य जातः पतिरेक आसीत्।
स दाधार पृथिवीं द्यामुतेमां कस्मै देवाय हविषा विधेम॥

(यजु० १३। ४)

हिरण्यगर्भगर्भस्थं हेमबीजं विभावसोः।
अनन्तपुण्यफलदमतः शान्तिं प्रयच्छ मे॥

ॐ भूर्भुवः स्वः गणेशाम्बिकाभ्यां नमः, कृतायाः पूजायाः सादगुण्यार्थे द्रव्यदक्षिणां समर्पयामि। (द्रव्य दक्षिणा समर्पित करे।)

आरती—

ॐ इदꣳ हविः प्रजननं मे अस्तु दशवीरꣳ सर्वगणꣳ स्वस्तये।
आत्मसनि प्रजासनि पशुसनि लोकसन्यभयसनि।
अग्निः प्रजां बहुलां मे करोत्वन्नं पयो रेतो अस्मासु धत्त॥

(यजु० १९। ४८)

ॐ आ रात्रि पार्थिवꣳ रजः पितुरप्रायि धामभिः।
दिवः सदाꣳसि बृहती वि तिष्ठस आ त्वेषं वर्तते तमः॥

(यजु० ३४। ३२)

कदलीगर्भसम्भूतं कर्पूरं तु प्रदीपितम्।
आरार्तिकमहं कुर्वे पश्य मे वरदो भव॥

ॐ भूर्भुवः स्वः गणेशाम्बिकाभ्यां नमः, आरार्तिकं समर्पयामि।
(कर्पूरकी आरती करे, आरतीके बाद जल गिरा दे।)

पुष्पाञ्जलि—

ॐ यज्ञेन यज्ञमयजन्त देवास्तानि धर्माणि प्रथमान्यासन्।
ते ह नाकं महिमानः सचन्त यत्र पूर्वे साध्याः सन्ति देवाः॥

(यजु० ३१। १६)

ॐ गणानां त्वा गणपतिꣳहवामहे प्रियाणां त्वा प्रियपतिꣳहवामहे निधीनां त्वा निधिपतिꣳहवामहे वसो मम। आहमजानि गर्भधमा त्वमजासि गर्भधम्॥ (यजुर्वेद २३। १९)

ॐ अम्बे अम्बिकेऽम्बालिके न मा नयति कश्चन।
ससस्त्यश्वकः सुभद्रिकां काम्पीलवासिनीम्॥

(शु० य० २३। १८)

नानासुगन्धिपुष्पाणि यथाकालोद्भवानि च।
पुष्पाञ्जलिर्मया दत्तो गृहाण परमेश्वर॥

ॐ भूर्भुवः स्वः गणेशाम्बिकाभ्यां नमः, पुष्पाञ्जलिं समर्पयामि। (पुष्पाञ्जलि अर्पित करे।)

प्रदक्षिणा—

ॐ ये तीर्थानि प्रचरन्ति सृकाहस्ता निषङ्गिणः।
तेषाꣳ सहस्त्रयोजनेऽव धन्वानि तन्मसि॥

(यजु० १६। ६१)

यानि कानि च पापानि जन्मान्तरकृतानि च।
तानि सर्वाणि नश्यन्तु प्रदक्षिणपदे पदे॥

ॐ भूर्भुवः स्वः गणेशाम्बिकाभ्यां नमः, प्रदक्षिणां समर्पयामि। (प्रदक्षिणा करे।)

विशेषार्घ्य—

ताम्रपात्रमें जल, चन्दन, अक्षत, फल, फूल, दूर्वा और दक्षिणा रखकर अर्घ्यपात्रको हाथमें लेकर निम्नलिखित मन्त्र पढ़े—

रक्ष रक्ष गणाध्यक्ष रक्ष त्रैलोक्यरक्षक।
भक्तानामभयं कर्ता त्राता भव भवार्णवात्॥

द्वैमातुर कृपासिन्धो षाण्मातुराग्रज प्रभो।
वरदस्त्वं वरं देहि वाञ्छितं वाञ्छितार्थद॥
अनेन सफलार्घ्येण वरदोऽस्तु सदा मम।

ॐ भूर्भुवः स्वः गणेशाम्बिकाभ्यां नमः, विशेषार्घ्यं समर्पयामि। (विशेषार्घ्य दे।)

प्रार्थना—

विघ्नेश्वराय वरदाय सुरप्रियाय
लम्बोदराय सकलाय जगद्धिताय।
नागाननाय श्रुतियज्ञविभूषिताय
गौरीसुताय गणनाथ नमो नमस्ते॥
भक्तार्तिनाशनपराय गणेश्वराय
सर्वेश्वराय शुभदाय सुरेश्वराय।
विद्याधराय विकटाय च वामनाय
भक्तप्रसन्नवरदाय नमो नमस्ते॥
नमस्ते ब्रह्मरूपाय विष्णुरूपाय ते नमः
नमस्ते रुद्ररूपाय करिरूपाय ते नमः।
विश्वरूपस्वरूपाय नमस्ते ब्रह्मचारिणे
भक्तप्रियाय देवाय नमस्तुभ्यं विनायक॥
त्वां विघ्नशत्रुदलनेति च सुन्दरेति
भक्तप्रियेति सुखदेति फलप्रदेति।
विद्याप्रदेत्यघहरेति च ये स्तुवन्ति
तेभ्यो गणेश वरदो भव नित्यमेव॥
त्वं वैष्णवी शक्तिरनन्तवीर्या
विश्वस्य बीजं परमासि माया।

सम्मोहितं देवि समस्तमेतत्
त्वं वै प्रसन्ना भुवि मुक्तिहेतुः॥

ॐ भूर्भुवः स्वः गणेशाम्बिकाभ्यां नमः, प्रार्थनापूर्वकं नमस्कारान् समर्पयामि। (साष्टाङ्ग नमस्कार करे।)

गणेशपूजने कर्म यन्न्यूनमधिकं कृतम्।
तेन सर्वेण सर्वात्मा प्रसन्नोऽस्तु सदा मम॥

अनया पूजया गणेशाम्बिके प्रीयेताम्, न मम।

ऐसा कहकर समस्त पूजनकर्म भगवान्‌को समर्पित कर दे* तथा पुनः नमस्कार करे।

* अचल प्रतिमाका विसर्जन नहीं किया जाता, किंतु आवाहित एवं प्रतिष्ठित देव-प्रतिमाओंका विसर्जन करना चाहिये।

कलश-स्थापन

कलशमें रोलीसे स्वस्तिकका चिह्न बनाकर गलेमें तीन धागावाली मौली लपेटे और कलशको एक ओर रख ले। कलश स्थापित किये जानेवाली भूमि अथवा पाटेपर कुङ्कुम या रोलीसे अष्टदलकमल बनाकर निम्न मन्त्रसे भूमिका स्पर्श करे—

भूमिका स्पर्श—

ॐ भूरसि भूमिरस्यदितिरसि विश्वधाया विश्वस्य भुवनस्य धर्त्री। पृथिवीं यच्छ पृथिवीं दृꣳ ह पृथिवीं मा हिꣳ सीः॥

निम्नलिखित मन्त्र पढ़कर पूजित भूमिपर सप्तधान्य[१] अथवा गेहूँ, चावल या जौ[२] रख दे—

धान्यप्रक्षेप—

ॐ धान्यमसि धिनुहि देवान् प्राणाय त्वो दानाय त्वा व्यानाय त्वा। दीर्घामनु प्रसितिमायुषे धां देवो वः सविता हिरण्यपाणिः प्रति गृभ्णात्वच्छिद्रेण पाणिना चक्षुषे त्वा महीनां पयोऽसि॥

इस धान्यपर निम्नलिखित मन्त्र पढ़कर कलशकी स्थापना करे—

कलश-स्थापन—

ॐ आ जिघ्र कलशं मह्या त्वा विशन्त्विन्दवः। पुनरूर्जा नि वर्तस्व सा नः सहस्रं धुक्ष्वोरुधारा पयस्वती पुनर्मा विशताद्रयिः॥

१-जौ, धान, तिल, कँगनी, मूँग, चना, साँवा—ये सप्तधान्य कहलाते हैं—

यवधान्यतिलाः कंगुः मुद्गचणकश्यामकाः। एतानि सप्तधान्यानि सर्वकार्येषु योजयेत्॥

२-नवरात्र आदिमें स्थापित कलशको कई दिनोंतक सुरक्षित रखना पड़ता है, ऐसे अवसरोंपर शुद्ध मिट्टी बिछा दी जाती है और उसपर जौ बो दिया जाता है। नवरात्रमें इस उगे हुए जौको देवताओंपर चढ़ाया जाता है। ब्राह्मणलोग उसे आशीर्वादके रूपमें बाँटा करते हैं।

कलशमें जल—

ॐ वरुणस्योत्तम्भनमसि वरुणस्य स्कम्भसर्जनी स्थो वरुणस्य ऋतसदन्यसि वरुणस्य ऋतसदनमसि वरुणस्य ऋतसदनमा सीद॥ (इस मन्त्रसे जल छोड़े।)

कलशमें चन्दन—

ॐ त्वां गन्धर्वा अखनँस्त्वामिन्द्रस्त्वां बृहस्पतिः।
त्वामोषधे सोमो राजा विद्वान् यक्ष्मादमुच्यत॥

(चन्दन छोड़े।)

कलशमें सर्वौषधि[1]—

ॐ या ओषधीः पूर्वा जाता देवेभ्यस्त्रियुगं पुरा।
मनै नु बभ्रूणामहꣳ शतं धामानि सप्त च॥

(सर्वौषधि छोड़ दे।)

कलशमें दूब—

ॐ काण्डात्काण्डात्प्ररोहन्ती परुषः परुषस्परि।
एवा नो दूर्वे प्र तनु सहस्रेण शतेन च॥

(दूब छोड़े।)

कलशपर पञ्चपल्लव[2]—

ॐ अश्वत्थे वो निषदनं पर्णे वो वसतिष्कृता।
गोभाज इत्किलासथ यत्सनवथ पूरुषम्॥

(पञ्चपल्लव रख दे।)

कलशमें पवित्री—

ॐ पवित्रे स्थो वैष्णव्यौ सवितुर्वः प्रसव उत्पुनाम्यच्छिद्रेण

---

१. **मुरा माँसी वचा कुष्ठं शैलेयं रजनीद्वयम्।**
सठी चम्पकमुस्ता च सर्वौषधिगणः स्मृतः॥ (अग्निपु० १७७।१७)

मुरा, जटामाँसी, वच, कुष्ठ, शिलाजीत, हल्दी और दारुहल्दी, सठी, चम्पक, मुस्ता—ये सर्वौषधि कहलाती हैं।

२. **न्यग्रोधोदुम्बरोऽश्वत्थः चूतप्लक्षस्तथैव च।**

बरगद, गूलर, पीपल, आम, पाकड़—ये पञ्चपल्लव हैं।

पवित्रेण सूर्यस्य रश्मिभिः। तस्य ते पवित्रपते पवित्रपूतस्य यत्कामः पुने तच्छकेयम्॥ (कुश छोड़ दे।)

कलशमें सप्तमृत्तिका[१]—

ॐ स्योना पृथिवि नो भवानृक्षरा निवेशनी। यच्छा नः शर्म सप्रथाः। (सप्तमृत्तिका छोड़े।)

कलशमें सुपारी—

ॐ याः फलिनीर्या अफला अपुष्पा याश्च पुष्पिणीः। बृहस्पतिप्रसूतास्ता नो मुञ्चन्त्वꣳहसः॥ (सुपारी छोड़े।)

कलशमें पञ्चरत्न[२]—

ॐ परि वाजपतिः कविरग्निर्हव्यान्यक्रमीत्। दधद्रत्नानि दाशुषे। (पञ्चरत्न छोड़े।)

कलशमें द्रव्य—

ॐ हिरण्यगर्भः समवर्तताग्रे भूतस्य जातः पतिरेक आसीत्। स दाधार पृथिवीं द्यामुतेमां कस्मै देवाय हविषा विधेम॥ (द्रव्य छोड़े।)

निम्नलिखित मन्त्र पढ़कर कलशको वस्त्रसे अलंकृत करे—

कलशपर वस्त्र—

ॐ सुजातो ज्योतिषा सह शर्म वरूथमाऽसदत्स्वः।
वासो अग्ने विश्वरूपꣳ सं व्ययस्व विभावसो॥

---

१. **अश्वस्थानाद्गजस्थानाद्वल्मीकात्सङ्गमाद्ध्रदात्।**
राजद्वाराच्च गोष्ठाच्च मृदमानीय निक्षिपेत्॥

घुड़साल, हाथीसाल, बाँबी, नदियोंके संगम, तालाब, राजाके द्वार और गोशाला—इन सात स्थानोंकी मिट्टीको सप्तमृत्तिका कहते हैं। सप्तमृत्तिका उपलब्ध न होनेपर इनमेंसे एक स्थानकी मिट्टी अथवा गंगा आदि पवित्र नदियोंकी मिट्टीसे कार्य सम्पन्न कर लेना चाहिये।

२. **कनकं कुलिशं मुक्ता पद्मरागं च नीलकम्।**
एतानि पञ्चरत्नानि सर्वकार्येषु योजयेत्॥

सोना, हीरा, मोती, पद्मराग और नीलम—ये पञ्चरत्न कहे जाते हैं।

कलशपर पूर्णपात्र—

ॐ पूर्णा दर्वि परा पत सुपूर्णा पुनरा पत। वस्नेव विक्रीणावहा इषमूर्जंꣳशतक्रतो॥

चावलसे भरे पूर्णपात्रको कलशपर स्थापित करे और उसपर लाल कपड़ा लपेटे हुए नारियलको निम्न मन्त्र पढ़कर रखे—

कलशपर नारियल—

ॐ याः फलिनीर्या अफला अपुष्पा याश्च पुष्पिणीः।
बृहस्पतिप्रसूतास्ता नो मुञ्चन्त्वꣳ हसः॥

अब कलशमें देवी-देवताओंका आवाहन करना चाहिये। सबसे पहले हाथमें अक्षत और पुष्प लेकर निम्नलिखित मन्त्रसे वरुणका आवाहन करे—

कलशमें वरुणका ध्यान और आवाहन—

ॐ तत्त्वा यामि ब्रह्मणा वन्दमानस्तदा शास्ते यजमानो हविर्भिः।
अहेडमानो वरुणेह बोध्युरुशꣳ स मा न आयुः प्र मोषीः॥
अस्मिन् कलशे वरुणं साङ्गं सपरिवारं सायुधं सशक्तिकमावाहयामि।

ॐ भूर्भुवः स्वः भो वरुण! इहागच्छ, इह तिष्ठ, स्थापयामि, पूजयामि, मम पूजां गृहाण। 'ॐ अपां पतये वरुणाय नमः' कहकर अक्षत-पुष्प कलशपर छोड़ दे।

फिर हाथमें अक्षत-पुष्प लेकर चारों वेद एवं अन्य देवी-देवताओंका आवाहन करे—

कलशमें देवी-देवताओंका आवाहन—

कलशस्य मुखे विष्णुः कण्ठे रुद्रः समाश्रितः।
मूले त्वस्य स्थितो ब्रह्मा मध्ये मातृगणाः स्मृताः॥

कुक्षौ तु सागराः सर्वे सप्तद्वीपा वसुन्धरा।
ऋग्वेदोऽथ यजुर्वेदः सामवेदो ह्यथर्वणः॥
अङ्गैश्च सहिताः सर्वे कलशं तु समाश्रिताः।
अत्र गायत्री सावित्री शान्तिः पुष्टिकरी तथा॥
आयान्तु देवपूजार्थं दुरितक्षयकारकाः।
गङ्गे च यमुने चैव गोदावरि सरस्वति।
नर्मदे सिन्धुकावेरि जलेऽस्मिन् सन्निधिं कुरु॥
सर्वे समुद्राः सरितस्तीर्थानि जलदा नदाः।
आयान्तु मम शान्त्यर्थं दुरितक्षयकारकाः॥

इस तरह जलाधिपति वरुणदेव तथा वेदों, तीर्थों, नदों, नदियों, सागरों, देवियों एवं देवताओंके आवाहनके बाद हाथमें अक्षत-पुष्प लेकर निम्नलिखित मन्त्रसे कलशकी प्रतिष्ठा करे—

प्रतिष्ठा—

ॐ मनो जूतिर्जुषतामाज्यस्य बृहस्पतिर्यज्ञमिमं तनोत्वरिष्टं यज्ञꣳ समिमं दधातु। विश्वे देवास इह मादयन्तामो३म्प्रतिष्ठ॥

कलशे वरुणाद्यावाहितदेवताः सुप्रतिष्ठिता वरदा भवन्तु। ॐ वरुणाद्यावाहितदेवताभ्यो नमः।

—यह कहकर अक्षत-पुष्प कलशके पास छोड़ दे।

ध्यान—

ॐ वरुणाद्यावाहितदेवताभ्यो नमः, ध्यानार्थे पुष्पं समर्पयामि। (पुष्प समर्पित करे।)

आसन—

ॐ वरुणाद्यावाहितदेवताभ्यो नमः, आसनार्थे अक्षतान् समर्पयामि। (अक्षत रखे।)

पाद्य—

ॐ वरुणाद्यावाहितदेवताभ्यो नमः, पादयोः पाद्यं समर्पयामि। (जल चढ़ाये।)

अर्घ्य—

ॐ वरुणाद्यावाहितदेवताभ्यो नमः, हस्तयोरर्घ्यं समर्पयामि। (जल चढ़ाये।)

स्नानीय जल—

ॐ वरुणाद्यावाहितदेवताभ्यो नमः, स्नानीयं जलं समर्पयामि। (स्नानीय जल चढ़ाये।)

स्नानाङ्ग आचमन—

ॐ वरुणाद्यावाहितदेवताभ्यो नमः, स्नानान्ते आचमनीयं जलं समर्पयामि। (आचमनीय जल चढ़ाये।)

पञ्चामृतस्नान—

ॐ वरुणाद्यावाहितदेवताभ्यो नमः, पञ्चामृतस्नानं समर्पयामि। (पञ्चामृतसे स्नान कराये।)

गन्धोदकस्नान—

ॐ वरुणाद्यावाहितदेवताभ्यो नमः, गन्धोदकस्नानं समर्पयामि। (जलमें मलयचन्दन मिलाकर स्नान कराये।)

शुद्धोदकस्नान—

ॐ वरुणाद्यावाहितदेवताभ्यो नमः, स्नानान्ते शुद्धोदकस्नानं समर्पयामि। (शुद्ध जलसे स्नान कराये।)

आचमन—

ॐ वरुणाद्यावाहितदेवताभ्यो नमः, शुद्धोदकस्नानान्ते आचमनीयं जलं समर्पयामि। (आचमनके लिये जल चढ़ाये।)

वस्त्र—

ॐ वरुणाद्यावाहितदेवताभ्यो नमः, वस्त्रं समर्पयामि (वस्त्र चढ़ाये।)

आचमन—

ॐ वरुणाद्यावाहितदेवताभ्यो नमः, वस्त्रान्ते आचमनीयं जलं समर्पयामि। (आचमनके लिये जल चढ़ाये।)

यज्ञोपवीत—

ॐ वरुणाद्यावाहितदेवताभ्यो नमः, यज्ञोपवीतं समर्पयामि। (यज्ञोपवीत चढ़ाये।)

आचमन—

ॐ वरुणाद्यावाहितदेवताभ्यो नमः, यज्ञोपवीतान्ते आचमनीयं जलं समर्पयामि। (आचमनके लिये जल चढ़ाये।)

उपवस्त्र—

ॐ वरुणाद्यावाहितदेवताभ्यो नमः, उपवस्त्रं (उपवस्त्रार्थे रक्तसूत्रम्) समर्पयामि। (उपवस्त्र चढ़ाये।)

आचमन—

ॐ वरुणाद्यावाहितदेवताभ्यो नमः, उपवस्त्रान्ते आचमनीयं जलं समर्पयामि। (आचमनके लिये जल चढ़ाये।)

चन्दन—

ॐ वरुणाद्यावाहितदेवताभ्यो नमः, चन्दनं समर्पयामि। (चन्दन लगाये।)

अक्षत—

ॐ वरुणाद्यावाहितदेवताभ्यो नमः, अक्षतान् समर्पयामि। (अक्षत समर्पित करे।)

पुष्प (पुष्पमाला)—

ॐ वरुणाद्यावाहितदेवताभ्यो नमः, पुष्पं (पुष्पमालाम्) समर्पयामि। (पुष्प और पुष्पमाला चढ़ाये।)

नानापरिमल-द्रव्य—

ॐ वरुणाद्यावाहितदेवताभ्यो नमः, नानापरिमलद्रव्याणि समर्पयामि। (विविध परिमल द्रव्य समर्पित करे।)

सुगन्धित द्रव्य—

ॐ वरुणाद्यावाहितदेवताभ्यो नमः, सुगन्धितद्रव्यं समर्पयामि। (सुगन्धित द्रव्य (इत्र आदि) चढ़ाये।)

धूप—

ॐ वरुणाद्यावाहितदेवताभ्यो नमः, धूपमाघ्रापयामि। (धूप आघ्रापित कराये।)

दीप—

ॐ वरुणाद्यावाहितदेवताभ्यो नमः, दीपं दर्शयामि। (दीप दिखाये।)

हस्तप्रक्षालन—

दीप दिखाकर हाथ धो ले।

नैवेद्य—

ॐ वरुणाद्यावाहितदेवताभ्यो नमः, सर्वविधं नैवेद्यं निवेदयामि। (नैवेद्य निवेदित करे।)

आचमन आदि—

ॐ वरुणाद्यावाहितदेवताभ्यो नमः, आचमनीयं जलम्, मध्ये पानीयं जलम्, उत्तरापोऽशने, मुखप्रक्षालनार्थे, हस्तप्रक्षालनार्थे

च जलं समर्पयामि। (आचमनीय एवं पानीय तथा मुख और हस्त-प्रक्षालनके लिये जल चढ़ाये।)

करोद्वर्तन—

ॐ वरुणाद्यावाहितदेवताभ्यो नमः, करोद्वर्तनं समर्पयामि। (करोद्वर्तनके लिये गन्ध समर्पित करे।)

ताम्बूल—

ॐ वरुणाद्यावाहितदेवताभ्यो नमः, ताम्बूलं समर्पयामि। (सुपारी, इलायची, लौंगसहित पान चढ़ाये।)

दक्षिणा—

ॐ वरुणाद्यावाहितदेवताभ्यो नमः, कृतायाः पूजायाः साद्‌गुण्यार्थे द्रव्यदक्षिणां समर्पयामि। (द्रव्य-दक्षिणा चढ़ाये।)

आरती—

ॐ वरुणाद्यावाहितदेवताभ्यो नमः, आरार्तिकं समर्पयामि। (आरती करे।)

पुष्पाञ्जलि—

ॐ वरुणाद्यावाहितदेवताभ्यो नमः, मन्त्रपुष्पाञ्जलिं समर्पयामि। (पुष्पाञ्जलि समर्पित करे।)

प्रदक्षिणा—

ॐ वरुणाद्यावाहितदेवताभ्यो नमः, प्रदक्षिणां समर्पयामि। (प्रदक्षिणा करे।)

हाथमें पुष्प लेकर इस प्रकार प्रार्थना करे—

प्रार्थना—

देवदानवसंवादे मथ्यमाने महोदधौ।
उत्पन्नोऽसि तदा कुम्भ विधृतो विष्णुना स्वयम्॥

त्वत्तोये सर्वतीर्थानि देवाः सर्वे त्वयि स्थिताः।
त्वयि तिष्ठन्ति भूतानि त्वयि प्राणाः प्रतिष्ठिताः॥
शिवः स्वयं त्वमेवासि विष्णुस्त्वं च प्रजापतिः।
आदित्या वसवो रुद्रा विश्वेदेवाः सपैतृकाः॥
त्वयि तिष्ठन्ति सर्वेऽपि यतः कामफलप्रदाः।
त्वत्प्रसादादिमां पूजां कर्तुमीहे जलोद्भव।
सांनिध्यं कुरु मे देव प्रसन्नो भव सर्वदा॥
नमो नमस्ते स्फटिकप्रभाय सुश्वेतहाराय सुमङ्गलाय।
सुपाशहस्ताय झषासनाय जलाधिनाथाय नमो नमस्ते॥
'ॐ अपां पतये वरुणाय नमः।'

नमस्कार—

ॐ वरुणाद्यावाहितदेवताभ्यो नमः, प्रार्थनापूर्वकं नमस्कारान् समर्पयामि। (इस नाम-मन्त्रसे नमस्कारपूर्वक पुष्प समर्पित करे।)

अब हाथमें जल लेकर निम्नलिखित वाक्यका उच्चारणकर जल कलशके पास छोड़ते हुए समस्त पूजन-कर्म भगवान् वरुणदेवको निवेदित करे—

समर्पण—

कृतेन अनेन पूजनेन कलशे वरुणाद्यावाहितदेवताः प्रीयन्तां न मम।

पुण्याहवाचन

पुण्याहवाचनके समय आरम्भमें वरुण-कलशके पास जलसे भरा एक पात्र (कलश) भी रख दे। वरुण-कलशके पूजनके साथ-साथ इसका भी पूजन कर लेना चाहिये। पुण्याहवाचनका कर्म इसीसे किया जाता है। सबसे पहले वरुणकी प्रार्थना करे*।

वरुण-प्रार्थना—

ॐ पाशपाणे नमस्तुभ्यं पद्मिनीजीवनायक।
पुण्याहवाचनं यावत् तावत् त्वं सुस्थिरो भव॥

यजमान अपनी दाहिनी ओर पुण्याहवाचन-कर्मके लिये वरण किये हुए युग्म ब्राह्मणोंको, जिनका मुख उत्तरकी ओर हो, बैठा ले। इसके बाद यजमान घुटने टेककर कमलकी कोंढ़ीकी तरह अञ्जलि बनाकर सिरसे लगाकर तीन बार प्रणाम करे। तब आचार्य अपने दाहिने हाथसे स्वर्णयुक्त उस जलपात्र (लोटे)-को यजमानकी अञ्जलिमें रख दे। यजमान उसे सिरसे लगाकर निम्नलिखित मन्त्र पढ़कर ब्राह्मणोंसे अपनी दीर्घ आयुका आशीर्वाद माँगे—

यजमान—

ॐ दीर्घा नागा नद्यो गिरयस्त्रीणि विष्णुपदानि च।
तेनायुःप्रमाणेन पुण्यं पुण्याहं दीर्घमायुरस्तु॥

यजमानकी इस प्रार्थनापर ब्राह्मण निम्नलिखित आशीर्वचन बोलें—

ब्राह्मण—

अस्तु दीर्घमायुः। अब यजमान ब्राह्मणोंसे फिर आशीर्वाद माँगे—

---

* शास्त्रानुसार पुण्याहवाचनके लिये वरुण-कलशके अतिरिक्त शान्ति-कलशकी भी स्थापना करनेका विधान है, परंतु सामान्यतः केवल वरुण-कलशसे भी पुण्याहवाचनका कार्य सम्पन्न कर लेते हैं।

यजमान—

ॐ त्रीणि पदा वि चक्रमे विष्णुर्गोपा अदाभ्यः। अतो धर्माणि धारयन्॥ तेनायुःप्रमाणेन पुण्यं पुण्याहं दीर्घमायुरस्तु इति भवन्तो ब्रुवन्तु।

ब्राह्मण—

पुण्यं पुण्याहं दीर्घमायुरस्तु।

यजमान और ब्राह्मणोंका यह संवाद इसी आनुपूर्वीसे दो बार और होना चाहिये। अर्थात् आशीर्वाद मिलनेके बाद यजमान कलशको सिरसे हटाकर कलशके स्थानपर रख दे। फिर इस कलशको सिरसे लगाकर—'**ॐ दीर्घा नागा नद्यो""रस्तु**' बोले। इसके बाद ब्राह्मण '**दीर्घमायुरस्तु**' बोलें। तदनन्तर यजमान पहलेकी तरह कलशको कलश-स्थानपर रखकर फिर सिरसे लगाकर '**ॐ दीर्घा नागा""रस्तु**' कहकर आशीर्वाद माँगे और ब्राह्मण '**दीर्घमायुरस्तु**' यह कहकर आशीर्वाद दें।

यजमान—

ॐ अपां मध्ये स्थिता देवाः सर्वमप्सु प्रतिष्ठितम्।
ब्राह्मणानां करे न्यस्ताः शिवा आपो भवन्तु नः॥

ॐ शिवा आपः सन्तु। ऐसा कहकर यजमान ब्राह्मणोंके हाथोंमें जल दे।

ब्राह्मण—

सन्तु शिवा आपः।

अब यजमान निम्नलिखित मन्त्र पढ़कर ब्राह्मणोंके हाथोंमें पुष्प दे—

यजमान—

लक्ष्मीर्वसति पुष्पेषु लक्ष्मीर्वसति पुष्करे।
सा मे वसतु वै नित्यं सौमनस्यं सदास्तु मे॥ सौमनस्यमस्तु।

ब्राह्मण—

‘**अस्तु सौमनस्यम्**’ ऐसा कहकर ब्राह्मण पुष्पको स्वीकार करें।

अब यजमान निम्नलिखित मन्त्र पढ़कर ब्राह्मणोंके हाथमें अक्षत दे—

यजमान—

अक्षतं चास्तु मे पुण्यं दीर्घमायुर्यशोबलम्।
यद्यच्छ्रेयस्करं लोके तत्तदस्तु सदा मम॥ अक्षतं चारिष्टं चास्तु।

ब्राह्मण—

‘**अस्त्वक्षतमरिष्टं च**’।—ऐसा बोलकर ब्राह्मण अक्षतको स्वीकार करें। इसी प्रकार आगे यजमान ब्राह्मणोंके हाथोंमें चन्दन, अक्षत, पुष्प आदि देता जाय और ब्राह्मण इन्हें स्वीकार करते हुए यजमानकी मंगल-कामना करें।

यजमान—(चन्दन) **गन्धाः पान्तु।**

ब्राह्मण—सौमङ्गल्यं चास्तु।

यजमान—(अक्षत) **अक्षताः पान्तु।**

ब्राह्मण—आयुष्यमस्तु।

यजमान—(पुष्प) **पुष्पाणि पान्तु।**

ब्राह्मण—सौश्रियमस्तु।

यजमान—(सुपारी-पान) **सफलताम्बूलानि पान्तु।**

ब्राह्मण—ऐश्वर्यमस्तु।

यजमान—(दक्षिणा) **दक्षिणाः पान्तु।**

ब्राह्मण—बहुदेयं चास्तु।

यजमान—(जल) **आपः पान्तु।**

ब्राह्मण—स्वर्चितमस्तु।

यजमान—

(हाथ जोड़कर) **दीर्घमायुः शान्तिः पुष्टिस्तुष्टिः श्रीर्यशो विद्या विनयो वित्तं बहुपुत्रं बहुधनं चायुष्यं चास्तु।**

ब्राह्मण—

'तथास्तु'—ऐसा कहकर ब्राह्मण यजमानके सिरपर कलशका जल छिड़ककर निम्नलिखित वचन बोलकर आशीर्वाद दें—**ॐ दीर्घमायुः शान्तिः पुष्टिस्तुष्टिश्चास्तु।**

यजमान—

(अक्षत लेकर) **यं कृत्वा सर्ववेदयज्ञक्रियाकरणकर्मारम्भाः शुभाः शोभनाः प्रवर्तन्ते, तमहमोङ्कारमादिं कृत्वा यजुराशीर्वचनं बहुऋषिमतं समनुज्ञातं भवद्भिरनुज्ञातः पुण्यं पुण्याहं वाचयिष्ये।**

ब्राह्मण—

'वाच्यताम्'—ऐसा कहकर निम्न मन्त्रोंका पाठ करें—

ॐ द्रविणोदाः पिपीषति जुहोत प्र च तिष्ठत। नेष्ट्रादृतु-भिरिष्यत॥ सविता त्वा सवानाꣳ सुवतामग्निर्गृहपतीनाꣳ सोमो वनस्पतीनाम्। बृहस्पतिर्वाच इन्द्रो ज्यैष्ठ्याय रुद्रः पशुभ्यो मित्रः सत्यो वरुणो धर्मपतीनाम्।

न तद्रक्षाꣳसि न पिशाचास्तरन्ति देवानामोजः प्रथमजꣳ ह्येतत्। यो बिभर्ति दाक्षायणꣳ हिरण्यꣳ स देवेषु कृणुते दीर्घमायुः स मनुष्येषु कृणुते दीर्घमायुः।

उच्चा ते जातमन्धसो दिवि सद्भूम्या ददे। उग्रꣳ शर्म महि श्रवः॥ उपास्मै गायता नरः पवमानायेन्दवे। अभि देवाँ२ इयक्षते।

यजमान—

व्रतजपनियमतपःस्वाध्यायक्रतुशमदमदयादानविशिष्टानां सर्वेषां ब्राह्मणानां मनः समाधीयताम्।

ब्राह्मण—समाहितमनसः स्मः।

यजमान—प्रसीदन्तु भवन्तः।

ब्राह्मण—प्रसन्नाः स्मः।

इसके बाद यजमान पहलेसे रखे गये दो सकोरोंमेंसे पहले सकोरेमें आमके पल्लव या दूबसे थोड़ा-थोड़ा जल* कलशसे डाले और ब्राह्मण बोलते जायँ—

पहले पात्र (सकोरे)-में—

ॐ शान्तिरस्तु। ॐ पुष्टिरस्तु। ॐ तुष्टिरस्तु। ॐ वृद्धिरस्तु। ॐ अविघ्नमस्तु। ॐ आयुष्यमस्तु। ॐ आरोग्यमस्तु। ॐ शिवमस्तु। ॐ शिवं कर्मास्तु। ॐ कर्मसमृद्धिरस्तु। ॐ धर्म-समृद्धिरस्तु। ॐ वेदसमृद्धिरस्तु। ॐ शास्त्रसमृद्धिरस्तु। ॐ धनधान्यसमृद्धिरस्तु। ॐ पुत्रपौत्रसमृद्धिरस्तु। ॐ इष्टसम्पदस्तु।

दूसरे पात्र (सकोरे)-में—

ॐ अरिष्टनिरसनमस्तु। ॐ यत्पापं रोगोऽशुभमकल्याणं तद् दूरे प्रतिहतमस्तु।

पुनः पहले पात्रमें—

ॐ यच्छ्रेयस्तदस्तु। ॐ उत्तरे कर्मणि निर्विघ्नमस्तु। ॐ उत्तरोत्तरमहरहरभिवृद्धिरस्तु। ॐ उत्तरोत्तराः क्रियाः शुभाः शोभनाः सम्पद्यन्ताम्। ॐ तिथिकरणमुहूर्तनक्षत्रग्रहलग्नसम्पदस्तु। ॐ तिथिकरणमुहूर्तनक्षत्रग्रहलग्नाधिदेवताः प्रीयन्ताम्। ॐ तिथिकरणे

---

* कहींपर जल डाला जाता है और कहींपर चावल डाला जाता है।

समुहूर्ते सनक्षत्रे सग्रहे सलग्ने साधिदैवते प्रीयेताम्। ॐ दुर्गापाञ्चाल्यौ प्रीयेताम्। ॐ अग्निपुरोगा विश्वेदेवाः प्रीयन्ताम्। ॐ इन्द्रपुरोगा मरुद्गणाः प्रीयन्ताम्। ॐ वसिष्ठपुरोगा ऋषिगणाः प्रीयन्ताम्। ॐ माहेश्वरीपुरोगा उमामातरः प्रीयन्ताम्। ॐ अरुन्धतीपुरोगा एकपत्न्यः प्रीयन्ताम्। ॐ ब्रह्मपुरोगाः सर्वे वेदाः प्रीयन्ताम्। ॐ विष्णुपुरोगाः सर्वे देवाः प्रीयन्ताम्। ॐ ऋषयश्छन्दांस्याचार्या वेदा देवा यज्ञाश्च प्रीयन्ताम्। ॐ ब्रह्म च ब्राह्मणाश्च प्रीयन्ताम्। ॐ श्रीसरस्वत्यौ प्रीयेताम्। ॐ श्रद्धामेधे प्रीयेताम्। ॐ भगवती कात्यायनी प्रीयताम्। ॐ भगवती माहेश्वरी प्रीयताम्। ॐ भगवती ऋद्धिकरी प्रीयताम्। ॐ भगवती वृद्धिकरी प्रीयताम्। ॐ भगवती पुष्टिकरी प्रीयताम्। ॐ भगवती तुष्टिकरी प्रीयताम्। ॐ भगवन्तौ विघ्नविनायकौ प्रीयेताम्। ॐ सर्वाः कुलदेवताः प्रीयन्ताम्। ॐ सर्वा ग्रामदेवताः प्रीयन्ताम्। ॐ सर्वा इष्टदेवताः प्रीयन्ताम्।

दूसरे पात्रमें—

ॐ हताश्च ब्रह्मद्विषः। ॐ हताश्च परिपन्थिनः। ॐ हताश्च कर्मणो विघ्नकर्तारः। ॐ शत्रवः पराभवं यान्तु। ॐ शाम्यन्तु घोराणि। ॐ शाम्यन्तु पापानि। ॐ शाम्यन्त्वीतयः। ॐ शाम्यन्तूपद्रवाः॥

पहले पात्रमें—

ॐ शुभानि वर्धन्ताम्। ॐ शिवा आपः सन्तु। ॐ शिवा ऋतवः सन्तु। ॐ शिवा ओषधयः सन्तु। ॐ शिवा वनस्पतयः सन्तु। ॐ शिवा अतिथयः सन्तु। ॐ शिवा अग्नयः सन्तु। ॐ शिवा आहुतयः सन्तु। ॐ अहोरात्रे शिवे स्याताम्।

ॐ निकामे निकामे नः पर्जन्यो वर्षतु फलवत्यो न ओषधयः पच्यन्तां योगक्षेमो नः कल्पताम्॥ ॐ शुक्राङ्गारकबुधबृहस्पति-शनैश्चरराहुकेतुसोमसहिता आदित्यपुरोगाः सर्वे ग्रहाः प्रीयन्ताम्। ॐ भगवान् नारायणः प्रीयताम्। ॐ भगवान् पर्जन्यः प्रीयताम्। ॐ भगवान् स्वामी महासेनः प्रीयताम्। ॐ पुरोऽनुवाक्यया यत्पुण्यं तदस्तु। ॐ याज्यया यत्पुण्यं तदस्तु। ॐ वषट्कारेण यत्पुण्यं तदस्तु। ॐ प्रातः सूर्योदये यत्पुण्यं तदस्तु।

इसके बाद यजमान कलशको कलशके स्थानपर रखकर पहले पात्रमें गिराये गये जलसे मार्जन करे। परिवारके लोग भी मार्जन करें। इसके बाद इस जलको घरमें चारों तरफ छिड़क दे। द्वितीय पात्रमें जो जल गिराया गया है, उसको घरसे बाहर एकान्त स्थानमें गिरा दे।

अब यजमान हाथ जोड़कर ब्राह्मणोंसे प्रार्थना करे—

यजमान—

ॐ एतत्कल्याणयुक्तं पुण्यं पुण्याहं वाचयिष्ये।

ब्राह्मण—वाच्यताम्।

इसके बाद यजमान फिरसे हाथ जोड़कर प्रार्थना करे—

यजमान—

ॐ ब्राह्मं पुण्यमहर्यच्च सृष्ट्युत्पादनकारकम्। (पहली बार)
वेदवृक्षोद्भवं नित्यं तत्पुण्याहं ब्रुवन्तु नः॥

भो ब्राह्मणाः! मम सकुटुम्बस्य सपरिवारस्य गृहे करिष्यमाणस्य अमुककर्मणः पुण्याहं भवन्तो ब्रुवन्तु।

ब्राह्मण—ॐ पुण्याहम्।

यजमान—

भो ब्राह्मणाः! मम ''''करिष्यमाणस्य अमुककर्मणः (दूसरी बार) **पुण्याहं भवन्तो ब्रुवन्तु।**

ब्राह्मण—ॐ पुण्याहम्।

यजमान—

भो ब्राह्मणाः! मम ''''करिष्यमाणस्य अमुककर्मणः (तीसरी बार) **पुण्याहं भवन्तो ब्रुवन्तु।**

ब्राह्मण—ॐ पुण्याहम्।

ॐ पुनन्तु मा देवजनाः पुनन्तु मनसा धियः। पुनन्तु विश्वा भूतानि जातवेदः पुनीहि मा॥

यजमान—

पृथिव्यामुद्धृतायां तु यत्कल्याणं पुरा कृतम्। (पहली बार)
ऋषिभिः सिद्धगन्धर्वैस्तत्कल्याणं ब्रुवन्तु नः॥

भो ब्राह्मणाः! मम सकुटुम्बस्य सपरिवारस्य गृहे करिष्यमाणस्य अमुककर्मणः कल्याणं भवन्तो ब्रुवन्तु।

ब्राह्मण—ॐ कल्याणम्।

यजमान—

भो ब्राह्मणाः! मम सकुटुम्बस्य सपरिवारस्य गृहे (दूसरी बार) **करिष्यमाणस्य अमुककर्मणः कल्याणं भवन्तो ब्रुवन्तु।**

ब्राह्मण—ॐ कल्याणम्।

यजमान—

भो ब्राह्मणाः! मम सकुटुम्बस्य सपरिवारस्य गृहे (तीसरी बार) **करिष्यमाणस्य अमुककर्मणः कल्याणं भवन्तो ब्रुवन्तु।**

ब्राह्मण—ॐ कल्याणम्।

ॐ यथेमां वाचं कल्याणीमावदानि जनेभ्यः। ब्रह्मराजन्याभ्याᳬं शूद्राय चार्याय च स्वाय चारणाय च। प्रियो देवानां दक्षिणायै दातुरिह भूयासमयं मे कामः समृद्ध्यतामुप मादो नमतु।

यजमान—

ॐ सागरस्य तु या ऋद्धिर्महालक्ष्म्यादिभिः कृता। (पहली बार) **सम्पूर्णा सुप्रभावा च तामृद्धिं प्रब्रुवन्तु नः॥**

भो ब्राह्मणाः! मम सकुटुम्बस्य सपरिवारस्य गृहे करिष्यमाणस्य अमुककर्मणः ऋद्धिं भवन्तो ब्रुवन्तु।

ब्राह्मण—ॐ ऋद्ध्यताम्।

यजमान—

भो ब्राह्मणाः! मम सकुटुम्बस्य सपरिवारस्य गृहे (दूसरी बार) **करिष्यमाणस्य अमुककर्मणः ऋद्धिं भवन्तो ब्रुवन्तु।**

ब्राह्मण—ॐ ऋद्ध्यताम्।

यजमान—

भो ब्राह्मणाः! मम सकुटुम्बस्य सपरिवारस्य गृहे (तीसरी बार) **करिष्यमाणस्य अमुककर्मणः ऋद्धिं भवन्तो ब्रुवन्तु।**

ब्राह्मण—ॐ ऋद्ध्यताम्।

ॐ सत्रस्य ऋद्धिरस्यगन्म ज्योतिरमृता अभूम। दिवं पृथिव्या अध्याऽरुहामाविदाम देवान्त्स्वर्ज्योतिः॥

यजमान—

ॐ स्वस्तिस्तु याऽविनाशाख्या पुण्यकल्याणवृद्धिदा। (पहली बार) **विनायकप्रिया नित्यं तां च स्वस्तिं ब्रुवन्तु नः॥**

भो ब्राह्मणाः! मम सकुटुम्बस्य सपरिवारस्य गृहे

करिष्यमाणाय अमुककर्मणे स्वस्ति भवन्तो ब्रुवन्तु।

ब्राह्मण—ॐ आयुष्मते स्वस्ति।

यजमान—

भो ब्राह्मणाः! मम सकुटुम्बस्य सपरिवारस्य गृहे (दूसरी बार) **करिष्यमाणाय अमुककर्मणे स्वस्ति भवन्तो ब्रुवन्तु।**

ब्राह्मण—ॐ आयुष्मते स्वस्ति।

यजमान—

भो ब्राह्मणाः! मम सकुटुम्बस्य सपरिवारस्य गृहे (तीसरी बार) **करिष्यमाणाय अमुककर्मणे स्वस्ति भवन्तो ब्रुवन्तु।**

ब्राह्मण—ॐ आयुष्मते स्वस्ति।

ॐ स्वस्ति न इन्द्रो वृद्धश्रवाः स्वस्ति नः पूषा विश्ववेदाः।
स्वस्ति नस्तार्क्ष्यो अरिष्टनेमिः स्वस्ति नो बृहस्पतिर्दधातु॥

यजमान—

ॐ समुद्रमथनाज्जाता जगदानन्दकारिका। (पहली बार)
हरिप्रिया च माङ्गल्या तां श्रियं च ब्रुवन्तु नः॥

भो ब्राह्मणाः! मम सकुटुम्बस्य सपरिवारस्य गृहे करिष्यमाणस्य अमुककर्मणः श्रीरस्तु इति भवन्तो ब्रुवन्तु।

ब्राह्मण—ॐ अस्तु श्रीः।

यजमान—

भो ब्राह्मणाः! मम सकुटुम्बस्य सपरिवारस्य गृहे (दूसरी बार) **करिष्यमाणस्य अमुककर्मणः श्रीरस्तु इति भवन्तो ब्रुवन्तु।**

ब्राह्मण—ॐ अस्तु श्रीः।

यजमान—

भो ब्राह्मणाः! मम सकुटुम्बस्य सपरिवारस्य गृहे (तीसरी

बार) **करिष्यमाणस्य अमुककर्मणः श्रीरस्तु इति भवन्तो ब्रुवन्तु।**

ब्राह्मण—ॐ अस्तु श्रीः।

ॐ श्रीश्च ते लक्ष्मीश्च पत्न्यावहोरात्रे पार्श्वे नक्षत्राणि रूपमश्विनौ व्यात्तम्। इष्णन्निषाणामुं म इषाण सर्वलोकं म इषाण॥

यजमान—

ॐ मृकण्डुसूनोरायुर्यद् ध्रुवलोमशयोस्तथा।
आयुषा तेन संयुक्ता जीवेम शरदः शतम्॥

ब्राह्मण—ॐ शतं जीवन्तु भवन्तः।

ॐ शतमिन्नु शरदो अन्ति देवा यत्रा नश्चक्रा जरसं तनूनाम्। पुत्रासो यत्र पितरो भवन्ति मा नो मध्या रीरिषतायुर्गन्तोः॥

यजमान—

ॐ शिवगौरीविवाहे या या श्रीरामे नृपात्मजे।
धनदस्य गृहे या श्रीरस्माकं सास्तु सद्मनि॥

ब्राह्मण—ॐ अस्तु श्रीः।

ॐ मनसः काममाकूतिं वाचः सत्यमशीय। पशूनाᳬ रूपमन्नस्य रसो यशः श्रीः श्रयतां मयि स्वाहा॥

यजमान—

प्रजापतिर्लोकपालो धाता ब्रह्मा च देवराट्।
भगवाञ्छाश्वतो नित्यं नो वै रक्षतु सर्वतः॥

ब्राह्मण—ॐ भगवान् प्रजापतिः प्रीयताम्।

ॐ प्रजापते न त्वदेतान्यन्यो विश्वा रूपाणि परि ता बभूव।
यत्कामास्ते जुहुमस्तन्नो अस्तु वयᳬ स्याम पतयो रयीणाम्॥

यजमान—

आयुष्मते स्वस्तिमते यजमानाय दाशुषे।
श्रिये दत्ताशिषः सन्तु ऋत्विग्भिर्वेदपारगैः॥
देवेन्द्रस्य यथा स्वस्ति यथा स्वस्ति गुरोर्गृहे।
एकलिङ्गे यथा स्वस्ति तथा स्वस्ति सदा मम॥

ब्राह्मण—ॐ आयुष्मते स्वस्ति।

ॐ प्रति पन्थामपद्महि स्वस्तिगामनेहसम्।
येन विश्वाः परि द्विषो वृणक्ति विन्दते वसु॥

ॐ पुण्याहवाचनसमृद्धिरस्तु॥

यजमान—

अस्मिन् पुण्याहवाचने न्यूनातिरिक्तो यो विधिरुपविष्टब्राह्मणानां वचनात् श्रीमहागणपतिप्रसादाच्च परिपूर्णोऽस्तु।

दक्षिणाका संकल्प—

कृतस्य पुण्याहवाचनकर्मणः समृद्ध्यर्थं पुण्याहवाचकेभ्यो ब्राह्मणेभ्य इमां दक्षिणां विभज्य अहं दास्ये।

ब्राह्मण—ॐ स्वस्ति।

अभिषेक

पुण्याहवाचनोपरान्त कलशके जलको पहले पात्रमें गिरा ले। अब अविधुर (जिनकी धर्मपत्नी जीवित हो) ब्राह्मण उत्तर या पश्चिम मुख होकर दूब और पल्लवके द्वारा इस जलसे यजमानका अभिषेक करे। अभिषेकके समय यजमान अपनी पत्नीको बायीं* तरफ कर ले। परिवार भी वहाँ बैठ जाय। अभिषेकके मन्त्र निम्नलिखित हैं—

ॐ पयः पृथिव्यां पय ओषधीषु पयो दिव्यन्तरिक्षे पयो धाः।
पयस्वतीः प्रदिशः सन्तु मह्यम्॥

---

* आशीर्वादेऽभिषेके च पादप्रक्षालने तथा। शयने भोजने चैव पत्नी तूत्तरतो भवेत्॥

ॐ पञ्च नद्यः सरस्वतीमपि यन्ति सस्रोतसः। सरस्वती तु पञ्चधा सो देशेऽभवत्सरित्॥

ॐ वरुणस्योत्तम्भनमसि वरुणस्य स्कम्भसर्जनी स्थो वरुणस्य ऋतसदन्यसि वरुणस्य ऋतसदनमसि वरुणस्य ऋतसदनमा सीद॥

ॐ पुनन्तु मा देवजनाः पुनन्तु मनसा धियः।
पुनन्तु विश्वा भूतानि जातवेदः पुनीहि मा॥

ॐ देवस्य त्वा सवितुः प्रसवेऽश्विनोर्बाहुभ्यां पूष्णो हस्ताभ्याम्। सरस्वत्यै वाचो यन्तुर्यन्त्रिये दधामि बृहस्पतेष्ट्वा साम्राज्येनाभिषिञ्चाम्यसौ। (शु० य० ९। ३०)

ॐ देवस्य त्वा सवितुः प्रसवेऽश्विनोर्बाहुभ्यां पूष्णो हस्ताभ्याम्।
सरस्वत्यै वाचो यन्तुर्यन्त्रेणाग्नेः साम्राज्येनाभिषिञ्चामि॥

(शु० य० १८। ३७)

ॐ देवस्य त्वा सवितुः प्रसवेऽश्विनोर्बाहुभ्यां पूष्णो हस्ताभ्याम्। अश्विनोर्भैषज्येन तेजसे ब्रह्मवर्चसायाभि षिञ्चामि सरस्वत्यै भैषज्येन वीर्यायान्नाद्यायाभि षिञ्चामीन्द्रस्येन्द्रियेण बलाय श्रियै यशसेऽभि षिञ्चामि॥ (शु० य० २०। ३)

ॐ विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परा सुव। यद्भद्रं तन्न आ सुव॥

ॐ धामच्छदग्निरिन्द्रो ब्रह्मा देवो बृहस्पतिः।
सचेतसो विश्वे देवा यज्ञं प्रावन्तु नः शुभे॥

(शु० य० १८। ७६)

ॐ त्वं यविष्ठ दाशुषो नॄँः पाहि शृणुधी गिरः।
रक्षा तोकमुत त्मना। (शु० य० १८। ७७)

ॐ अन्नपतेऽन्नस्य नो देह्यनमीवस्य शुष्मिणः। प्र प्र दातारं

तारिष ऊर्जं नो धेहि द्विपदे चतुष्पदे॥

ॐ द्यौः शान्तिरन्तरिक्षꣳ शान्तिः पृथिवी शान्तिरापः शान्तिरोषधयः शान्तिः। वनस्पतयः शान्तिर्विश्वे देवाः शान्तिर्ब्रह्म शान्तिः सर्वꣳ शान्तिः शान्तिरेव शान्तिः सा मा शान्तिरेधि॥

यतो यतः समीहसे ततो नो अभयं कुरु।
शं नः कुरु प्रजाभ्योऽभयं नः पशुभ्यः॥

सुशान्तिर्भवतु।

सरितः सागराः शैलास्तीर्थानि जलदा नदाः।
एते त्वामभिषिञ्चन्तु सर्वकामार्थसिद्धये॥
शान्तिः पुष्टिस्तुष्टिश्चास्तु। अमृताभिषेकोऽस्तु॥

दक्षिणादान—

ॐ अद्य.... कृतैतत्पुण्याहवाचनकर्मणः साङ्गतासिद्ध्यर्थं तत्सम्पूर्णफलप्राप्त्यर्थं च पुण्याहवाचकेभ्यो ब्राह्मणेभ्यो यथाशक्ति मनसोद्दिष्टां दक्षिणां विभज्य दातुमहमुत्सृज्ये।

षोडशमातृकापूजन

षोडशमातृकाओंकी स्थापनाके लिये पूजक दाहिनी ओर पाँच खड़ी पाइयों और पाँच पड़ी पाइयोंका चौकोर मण्डल बनाये। इस प्रकार सोलह कोष्ठक बन जायँगे। पश्चिमसे पूर्वकी ओर मातृकाओंका आवाहन और स्थापन करे। कोष्ठकोंमें रक्त चावल, गेहूँ या जौ रख दे। पहले कोष्ठकमें गौरीका आवाहन होता है, अतः गौरीके आवाहनके पूर्व गणेशका भी आवाहन पुष्पाक्षतोंद्वारा इसी कोष्ठकमें करे। इसी प्रकार अन्य कोष्ठकोंमें भी निम्नाङ्कित मन्त्र पढ़ते हुए आवाहन करे।

षोडशमातृका-चक्र

पूर्व

आत्मनःकुलदेवता १६	लोकमातरः १२	देवसेना ८	मेधा ४
तुष्टिः १५	मातरः ११	जया ७	शची ३
पुष्टिः १४	स्वाहा १०	विजया ६	पद्मा २
धृतिः १३	स्वधा ९	सावित्री ५	गौरी १ गणेश

आवाहन एवं स्थापन—

१. ॐ गणपतये नमः, गणपतिमावाहयामि, स्थापयामि।
ॐ गौर्यै नमः, गौरीमावाहयामि, स्थापयामि।

२. ॐ पद्मायै नमः, पद्मामावाहयामि, स्थापयामि।

३. ॐ शच्यै नमः, शचीमावाहयामि, स्थापयामि।

४. ॐ मेधायै नमः, मेधामावाहयामि, स्थापयामि।
५. ॐ सावित्र्यै नमः, सावित्रीमावाहयामि, स्थापयामि।
६. ॐ विजयायै नमः, विजयामावाहयामि, स्थापयामि।
७. ॐ जयायै नमः, जयामावाहयामि, स्थापयामि।
८. ॐ देवसेनायै नमः, देवसेनामावाहयामि, स्थापयामि।
९. ॐ स्वधायै नमः, स्वधामावाहयामि, स्थापयामि।
१०. ॐ स्वाहायै नमः, स्वाहामावाहयामि, स्थापयामि।
११. ॐ मातृभ्यो नमः, मातॄः आवाहयामि, स्थापयामि।
१२. ॐ लोकमातृभ्यो नमः, लोकमातॄः आवाहयामि, स्थापयामि।
१३. ॐ धृत्यै नमः, धृतिमावाहयामि, स्थापयामि।
१४. ॐ पुष्ट्यै नमः, पुष्टिमावाहयामि, स्थापयामि।
१५. ॐ तुष्ट्यै नमः, तुष्टिमावाहयामि, स्थापयामि।
१६. ॐ आत्मनः कुलदेवतायै नमः, आत्मनः कुलदेवता-मावाहयामि, स्थापयामि।

इस प्रकार षोडशमातृकाओंका आवाहन, स्थापनकर '**ॐ मनो जूति०**' इस मन्त्रसे अक्षत छोड़ते हुए मातृका-मण्डलकी प्रतिष्ठा करे, तत्पश्चात् निम्नलिखित नाम-मन्त्रसे गन्धादि उपचारोंद्वारा पूजन करे—

'ॐ गणेशसहितगौर्यादिषोडशमातृकाभ्यो नमः।'

विशेष-१-मातृकाओंको यज्ञोपवीत न चढ़ाये। २-नैवेद्यके साथ-साथ घृत और गुड़का भी नैवेद्य लगाये। ३-विशेष अर्घ्य न दे।

फलका अर्पण—नारियल आदि फल अञ्जलिमें लेकर प्रार्थना करे—

ॐ आयुरारोग्यमैश्वर्यं ददध्वं मातरो मम।
निर्विघ्नं सर्वकार्येषु कुरुध्वं सगणाधिपाः॥

—इस तरह प्रार्थना करनेके बाद नारियल आदि फल चढ़ाकर हाथ

जोड़कर बोले—‘**गेहे वृद्धिशतानि भवन्तु, उत्तरे कर्मण्यविघ्नमस्तु।**’

इसके बाद—

‘**अनया पूजया गणेशसहितगौर्यादिषोडशमातरः प्रीयन्ताम्, न मम।**’

इस वाक्यका उच्चारणकर मण्डलपर अक्षत छोड़कर नमस्कार करे—

गौरी पद्मा शची मेधा सावित्री विजया जया।
देवसेना स्वधा स्वाहा मातरो लोकमातरः॥
धृतिः पुष्टिस्तथा तुष्टिरात्मनः कुलदेवता।
गणेशेनाधिका ह्येता वरदाभयपाणयः॥

****

सप्तघृतमातृकापूजन (वसोर्धारापूजन)

आग्नेयकोणमें किसी वेदी अथवा काष्ठपीठ (पाटा)–पर प्रादेशमात्र स्थानमें पहले रोली या सिन्दूरसे स्वस्तिक बनाकर ‘**श्रीः**’ लिखे। इसके नीचे एक बिन्दु और इसके नीचे दो बिन्दु दक्षिणसे करके उत्तरकी ओर दे। इसी प्रकार सात बिन्दु क्रमसे चित्रानुसार बनाना चाहिये।

इसके बाद नीचेवाले सात बिन्दुओंपर घी या दूधसे प्रादेशमात्र सात धाराएँ निम्नलिखित मन्त्रसे दे—

पूर्व
॥ श्रीः ॥
```
      o
     o o
    o o o
   o o o o
  o o o o o
 o o o o o o
o o o o o o o
```
(वसोर्धारा)

घृत-धाराकरण—

ॐ वसोः पवित्रमसि शतधारं वसोः पवित्रमसि सहस्रधारम्। देवस्त्वा सविता पुनातु वसोः पवित्रेण शतधारेण सुप्वा॥

और गुड़के द्वारा बिन्दुओंकी रेखाओंको **कामधुक्षः** कहते हुए मिलाये। तदनन्तर निम्नलिखित वाक्योंका उच्चारण करते हुए प्रत्येक मातृकाका आवाहन और स्थापन करे—

आवाहन-स्थापन—

ॐ भूर्भुवः स्वः श्रियै नमः, श्रियमावाहयामि, स्थापयामि।
ॐ भूर्भुवः स्वः लक्ष्म्यै नमः, लक्ष्मीमावाहयामि, स्थापयामि।
ॐ भूर्भुवः स्वः धृत्यै नमः, धृतिमावाहयामि, स्थापयामि।
ॐ भूर्भुवः स्वः मेधायै नमः, मेधामावाहयामि, स्थापयामि।
ॐ भूर्भुवः स्वः पुष्ट्यै नमः, पुष्टिमावाहयामि, स्थापयामि।
ॐ भूर्भुवः स्वः श्रद्धायै नमः, श्रद्धामावाहयामि, स्थापयामि।
ॐ भूर्भुवः स्वः सरस्वत्यै नमः, सरस्वतीमावाहयामि, स्थापयामि।

प्रतिष्ठा—

इस प्रकार आवाहन-स्थापनके बाद '**एतं ते देव०**' इस मन्त्रसे प्रतिष्ठा करे, तत्पश्चात् '**ॐ भूर्भुवः स्वः सप्तघृतमातृकाभ्यो नमः**' इस नाम-मन्त्रसे यथालब्धोपचार-पूजन करे।

प्रार्थना—

तदनन्तर हाथ जोड़कर निम्नलिखित मन्त्र पढ़कर प्रार्थना करे—

ॐ यदङ्गत्वेन भो देव्यः पूजिता विधिमार्गतः।
कुर्वन्तु कार्यमखिलं निर्विघ्नेन क्रतूद्भवम्॥

'**अनया पूजया वसोर्धारादेवताः प्रीयन्ताम् न मम।**' ऐसा उच्चारणकर मण्डलपर अक्षत छोड़ दे।

आयुष्यमन्त्रपाठ*

पूजक अञ्जलिमें पुष्प ग्रहण करे तथा ब्राह्मण आयुष्य-मन्त्रका पाठ करें।

ॐ आयुष्यं वर्चस्यꣳ रायस्पोषमौद्भिदम्। इदꣳ हिरण्यं वर्च-स्वज्जैत्रायाविशतादु माम्॥ ॐ न तद्रक्षाꣳसि न पिशाचास्तरन्ति देवानामोजः प्रथमजꣳ ह्येतत्। यो बिभर्ति दाक्षायणꣳ हिरण्यꣳ स देवेषु कृणुते दीर्घमायुः स मनुष्येषु कृणुते दीर्घमायुः॥

ॐ यदाबध्नन् दाक्षायणा हिरण्यꣳशतानीकाय सुमनस्यमानाः। तन्म आ बध्नामि शतशारदायायुष्माञ्जरदष्टिर्यथासम्॥

यदायुष्यं चिरं देवाः सप्तकल्पान्तजीविषु।
ददुस्तेनायुषा युक्ता जीवेम शरदः शतम्॥
दीर्घा नागा नगा नद्योऽनन्ताः सप्तार्णवा दिशः।
अनन्तेनायुषा तेन जीवेम शरदः शतम्॥
सत्यानि पञ्चभूतानि विनाशरहितानि च।
अविनाश्यायुषा तद्वज्जीवेम शरदः शतम्॥
शतं जीवन्तु भवन्तः।

पुष्पार्पण—

आयुष्यमन्त्रके श्रवणके बाद अञ्जलिके पुष्पोंको सप्तघृत-मातृका-मण्डलपर अर्पण कर दे।

दक्षिणा-संकल्प—

आयुष्यमन्त्रके पाठ करनेवाले ब्राह्मणोंको निम्न संकल्पपूर्वक दक्षिणा दे—

ॐ अद्य कृतैतदायुष्यवाचनकर्मणः साङ्गतासिद्ध्यर्थं तत्सम्पूर्ण-फलप्राप्त्यर्थं चायुष्यवाचकेभ्यो ब्राह्मणेभ्यो यथाशक्ति मनसोद्दिष्टां दक्षिणां विभज्य दातुमहमुत्सृज्ये।

---

* शुक्लयजुर्वेद माध्यन्दिनसंहिता अध्याय ३४ के ५०से ५२ तीन मन्त्रोंका पाठ अथवा अध्याय २५ के १४ से २३ तक आ नो भद्रा० इत्यादि १० ऋचाओंका सस्वर पाठ आयुष्यमन्त्रजप कहलाता है।

सांकल्पिक नान्दीमुखश्राद्ध

नान्दीमुखश्राद्ध मांगलिक श्राद्ध है। पिण्डरहित होनेसे यह सांकल्पिक कहलाता है। नान्दीमुख, आभ्युदयिक तथा वृद्धिश्राद्ध—ये तीनों एक ही कर्मके नाम हैं। मंगल तथा अभ्युदयकी प्राप्तिके लिये और पितरोंकी प्रसन्नताके लिये यह श्राद्ध किया जाता है। पुत्रजन्म, गृहप्रवेश एवं यज्ञयागादि नैमित्तिक कर्मोंमें देवपूजनके साथ पितृपूजनके रूपमें यह श्राद्ध किया जाता है। इसके साथ ही उपनयन-विवाह आदि संस्कारों—मांगलिक कार्योंके प्रारम्भमें पंचांगकर्मके अन्तर्गत मातृकापूजनके अनन्तर सांकल्पिक विधिसे यह श्राद्ध सम्पन्न किया जाता है।[१] इस श्राद्धमें माता, पितामही, प्रपितामही, पिता, पितामह, प्रपितामह और सपत्नीक मातामह, प्रमातामह, वृद्धप्रमातामह—इस क्रमसे विश्वेदेवपूर्वक नवदैवत्यश्राद्ध होता है।[२] ये नान्दीमुख पितर कहलाते हैं। जिसके पिता जीवित हों अथवा माता-पिता दोनों जीवित हों, उसके द्वारा पिताकी माता, पितामही, प्रपितामही, पिताके पिता, पितामह, प्रपितामह और पिताके मातामह, प्रमातामह तथा वृद्धप्रमातामह सपत्नीकका श्राद्ध किया जाता है। पिता यदि जीवित हों तो नान्दीमुखश्राद्ध पिताके द्वारा भी हो सकता है। '**येभ्य एव पिता दद्यात् तेभ्यो दद्यात् स्वयं सुतः**' तथा '**जीवेत्तु यदि वर्गाद्यस्तद्वर्गं तु परित्यजेत्**' इस प्रमाणके अनुसार जिन-जिनके नामसे पिता श्राद्ध करे, उन-उनके नामसे पुत्र भी आभ्युदयिक श्राद्ध कर सकता है।

---

१. कन्यापुत्रविवाहेषु प्रवेशेषु च वेश्मनः। नामकर्मणि बालानां चूडाकर्मादिके तथा॥
सीमन्तोन्नयने चैव पुत्रादिमुखदर्शने। नान्दीमुखं पितृगणं पूजयेत्प्रयतो गृही॥
(विष्णुपुराण ३।१३।५-६)

२. मातृभ्यः कल्पयेत्पूर्वं पितृभ्यस्तदनन्तरम्।
ततो मातामहानां च कुर्याच्छ्राद्धं क्रमेण वै॥ (हेमाद्रिमें वसिष्ठका वचन)

पितृकार्य होनेपर भी यह देवकार्यवत् किया जाता है—'**यथैवोपचरेद्देवांस्तथा वृद्धौ पितॄनपि।**' (हेमाद्रिमें शातातपका वचन) इसमें पार्वण आदि अन्य श्राद्धोंसे पर्याप्त भिन्नता है, जिसकी कुछ बातें यहाँ दी जा रही हैं*—

१–यह मांगलिक श्राद्ध है। अतः सव्य एवं पूर्वाभिमुख होकर किया जाता है, अपसव्य–दक्षिणाभिमुख होकर नहीं।

२–तिलोंके स्थानपर यव (जौ) तथा मोटकके स्थानपर दूर्वाका तथा दर्भके अभावमें ऋजुदर्भ (सीधी तीन कुशाओं)–का प्रयोग होता है।

३–श्राद्धसम्बन्धी कार्य पितृतीर्थके स्थानपर देवतीर्थसे प्रदक्षिणक्रमसे किये जाते हैं।

४–इस श्राद्धमें 'सत्य' तथा 'वसु' नामवाले दो विश्वेदेव होते हैं।

५–संकल्पवाक्योंमें षष्ठी, चतुर्थी तथा सम्बोधनका निषेध है, प्रथमा विभक्तिका प्रयोग होता है।

६–अन्य श्राद्धोंमें होनेवाले समन्त्रक आवाहन, अर्घदान, अग्नौकरण,

---

* (क) कुशस्थाने तु दूर्वाः स्युर्मङ्गलस्याभिवृद्धये। नात्रापसव्यकरणं न पित्र्यं तीर्थमिष्यते॥
(हेमाद्रिमें ब्रह्माण्डपुराण)

(ख) शुभाय प्रथमान्तेन वृद्धौ सङ्कल्पमाचरेत्।
न षष्ठ्या यदि वा कुर्यान्महादोषोऽभिजायते॥

(ग) शुभाय प्रथमान्तेन वृद्धौ सङ्कल्पमाचरेत्।
न षष्ठ्या न चतुर्थ्यान्ता सम्बुद्ध्या वा कदाचन॥

(घ) अनस्मद् वृद्धिशब्दानामरूपाणामगोत्रिणाम्।
अनाम्नामतिलैश्चैव नान्दीश्राद्धं च सव्यतः॥

(ङ) समन्त्रकमावाहनार्घाग्नौकरणपिण्डदानविकिराक्षय्यस्वधावाचनप्रश्नेत्येतत्सप्तकं वर्ज्यम्॥ (स्मृतिसंग्रह)

(च) न स्वधा शर्मवर्मेति पितृनाम न चोच्चरेत्। न कर्म पितृतीर्थेन न कुशा द्विगुणीकृता॥

न तिलैर्नापसव्येन पित्र्यमन्त्रविवर्जितम्। अस्मच्छब्दं न कुर्वीत श्राद्धे नान्दीमुखे क्वचित्॥
(श्राद्धकाशिका क० ६ में पुराणसमुच्चयका वचन)

पिण्डदान, विकिरदान, अक्षय्योदकदान, स्वधावाचन तथा प्रश्न—ये कर्म इसमें त्याज्य हैं। संकल्पमें अस्मत् शब्द, गोत्र, पितरोंके नाम तथा पितरोंके साथ वसुस्वरूप, रुद्रस्वरूप, आदित्यस्वरूपके उच्चारणका भी निषेध है।

७–प्रत्येक आसनपर युग्म ब्राह्मण होते हैं। अतः चार आसनोंके आठ ब्राह्मण होते हैं।

८–इस श्राद्धमें पिण्डदानकी अनिवार्यता नहीं है तथा प्रायः परम्परा भी नहीं है। अपनी कुलपरम्पराके अनुसार जहाँ होता हो, वहाँ दही तथा मधुसे सना हुआ शाली चावल, बेरके पत्ते अथवा फल तथा यव (जौ)–को मिश्रण करके बेलके फलके बराबर चार पिण्ड बनाये जाते हैं।[१]

९–नान्दीमुखश्राद्धमें दक्षिणा द्राक्षा (मुनक्का अथवा किसमिस), आँवला, अदरख तथा यवकी होती है—'**द्राक्षामलकयवमूल-निष्क्रयिणीदक्षिणा**'। मूलको आर्द्रक या अदरक कहते हैं।[२]

१०–किसी कर्ममें एक नान्दीमुखश्राद्ध करके फिर उसी कर्मके निमित्त दूसरा नान्दीमुखश्राद्ध नहीं करना चाहिये। यदि बीचहीमें पुत्रका जन्म हो या राज्याभिषेक हो तो दूसरा नान्दीमुख करना चाहिये, अन्यथा नहीं।[३]

आगे इसका प्रयोग दिया जा रहा है—

---

१. (क) पिण्डनिर्वपणं कुर्यान्न वा कुर्याद्विचक्षणः। वृद्धिश्राद्धे महाबाहो कुलधर्मानवेक्ष्य तु॥ (भविष्यपुराण)

(ख) शाल्यन्नं दधिमध्वक्तं बदराणि यवास्तथा। मिश्रीकृत्वा तु चतुरः पिण्डान् श्रीफलसन्निभान्॥
दद्यान्नान्दीमुखेभ्यश्च पितृभ्यो विधिपूर्वकम्॥ (चन्द्रोदय, ब्रह्मपुराण, छन्दोगपरिशिष्ट)

२. द्राक्षामलकमूलानि यवांश्चाथ निवेदयेत्। मूलम्=आर्द्रकादीति कल्पतरुः।
(हेमाद्रि तथा वीरमित्रोदय श्राद्धप्रकाशमें ब्रह्मपुराणका वचन)

३. कृते नान्दीमुखे मध्ये न कुर्याद् द्वितये पुनः। राज्याभिषेके कुर्वीत तथैव पुत्रजन्मनि॥
(शास्त्रार्थप्रदीप)

सांकल्पिक नान्दीमुखश्राद्ध-प्रयोग

श्राद्धकर्ता अपने आसनपर सव्य-पूर्वाभिमुख हो बैठ जाय। पवित्री धारणकर आचमन प्राणायाम कर ले। श्राद्धीय सभी सामग्रियोंको यथास्थान रख ले तथा उन्हें जल छिड़ककर प्रोक्षित कर ले।

पात्रासादन—

श्राद्धस्थानमें पिसी हल्दी तथा चावलके घोलसे चार कोष्ठक बना ले। पूर्वदिशामें ऊपर विश्वेदेवके लिये एक तथा फिर दक्षिणसे उत्तरकी ओर तीन कोष्ठक बनाये। श्राद्धकर्ताका आसन पूर्वाभिमुख रहे। सबसे ऊपरके कोष्ठकमें (सत्य तथा वसु नामवाले) विश्वेदेवका
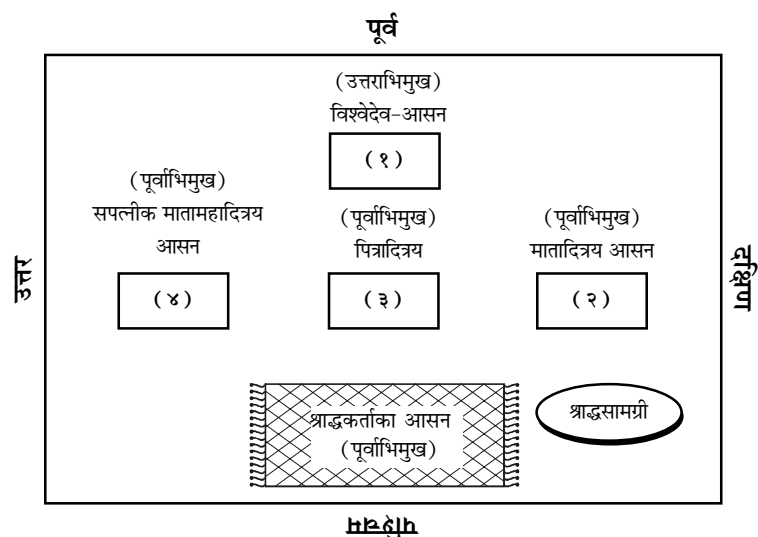
आसन तथा तीन कोष्ठकोंमें प्रदक्षिण क्रमसे (दाहिनेसे बायें) तीन आसन—मातादित्रय, पित्रादित्रय तथा सपत्नीक मातामहादित्रयके रहते हैं। चारों कोष्ठकोंमें पलाशका एक-एक पत्ता (पत्तल) रख दे। पत्तलोंके ऊपर आसनके लिये एक-एक दूर्वा रख दे।

प्रतिज्ञा-संकल्प—

ॐ विष्णुर्विष्णुर्विष्णुः श्रीमद्भगवतो महापुरुषस्य विष्णोराज्ञया प्रवर्तमानस्य ब्रह्मणो द्वितीयपरार्धे श्रीश्वेतवाराहकल्पे वैवस्वतमन्वन्तरे अष्टाविंशतितमे कलियुगे कलिप्रथमचरणे जम्बूद्वीपे भारतवर्षे आर्यावर्तैकदेशे (यदि काशी हो तो **अविमुक्तवाराणसीक्षेत्रे आनन्दवने गौरीमुखे त्रिकण्टकविराजिते महाश्मशाने भगवत्या उत्तरवाहिन्या भागीरथ्या वामभागे) ....नगरे/ग्रामे/क्षेत्रे षष्टिसंवत्सराणां मध्ये ....संवत्सरे ....अयने ....ऋतौ ....मासे ....पक्षे ....तिथौ ....नक्षत्रे ....योगे ....करणे ....वासरे ....राशिस्थिते सूर्ये ....राशिस्थिते चन्द्रे शेषेषु ग्रहेषु यथायथाराशिस्थानस्थितेषु सत्सु एवं ग्रहगुणगणविशिष्टे शुभमुहूर्ते ....गोत्रः ....शर्मा/वर्मा/गुप्तोऽहं ....कर्मनिमित्तकं नान्दीश्राद्धं साङ्कल्पिकेन विधिना करिष्ये।** कहकर संकल्पजल छोड़ दे।

पादावनेजन

(क) विश्वेदेवोंको पादावनेजन—

सर्वप्रथम विश्वेदेवोंको पाद्यजल प्रदान करे। दाहिने हाथमें एक पत्रपुटक (दोने)-में जल लेकर निम्न संकल्प करे—

सत्यवसुसंज्ञकाः विश्वेदेवाः युग्मरूपाः नान्दीमुखाः ॐ भूर्भुवः स्वः इदं वः पाद्यं पादावनेजनं पादप्रक्षालनं वृद्धिः। कहकर देवतीर्थसे पत्रपुटकका जल विश्वेदेवोंके आसनपर छोड़ दे।

(ख) माता-पितामही तथा प्रपितामहीको पादावनेजन—

दाहिने हाथमें एक पत्रपुटकमें जल लेकर निम्न संकल्प करे—

स्वगोत्राः मातृपितामहीप्रपितामह्यः नान्दीमुख्यः ॐ भूर्भुवः स्वः इदं वः पाद्यं पादावनेजनं पादप्रक्षालनं वृद्धिः। कहकर

देवतीर्थसे पत्रपुटकका जल मात्रादित्रयके प्रथम आसनपर छोड़ दे।

(ग) पिता-पितामह तथा प्रपितामहको पादावनेजन—

दाहिने हाथमें एक पत्रपुटकमें जल लेकर निम्न संकल्प करे—

स्वगोत्राः पितृपितामहप्रपितामहाः नान्दीमुखाः ॐ भूर्भुवः स्वः इदं वः पाद्यं पादावनेजनं पादप्रक्षालनं वृद्धिः। कहकर देवतीर्थसे पत्रपुटकका जल पित्रादित्रयके द्वितीय आसनपर छोड़ दे।

(घ) सपत्नीक मातामह-प्रमातामह तथा वृद्धप्रमातामहको पादावनेजन —

दाहिने हाथमें एक पत्रपुटकमें जल लेकर निम्न संकल्प करे—

द्वितीयगोत्राः मातामहप्रमातामहवृद्धप्रमातामहाः सपत्नीकाः नान्दीमुखाः ॐ भूर्भुवः स्वः इदं वः पाद्यं पादावनेजनं पादप्रक्षालनं वृद्धिः। कहकर देवतीर्थसे पत्रपुटकका जल तीसरे आसन (द्वितीय गोत्रके आसन)-पर छोड़ दे।

आसनदान

(क) विश्वेदेवोंको आसनदान—

दूर्वा या ऋजुकुशका आसन लेकर कहे—

सत्यवसुसंज्ञकाः विश्वेदेवाः युग्मरूपाः नान्दीमुखाः ॐ भूर्भुवः स्वः इदमासनं सुखासनं वो नमो नमः नान्दीश्राद्धे क्षणौ क्रियेतां यथा प्राप्नुवन्तो भवन्तः तथा प्राप्नुवामः। कहकर विश्वेदेवके स्थानपर दूर्वा या ऋजुकुशका आसन रख दे।

(ख) माता-पितामही तथा प्रपितामहीको आसनदान—

दूर्वा या कुशका आसन लेकर कहे—

स्वगोत्राः मातृपितामहीप्रपितामह्यः नान्दीमुख्यः ॐ भूर्भुवः स्वः इदमासनं सुखासनं वो नमो नमः नान्दीश्राद्धे क्षणौ क्रियेतां

यथा प्राप्नुवन्तो भवन्तः तथा प्राप्नुवामः। कहकर द्वितीय स्थानपर दूर्वा या ऋजुकुश रखे।

(ग) पिता-पितामह तथा प्रपितामहको आसनदान—

स्वगोत्राः पितृपितामहवृद्धप्रपितामहाः नान्दीमुखाः ॐ भूर्भुवः स्वः इदमासनं सुखासनं वो नमो नमः नान्दीश्राद्धे क्षणौ क्रियेतां यथा प्राप्नुवन्तो भवन्तः तथा प्राप्नुवामः। कहकर तृतीय स्थानपर दूर्वा या ऋजुकुश रखे।

(घ) सपत्नीक मातामह-प्रमातामह तथा वृद्धप्रमातामहको आसनदान—

द्वितीयगोत्राः मातामहप्रमातामहवृद्धप्रमातामहाः सपत्नीकाः नान्दीमुखाः ॐ भूर्भुवः स्वः इदमासनं सुखासनं वो नमो नमः नान्दीश्राद्धे क्षणौ क्रियेतां यथा प्राप्नुवन्तो भवन्तः तथा प्राप्नुवामः। कहकर चतुर्थ स्थानपर दूर्वा या ऋजुकुश रखे।

अर्चनदान

निम्न वाक्योंको पढ़ते हुए पहले विश्वेदेवोंको तदनन्तर मातादि त्रय, पित्रादि त्रय तथा सपत्नीक मातामहादि त्रयको क्रमसे जल, वस्त्र, यज्ञोपवीत, गन्ध, अक्षत, पुष्प, धूप, दीप, नैवेद्य, फल, ताम्बूल आदि अर्पित करे—

अत्रापः पान्तु, इमे वाससि सुवाससी, इमे यज्ञोपवीते* सुयज्ञोपवीते, अयं वो गन्धः सुगन्धः, इमे अक्षताः स्वक्षताः, इमानि पुष्पाणि सुपुष्पाणि, अयं वो धूपः सुधूपः, अयं वो दीपः सुदीपः, इदं नैवेद्यं सुनैवेद्यम्, इमानि ऋतुफलानि सुऋतुफलानि इदं ताम्बूलं सुताम्बूलम्, इदं पूगीफलं सुपूगीफलम्।

---

* मातृमण्डलमें अर्चनदानमें यज्ञोपवीत नहीं रहेगा।

अर्चनदानका संकल्प

(क) विश्वेदेवोंको गन्धादिदान—

हाथमें दूर्वा, जलाक्षत लेकर कहे—

सत्यवसुसंज्ञकाः विश्वेदेवाः युग्मरूपाः नान्दीमुखाः ॐ भूर्भुवः स्वः इदं गन्धाद्यर्चनं स्वाहा सम्पद्यतां वृद्धिः।

(ख) माता-पितामही तथा प्रपितामहीको गन्धादिदान—

हाथमें दूर्वा, जलाक्षत लेकर कहे—

स्वगोत्राः मातृपितामहीप्रपितामह्यः नान्दीमुख्यः ॐ भूर्भुवः स्वः इदं गन्धाद्यर्चनं स्वाहा सम्पद्यतां वृद्धिः।

(ग) पिता-पितामह तथा प्रपितामहको गन्धादिदान—

हाथमें दूर्वा, जलाक्षत लेकर कहे—

स्वगोत्राः पितृपितामहवृद्धप्रपितामहाः नान्दीमुखाः ॐ भूर्भुवः स्वः इदं गन्धाद्यर्चनं स्वाहा सम्पद्यतां वृद्धिः।

(घ) सपत्नीक मातामह-प्रमातामह तथा वृद्धप्रमातामहको गन्धादिदान—

हाथमें दूर्वा, जलाक्षत लेकर कहे—

द्वितीयगोत्राः मातामहप्रमातामहवृद्धप्रमातामहाः सपत्नीकाः नान्दीमुखाः ॐ भूर्भुवः स्वः इदं गन्धाद्यर्चनं स्वाहा सम्पद्यतां वृद्धिः।

भोजननिष्क्रयदान

युग्म ब्राह्मणोंके लिये आमान्न-निष्क्रयभूत द्रव्य तथा दूर्वा, जलाक्षत लेकर निम्न संकल्पोंद्वारा क्रमसे चारों आसनोंपर जल छोड़ दे तथा निष्क्रयद्रव्य यथास्थान रख दे—

(क) विश्वेदेवोंको भोजननिष्क्रयदान—

सत्यवसुसंज्ञकाः विश्वेदेवाः युग्मरूपाः नान्दीमुखाः ॐ भूर्भुवः स्वः इदं युग्मब्राह्मणभोजनपर्याप्तं आमान्ननिष्क्रयभूतं द्रव्यममृतरूपेण स्वाहा सम्पद्यतां वृद्धिः।

(ख) माता-पितामही तथा प्रपितामहीको भोजननिष्क्रय-दान—

स्वगोत्राः मातृपितामहीप्रपितामह्यः नान्दीमुख्यः ॐ भूर्भुवः स्वः इदं युग्मब्राह्मणभोजनपर्याप्तं आमान्ननिष्क्रयभूतं द्रव्यममृतरूपेण स्वाहा सम्पद्यतां वृद्धिः।

(ग) पिता-पितामह तथा प्रपितामहको भोजननिष्क्रय-दान—

स्वगोत्राः पितृपितामहवृद्धप्रपितामहाः नान्दीमुखाः ॐ भूर्भुवः स्वः इदं युग्मब्राह्मणभोजनपर्याप्तं आमान्ननिष्क्रयभूतं द्रव्यममृतरूपेण स्वाहा सम्पद्यतां वृद्धिः।

(घ) सपत्नीक मातामह-प्रमातामह तथा वृद्धप्रमातामहको भोजननिष्क्रयदान—

द्वितीयगोत्राः मातामहप्रमातामहवृद्धप्रमातामहाः सपत्नीकाः नान्दीमुखाः ॐ भूर्भुवः स्वः इदं युग्मब्राह्मणभोजनपर्याप्तं आमान्ननिष्क्रयभूतं द्रव्यममृतरूपेण स्वाहा सम्पद्यतां वृद्धिः।

सक्षीरयवोदकदान

(क) विश्वेदेवोंको सक्षीरयवोदकदान—

एक दोनेमें दूध, जल तथा जौ लेकर दाहिने हाथमें देवतीर्थसे वह जल निम्न संकल्पपूर्वक विश्वेदेवोंके आसनपर छोड़े—

सत्यवसुसंज्ञकाः विश्वेदेवाः युग्मरूपाः नान्दीमुखाः प्रीयन्ताम्।

इसी प्रकार पृथक्-पृथक् तीन आसनोंपर क्रमसे निम्न संकल्पोंद्वारा सक्षीरयवोदक प्रदान करे—

(ख) माता-पितामही तथा प्रपितामहीको सक्षीरयवोदकदान—

स्वगोत्राः मातृपितामहीप्रपितामह्यः नान्दीमुख्यः प्रीयन्ताम्।

(ग) पिता-पितामह तथा प्रपितामहको सक्षीरयवोदकदान—

स्वगोत्राः पितृपितामहवृद्धप्रपितामहाः नान्दीमुखाः प्रीयन्ताम्।

(घ) सपत्नीक मातामह-प्रमातामह तथा वृद्धप्रमातामहको सक्षीरयवोदकदान—

द्वितीयगोत्राः मातामहप्रमातामहवृद्धप्रमातामहाः सपत्नीकाः नान्दीमुखाः प्रीयन्ताम्।

तदनन्तर चारों आसनोंपर क्रमसे जल, पुष्प तथा अक्षत निम्न वचनोंद्वारा छोड़े—

शिवा आपः सन्तु कहकर जल चढ़ाये।

सौमनस्यमस्तु कहकर पुष्प चढ़ाये।

अक्षतञ्चारिष्टं चास्तु कहकर अक्षत चढ़ाये। (विश्वेदेवोंके आसनपर यवाक्षत चढ़ाये)

जलधारा

अघोराः पितरः सन्तु। कहकर पूर्वाग्र जलधारा दे।

आशीष-प्रार्थना—

श्राद्धकर्ता हाथ जोड़कर नान्दीमुख पितरोंसे निम्न मन्त्रसे प्रार्थना करे—

गोत्रन्नो वर्धतां दातारो नोऽभिवर्धन्तां वेदाः सन्ततिरेव च।

श्रद्धा च नो मा व्यगमद् बहुदेयं च नोऽस्तु। अन्नं च नो बहु भवेदतिथींश्च लभेमहि। याचितारश्च नः सन्तु मा च याचिष्म कञ्चन। एताः सत्या आशिषः सन्तु।

ब्राह्मण '**सन्त्वेताः सत्या आशिषः**'—ऐसा कहें।

दक्षिणादान

हाथमें द्राक्षा (मुनक्का-किसमिस), आँवला, अदरक (मूल) तथा यवकी दक्षिणा एवं दूर्वा, जलाक्षत लेकर क्रमशः चारों आसनोंपर निम्न संकल्पोंद्वारा दक्षिणा प्रदान करे। पहले विश्वेदेवोंके आसनपर तदनन्तर तीन आसनोंपर।

(क) विश्वेदेवोंको दक्षिणादान—

सत्यवसुसंज्ञकाः विश्वेदेवाः युग्मरूपाः नान्दीमुखाः ॐ भूर्भुवः स्वः कृतस्य नान्दीश्राद्धस्य फलप्रतिष्ठासिद्ध्यर्थं द्राक्षा-मलकयवमूलनिष्क्रयिणीं दक्षिणां दातुमहं उत्सृज्ये।

(ख) माता-पितामही तथा प्रपितामहीको दक्षिणादान—

स्वगोत्राः मातृपितामहीप्रपितामह्यः नान्दीमुख्यः ॐ भूर्भुवः स्वः कृतस्य नान्दीश्राद्धस्य फलप्रतिष्ठासिद्ध्यर्थं द्राक्षामलकयव-मूलनिष्क्रयिणीं दक्षिणां दातुमहं उत्सृज्ये।

(ग) पिता-पितामह तथा प्रपितामहको दक्षिणादान—

स्वगोत्राः पितृपितामहवृद्धप्रपितामहाः नान्दीमुखाः ॐ भूर्भुवः स्वः कृतस्य नान्दीश्राद्धस्य फलप्रतिष्ठासिद्ध्यर्थं द्राक्षामलकयव-मूलनिष्क्रयिणीं दक्षिणां दातुमहं उत्सृज्ये।

(घ) सपत्नीक मातामह-प्रमातामह तथा वृद्धप्रमातामहको दक्षिणादान—

द्वितीयगोत्राः मातामहप्रमातामहवृद्धप्रमातामहाः सपत्नीकाः नान्दीमुखाः ॐ भूर्भुवः स्वः कृतस्य नान्दीश्राद्धस्य फलप्रतिष्ठा-

सिद्ध्यर्थं द्राक्षामलकयवमूलनिष्क्रयिणीं दक्षिणां दातुमहं उत्सृज्ये।

मन्त्रपाठ—

तदनन्तर ब्राह्मण निम्न दो मन्त्रोंका पाठ करे—

(१) उपास्मै गायता नरः पवमानायेन्दवे। अभि देवाँ२ इयक्षते।

(२) इडामग्ने पुरुदꣳ सꣳ सनिं गोः शश्वत्तमꣳ हवमानाय साध। स्यान्नः सूनुस्तनयो विजावाग्ने साते सुमतिर्भूत्वस्मे॥

तदनन्तर श्राद्धकर्ता ब्राह्मणोंसे निम्न वाक्य कहे—

'अनेन नान्दीश्राद्धं सम्पन्नम्।'

ब्राह्मण कहें—**सुसम्पन्नम्।**

विसर्जन

निम्न दो मन्त्रोंद्वारा विश्वेदेवों तथा नान्दीमुख पितरोंका विसर्जन करे—

(१) वाजे वाजेऽवत वाजिनो नो धनेषु विप्रा अमृता ऋतज्ञाः। अस्य मध्वः पिबत मादयध्वं तृप्ता यात पथिभिर्देवयानैः॥

(२) आ मा वाजस्य प्रसवो जगम्यादेमे द्यावापृथिवी विश्वरूपे। आ मा गन्तां पितरा मातरा चा मा सोमो अमृतत्त्वेन गम्यात्।

विश्वेदेवाः प्रीयन्तामिति।

तत्पश्चात् श्राद्धकर्ता निम्न वाक्य कहे—

मयाचरिते अस्मिन् साङ्कल्पिकनान्दीश्राद्धे न्यूनातिरिक्तो यो विधिः स उपविष्टब्राह्मणानां वचनाच्छ्रीगणेशप्रसादाच्च परिपूर्णोऽस्तु।

इसके उत्तरमें ब्राह्मण कहें—**ॐ अस्तु परिपूर्णः।**

समर्पण—

निम्न वाक्य पढ़कर श्राद्धकर्ता कर्मको नान्दीमुख पितरोंको अर्पित कर दे—

अनेन साङ्कल्पिकविधिना कृतेन नान्दीश्राद्धेन नान्दीमुखाः पितरः प्रीयन्तां न मम।

नवग्रह–मण्डल*पूजन

ग्रहोंकी स्थापनाके लिये ईशानकोणमें चार खड़ी पाइयों और चार पड़ी पाइयोंका चौकोर मण्डल बनाये। इस प्रकार नौ कोष्ठक बन जायँगे। बीचवाले कोष्ठकमें सूर्य, अग्निकोणमें चन्द्र, दक्षिणमें मंगल, ईशानकोणमें बुध, उत्तरमें बृहस्पति, पूर्वमें शुक्र, पश्चिममें शनि, नैर्ऋत्यकोणमें राहु और वायव्यकोणमें केतुकी स्थापना करे।

अब बायें हाथमें अक्षत लेकर नीचे लिखे मन्त्र बोलते हुए उपरिलिखित क्रमसे दाहिने हाथसे अक्षत छोड़कर ग्रहोंका आवाहन एवं स्थापन करे।

नवग्रह–मण्डल

---
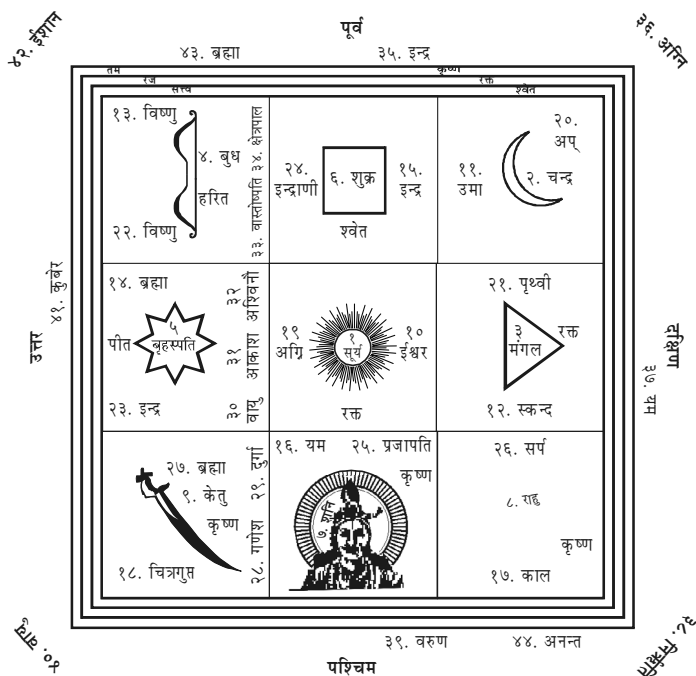
* नवग्रह–मण्डलमें सूर्यादि नौ ग्रह, नौ अधिदेवता, नौ प्रत्यधिदेवता, पंचलोकपाल, वास्तोष्पति, क्षेत्रपाल तथा दश दिक्पाल—इस प्रकार चौवालीस देवोंका पूजन होता है।

१-सूर्य (मध्यमें गोलाकार, लाल)

सूर्यका आवाहन (लाल अक्षत-पुष्प लेकर)—

ॐ आ कृष्णेन रजसा वर्तमानो निवेशयन्नमृतं मर्त्यं च।
हिरण्ययेन सविता रथेना देवो याति भुवनानि पश्यन्॥
जपाकुसुमसंकाशं काश्यपेयं महाद्युतिम्।
तमोऽरिं सर्वपापघ्नं सूर्यमावाहयाम्यहम्॥

ॐ भूर्भुवः स्वः कलिङ्गदेशोद्भव काश्यपगोत्र रक्तवर्ण भो सूर्य! इहागच्छ, इह तिष्ठ ॐ सूर्याय नमः, श्रीसूर्यमावाहयामि, स्थापयामि।

२-चन्द्र (अग्निकोणमें, अर्धचन्द्र, श्वेत)

चन्द्रका आवाहन (श्वेत अक्षत-पुष्पसे)—

ॐ इमं देवा असपत्नꣳ सुवध्वं महते क्षत्राय
महते ज्यैष्ठ्याय महते जानराज्यायेन्द्रस्येन्द्रियाय।
इमममुष्य पुत्रममुष्यै पुत्रमस्यै विश एष वोऽमी
राजा सोमोऽस्माकं ब्राह्मणानꣳ राजा॥
दधिशङ्खतुषाराभं क्षीरोदार्णवसम्भवम्।
ज्योत्स्नापतिं निशानाथं सोममावाहयाम्यहम्॥

ॐ भूर्भुवः स्वः यमुनातीरोद्भव आत्रेयगोत्र शुक्लवर्ण भो सोम! इहागच्छ, इह तिष्ठ ॐ सोमाय नमः, सोममावाहयामि, स्थापयामि।

३-मंगल (दक्षिणमें, त्रिकोण, लाल)

मंगलका आवाहन (लाल फूल और अक्षत लेकर)—

ॐ अग्निर्मूर्धा दिवः ककुत्पतिः पृथिव्या अयम्। अपाꣳ रेताꣳसि जिन्वति॥

धरणीगर्भसम्भूतं विद्युत्तेजस्समप्रभम्।
कुमारं शक्तिहस्तं च भौममावाहयाम्यहम्॥

ॐ भूर्भुवः स्वः अवन्तिदेशोद्भव भारद्वाजगोत्र रक्तवर्ण भो भौम! इहागच्छ, इह तिष्ठ ॐ भौमाय नमः, भौममावाहयामि, स्थापयामि।

४-बुध (ईशानकोणमें, हरा, धनुष)

बुधका आवाहन (पीले, हरे अक्षत-पुष्प लेकर)—

ॐ उद्बुध्यस्वाग्ने प्रति जागृहि त्वमिष्टापूर्ते सꣳ सृजेथामयं च।
अस्मिन्त्सधस्थे अध्युत्तरस्मिन् विश्वे देवा यजमानश्च सीदत॥

प्रियङ्गुकलिकाभासं रूपेणाप्रतिमं बुधम्।
सौम्यं सौम्यगुणोपेतं बुधमावाहयाम्यहम्॥

ॐ भूर्भुवः स्वः मगधदेशोद्भव आत्रेयगोत्र पीतवर्ण भो बुध! इहागच्छ, इह तिष्ठ ॐ बुधाय नमः, बुधमावाहयामि, स्थापयामि।

५-बृहस्पति (उत्तरमें पीला, अष्टदल)

बृहस्पतिका आवाहन (पीले अक्षत-पुष्पसे)—

ॐ बृहस्पते अति यदर्यो अर्हाद् द्युमद्विभाति क्रतुमज्जनेषु।
यद्दीदयच्छवस ऋतप्रजात तदस्मासु द्रविणं धेहि चित्रम्।
उपयामगृहीतोऽसि बृहस्पतये त्वैष ते योनिर्बृहस्पतये त्वा॥

देवानां च मुनीनां च गुरुं काञ्चनसंनिभम्।
वन्द्यभूतं त्रिलोकानां गुरुमावाहयाम्यहम्॥

ॐ भूर्भुवः स्वः सिन्धुदेशोद्भव आङ्गिरसगोत्र पीतवर्ण भो गुरो! इहागच्छ, इह तिष्ठ ॐ बृहस्पतये नमः, बृहस्पतिमावाहयामि, स्थापयामि।

६-शुक्र (पूर्वमें श्वेत, चतुष्कोण)

शुक्रका आवाहन (श्वेत अक्षत-पुष्पसे)—

ॐ अन्नात्परिस्त्रुतो रसं ब्रह्मणा व्यपिबत्क्षत्रं पयः सोमं प्रजापतिः। ऋतेन सत्यमिन्द्रियं विपानꣳ शुक्रमन्धस इन्द्रस्येन्द्रियमिदं पयोऽमृतं मधु॥

हिमकुन्दमृणालाभं दैत्यानां परमं गुरुम्।
सर्वशास्त्रप्रवक्तारं शुक्रमावाहयाम्यहम्॥

ॐ भूर्भुवः स्वः भोजकटदेशोद्भव भार्गवगोत्र शुक्लवर्ण भो शुक्र! इहागच्छ, इह तिष्ठ ॐ शुक्राय नमः, शुक्रमावाहयामि, स्थापयामि।

७-शनि (पश्चिममें, काला मनुष्य)

शनिका आवाहन (काले अक्षत-पुष्पसे)—

ॐ शं नो देवीरभिष्टय आपो भवन्तु पीतये। शं योरभि स्त्रवन्तु नः॥

नीलाम्बुजसमाभासं रविपुत्रं यमाग्रजम्।
छायामार्तण्डसम्भूतं शनिमावाहयाम्यहम्॥

ॐ भूर्भुवः स्वः सौराष्ट्रदेशोद्भव काश्यपगोत्र कृष्णवर्ण भो शनैश्चर! इहागच्छ, इह तिष्ठ ॐ शनैश्चराय नमः, शनैश्चर-मावाहयामि, स्थापयामि।

८-राहु (नैर्ऋत्यकोणमें, काला मकर)

राहुका आवाहन (काले अक्षत-पुष्पसे)—

ॐ कया नश्चित्र आ भुवदूती सदावृधः सखा। कया शचिष्ठया वृता॥

अर्धकायं महावीर्यं चन्द्रादित्यविमर्दनम्।
सिंहिकागर्भसम्भूतं राहुमावाहयाम्यहम्॥

ॐ भूर्भुवः स्वः राठिनपुरोद्भव पैठीनसगोत्र कृष्णवर्ण भो राहो! इहागच्छ, इह तिष्ठ ॐ राहवे नमः, राहुमावाहयामि, स्थापयामि।

९-केतु (वायव्यकोणमें, कृष्ण खड्ग)

केतुका आवाहन (धूमिल अक्षत-पुष्प लेकर)—

ॐ केतुं कृण्वन्नकेतवे पेशो मर्या अपेशसे। समुषद्भिरजायथाः॥

पलाशधूम्रसङ्काशं तारकाग्रहमस्तकम्।
रौद्रं रौद्रात्मकं घोरं केतुमावाहयाम्यहम्॥

ॐ भूर्भुवः स्वः अन्तर्वेदिसमुद्भव जैमिनिगोत्र धूम्रवर्ण भो केतो! इहागच्छ, इह तिष्ठ ॐ केतवे नमः, केतुमावाहयामि, स्थापयामि।

नवग्रह-मण्डलकी प्रतिष्ठा—आवाहन और स्थापनके बाद हाथमें अक्षत लेकर '**ॐ मनो जूति***' इस मन्त्रसे नवग्रहमण्डलमें अक्षत छोड़े।

अस्मिन् नवग्रहमण्डले आवाहिताः सूर्यादिनवग्रहा देवाः सुप्रतिष्ठिता वरदा भवन्तु।

नवग्रह-पूजन

नवग्रहोंका आवाहनकर यथालब्धोपचारसे इनकी पूजा करे। निम्न नाम-मन्त्रसे भी पूजा की जा सकती है—

ॐ आवाहितसूर्यादिनवग्रहेभ्यो देवेभ्यो नमः।

—इस नाम-मन्त्रसे पूजन करनेके बाद हाथ जोड़कर निम्नलिखित प्रार्थना करे—

* ॐ मनो जूतिर्जुषतामाज्यस्य बृहस्पतिर्यज्ञमिमं तनोत्वरिष्टं यज्ञꣳ समिमं दधातु। विश्वे देवास इह मादयन्तामो३ म्प्रतिष्ठ॥ (यजु० २। १३)

प्रार्थना—

ॐ ब्रह्मा मुरारिस्त्रिपुरान्तकारी भानुः शशी भूमिसुतो बुधश्च।
गुरुश्च शुक्रः शनिराहुकेतवः सर्वे ग्रहाः शान्तिकरा भवन्तु॥
सूर्यः शौर्यमथेन्दुरुच्चपदवीं सन्मङ्गलं मङ्गलः
सद्बुद्धिं च बुधो गुरुश्च गुरुतां शुक्रः सुखं शं शनिः।
राहुर्बाहुबलं करोतु सततं केतुः कुलस्योन्नतिं
नित्यं प्रीतिकरा भवन्तु मम ते सर्वेऽनुकूला ग्रहाः॥

इसके बाद निम्नलिखित वाक्यका उच्चारण करते हुए नवग्रहमण्डलपर अक्षत छोड़ दे और नमस्कार करे—

निवेदन और नमस्कार—

'अनया पूजया सूर्यादिनवग्रहाः प्रीयन्तां न मम'

अधिदेवता और प्रत्यधिदेवताका स्थापन—

विशेष अवसरोंपर नवग्रहोंके मण्डलमें नवग्रहोंके साथ अधिदेवता, प्रत्यधिदेवता आदिकी भी पूजा की जाती है। इनकी स्थापनाका विशेष नियम है, जिसका निर्देश यहाँ किया जाता है—

चित्रानुसार अधिदेवताओंको ग्रहोंके दाहिने भागमें और प्रत्यधि-देवताओंको बायें भागमें स्थापित करना चाहिये।

अधिदेवताओंकी * स्थापना

(हाथमें अक्षत-पुष्प लेकर निम्न मन्त्रोंको पढ़ते हुए चित्रानुसार नियत स्थानोंपर अधिदेवताओंके आवाहन-स्थापनपूर्वक अक्षत-पुष्पोंको छोड़ता जाय)।

१०-ईश्वर (सूर्यके दायें भागमें) आवाहन-स्थापन—

ॐ त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्धनम्।
उर्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय मामृतात्॥
एह्येहि विश्वेश्वर नस्त्रिशूलकपालखट्वाङ्गधरेण सार्धम्।
लोकेश यक्षेश्वर यज्ञसिद्ध्यै गृहाण पूजां भगवन् नमस्ते॥

ॐ भूर्भुवः स्वः ईश्वराय नमः, ईश्वरमावाहयामि, स्थापयामि।

११-उमा (चन्द्रमाके दायें भागमें) आवाहन-स्थापन—

ॐ श्रीश्च ते लक्ष्मीश्च पत्न्यावहोरात्रे पार्श्वे नक्षत्राणि रूपमश्विनौ व्यात्तम्। इष्णन्निषाणामुं म इषाण सर्वलोकं म इषाण।

---

* **शिवः शिवा गुहो विष्णुर्ब्रह्मेन्द्रयमकालकाः।**
चित्रगुप्तोऽथ भान्वादेर्दक्षिणे चाधिदेवताः॥ (स्कन्दपुराण)

'सूर्यादि ग्रहोंके दक्षिण पार्श्वमें क्रमशः शिव, पार्वती, स्कन्द, विष्णु, ब्रह्मा, इन्द्र, यम, काल और चित्रगुप्त—ये अधिदेवता अधिष्ठित किये जाते हैं।'

हेमाद्रितनयां देवीं वरदां शङ्करप्रियाम्।
लम्बोदरस्य जननीमुमामावाहयाम्यहम्॥

ॐ भूर्भुवः स्वः उमायै नमः, उमामावाहयामि, स्थापयामि।

१२-स्कन्द (मंगलके दायें भागमें) आवाहन-स्थापन—

ॐ यदक्रन्दः प्रथमं जायमान उद्यन्त्समुद्रादुत वा पुरीषात्। श्येनस्य पक्षा हरिणस्य बाहू उपस्तुत्यं महि जातं ते अर्वन्॥

रुद्रतेजःसमुत्पन्नं देवसेनाग्रगं विभुम्।
षण्मुखं कृत्तिकासूनुं स्कन्दमावाहयाम्यहम्॥

ॐ भूर्भुवः स्वः स्कन्दाय नमः, स्कन्दमावाहयामि, स्थापयामि।

१३-विष्णु (बुधके दायें भागमें) आवाहन-स्थापन—

ॐ विष्णो रराटमसि विष्णोः श्नप्त्रे स्थो विष्णोः स्यूरसि विष्णोर्ध्रुवोऽसि। वैष्णवमसि विष्णवे त्वा॥

देवदेवं जगन्नाथं भक्तानुग्रहकारकम्।
चतुर्भुजं रमानाथं विष्णुमावाहयाम्यहम्॥

ॐ भूर्भुवः स्वः विष्णवे नमः, विष्णुमावाहयामि, स्थापयामि।

१४-ब्रह्मा (बृहस्पतिके दायें भागमें) आवाहन-स्थापन—

ॐ आ ब्रह्मन् ब्राह्मणो ब्रह्मवर्चसी जायतामा राष्ट्रे राजन्यः शूर इषव्योऽतिव्याधी महारथो जायतां दोग्ध्री धेनुर्वोढानड्वानाशुः सप्तिः पुरन्धिर्योषा जिष्णू रथेष्ठाः सभेयो युवास्य यजमानस्य वीरो जायतां निकामे निकामे नः पर्जन्यो वर्षतु फलवत्यो न ओषधयः पच्यन्तां योगक्षेमो नः कल्पताम्॥

कृष्णाजिनाम्बरधरं पद्मसंस्थं चतुर्मुखम्।
वेदाधारं निरालम्बं विधिमावाहयाम्यहम्॥

ॐ भूर्भुवः स्वः ब्रह्मणे नमः, ब्रह्माणमावाहयामि, स्थापयामि।

१५-इन्द्र (शुक्रके दायें भागमें) आवाहन-स्थापन—

ॐ सजोषा इन्द्र सगणो मरुद्भिः सोमं पिब वृत्रहा शूर विद्वान्।
जहि शत्रूँ२रप मृधो नुदस्वाथाभयं कृणुहि विश्वतो नः।

देवराजं गजारूढं शुनासीरं शतक्रतुम्।
वज्रहस्तं महाबाहुमिन्द्रमावाहयाम्यहम्॥

ॐ भूर्भुवः स्वः इन्द्राय नमः, इन्द्रमावाहयामि, स्थापयामि।

१६-यम (शनिके दायें भागमें) आवाहन-स्थापन—

ॐ यमाय त्वाऽङ्गिरस्वते पितृमते स्वाहा।
स्वाहा घर्माय स्वाहा घर्मः पित्रे॥

धर्मराजं महावीर्यं दक्षिणादिक्पतिं प्रभुम्।
रक्तेक्षणं महाबाहुं यममावाहयाम्यहम्॥

ॐ भूर्भुवः स्वः यमाय नमः, यममावाहयामि, स्थापयामि।

१७-काल (राहुके दायें भागमें) आवाहन-स्थापन—

ॐ कार्षिरसि समुद्रस्य त्वा क्षित्या उन्नयामि।
समापो अद्भिरग्मत समोषधीभिरोषधीः॥

अनाकारमनन्ताख्यं वर्तमानं दिने दिने।
कलाकाष्ठादिरूपेण कालमावाहयाम्यहम्॥

ॐ भूर्भुवः स्वः कालाय नमः, कालमावाहयामि, स्थापयामि।

१८-चित्रगुप्त (केतुके दायें भागमें) आवाहन-स्थापन—

ॐ चित्रावसो स्वस्ति ते पारमशीय।

धर्मराजसभासंस्थं कृताकृतविवेकिनम्।
आवाहये चित्रगुप्तं लेखनीपत्रहस्तकम्॥

ॐ भूर्भुवः स्वः चित्रगुप्ताय नमः, चित्रगुप्तमावाहयामि, स्थापयामि।

प्रत्यधिदेवताओंका स्थापन*

बायें हाथमें अक्षत लेकर दाहिने हाथसे नवग्रहोंके बायें भागमें मन्त्रको उच्चारण करते हुए चित्रानुसार नियत स्थानोंपर अक्षत छोड़ते हुए एक-एक प्रत्यधिदेवताका आवाहन-स्थापन करे—

१९-अग्नि (सूर्यके बायें भागमें) आवाहन-स्थापन—

ॐ अग्निं दूतं पुरो दधे हव्यवाहमुप ब्रुवे। देवाँ२ आ सादयादिह॥

रक्तमाल्याम्बरधरं रक्तपद्मासनस्थितम्।
वरदाभयदं देवमग्निमावाहयाम्यहम्॥

ॐ भूर्भुवः स्वः अग्नये नमः, अग्निमावाहयामि, स्थापयामि।

२०-अप् (जल)(चन्द्रमाके बायें) आवाहन-स्थापन—

ॐ आपो हि ष्ठा मयोभुवस्ता न ऊर्जे दधातन। महे रणाय चक्षसे॥

आदिदेवसमुद्भूतजगच्छुद्धिकराः शुभाः।
ओषध्याप्यायनकरा अप आवाहयाम्यहम्॥

ॐ भूर्भुवः स्वः अद्भ्यो नमः, अप आवाहयामि, स्थापयामि॥

२१-पृथ्वी (मंगलके बायें भागमें) आवाहन-स्थापन—

ॐ स्योना पृथिवि नो भवानृक्षरा निवेशनी। यच्छा नः शर्म सप्रथाः॥

शुक्लवर्णां विशालाक्षीं कूर्मपृष्ठोपरिस्थिताम्।
सर्वशस्याश्रयां देवीं धरामावाहयाम्यहम्॥

ॐ भूर्भुवः स्वः पृथिव्यै नमः, पृथिवीमावाहयामि, स्थापयामि।

---

* अग्निरापो धरा विष्णुः शक्रेन्द्राणी पितामहाः। पन्नगाः कः क्रमाद्वामे ग्रहप्रत्यधिदेवताः॥

सूर्यादि ग्रहोंके वामभागमें क्रमशः अग्नि, जल, पृथ्वी, विष्णु, इन्द्र, इन्द्राणी, प्रजापति, सर्प और ब्रह्मा—ये प्रत्यधिदेवता स्थापित किये जाते हैं।

२२-विष्णु (बुधके बायें भागमें) आवाहन-स्थापन—

ॐ इदं विष्णुर्वि चक्रमे त्रेधा नि दधे पदम्। समूढमस्य पाꣳसुरे स्वाहा॥

शङ्खचक्रगदापद्महस्तं गरुडवाहनम्।
किरीटकुण्डलधरं विष्णुमावाहयाम्यहम्॥

ॐ भूर्भुवः स्वः विष्णवे नमः, विष्णुमावाहयामि, स्थापयामि।

२३-इन्द्र (बृहस्पतिके बायें भागमें) आवाहन-स्थापन—

ॐ इन्द्र आसां नेता बृहस्पतिर्दक्षिणा यज्ञः पुर एतु सोमः। देवसेनानामभिभञ्जतीनां जयन्तीनां मरुतो यन्त्वग्रम्॥

ऐरावतगजारूढं सहस्राक्षं शचीपतिम्।
वज्रहस्तं सुराधीशमिन्द्रमावाहयाम्यहम्॥

ॐ भूर्भुवः स्वः इन्द्राय नमः, इन्द्रमावाहयामि, स्थापयामि।

२४-इन्द्राणी (शुक्रके बायें भागमें) आवाहन-स्थापन—

ॐ अदित्यै रास्नाऽसीन्द्राण्या उष्णीषः। पूषाऽसि घर्माय दीष्व॥

प्रसन्नवदनां देवीं देवराजस्य वल्लभाम्।
नानालङ्कारसंयुक्तां शचीमावाहयाम्यहम्॥

ॐ भूर्भुवः स्वः इन्द्राण्यै नमः, इन्द्राणीमावाहयामि, स्थापयामि।

२५-प्रजापति (शनिके बायें भागमें) आवाहन-स्थापन—

ॐ प्रजापते न त्वदेतान्यन्यो विश्वा रूपाणि परि ता बभूव।
यत्कामास्ते जुहुमस्तन्नो अस्तु वयꣳ स्याम पतयो रयीणाम्॥

आवाहयाम्यहं देवदेवेशं च प्रजापतिम्।
अनेकव्रतकर्तारं सर्वेषां च पितामहम्॥

ॐ भूर्भुवः स्वः प्रजापतये नमः, प्रजापतिमावाहयामि, स्थापयामि।

२६-सर्प (राहुके बायें भागमें) आवाहन-स्थापन—

ॐ नमोऽस्तु सर्पेभ्यो ये के च पृथिवीमनु।
ये अन्तरिक्षे ये दिवि तेभ्यः सर्पेभ्यो नमः॥

अनन्ताद्यान् महाकायान् नानामणिविराजितान्।
आवाहयाम्यहं सर्पान् फणासप्तकमण्डितान्॥

ॐ भूर्भुवः स्वः सर्पेभ्यो नमः, सर्पानावाहयामि, स्थापयामि।

२७-ब्रह्मा (केतुके बायें भागमें) आवाहन-स्थापन—

ॐ ब्रह्म जज्ञानं प्रथमं पुरस्ताद्वि सीमतः सुरुचो वेन आवः।
स बुध्न्या उपमा अस्य विष्ठाः सतश्च योनिमसतश्च वि वः॥

हंसपृष्ठसमारूढं देवतागणपूजितम्।
आवाहयाम्यहं देवं ब्रह्माणं कमलासनम्॥

ॐ भूर्भुवः स्वः ब्रह्मणे नमः, ब्रह्माणमावाहयामि, स्थापयामि।

नवग्रहोंके समान ही अधिदेवता तथा प्रत्यधिदेवताओंका भी प्रतिष्ठापूर्वक पाद्यादि उपचारोंसे पूजन करना चाहिये।

****

पञ्चलोकपाल*-पूजा—

नवग्रह-मण्डलमें ही चित्रानुसार निर्दिष्ट स्थानोंपर गणेशादि पञ्चलोकपालोंका बायें हाथमें अक्षत लेकर दाहिने हाथसे छोड़ते हुए आवाहन एवं स्थापन करे।

२८-गणेशजीका आवाहन और स्थापन—

ॐ गणानां त्वा गणपतिꣳ हवामहे प्रियाणां त्वा प्रियपतिꣳ हवामहे निधीनां त्वा निधिपतिꣳ हवामहे वसो मम। आहमजानि गर्भधमा त्वमजासि गर्भधम्॥

लम्बोदरं महाकायं गजवक्त्रं चतुर्भुजम्।
आवाहयाम्यहं देवं गणेशं सिद्धिदायकम्॥

ॐ भूर्भुवः स्वः गणपते! इहागच्छ, इह तिष्ठ गणपतये नमः, गणपतिमावाहयामि, स्थापयामि।

२९-देवी दुर्गाका आवाहन और स्थापन—

ॐ अम्बे अम्बिकेऽम्बालिके न मा नयति कश्चन। ससस्त्यश्वकः सुभद्रिकां काम्पीलवासिनीम्॥ पत्तने नगरे ग्रामे विपिने पर्वते गृहे। नानाजातिकुलेशानीं दुर्गामावाहयाम्यहम्॥

ॐ भूर्भुवः स्वः दुर्गे! इहागच्छ, इह तिष्ठ दुर्गायै नमः, दुर्गामावाहयामि, स्थापयामि।

३०-वायुका आवाहन और स्थापन—

ॐ आ नो नियुद्भिः शतिनीभिरध्वरꣳसहस्त्रिणीभिरुप याहि यज्ञम्। वायो अस्मिन्त्सवने मादयस्व यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः॥

---

* गणेशश्चाम्बिका वायुराकाशश्चाश्विनौ तथा। ग्रहाणामुत्तरे पञ्चलोकपालाः प्रकीर्तिताः॥
(स्कन्दपुराण)

आवाहयाम्यहं वायुं भूतानां देहधारिणम्।
सर्वाधारं महावेगं मृगवाहनमीश्वरम्॥

ॐ भूर्भुवः स्वः वायो! इहागच्छ, इह तिष्ठ वायवे नमः, वायुमावाहयामि, स्थापयामि।

३१-आकाशका आवाहन और स्थापन—

ॐ घृतं घृतपावानः पिबत वसां वसापावानः पिबतान्तरिक्षस्य हविरसि स्वाहा। दिशः प्रदिश आदिशो विदिश उद्दिशो दिग्भ्यः स्वाहा॥

अनाकारं शब्दगुणं द्यावाभूम्यन्तरस्थितम्।
आवाहयाम्यहं देवमाकाशं सर्वगं शुभम्॥

ॐ भूर्भुवः स्वः आकाश! इहागच्छ, इह तिष्ठ आकाशाय नमः, आकाशमावाहयामि, स्थापयामि।

३२-अश्विनीकुमारोंका आवाहन और स्थापन—

ॐ या वां कशा मधुमत्यश्विना सूनृतावती। तया यज्ञं मिमिक्षतम्। उपयामगृहीतोऽस्यश्विभ्यां त्वैष ते योनिर्माध्वीभ्यां त्वा॥

देवतानां च भैषज्ये सुकुमारौ भिषग्वरौ।
आवाहयाम्यहं देवावश्विनौ पुष्टिवर्द्धनौ॥

ॐ भूर्भुवः स्वः अश्विनौ! इहागच्छतम्, इह तिष्ठतम्, अश्विभ्यां नमः, अश्विनावावाहयामि, स्थापयामि।

प्रतिष्ठा—

तदनन्तर '**ॐ मनो जूति०**' इस मन्त्रसे अक्षत छोड़ते हुए पञ्चलोकपालोंकी प्रतिष्ठा करे।

इसके बाद '**ॐ पञ्चलोकपालेभ्यो नमः**' इस नाम-मन्त्रसे गन्धादि उपचारोंद्वारा पूजनकर '**अनया पूजया पञ्चलोकपालाः**

प्रीयन्ताम्, न मम’ ऐसा कहकर अक्षत छोड़ दे।

(यज्ञादि विशेष अनुष्ठानोंमें वास्तोष्पति एवं क्षेत्रपाल देवताका पृथक्-पृथक् चक्र बनाकर उनकी विशेष पूजा की जाती है। नवग्रह-मण्डलके देवगणोंमें भी इनकी पूजा करनेका विधान है, अतः संक्षेपमें उसे भी यहाँ दिया जा रहा है—)

३३-वास्तोष्पतिका आवाहन और स्थापन—

ॐ वास्तोष्पते प्रतिजानीह्यस्मान्त्स्वावेशो अनमीवो भवा नः। यत् त्वेमहे प्रति तन्नो जुषस्व शं नो भव द्विपदे शं चतुष्पदे॥

वास्तोष्पतिं विदिक्कायं भूशय्याभिरतं प्रभुम्।
आवाहयाम्यहं देवं सर्वकर्मफलप्रदम्॥

ॐ भूर्भुवः स्वः वास्तोष्पते! इहागच्छ, इह तिष्ठ वास्तोष्पतये नमः, वास्तोष्पतिमावाहयामि, स्थापयामि।

३४-क्षेत्रपालका आवाहन और स्थापन—

ॐ नहि स्पशमविदन्नन्यमस्माद्वैश्वानरात्पुर एतारमग्नेः। एमेनमवृधन्नमृता अमर्त्यं वैश्वानरं क्षैत्रजित्याय देवाः॥

भूतप्रेतपिशाचाद्यैरावृतं शूलपाणिनम्।
आवाहये क्षेत्रपालं कर्मण्यस्मिन् सुखाय नः॥

ॐ भूर्भुवः स्वः क्षेत्राधिपते! इहागच्छ, इह तिष्ठ क्षेत्राधिपतये नमः, क्षेत्राधिपतिमावाहयामि, स्थापयामि।

तदनन्तर ‘**ॐ मनो जूति०**’ इस मन्त्रसे प्रतिष्ठाकर ‘**ॐ क्षेत्रपालाय नमः**’ इस नाम-मन्त्रद्वारा गन्धादि उपचारोंसे पूजा करे।

* * * * * * *

दश दिक्पाल-पूजन—

नवग्रह-मण्डलमें परिधिके बाहर पूर्वादि दसों दिशाओंके अधिपति देवताओं (दिक्पाल देवताओं)-का अक्षत छोड़ते हुए आवाहन एवं स्थापन करे।

३५-(पूर्वमें) इन्द्रका आवाहन और स्थापन—

ॐ त्रातारमिन्द्रमवितारमिन्द्रꣳ हवे हवे सुहवꣳ शूरमिन्द्रम्।
ह्वयामि शक्रं पुरुहूतमिन्द्रꣳ स्वस्ति नो मघवा धात्विन्द्रः॥
इन्द्रं सुरपतिश्रेष्ठं वज्रहस्तं महाबलम्।
आवाहये यज्ञसिद्ध्यै शतयज्ञाधिपं प्रभुम्॥

ॐ भूर्भुवः स्वः इन्द्र! इहागच्छ, इह तिष्ठ इन्द्राय नमः, इन्द्रमावाहयामि, स्थापयामि।

३६-(अग्निकोणमें) अग्निका आवाहन और स्थापन—

ॐ अग्निं दूतं पुरो दधे हव्यवाहमुप ब्रुवे। देवाँ२ आ सादयादिह॥
त्रिपादं सप्तहस्तं च द्विमूर्धानं द्विनासिकम्।
षण्नेत्रं च चतुःश्रोत्रमग्निमावाहयाम्यहम्॥

ॐ भूर्भुवः स्वः अग्ने! इहागच्छ, इह तिष्ठ अग्नये नमः, अग्निमावाहयामि, स्थापयामि।

३७-(दक्षिणमें) यमका आवाहन और स्थापन—

ॐ यमाय त्वाऽङ्गिरस्वते पितृमते स्वाहा।
स्वाहा घर्माय स्वाहा घर्मः पित्रे॥
महामहिषमारूढं दण्डहस्तं महाबलम्।
यज्ञसंरक्षणार्थाय यममावाहयाम्यहम्॥

ॐ भूर्भुवः स्वः यम! इहागच्छ, इह तिष्ठ यमाय नमः, यममावाहयामि, स्थापयामि।

३८-(नैर्ऋत्यकोणमें) निर्ऋतिका आवाहन और स्थापन—

ॐ असुन्वन्तमयजमानमिच्छ स्तेनस्येत्यामन्विहि तस्करस्य।
अन्यमस्मदिच्छ सा त इत्या नमो देवि निर्ऋते तुभ्यमस्तु॥

सर्वप्रेताधिपं देवं निर्ऋतिं नीलविग्रहम्।
आवाहये यज्ञसिद्ध्यै नरारूढं वरप्रदम्॥

ॐ भूर्भुवः स्वः निर्ऋते! इहागच्छ, इह तिष्ठ निर्ऋतये नमः, निर्ऋतिमावाहयामि, स्थापयामि।

३९-(पश्चिममें) वरुणका आवाहन और स्थापन—

ॐ तत्त्वा यामि ब्रह्मणा वन्दमानस्तदा शास्ते यजमानो हविर्भिः। अहेडमानो वरुणेह बोध्युरुशꣳ स मा न आयुः प्रमोषीः॥

शुद्धस्फटिकसंकाशं जलेशं यादसां पतिम्।
आवाहये प्रतीचीशं वरुणं सर्वकामदम्॥

ॐ भूर्भुवः स्वः वरुण! इहागच्छ, इह तिष्ठ वरुणाय नमः, वरुणमावाहयामि, स्थापयामि।

४०-(वायव्यकोणमें) वायुका आवाहन और स्थापन—

ॐ आ नो नियुद्भिः शतिनीभिरध्वरꣳ सहस्त्रिणीभिरुप याहि यज्ञम्। वायो अस्मिन्त्सवने मादयस्व यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः॥

मनोजवं महातेजं सर्वतश्चारिणं शुभम्।
यज्ञसंरक्षणार्थाय वायुमावाहयाम्यहम्॥

ॐ भूर्भुवः स्वः वायो! इहागच्छ, इह तिष्ठ वायवे नमः, वायुमावाहयामि, स्थापयामि।

४१-(उत्तरमें) कुबेरका आवाहन और स्थापन—

ॐ कुविदङ्ग यवमन्तो यवं चिद्यथा दान्त्यनुपूर्वं वियूय।
इहेहैषां कृणुहि भोजनानि ये बर्हिषो नम उक्तिं यजन्ति॥
उपयामगृहीतोऽस्यश्विभ्यां त्वा सरस्वत्यै त्वेन्द्राय त्वा सुत्राम्ण।
एष ते योनिस्तेजसे त्वा वीर्याय त्वा बलाय त्वा॥

आवाहयामि देवेशं धनदं यक्षपूजितम्।
महाबलं दिव्यदेहं नरयानगतिं विभुम्॥

ॐ भूर्भुवः स्वः कुबेर! इहागच्छ, इह तिष्ठ कुबेराय नमः, कुबेरमावाहयामि, स्थापयामि।

४२-(ईशानकोणमें) ईशानका आवाहन और स्थापन—

ॐ तमीशानं जगतस्तस्थुषस्पतिं धियञ्जिन्वमवसे हूमहे वयम्।
पूषा नो यथा वेदसामसद् वृधे रक्षिता पायुरदब्धः स्वस्तये॥

सर्वाधिपं महादेवं भूतानां पतिमव्ययम्।
आवाहये तमीशानं लोकानामभयप्रदम्॥

ॐ भूर्भुवः स्वः ईशान! इहागच्छ, इह तिष्ठ ईशानाय नमः, ईशानमावाहयामि, स्थापयामि।

४३-ईशान-पूर्वके मध्यमें ब्रह्माका आवाहन-स्थापन—

ॐ ब्रह्म जज्ञानं प्रथमं पुरस्ताद्वि सीमतः सुरुचो वेन आवः।
स बुध्न्या उपमा अस्य विष्ठाः सतश्च योनिमसतश्च वि वः॥

पद्मयोनिं चतुर्मूर्तिं वेदगर्भं पितामहम्।
आवाहयामि ब्रह्माणं यज्ञसंसिद्धिहेतवे॥

ॐ भूर्भुवः स्वः ब्रह्मन्! इहागच्छ, इह तिष्ठ ब्रह्मणे नमः, ब्रह्माणमावाहयामि, स्थापयामि।

४४-नैर्ऋत्य-पश्चिमके मध्यमें अनन्तका आवाहन-स्थापन—

ॐ स्योना पृथिवि नो भवानृक्षरा निवेशनी। यच्छा नः शर्म सप्रथाः।

अनन्तं सर्वनागानामधिपं विश्वरूपिणम्।
जगतां शान्तिकर्तारं मण्डले स्थापयाम्यहम्॥

ॐ भूर्भुवः स्वः अनन्त! इहागच्छ, इह तिष्ठ अनन्ताय नमः, अनन्तमावाहयामि, स्थापयामि।

प्रतिष्ठा—

इस प्रकार आवाहनकर '**ॐ मनो०**' इस मन्त्रसे अक्षत छोड़ते हुए प्रतिष्ठा करे। तदनन्तर निम्नलिखित नाम-मन्त्रसे यथालब्धोपचार पूजन करे—'**ॐ इन्द्रादिदशदिक्पालेभ्यो नमः।**' इसके बाद '**अनया पूजया इन्द्रादिदशदिक्पालाः प्रीयन्ताम्, न मम**'—ऐसा उच्चारणकर अक्षत मण्डलपर छोड़ दे।

[ख] कतिपय संस्कारोंसे सम्बद्ध विशिष्ट ज्ञातव्य बातें

गर्भाधानसंस्कार

स्त्रियोंका ऋतुकाल—

जीवकी उत्पत्तिको 'गर्भोत्पत्ति' कहा जाता है। गर्भरूप जीव ऋतुस्नाता स्त्रीके आश्रयमें रहता है। ऋतुस्नानसे पूर्व स्त्री 'रजस्वला' कहलाती है। प्राय: बारह वर्षकी अवस्थासे प्रारम्भ होकर पचास वर्षपर्यन्त प्रतिमास (चन्द्रमासके अनुसार २७-२८ दिनपर) स्त्रीके गर्भाशयसे स्वभावसे ही आर्तव या रजका स्राव हुआ करता है और आर्तवस्रावके प्रथम दिनसे सोलह रात्रियोंको 'ऋतुकाल' माना जाता है और इनमें भी निषिद्धेतर काल ही गर्भाधानके योग्य माना जाता है। रजस्वला स्त्रीके लिये शास्त्रोंमें विशिष्ट नियम प्रतिपादित हैं। उनकी अवहेलनासे गर्भमें दोष—विकार आ जाते हैं। मघा-मूल आदि नक्षत्रों, निषिद्ध तिथियों तथा निषिद्धकालका परिहारकर प्रशस्त रात्रियोंमें आधान होनेसे गर्भकी आयु, आरोग्य, सौभाग्य, ऐश्वर्य तथा बलमें वृद्धि होती है।

स्त्रियोंके गर्भधारणकी योग्यताका काल ऋतुकाल कहा जाता है। मनुस्मृतिमें बताया गया है कि रजोदर्शनके दिनसे सोलह रात्रियाँ (दिन-रात) स्त्रियोंका स्वाभाविक ऋतुकाल है। उनमें रजोधर्म (मासिकधर्म)-के चार निन्दित दिन-रात भी सम्मिलित हैं। उन सोलह रात्रियोंमें प्रथम चार, ग्यारहवीं और तेरहवीं रात्रियाँ अर्थात् छ: रात्रियाँ स्त्री-सहवासके लिये निन्दित हैं, शेष दस रात्रियाँ श्रेष्ठ मानी गयी हैं। उन दस रात्रियोंमें-से युग्म (सम) अर्थात् छठी, आठवीं, दसवीं, बारहवीं, चौदहवीं तथा सोलहवीं रात्रियोंमें अभिगमन होनेसे पुत्रोत्पत्ति होती है

और विषम रात्रियों (पाँचवीं, सातवीं, नवीं इत्यादि)–में अभिगमनसे कन्याकी उत्पत्ति होती है—

ऋतुः स्वाभाविकः स्त्रीणां रात्रयः षोडश स्मृताः।
चतुर्भिरितरैः सार्धमहोभिः सद्विगर्हितैः॥
तासामाद्याश्चतस्त्रस्तु निन्दितैकादशी च या।
त्रयोदशी च शेषास्तु प्रशस्ता दश रात्रयः॥
युग्मासु पुत्रा जायन्ते स्त्रियोऽयुग्मासु रात्रिषु।

(मनुस्मृति ३।४६—४८)

याज्ञवल्क्यस्मृतिमें भी इसी बातको बताया गया है कि स्त्रियोंकी सोलह रात्रियाँ ऋतुकाल होती हैं, उस ऋतुकालमें युग्म (सम) रात्रियोंमें पुत्रार्थ उनके पास जाना चाहिये, ऐसा व्यक्ति ब्रह्मचारी ही होता है, किंतु पर्वकाल (अमावास्या, पूर्णिमा, अष्टमी और चतुर्दशी) तथा (रजोदर्शनकी) प्रथम चार रात्रियोंका निषेध करे—

षोडशर्तुनिशाः स्त्रीणां तस्मिन्युग्मासु संविशेत्।
ब्रह्मचार्येव पर्वाण्याद्याश्चतस्त्रस्तु वर्जयेत्॥

(याज्ञ० स्मृति आचा० १।७९)

ऋतुस्नाता स्त्रीके कर्तव्य—

शास्त्रोंमें जो लिखा है वह वैज्ञानिक रीतिसे प्रमाणित भी हो चुका है कि ऋतु-स्नानके अनन्तर स्त्री प्रथम जिसे देखती है, उसीका संस्कार उसके चित्तपर पड़ जाता है। उस संस्कारको वह अपने चित्तपर धारण किये रहती है। कारण कि ऋतुमतीका चित्त उन दिनोंमें ठीक फोटो लेनेवाले 'कैमरे' के सदृश हो जाता है। यही कारण है कि स्नानके अनन्तर सर्वप्रथम ऋतुस्नाता स्त्रीके लिये पतिदर्शन ही आवश्यक है। चित्तका प्रभाव शरीर, मन और बुद्धिपर कैसा पड़ता है, इसके विषयमें पाश्चात्य विद्वान् प्रोफेसर गेट्सका यह ज्ञापन है कि 'मनोविज्ञान और शरीर-विज्ञानके द्वारा प्रमाणित किया गया है कि

चिन्तन-शक्ति और भावनाका इतना पूर्ण प्रभाव स्थूल, सूक्ष्म और कारण शरीरपर पड़ता है कि उनके अन्तर्गत कोई भी वस्तु इनके परिणामसे बच नहीं सकती। स्थूल शरीरके अन्तर्गत रक्त, मांस, मज्जा और वीर्य आदि कोई भी वस्तु उस प्रभावसे अछूती नहीं रह सकती।'

प्रकृतिके इस विज्ञान और चित्तके प्रभावको लक्ष्यमें रखकर ही ऋतुमतीके लिये यह आदेश है कि वह चौथे दिन शुद्ध होनेपर स्नान करे, नवीन वस्त्र एवं सुन्दर आभूषण पहने और सर्वप्रथम पतिका दर्शन करे; क्योंकि ऋतुस्नानके अनन्तर ऋतुस्नाता स्त्री सर्वप्रथम जैसे पुरुषको देखती है, वैसा ही पुत्र उत्पन्न करती है। इसलिये उसे पतिका ही दर्शन करना चाहिये। यदि पति उस समय वहाँ न हो तो पुत्र आदि किसी प्रियजनका दर्शन करे—

पूर्वं पश्येदृतुस्नाता यादृशं नरमङ्गना।
तादृशं जनयेत् पुत्रं भर्तारं दर्शयेदतः॥

(सुश्रुतसंहिता शारीरस्थान २। २६)

शरीरविज्ञानके आचार्य चरक कहते हैं कि गर्भकी उत्पत्तिके समय स्त्रीका मन जिस किसी प्राणीकी ओर आकृष्ट होता है, उसी प्राणीके सदृश सन्तानको स्त्री उत्पन्न करती है—

गर्भोपपत्तौ तु मनः स्त्रिया यं जन्तुं व्रजेत्तत्सदृशं प्रसूते।

(चरकसंहिता शारीरस्थान २। २५)

स्त्रियोंके रजस्वला होनेका आख्यान—

प्राचीन समयकी बात है, एक बार देवराज इन्द्रने ऐश्वर्यके अभिमानवश अपने गुरु बृहस्पतिका अपमान कर दिया, तब आचार्य बृहस्पतिने इन्द्रसे अपमानित होकर देवताओंका परित्याग कर दिया और वे योगबलसे अन्तर्धान हो गये। आचार्यके अभावमें इन्द्रसहित देवता असुरोंके भयसे बहुत भयभीत हो गये। तब ब्रह्मादि सभी देवता आपसमें परामर्श करके त्वष्टाके पुत्र विश्वरूप ऋषिके पास गये और उनसे

अपना आचार्य बननेकी प्रार्थना की। पहले तो परम तपस्वी विश्वरूपजीने पुरोहिती और परिग्रहकी निन्दा की, किंतु फिर देवताओंके अनुनय-विनय करनेपर वे इसके लिये तैयार हो गये। विश्वरूप बड़े तपस्वी थे। उन्होंने अपनी वैष्णवी-विद्याके प्रभावसे असुरोंपर विजय दिलायी और असुरोंद्वारा छीनी गयी सारी सम्पत्ति देवताओंको वापस दिला दी।

आचार्य विश्वरूपके तीन सिर थे, इसलिये वे त्रिशिरा भी कहलाते थे। उनके पिता त्वष्टा बारह आदित्य देवताओंमें थे। इसलिये वे यज्ञके समय बड़े ऊँचे स्वरमें देवताओंको आहुति देते थे, परंतु उनकी माता दैत्योंकी बहन होनेसे असुरकुलकी थी। इसलिये वे भीतरसे दैत्योंके पक्षपाती थे और स्नेहवश गुप्तरूपसे उन्हें भी यज्ञभाग दे दिया करते थे। परिणामस्वरूप दैत्योंका बल विशेष रूपसे बढ़ने लगा। जब देवराज इन्द्रको यह बात मालूम चली तो वे विश्वरूपजीके कपटव्यवहारको देखकर अत्यन्त उत्तेजित हो गये और एक दिन उन्होंने वज्रके द्वारा विश्वरूपके तीनों सिरोंको काट डाला।

विश्वरूपका सोमरस पीनेवाला सिर पपीहा, सुरापान करनेवाला गौरैया और अन्न खानेवाला तीतर हो गया। इन्द्र चाहते तो विश्वरूपके वधसे लगी हुई ब्रह्महत्याको दूर कर सकते थे, परंतु उन्होंने ऐसा करना उचित न समझा, हाथ जोड़कर उसे स्वीकार कर लिया तथा एक वर्षतक उससे छूटनेका कोई उपाय नहीं किया। एक वर्षके बाद सब लोगोंके सामने अपनी शुद्धि प्रकट करनेके लिये उन्होंने अपनी ब्रह्महत्याको चार हिस्सोंमें बाँटकर पृथ्वी, जल, वृक्ष और स्त्रियोंको दे दिया। साथ ही चारोंको वरदान भी दिया। वरदानके प्रलोभनमें चारोंने ब्रह्महत्याके अंशको स्वीकार कर लिया। पृथ्वीने यह वरदान लेकर कि जहाँ कहीं गड्ढा होगा, वह समयपर अपने-आप भर जायगा, इन्द्रकी ब्रह्महत्याका चतुर्थांश स्वीकार कर लिया। वही ब्रह्महत्या

पृथ्वीमें कहीं-कहीं ऊसरके रूपमें दिखायी पड़ती है। दूसरा चतुर्थांश वृक्षोंने लिया। उन्हें यह वर मिला कि उनका कोई हिस्सा कट जानेपर फिर जम जायगा। उनमें अब भी गोंदके रूपमें ब्रह्महत्या दिखायी पड़ती है। स्त्रियोंने यह वर पाकर कि वे सर्वदा पुरुषका सहवास कर सकें, ब्रह्महत्याका तीसरा चतुर्थांश स्वीकार किया। इसके पहले वे ऋतुकालमें ही पुरुषका सहवास करती थीं। उनकी ब्रह्महत्या प्रत्येक महीनेमें रजके रूपसे दिखायी पड़ती है। इस प्रकार प्रत्येक मासमें स्त्रियाँ रजोधर्मसे युक्त होती हैं और रजस्वला, ऋतुमती, उदकी, पुष्पिणी, आत्रेयी, मलवद्वासा, रजकी तथा आर्तवी आदि नामोंसे व्यवहृत होती हैं—

शश्वत्कामवरेणांहस्तुरीयं जगृहुः स्त्रियः।
रजोरूपेण तास्वंहो मासि मासि प्रदृश्यते॥

(श्रीमद्भा० ६।९।९)

जलने यह वर पाकर कि खर्च करते रहनेपर भी निर्झर आदिके रूपमें तुम्हारी बढ़ती ही होती रहेगी, ब्रह्महत्याका चौथा चतुर्थांश स्वीकार किया। फेन, बुद्बुद आदिके रूपमें वही ब्रह्महत्या दिखायी पड़ती है। अतएव मनुष्य उसे हटाकर जल ग्रहण किया करते हैं।

मूल रूपसे यह आख्यान कृष्णयजुर्वेदकी तैत्तिरीयसंहिताके '**विश्वरूपो वै त्वाष्ट्रः०**'—इस अनुवाकमें आया है, उसीका विस्तार पुराणोंमें हुआ है।

ऋतुकालमें आरम्भके तीन दिनोंतक इन्द्रको लगी ब्रह्महत्याका चतुर्थांश रजस्वला स्त्रियोंमें रहता है, उस ऋतुकालके मध्यमें किये गये गर्भाधानके फलस्वरूप पापात्माओंके देहकी उत्पत्ति होती है।

रजस्वला स्त्रीके पालनीय आवश्यक नियम और उनका वैज्ञानिक रहस्य—

रजस्वला नारीके लिये कतिपय धार्मिक नियमोंका पालन आवश्यक

माना गया है; क्योंकि इनका सम्बन्ध प्रकृतिके नियमोंके साथ जुड़ा हुआ है। रजस्वलाके लिये विहित नियमोंका परिपालन ऋतुमती स्त्री और उसकी सन्ततिके शरीर, इन्द्रिय, मन और बुद्धि तथा स्वास्थ्यका प्रबल एवं प्रथम कारण होता है। इन नियमोंके पालनसे मनोभिलषित, लक्षण्य, स्वस्थ, दीर्घायु, बलवान्, बुद्धिमान्, ओजस्वी, तेजस्वी एवं विनयशील सन्ततिका प्रजनन किया जा सकता है। इस विषयमें श्रुतियाँ, आयुर्वेद, कामशास्त्र और रसायनशास्त्र आदि सभी शास्त्र सहमत हैं। तत्त्वचिन्तकोंका मत है कि क्षेत्रके संस्कार ही बीजकी सर्वविध उन्नतिके कारण होते हैं। अतः अपनी सन्ततिकी सर्वविध रक्षा एवं उन्नतिके लिये इनका पालन नारीमात्रको करना आवश्यक है।

रजस्वलाके नियम—

रजस्वला नारीको जिन-जिन नियमोंका पालन अपनी सन्तति तथा अन्योंकी स्वास्थ्य-रक्षाके लिये परमावश्यक होता है, उनका परिगणन शुक्लयजुर्वेदके शतपथब्राह्मण ग्रन्थ एवं कृष्णयजुर्वेदकी तैत्तिरीय शाखामें निम्नांकित रूपमें उलपब्ध है—

(१) एकान्तवास, (२) ब्रह्मचर्यपालन, (३) स्नानका त्याग, (४) तैलाभ्यंगवर्जन, (५) भूमिपर रेखा न खींचना, (६) अंजनका त्याग, (७) दन्तधावन-त्याग, (८) नख न कटाना, (९) वस्तुओंके छेदन-भेदनका त्याग, (१०) रस्सी न गूँथना, (११) पर्णपात्रसे जल न पीना, (१२) अन्यसे भाषण न करना, (१३) छोटे पात्रसे जल न पीना, (१४) भूमिपर शयन, (१५) पुण्यश्लोक मानवोंका स्मरण करना, (१६) अमंगल एवं बीभत्स पदार्थोंका चिन्तन न करना, (१७) पुण्यग्रन्थोंमें उल्लिखित दयावीर, दानवीर, क्षमावीर, धर्मवीर एवं सीता, सावित्री, अनसूया, दमयन्ती आदि महासतियोंके चरित्रोंका स्मरण करना।

नियमोंका रहस्य—

रजस्वला-अवस्थामें ऋतुमती स्त्रीके लिये विहित एकान्तवास, ब्रह्मचर्य-पालन, अंजननिषेध, उसके साथ भाषण, सह-शयन, सह-आसन तथा उसके स्पर्श आदिके निषेधका रहस्य शतपथब्राह्मणकी एक आख्यायिकामें बताया गया है। वहाँ कथन है कि एक बार मन और वाणी दोनों 'अहं भद्रं' (मैं श्रेष्ठ हूँ, मैं श्रेष्ठ हूँ)-के लिये विवाद करने लगे। इनमें मन बोला कि 'हे वाक्! मैं तुमसे श्रेष्ठ हूँ; कारण कि जो मैं जानता हूँ, उसे ही तुम बोलती हो। कनिष्ठ ही श्रेष्ठका अनुगमन करता है।

इसे सुनकर वाणी बोली कि 'हे मन! मैं तुमसे श्रेयसी हूँ; क्योंकि जो तुम जानते हो, उसे मैं अपने सामर्थ्यसे प्रकट करती हूँ।' परस्परमें निर्णय न हो सकनेके कारण वे दोनों प्रजापतिके पास गये। प्रजापति बोले कि 'मन और वाणीमें मन ही श्रेष्ठ है, कारण कि वाणी मनका ही अनुगमन करती हुई उसके पीछे चलती है। कनिष्ठ ही श्रेष्ठका अनुगमन करता हुआ उसके पीछे चलता है।' प्रजापतिके इस निर्णयसे वाणीका गर्भ (वीर्य) गल गया। गतवीर्या वाणीने प्रजापतिसे कहा कि 'मैं आपके लिये हव्यका वहन नहीं करूँगी, कारण कि आपने मेरी अपेक्षा मनको श्रेष्ठ घोषित किया है।' इसीलिये जो कुछ भी कार्य यज्ञमें प्रजापतिके लिये किया जाता है, वह उपांशु (मौन) होकर किया जाता है, '**तस्मात् यत् प्राजापत्यं क्रियते उपांशु एव क्रियते।**' वाणी प्रजापतिके लिये हव्य-वहन नहीं करती है।

उस वाणीके वीर्य (गर्भ)-को देवोंने चर्ममें अथवा कुम्भीपात्रमें धारण किया। उस वाणीके वीर्यके विषयमें परस्पर देवगण पूछते थे कि '**अत्रैव तत्**'—यहाँ ही वह है? अतः '**अत्रैव तत्**' इस निर्वचनसे उस वाग्देवताके वीर्य (रज)-का नाम अत्रि हो गया। इस अत्रिप्राणरूपी

रजके सम्बन्धसे ही रजस्वला नारीको वैदिक भाषामें '**आत्रेयी**' कहा जाता है। आत्रेयीका अर्थ है कि 'जिसमें अत्रिप्राण (रज)-का प्राकट्य हो गया हो।' इस आत्रेयी (रजस्वला)-का स्पर्श, उसके साथ सह-आसन, सह-शयन, सह-भाषण, उसका निरीक्षण आदि कार्य निषिद्ध हैं, कारण कि इनके सम्पर्कसे वह मानव एनस्वी (मलिन) हो जाता है। अर्थात् अत्रिप्राणकी मलिनताका प्रभाव उन पदार्थों और मानवोंमें भी संक्रान्त हो जाता है, जो आत्रेयी (रजस्वला)-के सम्पर्कमें आते हैं।

अतः आत्रेयी (रजस्वला) अस्पृश्या, असम्भाष्या और अनधिगम्या है। यह रज अनेक दोषोंका वहन करता है। अतः 'मलीमस' है। इस मलीमस प्राणके सम्बन्धसे रजस्वलाको तैत्तिरीय शाखामें 'मलवद्वासा' कहा गया है। इसमें मालिन्य तीन दिनतक रहता है। यही विशुद्ध अत्रिप्राण प्रजोत्पत्तिका भी कारण है। अतः रजस्वलाभावके अनन्तर ही स्त्री-समागमको वैध माना गया है। जिस योषा (स्त्री)-के रजमें इस वाणीके गर्भरूप अत्रिप्राणका विकास नहीं होता, वह स्त्री प्रजनन-कर्ममें असमर्थ होनेसे 'वन्ध्या' कही जाती है।

स्नानादि-परित्यागका रहस्य—

तैत्तिरीय शाखामें रजस्वला स्त्रीके लिये निषिद्ध स्नान, दन्तधावन, नख-निकृन्तन आदिके रहस्योंका निर्देश ऋषिने छोटे-छोटे वाक्योंमें सरल रीतिसे बताया है, जिसका भावार्थ इस प्रकार है—विश्वरूपके वधसे उत्पन्न ब्रह्महत्याके तृतीय अंशको स्त्रियोंने ग्रहण किया। इससे स्त्रियाँ 'मलवद्वासा' हो गयीं। अर्थात् रजस्वला हो गयीं। दोषवान् रजके कारण स्त्रीको मलवत्-शरीरा कहा गया है। मलवद्वासा (रजस्वला)-में विद्यमान दोषोंका संक्रमण उसके साथ व्यवहार करनेवालोंमें भी हो जाता है। अतः उसके साथ सम्भाषण, सहवास,

उसके स्पर्शका भोजन आदि सब व्यवहार निषिद्ध हैं। रजस्वला-अवस्थामें तैल-मर्दन आदि क्रियाओंका अनिष्ट परिणाम सन्ततिपर होता है। अतः ये क्रियाएँ भी त्याज्य हैं।

जिस रजस्वलासे सहवास किया जाता है, उससे उत्पन्न सन्तान पापात्मा होती है। जो रजस्वला स्नान करती है, उसकी सन्तति जलमग्न होकर मर जाती है। जो रजस्वला तैलमर्दन करती है, उसकी सन्तति चर्मविकारोंसे ग्रस्त रहती है। जो रजस्वला भूमिपर लेखन करती है, उसकी सन्तति खल्वाट (गंजी) होती है, अथवा अपस्मार रोगसे युक्त हो जाती है। जो रजस्वला नेत्रोंमें अंजन लगाती है, उसका पुत्र अथवा पुत्री काना या कानी होती है। जो रजस्वला दन्तधावन करती है, उसकी सन्तति काले दाँतोंवाली होती है। जो रजस्वला जीवहिंसा करती है, उसका पुत्र नपुंसक होता है। जो रजस्वला रस्सी बँटती है, उसका पुत्र दूसरोंको फँसानेवाला होता है अथवा स्वयं फाँस डालकर मर जाता है। जो रजस्वला पर्णमय पात्रसे जल पीती है, उसका पुत्र उन्मत्त (पागल) होता है। जो रजस्वला छोटे पात्रसे जल पीती है, उसकी सन्तति छोटे कदकी होती है। अतः तीन रात्रियोंतक उक्त व्रतोंका पालन सुलक्षण सन्तान उत्पन्न करने और उसकी रक्षा तथा सुसंस्कारोंके लिये आवश्यक है।*

---

* (१) तृतीयं ब्रह्महत्यायै प्रत्यगृह्णन् सा मलवद्वासा अभवत्। तस्मात् मलवद्वाससा न संवदेत्। न सहासीत। नास्या अन्नमद्यात्। ....खल्वाहुरभ्यञ्जनं वाव स्त्रिया अन्नम् अभ्यञ्जनमेव न प्रतिगृह्यम्। काममन्यदिति। (२) यां मलवद्वाससं सम्भवन्ति, यस्ततो जायते सोऽभिशस्तः। यामरण्ये तस्यै स्तेनः। यां पराचीं तस्यै ह्रीतमुखी। अप्रगल्भो वा। या स्नाति तस्या अप्सु मारुकः या अभ्यङ्क्ते तस्यै दुश्चर्मा। या प्रलिखते तस्यै खलतिः, अपमारी वा। या अङ्क्ते तस्यै काणः। या दन्तो धावते तस्यै श्यावदन्। या नखानि निकृन्तते तस्यै कुनखी। या कृणत्ति तस्यै क्लीबः। या रज्जुं सृजति तस्या उद्बन्धूकः। या पर्णेन पिबति तस्या उन्मादुकः। या खर्वेण पिबति तस्यै खर्वः। तिस्रो रात्रीर्व्रतं चरेत्। अञ्जलिना वा पिबेत्। अखर्वेण वा पात्रेण। प्रजायै गोपीथाय। (तै०का० २ प्र० ५ अ० १)

आयुर्वेदकी दृष्टिसे—

भारतीय आर्योंद्वारा आर्तवका परीक्षण करके उसके विषयमें आयुर्वेद और धर्मशास्त्र आदि शास्त्रोंमें इन परिणामोंका उल्लेख किया गया है, इनमें आयुर्वेदका यह निर्णय है—

रसादेव स्त्रिया रक्तं रजस्संज्ञं प्रवर्तते।

× × ×

आर्तव शोणितं त्वाग्नेयं अग्निषोमीयत्वाद् गर्भस्य।

(सुश्रुतसंहिता सूत्र० १४। ६-७)

अर्थात् सात धातुओंमें परिगणित रक्तकी अपेक्षा आर्तव रक्त विभिन्न है, कारण कि सामान्य रक्त 'सौम्य' है और आर्तव रक्त 'आग्नेय' है, इसलिये यह आठवीं धातु है। पुरुषमें सात ही धातुएँ होती हैं, किंतु स्त्रीमें यह आर्तवरूपी रक्त आठवीं धातु है। सुश्रुतसंहितामें रजस्वलाके लिये निम्न आदेश दिये गये हैं—

अष्टांग मैथुनसे रहित ब्रह्मचारिणी स्त्रीको चाहिये कि ऋतुकालके प्रथम दिनसे ही दिनमें सोना, आँखोंमें अंजन लगाना, रोना, स्नान, अनुलेपन (चन्दन आदिका शरीरपर लगाना), अभ्यंग, नखोंका काटना, दौड़ना, जोरसे हँसना, बहुत बोलना, ऊँचे शब्दोंका सुनना, अवलेखन (कंघीसे सिर साफ करना), वायुके सीधे झोंकोंके आघातको सहना और अत्यधिक परिश्रम करना छोड़ देना चाहिये, क्योंकि दिनमें सोनेसे शिशु निद्रालु होता है, अंजन लगानेसे अन्धा, रोनेसे विकृत दृष्टिवाला, स्नान और अनुलेपनसे दु:खशील, तैलकी मालिशसे कुष्ठी, नखोंके काटनेसे दूषित नखवाला, दौड़नेसे चंचल, अत्यधिक हँसनेसे श्यावदन्तक, श्यामवर्णके ओठ, तालु एवं जिह्वावाला, बहुत बोलनेसे प्रलापी (बकवादी), ऊँचे शब्द सुननेसे बहरा, सिर खुजानेसे गंजा, तीव्र वायुके सेवन और अत्यधिक परिश्रम करनेसे गर्भ

उन्मत्त (पागल) होता है, इसलिये इन बातोंका त्याग करना चाहिये।

तीन दिनतक कुशाको बिछाकर उसके ऊपर सोनेवाली; हाथ, मिट्टीके पात्र अथवा पत्तेपर हविष्य—(घीमिश्रित शालिधान्य या दूधमें संस्कृत गेहूँ आदि) अन्नका भोजन करनेवाली स्त्री चौथे दिन स्नान करके शुद्ध होकर उत्तम वस्त्र तथा सुन्दर आभूषण धारण करके मांगलिक पाठ करनेके पश्चात् पतिका दर्शन करे।*

धर्मशास्त्रकी दृष्टिसे—

धर्मशास्त्रमें भगवान् व्यासका ऋतुमती स्त्रीके विषयमें आदेश है कि—

स्त्रियः पवित्रमतुलं नैता दुष्यन्ति कर्हिचित्।
मासि मासि रजस्तासां दुष्कृतान्यपकर्षति॥

अर्थात् स्त्रियाँ पवित्रतामें अनुपम हैं, कारण कि इनके शरीर, मन और बुद्धिमें स्थित विष आदि दोषोंको हर महीने रज (अत्रिप्राण) शरीरसे पृथक् करता रहता है। स्त्रियोंका भी यह कर्तव्य है कि इन दोषोंका संक्रमण अन्य वस्तुओंमें न हो, इसलिये उन्हें उन नियमोंसे बद्ध रहना चाहिये। पुनः व्यासजी कहते हैं—

रजोदर्शनतो दोषात् सर्वमेव परित्यजेत्।
सर्वैरलक्षिता शीघ्रं लज्जितान्तर्गृहे वसेत्॥
एकाम्बरावृता दीना स्नानालङ्कारवर्जिता।
मौनिन्यधोमुखी चक्षुःपाणिपद्भिरचञ्चला॥

---

* ऋतौ प्रथमदिवसात् प्रभृति ब्रह्मचारिणी दिवास्वप्नाञ्जनाश्रुपातस्नानानुलेपनाभ्यङ्ग-नखच्छेदनप्रधावनहसनकथनातिशब्दश्रवणावलेखनानिलायासान् परिहरेत्। किं कारणम्? दिवा स्वपन्त्याः स्वापशीलः अञ्जनादन्धः, रोदनाद्विकृतदृष्टिः, स्नानानुलेपनाद्दुःखशीलः, तैलाभ्यङ्गात् कुष्ठी, नखापकर्तनात् कुनखी, प्रधावनाच्चञ्चलः, हसनाच्छ्यावदन्तौष्ठ-तालुजिह्वः, प्रलापी चातिकथनात्, अतिशब्दश्रवणाद्बधिरः, अवलेखनात् खलतिः, मारुतायाससेवनादुन्मत्तो गर्भो भवतीत्येवमेतान् परिहरेत्। दर्भसंस्तरशायिनीं करतलशराव-पर्णान्यतमभोजिनीं हविष्यं त्र्यहं च भर्तुः संरक्षेत्। ततः शुद्धस्नातां चतुर्थेऽहन्यहतवासः समलङ्कृतां कृतमङ्गलस्वस्तिवाचनां भर्तारं दर्शयेत्। (सुश्रुत० शारीर० २। २५)

अश्नीयात्केवलं भक्तं नक्तं मृन्मयभाजने।
स्वपेद् भूमावप्रमत्ता क्षपेदेवमहस्त्रयम्॥

(व्याससमृति २। ३७—३९)

अर्थात् ऋतुमती स्त्री दूसरे पदार्थोंमें रजोदोषोंके संक्रमणके भयसे पाक आदि सब कार्योंसे निवृत्त हो जाय, किसीके दृष्टिपथमें न आये, घरके अन्दर ही रहे, एकवस्त्र पहने, दीन होकर रहे, स्नान, अलंकारोंका परित्याग कर दे, मौन धारणकर दृष्टि नीची रखे, हाथ-पैर और नेत्रोंकी चंचलताका परित्याग करे, रात्रिके समयमें एक अन्नका मिट्टीके पात्रमें भोजन करे, अप्रमत्त हो भूमिपर शयन करे—इस प्रकार सावधानीपूर्वक तीन रात्रियाँ व्यतीत करे। कारण कि इन क्रियाओंके द्वारा रजोगत दोषोंका संक्रमण अन्यत्र हो जाता है। चौथे दिन प्रातःकाल वस्त्रसहित स्नान करके शुद्ध होकर सर्वप्रथम पतिका दर्शन करे।

विष्णुधर्मोत्तरपुराणमें रजस्वलाके लिये निम्नलिखित नियमोंका प्रतिपादन है—

आहारं गोरसानां च पुष्पालङ्कारधारणम्।
अग्निसंस्पर्शनं चैव वर्जयेच्च दिनत्रयम्॥
अश्नीयात् केवलं भक्तं नक्तं मृणमयभाजने।
स्वपेद् भूमावप्रमत्ता क्षपेदेवमहस्त्रयम्॥
स्नायीत च त्रिरात्रान्ते सचैलमुदिते रवौ।
क्षामालंकृतमाप्नोति पुत्रं पूजितलक्षणम्॥

इन श्लोकोंमें भी पूर्वके समान बात कही गयी है कि रजस्वला स्त्री तीन दिनतक गोदुग्ध आदि पुष्टिकारक पदार्थोंका भोजन न करे, पुष्प, अलंकार आदि धारण न करे। अग्निका स्पर्श न करे और चौथे दिन सचैल स्नानकर वह शुद्ध होती है। इस प्रकार नियमोंके परिपालनसे क्षीणकाय स्त्री सुलक्षण पुत्र प्राप्त करती है।

विशेष बात—

ऋषियोंके मतसे रजस्वलाके नियमोंपर विशेष ध्यान देना आवश्यक है। कारण कि इन दिनोंमें जितना संयम, लघु आहार तथा विलासिताका त्याग रहेगा, उतना ही रस-संचार कम होगा। इसलिये ऋतुमती स्त्रीका कर्तव्य है कि तीन दिनतक केवल एक बार भोजन करे, भूमिशय्यापर सोये, संयमसे रहे, घृत-दुग्ध-दही आदि गोरसोंका सेवन न करे। पुष्पमाला, सुवर्ण, रत्न आदिके आभूषणोंको धारण न करे; कारण कि ये सब पदार्थ रजशक्तिके उद्दीपक और विशेष रक्तसंचारके कारण हैं। ऐसा करनेसे स्त्रीशोणितकी शक्ति निर्बल रहेगी, जो पुत्र-प्रजननके लिये आवश्यक है।

चतुर्थ दिनमें स्त्रियाँ सूर्योदयके अनन्तर स्नान करके प्रथम पतिका ही अवलोकन करें। इससे पति-सदृश सन्ततिकी प्राप्ति होती है, मघा और मूल नक्षत्रको छोड़कर तिथिविचारसे युग्मतिथियोंमें नियमानुसार संयमशील स्त्रीमें गर्भाधान होनेपर शुभ लक्षणोंसे सम्पन्न पुत्र ही उत्पन्न होता है। इन नियमोंको न पालनेसे कदपत्य, उच्छृंखल लड़के अथवा अधिक कन्याओंकी उत्पत्ति होती है। आजकल अधिक एवं उच्छृंखल पुत्रोंके उत्पन्न होनेमें रजस्वलाके लिये निर्दिष्ट नियमोंका पालन न करना प्रधान कारण है।

विदेशी विद्वानोंकी धारणा—

रजस्वलाके आर्तवके सम्बन्धमें वैदेशिक विद्वानों प्रो० हेवलक इलीज तथा अमेरिकाके प्रो० शीक आदिके अनुसन्धानसे यह प्रमाणित हुआ है कि ऋतुमती स्त्रीके रक्तमें ऐसा प्रबल रजोविष होता है, जिससे उस स्त्रीके उद्यान (बाग)-में घुसनेपर उद्यानके पुष्प, पत्र आदि सब सूख जाते हैं। पुष्पोंके वृक्ष मर जाते हैं, फल सड़ जाते हैं। इतनातक कि वृक्षके कीट आदि भी गिर पड़ते हैं या भाग जाते हैं। कभी-कभी

मर भी जाते हैं। शीकके मतानुसार रजोविष ऐसी वस्तु है, जिसे शरीरसे बाहर निकल ही जाना चाहिये।

इस विषकी प्रबलता प्रथम दिन प्रारम्भ होकर द्वितीय दिन बहुत ही बढ़ जाती है तृतीय दिन घट जाती है और चतुर्थ दिन कुछ भी नहीं रहती।

रजस्वला स्त्रीके साथ सहवासका निषेध—

मनुस्मृतिमें बताया गया है कि कामके वेगसे अत्यन्त उद्विग्न होनेपर भी रजस्वला स्त्रीके साथ कथमपि सहवास नहीं करना चाहिये। इतना ही नहीं, उसके साथ एक आसनपर न तो बैठना ही चाहिये और न साथमें शयन करना चाहिये। रजोधर्मवाली स्त्रीके साथ सहवास करनेसे पुरुषकी बुद्धि, तेज, बल, नेत्र (देखनेकी शक्ति) और आयु क्षीण हो जाती है—

नोपगच्छेत्प्रमत्तोऽपि स्त्रियमार्तवदर्शने।
समानशयने चैव न शयीत तया सह॥
रजसाभिप्लुतां नारीं नरस्य ह्युपगच्छतः॥
प्रज्ञा तेजो बलं चक्षुरायुश्चैव प्रहीयते॥

(मनु० ४। ४०-४१)

आचार्य सुश्रुतजीने विशेष बात यह भी बतायी है कि आयु, तेजके हानिके साथ ही रजस्वलागमन करनेवाला पुरुष अपने धर्मसे भी च्युत हो जाता है—

रजस्वलां प्राप्तवतो नरस्यानियतात्मनः॥
दृष्ट्यायुस्तेजसां हानिरधर्मश्च ततो भवेत्।

(सुश्रुतसं० चिकित्सा० २४। १२१-१२२)

रजस्वला स्त्रीके साथ सहवास करनेसे ब्रह्महत्या लगती है और वह नरकोंमें जाता है—

रजस्वलासु नारीषु यो वै मैथुनमाचरेत्।
तमेषा यास्यति क्षिप्रं व्येतु वो मानुषो ज्वरः॥

(महा० शान्ति० २८२। ४६)

रजस्वला स्त्रीगमनमेतन्नरककारणम्।

(ब्रह्मवैवर्तपु० ब्रह्म० २७। ४०)

रात्रिमें रजोदर्शन, जन्म तथा मरण होनेपर अशौचकालकी व्यवस्था—

रात्रिमें जन्म, मरण या रजोदर्शन होनेपर अशौच-दिनके ग्रहणकी गणना कबसे होगी, इस सम्बन्धमें तीन भिन्न-भिन्न वचन प्राप्त होते हैं। अतः देशाचारके अनुसार इन वचनोंकी व्यवस्था समझनी चाहिये।

प्रथम मतके अनुसार—

रात्रिके तीन भाग करके दो भाग अर्थात् रात्रि दो बजेतक पूर्व दिनसे तथा इसके बाद अगले दिनसे अशौच मानना चाहिये—

रात्रिं त्रिभागां कुर्यात् तु द्वौ भागौ पूर्व एव तु।
उत्तरांशः प्रभातेन युज्यते ऋतुसूतके॥

(निर्णयसिन्धुटीकामें कश्यपका वचन)

दूसरे मतके अनुसार—

रात्रिमें अर्थात् सूर्योदयसे पूर्व जन्म, मृत्यु अथवा रजोदर्शन होनेपर रात्रिके पूर्व दिनको ही प्रथम दिन मानकर अशौच मानना चाहिये—

उदिते तु यदा सूर्ये नारीणां दृश्यते रजः।
जननं वा विपत्तिर्वा यस्याहस्तस्य शर्वरी॥
अर्धरात्रावधिः कालः सूतकादौ विधीयते।
रात्रावेव समुत्पन्ने मृते रजसि सूतके॥
पूर्वमेव दिनं ग्राह्यं यावन्नोदयते रविः।

(निर्णयसिन्धुटीकामें कश्यपका वचन)

तीसरे मतके अनुसार—

आधी राततकका समय पूर्वदिनमें ग्रहीत होगा तथा आधीरातके बाद अगले दिनसे अशौचकी गणना होगी—

'अर्धरात्रावधिः कालः सूतकादौ विधीयते।'

(निर्णयसिन्धुटीकामें कश्यपका वचन)

रजस्वलाको स्पर्श करनेपर शुद्धिकी व्यवस्था—

रजस्वला स्त्री प्रथम तीन रात्रियोंमें अस्पृश्य होती है, अतः उसका स्पर्श वर्जित है। कदाचित् स्पर्श हो जाता है तो स्नान करनेसे व्यक्तिकी शुद्धि होती है और यदि रजस्वलासे स्पृष्ट (छुए गये) व्यक्तिका स्पर्श हो जाता है तो **'आपो हि ष्ठा०'** इन मन्त्रोंसे मार्जन-स्नान तथा एक बार मनमें गायत्री मन्त्रका जप करने शुद्धि होती है—

उदक्याशुचिभिः स्नायात्संस्पृष्टस्तैरुपस्पृशेत्।
अब्लिङ्गानि जपेच्चैव गायत्रीं मनसा सकृत्॥

(याज्ञवल्क्यस्मृति प्रायश्चित्ताध्याय १। ३०)

शुद्धिका यही विधान मनुस्मृतिमें भी दिया गया है—

दिवाकीर्तिमुदक्यां च पतितं सूतिकां तथा।
शवं तत्स्पृष्टिनं चैव स्पृष्ट्वा स्नानेन शुद्ध्यति॥

(मनु० ५। ८५)

अर्थात् चाण्डाल, रजस्वला स्त्री, पतित, सूतिका, शव तथा शवका स्पर्श करनेवालोंका स्पर्श करनेपर स्नानमात्रसे शुद्धि होती है।

पद्मपुराणमें बताया गया है कि पतित, कोढ़ी, चाण्डाल, गोभक्षी, कुत्ता, रजस्वला स्त्री और क्रूर शिकारीका स्पर्श हो जानेपर स्नान करना चाहिये—

पतितं कुष्ठसंयुक्तं चाण्डालं च गवाशिनम्।
श्वानं रजस्वलां भिल्लं स्पृष्ट्वा स्नानमाचरेत्॥

(पद्मपुराण सृष्टि० ५०। ३२)

रजस्वलाकी शुद्धिका विचार—

देवराज इन्द्रको लगी ब्रह्महत्याका अंश प्रत्येक मासमें स्त्रियोंमें रजस्त्रावके रूपमें व्यक्त होता है। इसी कारण रजस्वला स्त्री इन दिनों अपवित्र और अस्पृश्य मानी जाती है, किंतु स्त्रियोंके स्वास्थ्य तथा गर्भधारण-योग्यताकी दृष्टिसे प्रत्येक मासमें नियत समयपर रजोधर्म होना आवश्यक है। यह रजोधर्मकी प्रवृत्ति प्रायः बारह वर्षकी आयुसे प्रारम्भ होती है और वृद्धावस्थाके कारण शरीरका परिपाक होनेपर पचास वर्षकी आयुमें स्वाभाविक रूपसे समाप्त हो जाती है— **'तद्वर्षात् द्वादशात् काले वर्तमानमसृक् पुनः। जरापक्वशरीराणां याति पञ्चाशतः क्षयम्॥'** (सुश्रुतसंहिता शारीर० ३। ११) रजोधर्मके प्रारम्भ न होने और रजके निवृत्त हो जानेपर गर्भधारण करनेकी योग्यता नहीं रहती। अतः स्त्रियोंके लिये यह अति महत्त्वका है। नियत समयपर मासिक धर्म न होनेपर स्त्रियाँ अनेक रोगोंसे ग्रस्त हो जाती हैं।

रजोदर्शनसे लेकर तीन रात्रियों (रात-दिन)-तक स्त्री अस्पृश्य रहती है। ऋतुकालके प्रथम दिन अर्थात् जिस दिन रजःस्त्राव प्रारम्भ होता है स्त्री चाण्डाली कहलाती है, दूसरे दिन ब्रह्मघातिनी और तीसरे दिन रजकी कहलाती है। चौथे दिन स्नानके अनन्तर वह पतिके लिये शुद्ध होती है, देवकार्य तथा पितृकार्यके लिये तो पाँचवें दिन ही शुद्ध होती है—

प्रथमेऽहनि चाण्डाली द्वितीये ब्रह्मघातिनी।
तृतीये रजकी प्रोक्ता चतुर्थेऽहनि शुद्ध्यति॥

(पाराशरस्मृति ७। २०, अत्रिस्मृति ५। ४९, आंगिरसस्मृति ३८, आपस्तम्बस्मृति ७। ४)

शुद्धा भर्तुश्चतुर्थेऽह्नि स्नानेन स्त्री रजस्वला।
दैवे कर्मणि पित्र्ये च पञ्चमे शुद्धिमाप्नुयात्॥

(शंखस्मृति १६। १७, अग्निपु०, ब्रह्मवैवर्तपु० गणपति०, स्कन्दपु० प्रभास० में यही बात आयी है।)

गर्भस्त्राव, गर्भपात तथा प्रसव होनेपर अशौचकी प्रवृत्ति एवं शुद्धिकी व्यवस्था—

(१) प्रथम, द्वितीय, तृतीय और चतुर्थ मासमें गर्भिणी स्त्रीका गर्भ नष्ट हो जाय तो उसे शास्त्रोंमें गर्भस्त्राव (Abortion) कहा गया है और उसमें पहलेसे तीसरे मासतक गर्भस्त्राव हो तो गर्भिणीको त्रिरात्र और चौथे मासमें गर्भस्त्राव हो तो चार अहोरात्रका अशौच होता है। पिता आदिकी शुद्धि स्नानमात्रसे हो जाती है।

(२) पाँचवें और छठे मासमें गर्भके गिरनेको गर्भपात कहते हैं, उसमें पाँचवें मासमें गर्भपात हो तो पाँच दिनका तथा छठे मासमें पात हो तो छः दिनका अशौच गर्भिणी स्त्रीको होता है। पिता आदि सपिण्डोंको त्रिरात्र जननाशौच होता है, मरणाशौच नहीं होता।

(३) छठे माससे आगे अर्थात् सातवें माससे आगेके गर्भपात अथवा प्रसूतिको प्रसव कहते हैं। इसमें माता-पिता आदि सपिण्डोंको पूरे दस दिनका जननाशौच लगता है।

(४) यदि बालक मरा हुआ पैदा हो तो जन्मके सदृश ही अशौच होता है।

इन उपर्युक्त व्यवस्थाओंमें निम्न वचन प्रमाण हैं—

आचतुर्थात्ततो मासात् प्रस्त्रवेद्गर्भविच्युतिः।
ततः स्थिरशरीरस्य पातः पञ्चमषष्ठयोः॥

(सुश्रुतसंहिता निदान० ९। १०)

आचतुर्थाद्भवेत् स्त्रावः पातः पञ्चमषष्ठयोः।
अत ऊर्ध्वं प्रसूतिः स्याद् दशाहं सूतकं भवेत्॥

(निर्णयसिन्धुमें मरीचिका वचन)

यदि गर्भो विपद्येत स्त्रवते चापि योषितः।
यावन्मासस्थितो गर्भो दिनं तावत्तु सूतिकाम्॥

(महर्षि पराशर)

स्त्रावे मातुस्त्रिरात्रं स्यात् सपिण्डाशौचवर्जनम्।
पाते मातुर्यथामासं सपिण्डानां दिनत्रयम्॥

(निर्णयसिन्धु)

रात्रिभिर्मासतुल्याभिर्गर्भस्त्रावे विशुद्ध्यति।

(मनुस्मृति ५। ६६)

गर्भस्त्रावे मासतुल्या निशाः शुद्धेस्तु कारणम्।

(याज्ञ०स्मृ०प्राय० १। २०)

शुद्धिमयूख तथा त्रिंशच्छ्लोकी आदि ग्रन्थोंमें भी यही व्यवस्था दी गयी है।

रजस्वला, गर्भिणी तथा सूतिकाकी मृत्युपर दाहसंस्कारकी व्यवस्था—

श्राद्धकल्पलता ग्रन्थमें बताया गया है कि रजस्वला स्त्रीकी मृत्यु होनेपर पंचगव्यसे स्नान कराकर दूसरा वस्त्र पहनाकर दाहसंस्कार करना चाहिये। दाहसे पूर्व प्रायश्चित्त करनेका विधान है, किंतु उस समय प्रायश्चित्त असंगत होनेके कारण केवल प्रायश्चित्तका प्रतिज्ञा-संकल्प करके दाह करना चाहिये और अशौचके अन्तमें प्रायश्चित्त कर्म करनेकी विधि है। रजोदर्शनके तीन रातपर्यन्त ही रजस्वलाके मरनेपर प्रायश्चित्त करना चाहिये। यदि प्रायश्चित्तमें असमर्थ हो तो गोदानका संकल्प करके तब संस्कार करना चाहिये। चौथे दिनसे प्रायश्चित्तकी आवश्यकता नहीं रहती।

शुद्धिभास्कर ग्रन्थमें बताया गया है कि गर्भिणी स्त्रीके मरनेपर गर्भको बाहर निकालकर यथाविधि दाहसंस्कार करना चाहिये। यदि गर्भ मरा हुआ है तो घीसे गर्भको भिगोकर गाढ़ देना चाहिये और यदि जीवित हो तो उसकी दूध आदिके द्वारा पोषणकी व्यवस्था करनी चाहिये।

श्राद्धकल्पलता ग्रन्थमें सूतिकाके मरनेपर भी दाहकी व्यवस्था देते

हुए बताया गया है कि प्रसवदिनसे एक महीनेतक सूतिकाके मरनेपर प्रायश्चित्तका संकल्प करनेके अनन्तर ही दाहसंस्कार करना चाहिये। यदि प्रायश्चित्तमें समर्थ न हो तो गोदानका संकल्प करके दाह करना चाहिये। प्रायश्चित्त आदि कर्म अशौच-निवृत्तिके अनन्तर ही करने चाहिये।

गर्भावस्थामें जीवकी प्रतिज्ञा—

गर्भावस्थामें मातृकुक्षिमें पड़ा हुआ जीव अनेक कष्टोंको भोगता है, किंतु उसे अपने पूर्वजन्मोंकी स्मृति रहती है और अपने शुभाशुभ कर्मोंका सम्पूर्ण ज्ञान रहता है। गर्भवासके कष्टोंको भोगता हुआ वह भगवान्‌से बार-बार प्रार्थना करता है कि हे प्रभो! यदि मुझे यहाँसे मुक्ति मिली तो मैं आपके चरणोंकी शरण ग्रहण करूँगा, वह कहता है—

भगवन्! इस अत्यन्त दुःखसे भरे हुए गर्भाशयमें यद्यपि मैं बड़े कष्टसे रह रहा हूँ, तो भी इससे बाहर निकलकर संसारमय अन्धकूपमें गिरनेकी मुझे बिलकुल इच्छा नहीं है, क्योंकि उसमें जानेवाले जीवको आपकी माया घेर लेती है, जिसके कारण उसकी शरीरमें अहंबुद्धि हो जाती है और उसके परिणाममें उसे फिर इस संसारचक्रमें ही पड़ना होता है। अतः मैं व्याकुलताको छोड़कर हृदयमें श्रीविष्णुभगवान्‌के चरणोंको स्थापितकर अपनी बुद्धिकी सहायतासे ही अपनेको बहुत शीघ्र इस संसाररूप समुद्रके पार लगा दूँगा, जिससे मुझे अनेक प्रकारके दोषोंसे युक्त यह संसार-दुःख फिर न प्राप्त हो—

तस्मादहं विगतविक्लव उद्धरिष्य आत्मानमाशुतमसः सुहृदात्मनैव।
भूयो यथा व्यसनमेतदनेकरन्ध्रं मा मे भविष्यदुपसादितविष्णुपादः॥

(श्रीमद्भा० ३। ३१। २१)

गरुडपुराण-सारोद्धारमें गर्भावस्थामें जीव जो प्रतिज्ञा करता है, उसे इस प्रकार बताया गया है—हे नाथ! आपकी मायासे मोहित होकर मैं देहमें अहंभाव तथा पुत्र और पत्नी आदिमें ममत्वभावके अभिमानसे

जन्म-मरणके चक्करमें फँसा हूँ। मैंने अपने परिजनोंके उद्देश्यसे शुभ और अशुभ कर्म किये, किंतु अब मैं उन कर्मोंके कारण अकेला जल रहा हूँ। उन कर्मोंके फल भोगनेवाले पुत्र-कलत्र आदि अलग हो गये। यदि इस गर्भसे निकलकर मैं बाहर जाऊँ तो फिर आपके चरणोंका स्मरण करूँगा और ऐसा उपाय करूँगा, जिससे मुक्ति प्राप्त कर लूँ—

यदि योन्याः प्रमुच्येऽहं तत् स्मरिष्ये पदं तव।
तमुपायं करिष्यामि येन मुक्तिं व्रजाम्यहम्॥

(गरुडपुराण-सारोद्धार ६। १९)

वह फिर कहता है—विष्ठा और मूत्रके कुएँमें गिरा हुआ तथा जठराग्निसे जलता हुआ एवं यहाँसे बाहर निकलनेकी इच्छा करता हुआ मैं कब बाहर निकल पाऊँगा। जिस दीनदयालु परमात्माने मुझे इस प्रकारका विशेष ज्ञान दिया है, मैं उन्हींकी शरण ग्रहण करता हूँ, जिससे मुझे पुनः संसारके चक्करमें न आना पड़े। अथवा मैं माताके गर्भगृहसे कभी भी बाहर जानेकी इच्छा नहीं करता, (क्योंकि) बाहर जानेपर पापकर्मोंसे पुनः मेरी दुर्गति हो जायगी। इसलिये यहाँ बहुत दुःखकी स्थितिमें रहकर भी मैं खेदरहित होकर आपके चरणोंका आश्रय लेकर संसारसे अपना उद्धार कर लूँगा।

कृष्णयजुर्वेदीय गर्भोपनिषद्में बताया गया है कि नौवें महीनेमें गर्भस्थित जीव ज्ञानेन्द्रिय आदि सभी लक्षणोंसे पूर्ण हो जाता है। तब वह पूर्वजन्मका स्मरण करता है। उसके शुभ-अशुभ कर्म भी उसके सामने आ जाते हैं।

तब जीव सोचने लगता है—'मैंने सहस्रों पूर्वजन्मोंको देखा, उनमें नाना प्रकारके भोजन किये, नाना प्रकारके नाना योनियोंके स्तनोंका पान किया। मैं बारंबार उत्पन्न हुआ, मृत्युको प्राप्त हुआ। अपने परिवारवालोंके लिये जो मैंने शुभाशुभ कर्म किये, उनको सोचकर मैं आज यहाँ अकेला दग्ध हो रहा हूँ। उनके भोगोंको भोगनेवाले तो चले गये, मैं

यहाँ दुःखके समुद्रमें पड़ा कोई उपाय नहीं देख रहा हूँ। यदि इस योनिसे मैं छूट जाऊँगा—इस गर्भके बाहर निकल गया तो अशुभ कर्मोंका नाश करनेवाले तथा मुक्तिरूप फलको प्रदान करनेवाले महेश्वरके चरणोंका आश्रय लूँगा। यदि मैं योनिसे छूट जाऊँगा तो अशुभ कर्मोंका नाश करनेवाले और मुक्तिरूप फल प्रदान करनेवाले भगवान् नारायणकी शरण ग्रहण करूँगा। यदि मैं योनिसे छूट जाऊँगा तो अशुभ कर्मोंका नाश करनेवाले और मुक्तिरूप फल प्रदान करनेवाले सांख्य और योगका अभ्यास करूँगा। यदि मैं इस बार योनिसे छूट गया तो मैं ब्रह्मका ध्यान करूँगा।

तदनन्तर वह योनिद्वारको प्राप्त होकर योनिरूप यन्त्रमें दबाया जाकर बड़े कष्टसे जन्म ग्रहण करता है। बाहर निकलते ही वैष्णवी वायु (माया)-के स्पर्शसे वह अपने पिछले जन्म और मृत्युओंको भूल जाता है और शुभाशुभ कर्म भी उसके सामनेसे हट जाते हैं।

उपनयनसंस्कार

यज्ञोपवीतकी निर्माण-विधि—

यज्ञोपवीत उदात्त भावनासम्बन्धी अंशसे व्याप्त एक ऐसा सूत्र है, जो हमारे जीवनको श्रुति-स्मृत्यनुमोदित मार्गपर चलाते हुए उन सम्पूर्ण उत्तरदायित्वों तथा कर्तव्योंका निर्वहन करते रहनेके लिये हमें ईश्वरद्वारा सौंपा गया है। इसीलिये शास्त्रकारोंने प्रत्येक यज्ञोपवीतधारीको यथासम्भव स्वयं सूत कातकर अपने हाथके परिमाणसे इसका निर्माण करनेका विधान निर्धारित किया है।

महर्षि कात्यायनद्वारा प्रतिपादित यज्ञोपवीतनिर्माणकी विधिका संक्षिप्त वर्णन यहाँ प्रस्तुत है।*

महर्षि कात्यायन कहते हैं—अब हम यज्ञोपवीतनिर्माणकी विधि कहते हैं। इसके निर्माणके लिये गाँवसे बाहर किसी तीर्थस्थान (मन्दिर) या गोशालामें जाकर अनध्यायरहित किसी भी दिवसमें संध्यावन्दनादि नित्यकर्म तथा एक सौ आठ या एक हजार आठ बार या यथाशक्ति गायत्रीमन्त्रका जप करके ऐसे सूतसे यज्ञोपवीत तैयार करे, जो स्वयं या किसी ब्राह्मणद्वारा या ब्राह्मणकन्याद्वारा अथवा सधवा ब्राह्मणीद्वारा कातकर तैयार किया गया हो। इस सूतको '**भूः**' का

---

* अथातो यज्ञोपवीतनिर्माणप्रकारं वक्ष्यामः। ग्रामाद्बहिस्तीर्थे गोष्ठे वा गत्वाऽनध्याय-वर्जितपूर्वाह्णे कृतसंध्याष्टोत्तरशतं सहस्रं वा यथाशक्ति गायत्रीं जपित्वा ब्राह्मणेन तत्कन्यया सुभगया धर्मचारिण्या वा कृतं सूत्रमादाय भूरिति प्रथमां षण्णवतीं मिनोति, भुवरिति द्वितीयां स्वरिति तृतीयां मीत्वा, पृथक् पलाशपत्रे संस्थाप्य, आपो हि ष्ठेति तिसृभिः, शं नो देवीत्यनेन सावित्र्या चाभिषिच्य वामहस्ते कृत्वा त्रिः संताड्य व्याहृतिभिस्त्रिवर्णितं कृत्वा, पुनस्ताभिस्त्रिगुणितं कृत्वा पुनस्त्रिवृतं कृत्वा प्रणवेन ग्रन्थिं कृत्वोङ्कारमग्निं नागान् सोमं पितॄन् प्रजापतिं वायुं सूर्यं विश्वान् देवान् नवतन्तुषु क्रमेण विन्यस्य सम्पूजयेत्। देवस्येत्युपवीतमादाय, उद्वयं तमसस्परीत्यादित्याय दर्शयित्वा यज्ञोपवीतमित्यनेन धारयेदित्याह भगवान्कात्यायनः। (कात्यायनपरिशिष्ट)

उच्चारणकर ९६ अंगुल (चौए)–सहित चारों अंगुलियोंके मूलपर लपेटे और उतारकर एक पलाशके पत्तेपर रख दे। अब **'भुवः'** शब्दका उच्चारण करते हुए उसी क्रियाको और **'स्वः'** शब्दका उच्चारण करते हुए तीसरी बार क्रिया दुहराते हुए हाथमें लपेटकर ९६ चौएके परिमाणमें अन्य दो तार तैयारकर पलाशपर रखे। अनन्तर **'आपो हि ष्ठा', 'शं नो देवी' 'तत्सवितुः'** आदि तीन मन्त्रोंसे उन तीन तारोंको जलमें अच्छी तरह भिगोकर बाँये हाथमें लेकर तीन बार जोरसे आघात करे। फिर तीन व्याहृतियोंसे उसे एक बट देकर एकरूप बना ले। अब इन्हीं मन्त्रोंसे उसे त्रिगुणित करे और पुनः बटकर एकरूप बना ले। पुनः इसे त्रिगुणित करके प्रणवसे उसमें ब्रह्मग्रन्थि लगाये।

इसके नौ तन्तुओंमें ओङ्कार, अग्नि, अनन्त, चन्द्र, पितृगण, प्रजापति, वायु, सूर्य और सर्वदेवादि नौ देवताओंका क्रमशः आवाहन और स्थापन करे। **'उद्वयं तमसस्परि०'** मन्त्रद्वारा उस सूत्रको सूर्यके सन्मुख करके **'यज्ञोपवीतम्०'** मन्त्र बोलते हुए धारण कर ले।

यज्ञोपवीतका परिमाण ९६ अंगुल (चौआ) ही क्यों रखा गया है ?—

यज्ञोपवीतके निर्माणके सम्बन्धमें प्रथम प्रश्न यह उपस्थित होता है कि यज्ञोपवीतका परिमाण ९६ अंगुल (चौआ) ही क्यों निर्धारित किया गया? यदि इसका परिमाण कम या अधिक हो जाता है तो उससे क्या हानि होती?

दूसरा प्रश्न यह है कि प्रत्येक वर्णमें हर व्यक्ति एक ही कद और काठीका नहीं होता है। कोई ऊँचे कदका होता है तो कोई नाटा। कुछ स्थूल शरीरवाले होते हैं तो अन्य दुबले–पतले। अतः सभी व्यक्तियोंके लिये एक ही परिमाणका यज्ञोपवीत धारण करनेका नियम क्यों बनाया गया? इस सम्बन्धमें शास्त्रसम्मत नीचे लिखे हेतुओंका अध्ययन करें—

क-यज्ञोपवीत कटितक ही रहे—

महर्षियों और शास्त्रकारोंने इस आधारपर यज्ञोपवीतका परिमाण निर्धारित किया कि धारण करनेपर वह पुरुषके बाँये कन्धेके ऊपरसे आता हुआ नाभिको स्पर्शकर कटितक ही पहुँचे। इससे न तो ऊपर रहे और न ही नीचे। अत्यन्त छोटा होनेपर यज्ञोपवीत आयुका तथा अधिक बड़ा होनेपर तपका विनाशक होता है। इसी तरह इसकी मोटाई सरसोंकी फलीकी तरह होनी चाहिये। अधिक मोटा रहेगा तो वह यशनाशक और पतला होगा तो धनकी हानि होगी—

पृष्ठदेशे च नाभ्याञ्च धृतं यद्विन्दते कटिम्।
तद्धार्यमुपवीतं स्यान्नातिलम्बं न चोच्छ्रितम्॥
आयुर्हरत्यतिह्रस्वमतिदीर्घं तपोहरम्।
यशोहरत्यतिस्थूलमतिसूक्ष्मं धनापहम्॥

इस निर्णयको सामुद्रिकशास्त्रने उचित ठहराया है। उनके अनुसार मनुष्यका कद और स्वास्थ्य कैसा भी हो, मानव-शरीरका आयाम ८४ अंगुलसे १०८ अंगुलतक ही होता है। इसका मध्यमान ९६ अंगुल ही होता है। अतः स्वयंद्वारा अंगुलनिर्मित इस परिमाणवाला यज्ञोपवीत हर स्थितिमें कटितक ही रहेगा न ऊपर और न ही नीचे।

ख-गायत्रीमन्त्रके २४ अक्षरोंके चार गुनेको आधार माना गया—

गायत्री वेदमाता हैं। प्रत्येक मन्त्रका उद्भव इन्हींसे हुआ है, यज्ञोपवीत-निर्माण और उसे अभिमन्त्रित करते समय गायत्रीमन्त्रको प्रधानता दी गयी है। गायत्रीमन्त्रमें चौबीस अक्षर होते हैं। इस संख्याको चारों वेदोंमें व्याप्त गायत्री छन्दके सम्पूर्ण अक्षरोंको मिला दें तो २४×४=९६ अक्षर होते हैं, इसीके आधारपर द्विजबालकको गायत्री

और वेद दोनोंका अधिकार प्राप्त होता है। इसलिये श्रुतिने ९६ अंगुल (चौआ)-वाले यज्ञोपवीतको ही धारण करनेका विधान किया है—

चतुर्वेदेषु गायत्री चतुर्विंशतिकाक्षरी।
तस्माच्चतुर्गुणं कृत्वा ब्रह्मतन्तुमुदीरयेत्॥

(वसिष्ठस्मृति)

ग-वैदिक मन्त्रोंकी संख्याके अनुपातमें—

वर्णाश्रम-व्यवस्थामें ब्रह्मचर्याश्रमके अन्तर्गत द्विजातिबालकको गुरुके सांनिध्यमें उनकी सेवा करते हुए वेदाध्ययनसहित वैदिक कर्म, उपासना आदिकी शिक्षा प्राप्त करनेके अनन्तर उसे गृहस्थाश्रमका अधिकार प्राप्त होता है। चतुर्थाश्रम संन्यास ग्रहण करनेपर वह कर्म और उपासनासे पूर्णतः मुक्त होकर केवल ज्ञानप्राप्तिका अधिकारी रह जाता है। इस स्थितिमें वह शिखा और सूत्र—दोनोंका त्याग कर देता है। वेदकी मर्यादाके अनुसार उपनीत होनेवाले द्विजको वेद और कर्मकाण्डका ही अधिकार बताया गया है। **'लक्षं तु चतुरो वेदा लक्षमेकं तु भारतम्।'** इस आप्त वचनमें वैदिक ऋचाओंकी संख्या एक लाख बतायी गयी है। वेदभाष्यमें पतञ्जलिने भी इसकी पुष्टि की है। इन लक्ष मन्त्रोंमें ८०,००० कर्मकाण्डसे सम्बन्धित ऋचाएँ हैं, १६,००० उपासना-काण्डसम्बन्धी और ४,००० ज्ञानकाण्ड-सम्बन्धी ऋचाएँ हैं। चूँकि यज्ञोपवीतीको कर्मकाण्ड और उपासनाकाण्डका अध्ययन करनेका अधिकार प्राप्त होता है, इस आधारपर ९६,००० ऋचाओंके अधिकारके अनुपातमें उपवीतका परिमाण ९६ चौआ या अंगुल निर्धारित किया गया है।

घ-तिथि, वार, गुण आदिके आधारपर—

मानव-जीवन भाग्यसे प्राप्त होता है। यह जीवन तत्त्वों, गुण, तिथि, वार, नक्षत्र, काल, मास आदि विविध भागोंसे निरन्तर सम्पर्कमें

रहनेके कारण उनसे प्रभावित होता रहता है। अतः जीवनके एक-एक क्षणको प्रभुका अमित वरदान समझनेवाले महर्षियोंने इन भागोंके महत्त्वको समझकर उनका अवलम्बन करके ब्रह्म-प्राप्तिका शाश्वत लक्ष्य मनुष्यके लिये निर्धारित किया। इन सभी पदार्थोंकी संख्याका समन्वित योग किया जाय तो आश्चर्य होगा कि यह भी ९६ का योग बनाता है, यथा—

(अ) मनुष्यके सत्, रज और तमोगुणमय त्रिविध शरीरमें प्रकृति-प्रदत्त पाँच भूत, पाँच कर्मेन्द्रियाँ, पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ, पाँच प्राण और चार अन्तःकरणका योग—२४ तत्त्वोंका समावेश रहता है। तीन ग्रन्थियाँ स्थूल, सूक्ष्म और कारण शरीरवाले मनुष्यके आत्मरूपपर त्रिगुणात्मक आवृतिसे बहत्तर का योग बनाती हैं। इस शरीरके निराकरण एवं भेदनके लिये चौबीस अक्षरात्मक गायत्रीमन्त्रका जप किया जाता है। यही प्रकृतिके तत्त्वोंसे आत्माको मुक्त कराती है। यदि इन सबका योग करें तो परिणाम ७२+२४=९६ आता है। अतः इन तत्त्वों और गायत्रीमन्त्रका प्रभाव दरसाने और मुक्तिके लिये गायत्रीमन्त्र जपते रहनेका संकेत करते रहनेहेतु द्विजको ९६ अंगुलके परिमाणवाले यज्ञोपवीतको धारण करानेका विधान किया गया है।

(ब) इस गूढ तथ्यको इस दृष्टिकोणसे भी समझा जा सकता है। सामवेद छन्दोगपरिशिष्टमें कहा गया है—

तिथिवारञ्च नक्षत्रं तत्त्ववेदगुणान्वितम्।
कालत्रयं च मासाश्च ब्रह्मसूत्रं हि षण्णवम्॥

हमारा शरीर २५ तत्त्वोंसे बना है। इसमें सत्त्व, रज और तम—ये तीन गुण सर्वदा व्याप्त रहते हैं। फलतः २८ संख्यात्मक समुदायवाले शरीरको तिथि, वार, काल, नक्षत्र, मास, वेदादि विविध भागोंमें विभक्त, अनेक संवत्सरपर्यन्त इस संसारमें जीवन धारण करना पड़ता है। यदि

इनका योग करें तो यह भी ९६ ही होता है। देखिये—

गुण—३, तिथि—१५, वार—७, नक्षत्र—२७, तत्त्व—२५, वेद—४, काल—३ और मास—१२, इनका कुल योग ९६ आता है।

यज्ञोपवीतमें तीन सूत्र और वह त्रिवृत् क्यों?—

हिन्दूधर्ममें तीनकी संख्या आध्यात्मिक, आधिदैविक एवं आधिभौतिक—सभी क्षेत्रोंमें विशेष महत्त्व रखती है। ऋक्, यजुः और साम ही तीन प्रमुख वेद हैं, ब्रह्मा, विष्णु और महेश त्रिदेव हैं। तीन काल—भूत, वर्तमान और भविष्य हैं। सत्त्व, रज और तम—तीन गुण हैं। तीन ऋतुएँ—ग्रीष्म, वर्षा और शीत हैं। त्रिलोक—पृथ्वी, अन्तरिक्ष और द्युलोक हैं। इसी त्रिगुणात्मक भावको आधार बनाकर यज्ञोपवीतका त्रिगुणात्मक तन्तुओंसे निर्माण और उसका त्रिवृत्करण किया गया है। तीन सूत्रमें मानवत्व, देवत्व और गुरुत्व भाव निहित है। इन्हींकी प्रेरणा, मार्गदर्शन और शिक्षासे मृत्युलोकसे द्युलोककी ओर ऊर्ध्वगमनके लिये उपासना, ध्यान और सत्कर्मका भाव मानव अपनाता है। यही उसके निर्वाणके मार्गको प्रशस्त करता है। इसी भावनासे तीन तारोंको महाव्याहृति मन्त्रोंसे ऊपरकी ओर उमेठते हुए नौ तन्तुमय सूत्रका निर्माण किया गया है।

नौ तन्तुओंके नौ देवता—

यज्ञोपवीतके नौ तन्तु नौ देवताओंके आवास-स्थान हैं, जहाँ उनका विधिपूर्वक आवाहन, पूजन और प्रतिष्ठापन (यज्ञोपवीत तैयार हो जानेपर) किया जाता है। सामवेदीय छन्दोगपरिशिष्टमें नौ देवताओंके नाम इस तरह बताये गये हैं—

ॐकारोऽग्निश्च नागश्च सोमः पितृप्रजापती।
वायुः सूर्यश्च सर्वश्च तन्तु देवा अमी नव॥
ॐकारः प्रथमे तन्तौ द्वितीयेऽग्निस्तथैव च।
तृतीये नागदैवत्यं चतुर्थे सोम देवता॥

पञ्चमे पितृदैवत्यं षष्ठे चैव प्रजापतिः।
सप्तमे मारुतश्चैव अष्टमे सूर्य एव च॥
सर्वे देवास्तु नवमे इत्येतास्तन्तुदेवताः॥

उपर्युक्त देवताओंकी प्रतिष्ठापनासे मानव अपने हृदयमें तत्तद् देवताओंके विशेष गुणों यथा—ब्रह्मलाभ, तेजस्विता, धैर्य, आह्लादकत्व, स्नेह, प्रजापालन, शुचित्व, प्राणत्व आदि गुणोंको धारण करते हुए अनुभव करता है कि मैंने इन गुणोंसे परिपूर्ण और देवताओंसे अधिष्ठित उपवीतको धारण कर लिया है। अब मैं तेजस्वी हूँ, धृतिमान् हूँ, शुद्ध हूँ। देवताओंकी विद्यमानता और उनके गुणोंको आत्मसात् करनेकी इस अनुभूतिसे मानवके हृदयमें उपजे मल और मानसिक कुवृत्तियोंका परिमार्जन होगा तथा मनसहित समस्त इन्द्रियाँ विपथगामी न होकर सन्मार्गपर चलनेके लिये प्रवृत्त होंगी।

ब्रह्मग्रन्थिकी आवश्यकता—

यज्ञोपवीत-निर्माणकार्यमें नौ तन्तुओंको त्रिगुणात्मककर, तीन सूतमें परिवर्तितकर, उसका त्रिवृत्करण करके उसके मूलोंको जोड़नेमें प्रणवरूपी महामन्त्रका उच्चारण करते हुए ब्रह्मग्रन्थि लगाये जानेका विधान किया गया है। इस ब्रह्मग्रन्थिके साथ यज्ञोपवीत धारण करनेयोग्य बन जाता है।

ब्रह्मग्रन्थिको लगानेका अभिप्राय यह है कि मनुष्य प्रतिक्षण ध्यानमें रखे कि यह समस्त विश्व ब्रह्मसे प्रादुर्भूत हुआ है और इसीमें मानवका कल्याण संनिहित है। यदि मानव ब्रह्मको भुलाकर उसके माया-जालमें फँस जाता है तो वह ब्रह्मतत्त्वको भूलकर काम, क्रोध, लोभ-मोहादि सांसारिक प्रपंचोंमें लिप्त होकर अपने ही पतनका कारण बन सकता है। यज्ञोपवीतके मूलमें प्रणव-मन्त्रके साथ लगायी जानेवाली ग्रन्थि उसे प्रणवके अ+उ+म्—इन तीनों वर्णों, सत्त्व,रज तथा तम—इन तीन गुणों तथा ब्रह्मा, विष्णु और महेशरूपी ब्रह्माण्डनियामक

त्रिविध शक्तियोंके सामीप्यका ध्यान दिलाती रहती है। इसीलिये इसे ब्रह्मग्रन्थि कहा गया है।

समाजमें मनुष्यको ब्रह्मके साथ-साथ अपनी कुल-परम्पराको भी ध्यानमें रखना होता है। अतः ब्रह्मग्रन्थिके ऊपर अपने-अपने कुल, गोत्र, प्रवरादिके भेदसे १, ३ या ५ गाँठ लगाये जानेका शास्त्रीय विधान है। ये ग्रन्थियाँ मनुष्यको अपनी कुल-परम्परासे चली आ रही शास्त्रमर्यादाकी रक्षा करते हुए उन पुण्यात्माओं (पुरखों)-का स्मरण कराती हैं, जिनका वह उत्तराधिकारी है और जिनकी तपश्चर्या और सत्कर्मोंसे उसे उस कुलमें जन्म लेनेका सौभाग्य प्राप्त हुआ। ये प्रक्रिया उन्हींके पदचिह्नोंपर चलनेकी प्रेरणा देती हैं। द्विज सदा याद रखे कि उसमें भी ब्रह्मका अंश है और अन्तमें इसीमें लय होना है।

उपनयन करानेके अधिकारी—

जिस द्विजाति बालकका उपनयन होता है, शास्त्रीय भाषामें उसे 'माणवक' कहा जाता है। उस माणवकका उपनयन-संस्कार करनेका अधिकारी कौन है, इसकी व्यवस्थामें पारस्करगृह्यसूत्र (२।२।१)-के गदाधरभाष्यमें महर्षि वृद्धगर्गके वचनसे बताया गया है कि पिता, पितामह, चाचा, सहोदर भाई, बन्धु-बान्धव तथा गोत्रके लोग उपनयन करानेके अधिकारी होते हैं। इनमें पूर्वके प्राप्त न होनेपर ही उत्तरवर्ती लोगोंको अधिकार है अर्थात् यदि पिता हैं तो पितामह आदिको उपनयन करानेका अधिकार नहीं है। यहाँ यह व्यवस्था ब्राह्मणके लिये है। क्षत्रिय-वैश्य बालकका उपनयन तो पुरोहित (आचार्य)-को ही कराना चाहिये; क्योंकि उन दोनोंको अध्यापनका शास्त्रतः अधिकार नहीं है।*

---

* पिता पितामहो भ्राता ज्ञातयो गोत्रजाग्रजाः। उपायनेऽधिकारी स्यात् पूर्वाभावे परः परः॥ पितेति विप्रपरं न क्षत्रियवैश्ययोः। तयोस्तु पुरोहित एव उपनयनस्य दृष्टार्थत्वात्। तयोस्त्वध्यापनेऽनधिकारात्।

उपनयनका काल (मुहूर्त)—

श्रुतिमें कहा गया है कि वसन्त ऋतुमें ब्राह्मणबालकका, ग्रीष्ममें क्षत्रियबालकका और शरद् ऋतुमें वैश्यबालकका उपनयन करना चाहिये—'**वसन्ते ब्राह्मणमुपनीत ग्रीष्मे राजन्यं शरदि वैश्यम्।**' माघ आदि पाँच महीनोंमें उपनयन शुभ होता है। इसी प्रकार उत्तरायण एवं शुक्लपक्ष शुभ माना गया है।

इन प्रशस्त मासोंकी महिमा तथा उसमें यज्ञोपवीत करनेका विशेष फल बताते हुए कहा गया है कि माघ मासमें व्रतबन्ध करनेपर वह बालक महान् धनी और धन-सम्पत्तिका स्वामी होता है, फाल्गुनमें प्रज्ञासे सम्पन्न तथा अत्यन्त मेधावी (बुद्धिमान्) होता है, चैत्रमें करनेपर वेदज्ञानसे सम्पन्न होता है, वैशाखमें सम्पूर्ण ऐश्वर्योंका भोग करता है, ज्येष्ठ मासमें सर्वश्रेष्ठ विद्वान् तथा आषाढ़में व्रतबन्ध होनेपर वह बालक प्रतिपक्षियोंपर विजय प्राप्त करता है तथा लब्धप्रतिष्ठ महान् पण्डित होता है।[१]

जन्मनक्षत्र, जन्ममास तथा जन्मदिन और ज्येष्ठ मासमें ज्येष्ठ पुत्र और ज्येष्ठ कन्याका उपनयन-विवाहादि मंगलकार्य नहीं करना चाहिये।[२]

उपनयनकालमें बृहस्पतिकी शुद्धि आवश्यक है, किंतु कदाचित् उपनयनके लिये निर्धारित मुख्य काल आठवें वर्षमें यदि बृहस्पतिकी शुद्धि न हो अथवा वह सिंहराशिमें स्थित हो तो मीनके सूर्य—चैत्र मासमें उसका

---

१. माघे मासि महाधनो धनपतिः प्रज्ञायुतः फाल्गुने
मेधावी भवति व्रतोपनयने चैत्रे च वेदान्वितः।
वैशाखे निखिलोपभोगसहितो ज्येष्ठे वरिष्ठो बुध-
स्त्वाषाढे सुमहाविपक्षविजयी ख्यातो महान् पण्डितः॥
(वीरमित्रोदय-संस्कारप्रकाशमें राजमार्तण्डका वचन)

२. न च जन्मधिष्ण्ये न च जन्ममासे न जन्मकालीनदिने विदध्यात्।
ज्येष्ठे न मासि प्रथमस्य सूनोस्तथा सुताया अपि मङ्गलानि॥

उपनयन-संस्कार करना चाहिये। इससे वह कर्म चिरायु प्राप्त करानेवाला तथा मंगलकारी और सौख्य प्रदान करनेवाला होता है।[१]

व्रतबन्धके लिये प्रशस्त तिथियोंके सम्बन्धमें वीरमित्रोदय-संस्कारप्रकाशमें बृहस्पतिजीके वचनसे बताया गया है कि शुक्लपक्षकी द्वितीया, तृतीया, पंचमी, षष्ठी, सप्तमी, दशमी तथा त्रयोदशी तिथियाँ श्रेष्ठ हैं। द्वादशी और एकादशी मध्यम हैं। चन्द्रमाके बलवान् होनेमें कृष्णपक्षमें भी ये तिथियाँ मान्य हैं।

नारदजीने गुरु, शुक्र तथा बुधवारको श्रेष्ठ; सोमवारको अधम तथा सूर्यवारको मध्यम बताया है।

विहित नक्षत्रोंको बताते हुए कहा गया है कि तीनों उत्तराएँ, रोहिणी, हस्त, अनुराधा, धनिष्ठा, चित्रा, मृगशिरा तथा पुनर्वसु—ये व्रतबन्धके लिये प्रशस्त नक्षत्र हैं।[२]

किन्हीं-किन्हीं आचार्यके मतमें पुनर्वसु नक्षत्रका निषेध किया गया है।

---

१. अतीव दुष्टे सुरराजपूज्ये सिंहस्थिते वा द्विजपुङ्गवानाम्।
व्रतस्य बन्धः खलु मासि चैत्रे कृतश्चिरायुः शुभसौख्यदः स्यात्॥

२. त्रिषूत्तरेषु रोहिण्यां हस्ते मैत्रे च वासवे।
त्वाष्ट्रे सौम्यपुनर्वस्वोः प्रशस्तं ह्यौपनायनम्॥ (वीरमित्रोदय-संस्कारप्रकाश)

विवाहसंस्कार

स्नातक एवं ब्रह्मचारीके भेद—

समावर्तन-संस्कारके अनन्तर स्नातक गुरुकी आज्ञासे अपने घरमें आकर पूज्य एवं मान्य होता है। मान्य एवं अर्हताके क्रममें याज्ञवल्क्यस्मृतिमें विद्याको सर्वाधिक मान्यता दी गयी है। स्नातक चूँकि वेदविद्या एवं ब्रह्मज्ञानके तेजसे सम्पन्न रहता है। अतः वह पूज्य होता है, यहाँतक कि वह राजासे भी अधिक मान्य होता है तथा राजाके लिये भी पूज्य होता है—'**मान्यः स्नातश्च भूपतेः**' (याज्ञ०स्मृ० आचा० ११७) '**स्नातको नृपमान् भाक्**' (मनु० २।१३९)। आचार्य पारस्करजीने बताया कि छः लोग विशेष रूपसे अभिनन्दनीय होते हैं—

१-आचार्य,

२-ऋत्विक्,

३-वैवाह्य (वर),

४-राजा,

५-प्रियजन तथा

६-स्नातक।

प्रत्येक संवत्सरमें मधुपर्कके द्वारा इनका पूजन-सम्मान करना चाहिये।

स्नातकके भी तीन भेद कहे गये हैं—

१-विद्यास्नातक,

२-व्रतस्नातक तथा

३-विद्याव्रतस्नातक।

जो मन्त्र-ब्राह्मणात्मक वेदकी एक शाखाका अध्ययन पूर्णकर समावर्तन-संस्कारके बाद घर वापस लौटता है, वह ब्रह्मचारी

विद्यास्नातक, जो ब्रह्मचारी बारह वर्षतक ब्रह्मचर्यव्रत पूर्ण करता है, किंतु वेदका पूर्ण अध्ययन किये बिना समावर्तनसंस्कार कर लेता है, वह व्रतस्नातक और जो वेदशाखा तथा ब्रह्मचर्यव्रतका पूर्ण पालन करके समावर्तन-संस्कार करता है, वह ब्रह्मचारी विद्याव्रतस्नातक कहलाता है।*

ब्रह्मचारी स्नातक यदि आजीवन ब्रह्मचर्यका संकल्प लेकर आचार्यके समीपमें ही रहकर जितेन्द्रिय होकर ब्रह्मचर्यव्रतका पालन करे तो वह नैष्ठिक ब्रह्मचारी कहलाता है और जो ब्रह्मचारी समावर्तन-संस्कारकर घर आकर वेदविधिसे विवाह करता है, वह उपकुर्वाणक कहलाता है तथा विवाहके अनन्तर गृहस्थ कहलाता है। इस प्रकार ब्रह्मचारीके दो भेद होते हैं—नैष्ठिक तथा उपकुर्वाणक।

विवाहयोग्य कन्याके लक्षण—

महर्षि याज्ञवल्क्यजीने बताया है कि अविप्लुत ब्रह्मचर्यवाला पुरुष शुभ लक्षणोंवाली, पहले किसी अन्य पुरुषको न दी गयी और अन्य पुरुषसे अभुक्त, सौन्दर्यसम्पन्न (रूपवती सुन्दरी), असपिण्ड तथा आयु एवं शरीरप्रमाणमें अपनेसे छोटी स्त्रीसे विवाह करे—

अविप्लुतब्रह्मचर्यो लक्षण्यां स्त्रियमुद्वहेत्।
अनन्यपूर्विकां कान्तामसपिण्डां यवीयसीम्॥

(याज्ञ०स्मृ०आचा० ५२)

* त्रयः स्नातका भवन्ति विद्यास्नातको व्रतस्नातको विद्याव्रतस्नातक इति। समाप्य वेदमसमाप्य व्रतं यः समावर्तते स विद्यास्नातकः। समाप्य व्रतमसमाप्य वेदं यः समावर्तते स व्रतस्नातकः। उभयं समाप्य यः समावर्तते स विद्याव्रतस्नातक इति (पा०गृ०सू० २।५।३२—३५)

उन्होंने आगे बताया है कि वह असाध्य रोगोंवाली न हो तथा अपने गोत्र और प्रवरकी न हो। मनुजी कहते हैं कि गुरुसे आज्ञा पाया हुआ द्विज गृह्योक्त विधिसे (समावर्तन) स्नान करके अपने समान वर्णवाली, शुभ लक्षणोंसे युक्त कन्याके साथ विवाह करे—

गुरुणानुमतः स्नात्वा समावृत्तो यथाविधि।
उद्वहेत द्विजो भार्यां सवर्णां लक्षणान्विताम्॥

(मनु० ३।४)

जो कन्या माताके सपिण्ड (सात पीढ़ीतक)–की न हो और पिताके गोत्रकी न हो, ऐसी कन्या द्विजातियोंके स्त्रीकर्म (अग्न्याधानादि यज्ञकर्म) आदिके लिये श्रेष्ठ होती है—

असपिण्डा च या मातुरसगोत्रा च या पितुः।
सा प्रशस्ता द्विजातीनां दारकर्मणि मैथुने॥

(मनु० ३।५)

सुन्दर नामवाली हो, हंस तथा हाथी के समान चालवाली (हंसगामिनी, गजगामिनी) हो, सूक्ष्म रोम, बाल तथा पतले-पतले दाँतोंवाली हो और सुकुमार शरीरवाली हो—ऐसी कन्यासे विवाह करे—

अव्यङ्गाङ्गीं सौम्यनाम्नीं हंसवारणगामिनीम्।
तनुलोमकेशदशनां मृद्वङ्गीमुद्वहेत् स्त्रियम्॥

(मनु० ३।१०)

वरकी योग्यता—

कन्याके परीक्षणके साथ वरकी योग्यताके सम्बन्धमें भी

शास्त्रकारोंने विस्तारसे विवेचन किया है, उनमें सर्वप्रथम ज्योतिष एवं सामुद्रिकशास्त्रके लक्षणोंके आधारपर वरकी आयुका परीक्षण करनेके लिये बताया है; क्योंकि दीर्घ आयुवाले वरके साथ विवाहित कन्या भी उतने समयतक सौभाग्यवती होती है अन्यथा उसे वैधव्य प्राप्त होता है, इसीलिये कहा भी गया है कि वर यदि सभी शुभ लक्षणोंसे सम्पन्न भी हो, किंतु आयुहीन हो तो इन लक्षणोंसे क्या प्रयोजन, अतः सर्वप्रथम वरकी आयुका विचार करना चाहिये—

पूर्वमायुः परीक्षेत पश्चाल्लक्षणमादिशेत्।
आयुर्हीननराणां च लक्षणैः किं प्रयोजनम्॥

(वीरमित्रोदय-संस्कारप्रकाश)

वरके गुण—

आचार्य यमने बताया है कि कुल, शील, शरीर, अवस्था (आयु), विद्या, धन तथा पराक्रम—इन सात बातोंपर विचार करके ही विद्वानोंको अपनी कन्याका विवाह करना चाहिये—

कुलं च शीलं च वपुर्वयश्च विद्यां च वित्तं च सनाथतां च।
एतान् गुणान्सप्त परीक्ष्य देया कन्या बुधैः शेषमचिन्तनीयम्॥

(वीरमित्रोदय-संस्कारप्रकाश)

आचार्य लल्लका कहना है कि जाति, विद्या, अवस्था (आयु), शील, आरोग्य तथा बहुपक्षता, धन तथा विप्रसम्पत्ति—ये आठ गुण वरमें होने चाहिये—

जातिविद्यावयःशीलमारोग्यं बहुपक्षता।
अर्थित्वं विप्रसम्पत्तिरष्टावेते वरे गुणाः॥

(वीरमित्रोदय-संस्कारप्रकाश)

महर्षि याज्ञवल्क्यजीका कहना है वर इन पूर्वोक्त गुणोंसे युक्त, सवर्ण अर्थात् हीनवर्णसे रहित, श्रोत्रिय (वेदाभ्यासी) हो तथा उसके पुंस्त्व (पुरुषत्व)-की परीक्षा प्रयत्नपूर्वक की गयी हो, वह युवावस्थावाला हो, बुद्धिमान् हो (लौकिक-वैदिक व्यवहारमें निपुण हो) तथा अपने मृदुभाषण तथा स्मितहास आदि गुणोंके कारण सभी जनोंका प्रिय हो—

एतैरेव गुणैर्युक्तः सवर्णः श्रोत्रियो वरः।
यत्नात्परीक्षितः पुंस्त्वे युवा धीमान् जनप्रियः॥

(याज्ञ० स्मृति, आ० ५५)

वरके दोष—

नारदजीने कहा है कि जिसका विवाह होना है, ऐसा वर वायु आदि विकारोंके द्वारा उन्मत्त अर्थात् विक्षिप्त मनवाला न हो, पतित न हो अर्थात् ब्रह्महत्यादि पापोंसे रहित हो, क्लीब न हो अर्थात् पुरुषत्वसे हीन न हो, भाग्यहीन न हो, बन्धु-बान्धवोंद्वारा परित्यक्त होकर स्वतन्त्र व्यवहार करनेवाला न हो तथा कन्यामें जो दोष होते हैं, रोग आदि—वे न हों—

उन्मत्तः पतितः क्लीबो दुर्भगस्त्यक्तबान्धवः।
कन्यादोषौ च यौ पूर्वावेव दोषगणो वरे॥

(वीरमित्रोदय-संस्कारप्रकाश)

पुंस्त्वसे विहीन पुरुष विवाहके सर्वथा अयोग्य है, इस विषयमें नारदजीका कहना है कि स्त्रियोंकी सृष्टि सन्तानकी उत्पत्तिके लिये हुई है, इसीलिये स्त्रीको क्षेत्र और पुरुषको बीजी (बीजवान्) कहा गया है। जो बीजबलसे सम्पन्न हो, उसीके लिये क्षेत्रका समर्पण करना चाहिये। बीजसे रहित (पौरुष-शक्तिसे रहित) पुरुष क्षेत्र (स्त्री)-को प्राप्त करनेका पात्र नहीं हो सकता—

अपत्यार्थं स्त्रियः सृष्टाः स्त्री क्षेत्रं बीजिनो नराः।
क्षेत्रं बीजबले देयं नाबीजी क्षेत्रमर्हति॥

(वीरमित्रोदय-संस्कारप्रकाश)

विवाहके भेद—

मनुस्मृति आदि धर्मशास्त्रोंमें विवाह आठ प्रकारका माना गया है, जिनके नाम इस प्रकार हैं—

(१) ब्राह्म, (२) दैव, (३) आर्ष, (४) प्राजापत्य, (५) आसुर, (६) गान्धर्व, (७) राक्षस तथा (८) पैशाच।

—इन आठ विवाहोंमें से ब्राह्म, दैव, आर्ष तथा प्राजापत्य—ये चार विवाह श्रेष्ठ हैं, इन दम्पतियोंकी सन्तान ब्रह्मतेजसे सम्पन्न तथा शिष्ट पुरुषोंद्वारा माननीय होती है—शेष आसुर आदि चार विवाहोंसे उत्पन्न होनेवाले पुत्र क्रूर, असत्य बोलनेवाले तथा वेद, ब्राह्मणों और यज्ञादि धार्मिक कार्योंके विरोधी होते हैं। इनमें भी आसुर तथा पैशाच—ये दो विवाह अधर्मयुक्त होनेसे इन विवाहोंको नहीं करना चाहिये—

'पैशाचश्चासुरश्चैव न कर्तव्यौ कदाचन॥'

(मनुस्मृति ३।२५)

मनुस्मृतिके अनुसार आगे आठों विवाहोंका संक्षिप्त परिचय प्रस्तुत है—

(१) ब्राह्मविवाह—

वेद पढ़े हुए सदाचारी वरको स्वयं बुलाकर, उसकी पूजाकर और वस्त्र-भूषणादिसे दोनों (कन्या-वर)-को अलंकृतकर कन्यादान करना धर्मयुक्त ब्राह्मविवाह है—

आच्छाद्य चार्चयित्वा च श्रुतशीलवते स्वयम्।
आहूय दानं कन्याया ब्राह्मो धर्मः प्रकीर्तितः॥

(२) दैवविवाह—

ज्योतिष्टोमादि यज्ञमें विधिपूर्वक कर्म करते हुए ऋत्विक्के लिये

(वस्त्रालंकारादिसे) अलंकृत कन्याका दान करनेको (मुनिलोग) धर्मयुक्त दैवविवाह कहते हैं—

यज्ञे तु वितते सम्यगृत्विजे कर्म कुर्वते।
अलंकृत्य सुतादानं दैवं धर्मं प्रचक्षते॥

(३) आर्षविवाह—

गोमिथुन (गाय और बैल दोनों) या गाय अथवा बैल (दोनोंमेंसे कोई एक-एक या दो-दो) यज्ञादि धर्मकार्य करने या कन्याको देनेके लिये वरसे लेकर (मूल्य या धन-लाभकी दृष्टिसे लेकर नहीं) विधिपूर्वक कन्यादान करना धर्मयुक्त आर्षविवाह कहा गया है—

एकं गोमिथुनं द्वे वा वरादादाय धर्मतः।
कन्याप्रदानं विधिवदार्षो धर्मः स उच्यते॥

(४) प्राजापत्यविवाह—

'तुम दोनों (वर-वधू) साथमें धर्माचरण करो'—ऐसा वचन कहकर तथा (वस्त्रालंकारादिसे उनका) पूजनकर कन्यादान करना प्राजापत्यविवाह कहा गया है—

सहोभौ चरतां धर्ममिति वाचानुभाष्य च।
कन्याप्रदानमभ्यर्च्य प्राजापत्यो विधिः स्मृतः॥

(५) आसुरविवाह—

जातिवालों (कन्याके पिता, चाचा आदि) तथा कन्याके लिये यथाशक्ति धन देकर स्वेच्छासे कन्याको स्वीकार करना आसुरविवाह कहा गया है—

ज्ञातिभ्यो द्रविणं दत्त्वा कन्यायै चैव शक्तितः।
कन्याप्रदानं स्वाच्छन्द्यादासुरो धर्म उच्यते॥

(६) गान्धर्वविवाह—

कन्या और पुरुषके इच्छानुसार परस्पर स्नेहके संयोग (आलिंगनादि)-

का होना गान्धर्वविवाह कहा गया है—

इच्छयान्योन्यसंयोगः कन्यायाश्च वरस्य च।
गान्धर्वः स तु विज्ञेयो मैथुन्यः कामसम्भवः॥

(७) राक्षसविवाह—

कन्याके पक्षवालोंको मारकर या उनका अंगछेदनादिकर और गृह या द्वारादिको तोड़कर चिल्लाती तथा रोती हुई कन्याका बलात् हरण करके लाना राक्षस-विवाह कहा गया है—

हत्वा छित्त्वा च भित्त्वा च क्रोशन्तीं रुदतीं गृहात्।
प्रसह्य कन्याहरणं राक्षसो विधिरुच्यते॥

(८) पैशाचविवाह—

सोयी हुई, मद आदिसे व्याकुल और अपने शीलकी रक्षा करनेमें प्रमादयुक्त कन्याके साथ विवाह करना अत्यन्त निन्दित आठवाँ पैशाचविवाह कहा गया है—

सुप्तां मत्तां प्रमत्तां वा रहो यत्रोपगच्छति।
स पापिष्ठो विवाहानां पैशाचश्चाष्टमोऽधमः॥

मनु महाराज कहते हैं कि अनिन्दित स्त्री-विवाहोंसे अनिन्दित तथा निन्दित स्त्री-विवाहोंसे निन्दित सन्तान उत्पन्न होती है, अतः निन्दित स्त्री-विवाहोंका सर्वथा त्याग करना चाहिये—

अनिन्दितैः स्त्रीविवाहैरनिन्द्या भवति प्रजा।
निन्दितैर्निन्दिता नृणां तस्मान्निन्द्यान्विवर्जयेत्॥

(मनुस्मृति ३।४२)

विवाहसम्बन्धी कतिपय धर्मशास्त्रीय व्यवस्थाएँ

क-सहोदरोंके विवाहकी व्यवस्था—

वीरमित्रोदय-संस्कारप्रकाशमें स्मृतिरत्नावलीके वचनसे बताया गया है कि एक मातासे उत्पन्न होनेवाले सन्तानोंका एक संवत्सर (एक वर्ष)-के भीतर विवाह नहीं करना चाहिये तथा मण्डन—

विवाहके अनन्तर मुण्डन-(उपनयन) नहीं करना चाहिये।

एकोदरप्रसूतानामेकस्मिन्वत्सरे पुनः।
विवाहं नैव कुर्वीत मण्डनोपरि मुण्डनम्॥

गर्गजीने बताया है कि यदि माता भिन्न हो तो अर्थात् मातृभेद होनेपर एक वर्षके भीतर भी पुत्र अथवा पुत्रीका विवाह किया जा सकता है—'**मातृभेदे विधीयते**'।

पुनः व्यवस्थामें कहा गया है कि यदि एक वर्ष परिहार करनेमें असमर्थता हो तो छः मासका परिहार अवश्य करना चाहिये अर्थात् एक मातासे उत्पन्न (सहोदरों)-का छः महीनेके भीतर विवाह नहीं करना चाहिये—'**वत्सरपरिहाराशक्तौ षण्मासं वा परिहरेत्।**' (संस्कारप्रकाश)

मदनरत्नमें बताया गया है कि यदि छः महीनेके मध्यमें ही संवत्सर परिवर्तित हो रहा हो तो सहोदरोंका भी विवाह हो सकता है—

ऋतुत्रयस्य मध्ये चेदन्याब्दस्य प्रवेशनम्।
तदा ह्येकोदरस्यापि विवाहस्तु प्रशस्यते॥

(वीरमित्रोदय-संस्कारप्रकाश)

ख-दो मंगलकार्योंकी व्यवस्था—

एक ही घरमें नौ दिनके भीतर दो शोभन कार्य नहीं करने चाहिये, किंतु यदि अवश्यकरणीयता हो तो द्वारभेद (कक्षभेद), गृहभेद अथवा आचार्यके भेदसे किये जा सकते हैं तथा एक ही घरमें सोदरोंके तीन हवन-कर्म नहीं करने चाहिये, यदि भिन्नोदर (माता अलग-अलग) हों तो दोष नहीं होता—

द्विशोभनं त्वेकगृहेऽपि नेष्टं शुभं तु पश्चान्नवभिर्दिनैस्तु।
आवश्यकं शोभनमुत्सुको वा द्वारेऽथवाऽऽचार्यविभेदतो वा॥

एकोदरप्रसूतानां नाग्निकार्यत्रयं भवेत्।
भिन्नोदरप्रसूतानां नेति शातातपोऽब्रवीत्॥

(वीरमित्रोदय-संस्कारप्रकाशमें वसिष्ठका वचन)

ग-मण्डन और मुण्डनकी व्यवस्था—

मण्डन अर्थात् विवाहके अनन्तर मुण्डन शुभ नहीं होता। दो सहोदर भाइयोंका मुण्डन एक वर्षमें नहीं करना चाहिये। लड़केके विवाहके अनन्तर ऋतुत्रय अर्थात् छः माहके भीतर लड़कीका विवाह नहीं करना चाहिये—

न मण्डनान्मुण्डनमूर्ध्वमिष्टं न पुत्रयोर्मुण्डनमेकवर्षे।
न पुंविवाहोर्ध्वमृतुत्रयेऽपि विवाहकार्यं दुहितुश्च कुर्यात्॥

(वीरमित्रोदय-संस्कारप्रकाशमें गर्गका वचन)

पुत्रके विवाहको 'प्रवेश', पुत्रीके विवाहको 'निर्गम', मुण्डनको चौल तथा व्रतवन्ध और विवाहको 'मंगल' कहा गया है—

कुले ऋतुत्रयादर्वाग्मुण्डनान्न तु मण्डनम्।
प्रवेशान्निर्गमो नेष्टो न कुर्यान्मङ्गलत्रयम्॥
पुत्रोद्वाहः प्रवेशाख्यः कन्योद्वाहस्तु निर्गमः।
मुण्डनं चौलमित्युक्तं व्रतोद्वाहौ तु मङ्गलम्॥

(वीरमित्रोदय-संस्कारप्रकाशमें कात्यायनका वचन)

घ-गुरुमंगल तथा लघुमंगल—

चूडाकरण, केशान्त, सीमन्तोन्नयन, विवाह तथा उपनयनको विद्वानोंने गुरुमंगलकर्म कहा है तथा शेष संस्कारोंको लघुमंगल कहा गया है—

चूडाकेशान्तसीमन्तविवाहोपनयान् बुधाः।
गुरुमङ्गलमित्याहुः तदन्यं लघुमङ्गलम्॥

(वीरमित्रोदय-संस्कारप्रकाशमें ज्योतिःसागरका वचन)

ङ–पुत्र और पुत्रीके विवाहकी व्यवस्था—

पुत्रके विवाहके अनन्तर छः माससे पहले कन्याका विवाह नहीं करना चाहिये। बिना कन्याको श्वशुरगृहमें पहुँचाये अपने घरमें वधूका प्रवेश नहीं कराना चाहिये अर्थात् कन्याके विवाहके अनन्तर ही पुत्रका विवाह करना चाहिये—

ऊर्ध्वं विवाहात्तनयस्य नैव कार्यो विवाहो दुहितुस्समार्द्धम्।
अप्राप्य कन्यां श्वशुरालयं तु वधूः प्रवेश्या स्वगृहं न चादौ॥

(वीरमित्रोदय–संस्कारप्रकाश संहिताप्रदीपका वचन)

च–मुहूर्तचिन्तामणिमें दी गयी व्यवस्था—

मुहूर्तचिन्तामणि (६।१६)–में उपर्युक्त बातोंको इस प्रकारसे बताया गया है—

पुत्रके विवाहसे छः महीनेपर्यन्त कन्याका विवाह न करना तथा विवाह (मण्डन)–से छः महीनेतक मुण्डन—चौल, उपनयन और महानाम्न्यादिव्रत नहीं करना चाहिये। यदि बीचमें संवत्सर बदल जाय जैसे फाल्गुनमें पुत्रका विवाह हो तो वैशाखमें मुण्डन अथवा कन्याका विवाह हो सकता है। यह नियम तीन पीढ़ी सापिण्ड्यके लिये है। मंगल (विवाह)–के बाद छः महीनेतक पितृक्रिया—श्राद्धादिका, सहोदर भाइयोंको सहोदर कन्या देनेका तथा सहोदरोंका विवाह छः महीनेके भीतर करनेका निषेध है। कन्याके विवाहके बाद चार दिन बाद पुत्रका विवाह हो सकता है, परंतु एकोदरप्रसूत कन्या–पुत्र अथवा पुत्र–पुत्र अथवा कन्या–कन्याका विवाह छः महीनेपर्यन्त नहीं होता—

सुतपरिणयात्षण्मासान्तः सुताकरपीडनं
न च निजकुले तद्वद्वा मण्डनादपि मुण्डनम्।
न च सहजयोर्देये भ्रात्रोः सहोदरकन्यके
न सहजसुतोद्वाहोऽब्दार्द्धे शुभे न पितृक्रिया॥

(मुहूर्तचिन्तामणि ६।१६)

छ-तीन ज्येष्ठमें विवाहका निषेध—

ज्येष्ठ कन्या हो, ज्येष्ठ वर हो और ज्येष्ठ मास हो—ये तीनों विवाहमें निषिद्ध हैं अर्थात् ज्येष्ठ कन्याका ज्येष्ठ वरके साथ ज्येष्ठ मासमें विवाह नहीं करना चाहिये। इससे अशुभ होता है। यदि दो ज्येष्ठ हों तो मध्यम तथा एक ज्येष्ठ हो तो विवाह शुभ माना जाता है—

ज्येष्ठयोर्वधूवरयोर्ज्येष्ठे मासि विवाहो न शुभः।
न ज्येष्ठयोर्विवाहः स्यात् ज्येष्ठे मासि विशेषतः।
द्वौ ज्येष्ठौ मध्यमौ प्रोक्तावेकं ज्यैष्ठ्यं सुखावहम्॥

(धर्मसिन्धु पूर्वार्द्ध परि० ३)

त्रिज्येष्ठं चेन्नैव युक्तं कदापि। (मुहूर्तचिन्तामणि ६। १५)

ज-परिवेत्ता और परिवित्तिका लक्षण—

बड़े भाईके अविवाहित रहते जो छोटा भाई अपना विवाह कर लेता है तथा अग्निहोत्र ग्रहण कर लेता है, वह छोटा भाई 'परिवेत्ता' तथा बड़ा भाई 'परिवित्ति' कहलाता है। परिवेत्ता, परिवित्ति, जिस कन्यासे विवाह होता है वह, कन्यादान करनेवाला तथा याजक (उस विवाहमें हवनादि करनेवाला ब्राह्मण)—ये पाँचों नरकको जाते हैं, अतः बड़े भाईके अविवाहित रहते छोटे भाईका विवाह नहीं किया जाता—

दाराग्निहोत्रसंयोगं कुरुते योऽग्रजे स्थिते।
परिवेत्ता स विज्ञेयः परिवित्तिस्तु पूर्वजः॥
परिवित्ति परिवेत्ता यया च परिविद्यते।
सर्वे ते नरकं यान्ति दातृयाजकपञ्चमाः॥

(मनुस्मृति ३। १७१-१७२)

झ-दिधिषू तथा अग्रेदिधिषूका लक्षण—

जिस प्रकार बड़े भाईके विवाहसे पूर्व छोटे भाईका विवाह नहीं किया जाता, उसी प्रकार बड़ी बहनके विवाहसे पूर्व छोटी बहनका

विवाह भी नहीं होता। यदि बड़ी बहनके अविवाहित रहते ही छोटी बहनका विवाह हो जाय तो बड़ी बहन 'दिधिषू' तथा छोटी बहन 'अग्रेदिधिषू' कहलाती है—

ज्येष्ठायां यद्यनूढायां कन्यायामुह्यतेऽनुजा।
या साऽग्रेदिधिषूः प्रोक्ता पूर्वा तु दिधिषूः स्मृता॥

(वीरमित्रोदय-संस्कारप्रकाश)

ऐसा होनेपर दोष होता है। अतः प्रायश्चित्त करना चाहिये। उन कन्याओंको कृच्छ्रव्रतका प्रायश्चित्त करना चाहिये। पिता आदि दाताको अतिकृच्छ्र और याजक (विवाहमें होम करानेवाले ब्राह्मण)-को चान्द्रायणव्रत करना चाहिये।

'अत्र प्रायश्चित्तम्। कन्यायाः कृच्छ्रं दातुरतिकृच्छ्रं याजकस्य चान्द्रायणम्। (धर्म०पूर्वार्ध तृतीय परिच्छेद)

यदि बहनें सहोदर न हों तो ज्येष्ठ कन्यासे पूर्व कनिष्ठाके विवाहमें दोष नहीं होता—

ज्येष्ठाया भिन्नमातृजत्वे कनिष्ठाया विवाहे दोषो न।' (धर्मसिन्धु पूर्वार्द्ध तृतीय परिच्छेद)

वैधव्यपरिहारके उपाय

दैवज्ञद्वारा कथित कन्याके वैधव्ययोगके निवारणके लिये अनेक उपाय बताये गये हैं, जिनके यथाविधि अनुष्ठानसे वैधव्यताका अरिष्ट दूर होता है और सौभाग्यादिकी प्राप्ति होती है। इन उपायोंमें वैधव्यपरिहारव्रत, कुम्भविवाह तथा विष्णुप्रतिमादान आदि प्रमुख हैं—

बालवैधव्ययोगेऽपि कुम्भद्रुप्रतिमादिभिः।
कृत्वा लग्नं रहः पश्चात्कन्योद्वाह्येति चापरे॥

(वीरमित्रोदय-संस्कारप्रकाश)

अर्थात् बालवैधव्य योग होनेपर कुम्भ, अश्वत्थ तथा विष्णुप्रतिमासे

विवाहके अनन्तर कन्याका विवाह करना चाहिये।

यहाँ संक्षेपमें इनका विवरण प्रस्तुत है। विशेषके लिये प्रयोगपद्धतियोंका अवलोकन करना चाहिये।

१-वैधव्यपरिहारव्रत—

वीरमित्रोदय-संस्कारप्रकाशमें बताया गया है कि वटसावित्री आदि व्रतोंको जो स्त्रियाँ भक्तिपूर्वक करती हैं, वे सौभाग्यशालिनी होती हैं और सुलक्षण सन्तानको प्राप्त करती हैं। यदि कन्याकी कुण्डलीमें बालवैधव्ययोग हो तो उसे दूर करनेके लिये पिताको चाहिये कि किसी शुभ मुहूर्तमें वस्त्रालंकारसे विभूषित कन्याको घरसे बाहर किसी अश्वत्थ अथवा शमीवृक्षके समीप ले जाकर उस वृक्षके चारों ओर पानीके लिये आलवाल (थॉला) बनाये और कन्या आचार्यसे संकल्प करवाये कि मैं चैत्र और आश्विन मासमें कृष्णपक्षकी तृतीयासे एक मासतक अर्थात् वैशाख कृष्णतृतीया और कार्तिक कृष्णतृतीयातक प्रत्येक दिन जलसे इस वृक्षका सिंचन करूँगी। ऐसा संकल्पकर वह जलसे अश्वत्थ अथवा शमीवृक्षका आदरभक्तिपूर्वक सिंचन करे। ब्राह्मणों तथा सौभाग्यवती स्त्रियोंका पूजन करे। उनका आशीर्वाद प्राप्त करे। इससे वह सौभाग्य तथा सुख प्राप्त करती है। वह प्रत्येक दिन बाँसके पात्रमें भगवती पार्वतीकी स्वर्णादिकी प्रतिमाकी प्रतिष्ठाकर चन्दन, अक्षत, दूर्वा, बिल्वपत्र तथा नैवेद्य आदि उपचारोंसे भक्तिपूर्वक उनकी पूजा करे। इस व्रतके प्रभावसे बालवैधव्ययोग भंग हो जाता है। तदनन्तर पिताको चाहिये कि यथावसर कन्याका किसी सुयोग्य दीर्घायु वरके साथ विवाह करे।

२-कुम्भविवाह—

विवाहसे पूर्व शुभ मुहूर्तमें कन्याका पिता कन्याको लेकर किसी

विष्णुमन्दिरमें जाकर गणेश आदिका स्मरणकर जलपूर्ण कुम्भकी स्थापना-प्रतिष्ठाकर कलशके ऊपर विष्णु एवं वरुणकी स्वर्णप्रतिमा स्थापितकर उनका पूजन करे और पूजनकर निम्न मन्त्रोंसे वरुण तथा विष्णुरूप कुम्भकी प्रार्थना करे—

वरुणाङ्गस्वरूपस्त्वं जीवनानां समाश्रय।
पतिं जीवय कन्यायाश्चिरं पुत्रसुखं कुरु॥
देहि विष्णो वरं देव कन्यां पालय दुःखतः।
पतिं जीवय कन्यायाश्चिरं देहि तथा सुखम्॥

हे वरुणदेव! आप समस्त जीवधारियोंके प्राणस्वरूप हैं। आप मेरी इस कन्याके पतिको दीर्घ आयुवाला बना दें और पुत्रसुख प्रदान करें। इस कन्याकी दुःखसे रक्षा करें। इस कन्याके पतिको चिरकालतक जीवित रखें तथा सुख प्रदान करें।

इस प्रकार प्रार्थनाकर उस कुम्भके साथ विवाहके समान क्रिया करें और कन्याको विष्णुरूप कुम्भको समर्पित कर दें। तदनन्तर दस तन्तुवाले सूतके द्वारा कन्या तथा कुंकुमार्चित कुम्भको आवेष्टित कर दें। फिर उस सूतबन्धनसे कुम्भको निकालकर किसी तालाब आदिमें विसर्जित कर दें। कन्याका जलसे अभिषेक करें और आचार्य आदिको दक्षिणा प्रदानकर पुनः कन्याका योग्य वरसे विवाह करें।

३-अश्वत्थविवाह—

इसी प्रकार अश्वत्थ (पीपल)-वृक्षकी भी पूजाकर विवाहरीतिसे उसके साथ कन्याका विवाहकर पुनः योग्य वरसे कन्याका विवाह किया जाता है। उस समय निम्न मन्त्रसे अश्वत्थकी प्रार्थना की जाती है—

नमस्ते विष्णुरूपाय जगदानन्दहेतवे।
पितृदेवमनुष्याणामाश्रयाय नमो नमः॥
वनानां पतये तुभ्यं विष्णुरूपाय भूरुह॥

४-विष्णुप्रतिमाविवाह—

सुवर्णकी विष्णुप्रतिमा बनाकर उसके साथ कन्याका विवाह किया जाता है। (शालग्रामशिलाका निषेध है)। विष्णुप्रतिमाकी प्रतिष्ठा तथा यथाविधि पूजनके अन्तमें कन्याका पिता इस प्रकार प्रार्थना करता है—

देहि विष्णो वरं देव कन्यां पालय दुःखतः।
परिजीवय कन्यायाश्चिरं पुत्रसुखं कुरु॥

हे विष्णो! आप वर दीजिये। हे देव! मेरी इस कन्याकी (वैधव्य) दुःखसे रक्षा कीजिये। इस कन्याके पतिको दीर्घ आयु प्रदान कीजिये और इसे पुत्रसुख प्रदान कीजिये।

इस प्रकार प्रार्थनाकर विवाहविधिसे विष्णुप्रतिमाके साथ विवाहकर और '**इमां कन्यां विष्णवे तुभ्यं समर्पयामि**'—ऐसा कहकर उन्हें कन्या समर्पितकर दस तन्तुवाले सूतसे कन्या तथा प्रतिमाको मन्त्रपूर्वक आवेष्टित करे और फिर उस बन्धनसे प्रतिमाको अलग कर दे। ब्राह्मणोंको दक्षिणा प्रदान करें। तदनन्तर कन्या प्रतिमादानका निम्न संकल्प करे—

'ॐ अद्य ....गोत्रा ....राशिः ....देव्यहं मम जन्मसमयवर्तिलग्नादौ स्थितैर्ग्रहादिभिः सूचितारिष्टनिवृत्तिपूर्वकसौभाग्यप्राप्तिद्वारा श्रीपर-मेश्वरप्रीतये इमां सौवर्णीं सुपूजितां विष्णुप्रतिमां सर्वोपस्करयुताम् ....गोत्राय ....शर्मणे आचार्याय भवते सम्प्रददे। ॐ तत्सत् न मम।'

इस प्रकार संकल्प करके निम्न मन्त्रोंसे प्रार्थना करते हुए प्रतिमा आचार्यको समर्पित कर दे—

यन्मया प्राचि जनुषि घ्नत्या पतिसमागमम्।
विषोपविषशस्त्राद्यैर्हतो वातिविरक्तया॥

प्राप्यमाणं महाघोरं यशः सौख्यधनापहम्।
वैधव्याद्यतिदुःखौघं तन्नाशाय सुखाप्तये॥
बहुसौभाग्यलब्ध्यै च महाविष्णोरिमां तनुम्।
सौवर्णीं निर्मितां शक्त्या तुभ्यं सम्प्रददे द्विज॥

हे द्विज! पूर्वजन्ममें मेरे द्वारा पतिके प्रति विष, शस्त्र आदिके द्वारा जो अपराध बना था, उसी पापके फलस्वरूप मुझे इस जन्ममें यश एवं सुखका नाश करनेवाला अति भयंकर तथा महान् दुःखोंको देनेवाला यह वैधव्ययोग प्राप्त हुआ है, उसके नाशके लिये, सुखकी प्राप्तिके लिये तथा अखण्ड सौभाग्यकी प्राप्तिके लिये मैं सुवर्णनिर्मित यह महाविष्णुकी प्रतिमा आपको प्रदान कर रही हूँ।

—ऐसा कहकर वह प्रतिमा आचार्यको दे दे। और '**अनघाद्याहमिति**' अर्थात् 'मैं आज निष्पाप हो गयी हूँ'—यह वचन तीन बार बोले। आचार्य प्रतिमा ग्रहणकर '**ॐ अनघा भव**' अर्थात् 'निष्पाप होओ' तीन बार बोलें। इस प्रकार प्रतिमादानके अनन्तर योग्य वरसे कन्याका विवाह करना चाहिये।

विशेष बात—

उपर्युक्त उपायोंमें यद्यपि कन्याका पाणिग्रहणविधिसे कुम्भ, अश्वत्थ तथा विष्णुप्रतिमाके साथ विवाह किया जाता है, तदनन्तर कन्याका योग्य वरसे विवाह होता है, तो यहाँपर कन्याके दूसरे विवाहकी शंका उत्पन्न होती है, किंतु धर्मशास्त्रने बताया है कि इसे पुनर्विवाह नहीं माना जाता और न 'पुनर्भू' दोष उत्पन्न होता है—'**अत्र च पुनर्भूत्वदोषो न भवति**' (वीरमित्रोदय-संस्कारप्रकाश)।

इसी बातको निम्न वचनमें बताया गया है—

स्वर्णाम्बुपिप्पलानां च प्रतिमा विष्णुरूपिणी।
तयोः सह विवाहे च पुनर्भूत्वं न जायते॥

(वीरमित्रोदय-संस्कारप्रकाशमें विधानखण्डका वचन)

अर्थात् विष्णुकी स्वर्णप्रतिमा, कुम्भ तथा अश्वत्थ—ये विष्णुरूप होते हैं, अतः इनके साथ विवाह करनेपर पुनर्भूत्वदोष उत्पन्न नहीं होता।

शाखोच्चारसम्बन्धी मांगलिक श्लोक

श्रीमत्पङ्कजविष्टरो हरिहरौ वायुर्महेन्द्रोऽनल-
श्चन्द्रो भास्करवित्तपालवरुणाः प्रेताधिपाद्या ग्रहाः।
प्रद्युम्नो नलकूबरौ सुरगजश्चिन्तामणिः कौस्तुभः
स्वामी शक्तिधरश्च लाङ्गलधरः कुर्वन्तु वो मङ्गलम्॥

सर्वैश्वर्यसम्पन्न ब्रह्मा, विष्णु एवं शिव, वायुदेव, देवराज इन्द्र तथा अग्निदेवता, चन्द्रदेवता, भगवान् सूर्य, धनाध्यक्ष कुबेर, वरुण और संयमनीपुरीके स्वामी यमराज, सभी ग्रह, श्रीकृष्णके पुत्र प्रद्युम्न, नल और कूबर, ऐरावत गज, चिन्तामणि रत्न, कौस्तुभमणि, शक्तिको धारण करनेवाले स्वामी कार्तिकेय तथा हलायुध बलराम—ये सब आपलोगोंका मंगल करें।

गौरी श्रीः कुलदेवता च सुभगा भूमिः प्रपूर्णा शुभा
सावित्री च सरस्वती च सुरभिः सत्यव्रतारुन्धती।
स्वाहा जाम्बवती च रुक्मभगिनी दुःस्वप्नविध्वंसिनी
वेलाश्चाम्बुनिधेः समीनमकराः कुर्वन्तु वो मङ्गलम्॥

भगवती गौरी (पार्वती), भगवती लक्ष्मी, अपने कुलके देवता, सौभाग्ययुक्त स्त्री, सभी धन-धान्यसे सम्पन्न पृथ्वीदेवी, ब्रह्माकी पत्नी सावित्री और सरस्वती, कामधेनु, सत्य एवं पातिव्रत्यको धारण करनेवाली वसिष्ठपत्नी अरुन्धती, अग्निपत्नी स्वाहादेवी, कृष्णपत्नी जाम्बवती, रुक्मभगिनी रुक्मिणीदेवी तथा दुःस्वप्ननाशिनीदेवी, मीन और मकरोंसे संयुक्त समुद्र एवं उनकी वेलाएँ—ये सब आपलोगोंका मंगल करें।

गङ्गा सिन्धुसरस्वती च यमुना गोदावरी नर्मदा
कावेरी सरयूर्महेन्द्रतनयाश्चर्मण्वती देविका।
क्षिप्रा वेत्रवती महासुरनदी ख्याता गया गण्डकी
पुण्याः पुण्यजलैः समुद्रसहिताः कुर्वन्तु वो मङ्गलम्॥

भागीरथी गंगा, सिन्धु, सरस्वती, यमुना, गोदावरी, नर्मदा, कावेरी,

सरयू तथा महेन्द्रपर्वतसे निःसृत समस्त नदियाँ, चर्मण्वती, देविका नामसे प्रसिद्ध देवनदी, क्षिप्रा, वेत्रवती (बेतवा), महानदी, गयाकी फल्गुनदी, गण्डकी या नारायणी—ये सब पुण्यजलवाली पवित्र नदियाँ अपने स्वामी समुद्रके साथ आपलोगोंका मंगल करें।

लक्ष्मीः कौस्तुभपारिजातकसुरा धन्वन्तरिश्चन्द्रमाः
धेनुः कामदुघा सुरेश्वरगजो रम्भादिदेवाङ्गनाः।
अश्वः सप्तमुखो विषं हरिधनुः शंखोऽमृतं चाम्बुधेः
रत्नानीति चतुर्दश प्रतिदिनं कुर्वन्तु वो मङ्गलम्॥

भगवती लक्ष्मी, कौस्तुभमणि, पारिजात नामक कल्पवृक्ष, वारुणीदेवी, वैद्यराज धन्वन्तरि, चन्द्रमा, कामधेनु गौ, देवराज इन्द्रका ऐरावत हस्ती, रम्भा आदि सभी अप्सराएँ, सात मुखवाला उच्चैःश्रवा नामक अश्व, कालकूट विष, भगवान् विष्णुका शार्ंगधनुष, पांचजन्यशंख तथा अमृत—ये समुद्रसे उत्पन्न चौदह रत्न आपलोगोंका प्रतिदिन मंगल करें।

ब्रह्मा वेदपतिः शिवः पशुपतिः सूर्यो ग्रहाणां पतिः
शक्रो देवपतिर्हविर्हुतपतिः स्कन्दश्च सेनापतिः।
विष्णुर्यज्ञपतिर्यमः पितृपतिः शक्तिः पतीनां पतिः
सर्वे ते पतयः सुमेरुसहिताः कुर्वन्तु वो मङ्गलम्॥

वेदोंके स्वामी ब्रह्मा, पशुपति भगवान् शंकर, ग्रहोंके स्वामी भगवान् सूर्य, देवताओंके स्वामी इन्द्र, हव्य पदार्थोंमें श्रेष्ठ हविर्द्रव्य-पुरोडाश, देवसेनापति भगवान् कार्तिकेय, यज्ञोंके स्वामी भगवान् विष्णु, पितरोंके पति धर्मराज और सभी स्वामियोंकी स्वामिनी शक्तिस्वरूपा भगवती महालक्ष्मी—ये सभी स्वामिगण पर्वतराज सुमेरुगिरिसहित आपलोगोंका मंगल करें।